卐 श्री महावीराय नमः 卐

कवि श्री नेमीचन्द्र कृत

तीनलोक पूजा

संक्षिप्तीकरण, संशोधन

एवं

नवीन पूजाओं व अर्घ्यों के रचयिता

परम पूज्य १०८ श्री श्रुतसागर जी मुनिराज

प्रकाशक :

श्रुत ज्ञान प्रकाशन संस्थान

श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर

भवानीमंडी-३२६५०२ (राज०)

प्रथमावृत्ति ५००]

वीर नि० सं०
सन् १९८६

[मूल्य ४२-००]

मुद्रक :
ज्योति प्रिंटिंग प्रेस
रामपुरा बाजार
कोटा (राज०) फोन २५११२

पुस्तक प्राप्ति स्थान :
श्रुत ज्ञान प्रकाशन संस्थान
श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर
भवानीमण्डी-३२६५०५ (राज०)

सर्वाधिकार लेखकाधीन

शत वन्दन सह प्रतापगढ़

करणानुयोग के मर्मज्ञ मुनिराज श्री १०८ श्रुतसागर जी
(मुरेना वाले) जो इस ग्रन्थ के संक्षिप्त कर्ता
संशोधनकर्ता एवं अनेक पूजाओं के
रचयिता भी हैं, का उपकार
हम पर शब्दों के परे है ।
उन्हें ही यह प्रथम पुष्प
हम अत्यन्त भक्ति
भाव पूर्वक
समर्पित
करते
हैं ।

(समिति)
श्रुतज्ञान प्रकाशन संस्थान
पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर
भवानीमण्डी-३२६५०२

...रा ह कवि श्री नेमीचन्द्र जी कृत वृहद् तीनलोक ...जा के पूर्व प्रकाशक श्री १०५ आर्यिका धर्ममति क्षुल्लिका राजमति पुस्तकालय जयपुर एवं संग्रहकर्ता श्री मिलापचन्द जी गोधा बागपत वाले जयपुर के जिन्होंने इस ग्रन्थ के संक्षिप्तीकरण संशोधन एवं नवीन रचनाओं के करने का पूज्य १०८ श्री श्रुतसागर जी महाराज से सहर्ष निवेदन कर हमें व समस्त दि० जैन समाज को अनुगृहीत किया तब ही हम इसे प्रकाशीत कर सके ।

श्रुतज्ञान प्रकाशन संस्थान
भवानीमण्डी

परमपूज्य मुनिराज चारित्र चूड़ामणि
श्री १०८ श्रुतसागर जी महाराज (मोरेना वाले)

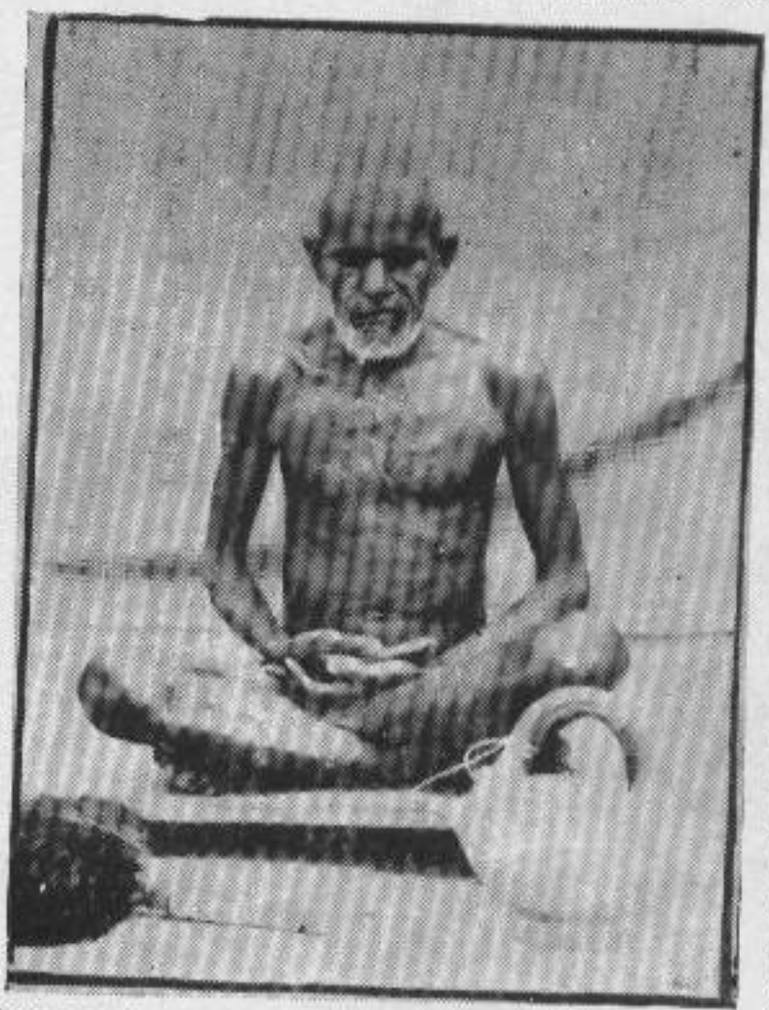

परिचय

पल्लीवाल जैन जाती पन्नालाल जी के नाती पिता टेकचन्द वासो मोहना ग्राम है ।
अशुभ कर्म दिया त्रास, पिता किया स्वर्गवास कछू नहीं पास किया मुरेना मुकाम है ।
शुभ कर्म अनुसार वनागेह परिवार, अथिर जानि संसार त्यागा धन धाम है ।
मुनिलिंग लिया धार वंदि सिखर गिरनार भवानीमण्डी में श्रुतसागर नाम है ।

जन्म मुनि :
मोहना (ग्वालियर)
(म० प्र०)
भादो बदी तृतीया सन् १९१३

दीक्षा :
मुरेना (म० प्र०)
२६ मई, सन् १९७४

दीक्षा गुरु :
पूज्य १०८ श्री कुन्थु सागर जी महाराज

परम पूज्य मुनिराज, चारित्र चूड़ामणि श्री १०८ श्रुतसागरजी महाराज का

जीवन परिचय

प्रचार व प्रसार से कोसों दूर अपनी धुन में मस्त, लक्ष्य और कर्तव्य के प्रति सतत जागरुक मुनि श्री १०८ श्रुतसागरजी का परिचय देना वास्तव में अपरिचय की सीमा को बढ़ाना है। किसी भी त्यागी तपस्वी संत का यथार्थ परिचय तो उसकी वर्तमान पर्याय है, जो ध्रोव्य के आश्रय से, आते, जाते, काल पर छाप छोड़ जाती है। पिता श्री ने असमय में काल के गाल में समाकर आपको एहसास करा दिया कि "मैं एकाकी हूं"। आपके जीवन में कई उतार चढ़ाव आये। जैसे सबके जीवन में आते हैं। परन्तु आपने उनका यथार्थ दृष्टि से पठन मनन किया। तात्पर्य यह है कि घर बाहर जीवन की अन्तर बाह्य परिस्थितियाँ आपके बैरागी मन के अनुकूल बनने लगी। गृहस्थी के राग रंग फीके लगने लगे ऐसे ही समय पंचम प्रतिमाधारी अवस्था में आपको सर्प ने डस लिया। तत्काल दृढ़ निश्चय के साथ जिनमंन्दिर में जाविराजे और जिनभक्ति में लीन होगये। लगातार तीन दिवस अन्न जल का त्याग रहा। भक्ति की महिमा अद्भुत है। बिना किसी उपचार के सर्प का जहर स्वयमेव उतर गया। उपसर्ग टला। पंचम प्रतिमाधारी दयारामजी (गृहस्थी का नाम) ने अन्तर आत्मा की पुकार पर वैराग्य को ही जीवन का लक्ष्य बनाया। उपादान निमित्त की सन्धि वस्तु व्यवस्था का अंग है। तदनुसार उन्हीं दिनों आचार्य कन्थुसागर भिन्ड नगरी में विराजमान थे। आप उनके निकट गये और जिनदीक्षा गृहण कर, संसार मार्ग को त्याग दिया।

मुनिराज श्रुतसागरजी (मोरेनावाले) चारों अनुयोग के अच्छे ज्ञाता हैं परन्तु विशेष रूप से करणानुयोग के मर्मज्ञ हैं। इस अनुयोग में आपकी अद्भुत पैठ है। तत्व विवेचन की दृष्टि अति सूक्ष्म तथा हृदयग्राही है।

संक्षिप्त जीवन परिचय

जन्म—भादों बदी तृतिया, सन् १९१३, ग्राम मोहना (ग्वालियर) म० प्र०

परिवार—पिता टेकचन्दजी, माता–सरस्वती देवी, पत्नि–श्रीमती बतसिया देवी पुत्र और भाई आदि हैं।

गृहस्थकाल—लगभग ५३ वर्ष

वृति अवस्था—७ वर्ष

जिनदीक्षा ग्रहण—२६ मई, सन् १९७४ मुरेना (म०प्र०)

दीक्षागुरु—१०८ श्री कुन्थुसागरजी महाराज

चातुर्मास स्थान—१९७४ अभाह (मुरेना)

१९७५ जयपुर (राजस्थान)

१९७६ आगरा (यू०पी०)

१९७७ रेवाड़ी (हरियाणा)
१९७८ अजमेर (राजस्थान)
१९७९ आगरा (यू०पी०)
१९८० मुरेना (म०प्र०)
१९८१ नरवर (शिवपुरी) म०प्र०
१९८२ गुरुसराय (झांसी) यू०पी०
१९८३ मोहना (ग्वालियर) म०प्र०
१९८४ बारां (कोटा) राजस्थान
१९८५ मिसरौली (झालावाड़) राजस्थान

आपका सम्यक चिन्तन अति गंभीर एवं गहन है। अपने बाह्य स्वरूप के द्वारा, मुमक्षुओं को यह पावन सन्देश दे रहे हैं कि जीवन कितना मूल्यवान है, और हमारा क्या कर्तव्य है ? आपका आत्म-विश्वास, धैर्य और लगन तो स्वतः ही भवानीमंडी में उजागर होगई जबकि स्वास्थ्य के प्रतिकूल रहने पर भी कर्मयोगी बनकर त्रिलोक मण्डल विधान में अनेक नई पूजाओं की रचना की तथा विधान में आवश्यकतानुसार, संशोधन एवं आगमानुकूल संक्षिप्तीकरण किया।

ग्रन्थ में संशोधन, संक्षिप्तिकरण आदि का कार्य महाराज श्री ने त्रिलोकसार लोकविभाग और अन्य आगम ग्रन्थों के अध्ययन और अपनी सूक्ष्म दृष्टि के आधार पर किया है। जैसे नवग्रैवेयकों की तीन टिकड़ियों में चैत्यालय और श्रेणी बद्ध विमानों की संख्या में जो भेद प्राचीन आचार्यों के कथन में है उसमें यथार्थ संख्या के लिये लोक विभाग को आधार माना है।

मण्डल विधान में नये छन्दों का समावेश, पूर्व के छन्दों में संशोधन और नवीन पूजा रचना महाराज श्रुतसागर जी की विषय सम्बन्धी विज्ञता एवं भाषाविद की द्योतक है।

□□□□

卐 श्री वीतरागाय नमः 卐

परम पूज्य मुनिराज चारित्र चूड़ामणि १०८ श्री श्रुतसागरजी महाराज मोरेना वाले का

शुभाशीर्वाद

मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्म भूभृतांम् ।
ज्ञातारं विश्व तत्वानां, वन्दे तद्गुण लब्धये ।।

मोक्ष मार्ग के नेतृत्व, कर्म रूपी पर्वतों के भेतृत्व तथा समस्त तत्वों के ज्ञातृत्व सदृश्य अनुपम गुणों की प्राप्ति के लिये सामान्य रूप से मैं उन गुणों के धारक सभी तीर्थंकरों को तथा विशेष रूप से अन्तिम तीर्थंकर श्री १००८ श्री महावीर भगवान को नमस्कार करता हूं ।

इस वर्ष मिश्रौली (राज०) चातुर्मास के पश्चात दिगम्बर जैन समाज भवानीमंडी (राज०) के धर्म प्रेमी भाइयों के आग्रह और उनके पुण्योदय से हमारा यहाँ रहने का निमित्त बन गया। प्रवचन और उपदेश के मध्य अनेक बार मिश्रौली चातुर्मास के समय तीन लोक मण्डल विधान के आयोजन का प्रसंग और उसकी त्रुटियाँ तथा परस्पर कई पाठ भेद उसमें है इसकी चर्चा आई। इस पर यहाँ के दि० जैन समाज के आग्रह पर कुछ ऐसा योग बना और हमारी भावना हुई कि क्यों न त्रिलोक मंडल पूजन विधान का संशोधन संक्षिप्तिकरण आदि कार्य किया जावे ।

मुझे हर्ष है कि हमारे उपदेशों से प्रेरणा पाकर यहाँ के दिगम्बर जैन समाज ने इस पूजन विधान के प्रकाशन में आर्थिक दान दिया है इसके साथ ही संशोधित एवं नव रचित ग्रन्थ के पद्यों का लेखन कार्य, ग्रन्थ की प्रेस प्रति तैयार करना, प्रेस प्रति का पुनः वाचन आदि कार्य में मन से भी अनुमोदना कर जिन भाइयों ने योग दान किया, उन सबको मेरा शुभाशीर्वाद है ।

तीन लोक मण्डल विधान के प्रकाशन का कार्य स्तुत्य है। यहाँ के दि० जैन समाज द्वारा स्थापित श्रुतज्ञान प्रकाशन संस्थान द्वारा किये गये इस अनुकरणीय कार्य के लिये हमारा शुभ आशीर्वाद है ।

जीवन की प्रत्येक धार्मिक क्रिया सम्यक्त्व के उद्देश्य से लक्ष्य बनाकर की जाने पर प्रयोजन भूत होती है। जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन पूजन, मंडल विधान का आयोजन सबके लिये भाव विशुद्धि में निमित्त बने और सम्यकदर्शन की उत्पत्ति में सहायक हों, सभी ग्राम और नगरों का दि० जैन समाज इस मण्डल का योग्य अवसर पर आयोजन कर, इससे लाभान्वित हो और उन्हें धर्म लाभ हो ऐसी हमारी भावना है ।

जैन समाज में ग्रन्थों के निशुल्क वितरण से ग्रन्थ की महत्ता कम होती जारही है। परन्तु उसका लागत मूल्य देने से निश्चित ही ग्रन्थ के प्रति रूचि और उसकी संभाल में वृद्धि होती है। यही सब विचार कर, संस्था ने ग्रन्थ का लागत मूल्य लेकर देने की इच्छा प्रगट की, जो उचित है। इससे संस्था स्वावलम्बी बनकर, सम्यकज्ञान के प्रचार व प्रसार में योग दान देगी ।

अतः लागत मूल्य देकर, इस तीन लोक मंडल पूजा विधान को सभी क्रय करेंगे एवं धर्म लाभ लेवेंगे। ऐसी आशा के साथ उन्हें शुभ आशीर्वाद है ।

सर्व मंगल मांगल्यं सर्व कल्याण कारकम् । प्रधानं सर्व धर्माणाम्, जैनं जयतु शासनम् ।।

भवानीमंडी
फाल्गुन बदी एकादशी २०४३ वि० सं०
दि० ६-३-८६ ई० गुरुवार

मुनि श्रुतसागर

प्राक्कथन

अपनी आत्मा के स्वभाव में विद्यमान जो वीतरागता और सर्वज्ञता है और जो अपने विकारीभावों से दबी हुई है, उसे प्रगट करने के लिये वीतराग और सर्वज्ञ अरिहन्त सिद्ध परमात्मा एवं एकदेश वीतराग और आत्मज्ञ आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु परमेष्ठी की उपासना या अर्चना पूजा कहलाती है। यों प्रतिदिन उक्त पंच परमेष्ठी, जिन धर्म, जिन चैत्यालय, जिनालय, और जिन चैत्य (प्रतिमा) इन नव देवताओं की श्रावक पूजा किया करता है। क्योंकि श्रावक के देव पूजा गुरुपारित स्वाध्याय, संयम, तप और दान इन दैनिक षट्कर्मों में देव पूजा और दान की प्रधानता है। जबकि मुनिराज के कर्तव्यों में स्वाध्याय को प्रमुख माना गया है।

देवपूजा में अरिहन्त सिद्ध परमेष्ठी के साक्षात् दर्शन सर्वदा संभव न होने से उनकी तदाकार स्थापना रुप मूर्ति, जो वीतरागता की प्रतीक है, प्रतिष्ठित की जाकर उसके आलंबन से अभिषेक पूर्वक अष्ट द्रव्यों से पूजा करने का प्राचीनकाल से विधान पूर्वाचार्यों द्वारा बनाया गया हैं।

पूजा में चैत्यभक्ति, सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, शांतिभक्ति, समाधिभक्ति, पंच गुरुभक्ति आदि के पाठ दिये गये हैं। श्री कुन्दकुन्दाचार्य के अनुसार दिव्येण ण्हाणेण (शुद्धप्रासक जलाभिषेक) दिव्येण गंधेण (चन्दन) दिव्येण अक्खेण (अक्षत) दिव्येण पुष्पेण (पुण्य) दिव्येण चुण्येण (मोदकादिचूर्ण चरु) दिव्येण दीव्येण (दीप) दिव्येण धूपेण (धूप) दिव्वेण वासेण (तीर्थंकर पूजा पर माहात्मय प्रदर्शन फल ६ अमि० ११०५) का उल्लेख मिलता है यह दशभक्तिपाठ समय-समय पर प्रत्येक दिगम्बर मुनिचर्या का अनिवार्य अंग है।

जयधवला (भाग 1 सत्र ८२ पृ० ५०) में दान, पूजा, शील और उपवास श्रावकों के धर्म बताये है। धवला आदि में जिनविम्ब दर्शन सम्यग दर्शन का साधन माना गया है।

पूजा अभिषेक पूर्वक की जाती हैं और दिगम्बर आम्नायानुसार अभिषेक अर्हन्त प्रतिमा मानकर होती है। न कि जन्म कल्याणक की प्रतिमा मानकर। अतः जन्म कल्याणक का पाठ न बोल कर माधनदि कृत संस्कृत अभिषेक पाठ या उसका हिन्दी अनुवाद (हर जसराव कृत) जो "जिनवाणि संग्रह" पुस्तकों में उपलब्ध है, बोलकर अभिषेक करना चाहिए।

पूजा में अष्ट द्रव्य चढाने का उद्देश्य वीतरागता का पोषण है। यह संसारी प्राणी जिन वस्तुओं को भोगोपभोग के साधन मानता है। उनमें हेय बुद्धि और अपने आराध्य वीतरागपरमात्मा के गुणों के प्रति उपादेय बुद्धि हो सके इस हेतु इस अष्ट द्रव्यों से पूजन की जाती है। जैन उपासना पद्धति में किसी देव को बाह्य द्रव्य चढा कर-भोग लगा कर उसी अर्पित द्रव्य को स्वयं देवप्रसाद मानकर ग्रहण नहीं किया गया, वरन् वह हमारे लिये हितकारी नहीं, यह मान कर छोड़ा जाता है। उस माध्यम से आत्मा के गुणों को ग्रहण करने की प्रेरणा प्राप्त की जाती है। मन्त्र पूर्वक जढाये गये ये द्रव्य निर्मल्लि माने जाते हैं।

प्रबुद्ध उपासक यदि चिंतन करें तो उन्हें जल आदि अष्ट द्रव्य क्रमशः ज्ञानावर्णादि अष्ट कर्मों के नाश हेतु और अनन्त ज्ञानादि आठ गुणों की प्राप्ति के लिये चढ़ाये जाते हैं। इसका ज्ञान हो सकेगा और इसके वर्तमान पूजाओं में प्रमाण भी मिल जायेगें।

(जिन पूजा-जिन मन्दिर, वीर निर्वाण ग्रंथ प्रकाशन समिति,
५५ सीतलामाता बाजार, इन्दौर-२ मध्य प्रदेश)

पूजा की पुस्तक संस्कृत प्रस्तावना में 'द्रव्यस्य शुद्धियधिगव्यं' से पुण्यं समग्रमहमेकना जुहोमि' तक का तात्पर्य शुद्ध (प्रामुक) द्रव्य के अवलम्बन द्वारा अपने भावों को शुद्ध करते परमात्मा (अर्हन्त सिद्ध) की पूजा के साथ अपने कारण परमात्मा (शुद्धज्ञा पारिणामिक रूप) की पूजा (अनुभूति) करना है ।

श्रावक कम से कम अणुव्रती होता है । वह मद्य, मांस, मधु, रात्रि भोजन, अगा सप्तव्यसन और हिंसा आदि पंच पापों का स्थूल रूप से त्यागी होता है । अतः एक देश व्रती होत से सर्वथा अविरत चार विकल्प (भवन वासी, व्यंतर, ज्योतिषी, विमानवासी) के देवों की पूजा करने का अधिकारी नहीं , आशाधर प्रतिष्टा पाठ आदि ग्रन्थों में इन सभी तरह के देवी व देवों का जो रूप तथा उन्हें प्रसन्न करने के लिये जो द्रव्य बताये हैं, उनसे यह कोई नहीं मान सकता कि वे (देव) वे सम्यग दृष्टि हैं । बात तो सम्भाव की कही जाती है और चढ़ाये जाते हैं, जिनेन्द्र के समान द्रव्य और उनसे लौकिक कामना की जाती है । यदि वे सम्यग दृष्टि हैं तो जिनेन्द्र भक्तों का बिना पूजा के क्या सहयोग नहीं कर सकते ? पण्डित आशाधरजी ने उन देवों की पूजा का व्युत्पन्न (दृढ़) सम्यगदृष्टि और व्रती श्रावकों के लिये निषेध बताया है तथा रात्रि पूजा का भी निषेध किया है ।

पूजा के अष्ट द्रव्य, मन्दिर, वेदी, पूजक सभी में स्थापना (संकल्प) की प्रधानता है । इस सत्य में स्थापना सत्य भी है । अतः पूजा में जो बोला जाता है उसका सद्भाव आवश्यक नहीं है । स्थापना रूप मानव इन्द्र उन सौधर्मादि से श्रेष्ठ हैं क्योंकि वह व्रती है । वह उनकी पूजा क्यों करेगा ?

पूजा में जो आह्वानन, स्थापना सन्निधिकरण और द्रव्य चढ़ाकर शान्ति-समाधि पाठ के पश्चात् विसर्जन किया जाता है, वे प्रस्तुत पूजा के अंग हैं । अतः इनके रहस्यों को जानकर करने में बाधा नहीं है ।

श्री पूज्य मुनिराज १०८ श्री श्रुतसागरजी महाराज ने श्री कविवर नेमीचन्द्रजी कृत वृहत तीनलोक पूजा को संक्षिप्त कर विधान करने वालों के लिये सरल बना कर समय की बचत करने में सहयोग प्रदान किया है, वह योग्य ही है । उस कार्य में कोई पूजा छूटी नहीं है । जो एक माह में पूर्ण होता था, वह १० या १२ दिन में पूर्ण हो सकेगा । इससे इस विधान का अधिक प्रचार हो सकेगा । इसमें भवानी मण्डी के दिगम्बर जैन समाज का सहयोग प्राप्त हुआ है एतदर्थ समाज के धार्मिक बन्धु धन्यवाद के पात्र हैं ।

आशा है यह उपयोगी रचना जिनेन्द्र पूजा में रुचि रखने वाले सज्जनों को धर्म लाभ में सहायक होगी ।

नाथूलाल शास्त्री
४०, सरहुकुमचन्द मार्ग
इन्दौर (म. प्र.)

दि० २६-३-१९८६

आद्य मिताक्षर

दर्शन पूजन आदि भक्ति कार्यों में प्रायः गतानुगति का परंम्परा चलती है। ऐसे बहुत ही कम लोग होते हैं जो इसमें विवेक बुद्धि से काम लेते हैं। पुस्तकों में से पढ़कर और एक थाली से दूसरी थाली में द्रव्य चढ़ा देने को ही लोग पूजन समझ लेते हैं। पूजन के शब्दार्थ या भावार्थ पर कम ही ध्यान देते हैं।

गलती से यदि कुछ एक बार अशुद्ध या कम-अधिक छप गया तो आगे से दूसरे छपती रहती हैं। क्योंकि जब प्रकाशक ही उन अशुद्धियों को नहीं समझे। मैंने देखा है कि यदि "चऊ कर्म की तिरेसठ प्रकृति नाश" प्रकार छपा हुआ मिलेगा।

छप ग
पुस्त
समझ लेते हैं। जबकि भक्ति में भावों की
प्रधानता होती है। पूज
भी करते हैं—
द्रव्यस्य शुद्धि मा
गन्तु कामः।
आलम्बनानि विविधान्यवल्य
।।
यथायोग्य द्रव्यों की शुद्धि करके भावों का
र के
अवलम्बन लेकर सच्चे देव की पूजा करता हूं।

इस प्रतिज्ञा में भाव पूजा को प्राथमिकता दी गई है। किन्तु
शुद्ध-अशुद्ध क्या बोल रहा हूं उनको भाव पूजा का क्या महत्व हो सकता है?
है—"यस्मात् क्रिया प्रतिफलन्ति न भाव सून्यः।" अर्थात् भाव शून्य क्रिया फलदायक न

देखा देखी बिना विवेक के जो भी क्रिया की जाती है, वे सब क्रियाएं लोक मूढ़ता में सा
की जाती है, उनका धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। पूजन की प्रत्येक क्रिया के पीछे रहस्य छिपा हुआ है, किन्तु उसको न समझ कर लोग देखा देखी लकीर पीटते रहते हैं। यही लोग लौकिक कार्यों को बड़े सोच समझ के साथ विवेक पूर्वक करते हैं। दुकानदारी अथवा लड़का लड़की के विवाह संबन्ध बड़ी सूझबूझ और सोच समझ के साथ कर रहे हैं। इसी प्रकार का विवेक यदि धर्मकार्य में करने लगें तो हमको सच्चा विशिष्ट लाभ हो सकता है।

आर्य कुन्दकुन्द ने तो जो अरहंत भगवान को द्रव्यरूप, गुणरूप और पर्यायरूप से जानता है, वह आत्मा को जानता है और उसका मिथ्यात्व नष्ट हो जाता है। अतः पूजन विधान एक-एक शब्द के भाव को समझते हुए करना ही पूजन की सार्थकता है।

तीन लोक मण्डल विधान में अनेक स्थानों से प्रकाशित हो चुका है किन्तु उसमें अनेक विसंगतियां थीं। उनको पू० मुनिवर श्रुतसागर जी महाराज (मुरैना) ने देखकर समाज के समक्ष प्रस्तुत की, तब दि० जैन समाज भवानीमंडी की विशेष प्रार्थना पर मुनि श्री ने उसमें अनेक संशोधन कर उसका संक्षिप्तीकरण, संशोधन और प्रसंगानुसार कुछ पूजाओं का निर्माण कर आगमानुसार उसका कायाकल्प कर दिया है। जिससे यह विधान अपने आपमें आगम सम्मत शुद्ध होकर यथार्थ उपलब्धि में सहायक सिद्ध हो सकेगा। पूज्य मुनि श्री का इस कार्य के लिए दि० जैन समाज अत्यन्त उपकृत हुआ ही। स्थानीय प्रकाशक महोदय भी इस प्रकाशन के लिए विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

सन्मति सन्देश
५३५, गांधीनगर, दिल्ली-३१

प्रकाश हितैषी शास्त्री

प्रकाशकीय–आभार

सम्यक ज्ञान के प्रचार व प्रसार हेतु स्थानीय समाज द्वारा श्रुत ज्ञान प्रकाशन संस्थान की स्थापना की गई जिसका रचनाक्रम इस प्रकार है।

अध्यक्ष—श्री कँवरलाल सामरिया, उपाध्यक्ष—श्री प्रभुलालजी हरसौरा, मन्त्री—श्री लालचन्द जी पटवारी, सहामंत्री—श्री नरेशकुमार जी पाटनी, कोषाध्यक्ष—श्री कमलकुमार जी काला, सहायक कोषाध्यक्ष—श्री बाबूलाल जी संचोरा, संरक्षक द्वय—श्री फूलचन्द जी सोगानी, श्री नानूरामजी सावला एवं सदस्यगण।

संस्था का उद्देश्य जैन संस्कृति के संरक्षण हेतु आर्ष मार्गानुयायी समीचीन शास्त्रों का प्रकाशन करवाना एवं सम्यक ज्ञान का प्रसार करना है।

दान दातारों से संस्थाके प्रथम पुष्प प्रकाशन हेतु धनराशि एकत्र करने, फिर परमपूज्य मुनिराज श्री के चरणों में बैठकर, उनके मार्गदर्शन में कड़ाके की सर्दी में कई-कई दिनों तक, पांडुलिपि तैयार करने, उसके पश्चात त्रुटियों का आद्योपान्त अवलोकन एवं मिलान कर उन्हें ठीक करने वाले परमोत्साही बन्धु है सर्व श्री कमलकुमार जी काला, लालचन्द जी पटवारी, नरेशकुमार जी पाटनी, रूपसिंह जी पिड़ावा वाला, रमेशचन्द जी ठग, बाबूलाल जी संचोरा, मुकेशजी सोगानी, प्रकाशचन्दजी जैन और मनोहरलाल जी सोनिया। अपनी कर्तव्य निष्ठा के द्वारा मौनभाषा में प्रेरणा स्रोत है श्री प्रभुलाल जी हरसौरा, श्री फूलचन्द जी सोगानी (बाबूजी) एवं श्री नानूराम जी सावला।

संस्था के आधार जिन्होंने धनराशि एकत्रित करने में तथा पांडुलिपी तैयार करने में अपने को पूर्णरूपेण समर्पित किया ऐसे द्वय स्तम्भ हैं श्री लालचन्द जी पटवारी और श्री कमलकुमार जी काला।

उन सभी को धन्यवाद देने और आभार प्रदर्शित करने के लिये मेरे कोष में शब्दों का अभाव है।

स्थानीय समाज ने अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग ज्ञानदान में करके अपूर्व लाभ लिया है वास्तव में यह अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

परम आदरणीय पं० श्री नाथूलाल जी शास्त्री इन्दौर के प्रति जिन्होंने अपने अत्यावश्यक कार्य में से समय निकाल कर इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखा और समाज की दृष्टि में ग्रन्थ की महत्ता में अत्यधिक वृद्धि की हैं, संस्था आभार प्रदर्शित करती है।

ज्योति प्रिंटिंग प्रेस कोटा के मालिक श्री प्रेमचन्द जी जैन ने नवीन टाइप क्रय करके इस अपूर्व ग्रन्थ के मुद्रण का भार वहन किया है और समय सीमा में उसे पूर्ण किया, एतदर्थ धन्यवाद के पात्र हैं।

विनीत :

कँवरलाल सामरिया

अध्यक्ष

श्रुत ज्ञान प्रकाशन संस्थान

पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर

भवानीमंडी

जिला-झालावाड़ (राज०)

श्रुत ज्ञान प्रकाशन संस्थान की दान दाताओं की लिस्ट

२००१) सर्वश्री अमोलकचन्दजी पटवारी भवानीमण्डी
११०१) ,, फूलचन्दजी सोगानी भवानीमण्डी
१००१) ,, लखमीचन्दजी गोपालजी अग्रवाल जैन सिरोही
५५५) ,, विमलचन्दजी पाटनी भवानीमण्डी
५५१) ,, कस्तूरचन्दजी प्रकाशचन्दजी भवानीमण्डी
५०१) ,, नानूरामजी नरेन्द्रकुमारजी सांवला भवानीमण्डी
५०१) ,, भंवरलालजी भागचन्दजी चौधरी भवानीमण्डी
५०१) ,, धरमचन्दजी पहाड़िया कोटा वाले, भवानीमण्डी
५०१) ,, राजमलजी तहसीलदार साहब B-90 जनता कालोनी, जयपुर
५००) ,, प्रकाशचन्द्रजी छाजूरामजी अग्रवाल जैन सिरोही
४०१) ,, हजारीलालजी सरदारमलजी गोधा भवानीमण्डी
३२१) ,, ललितकुमारजी कंवरलालजी सामरिया भवानीमण्डी
३२१) ,, लालचन्दजी धन्नालालजी पटवारी भवानीमण्डी
३११) ,, बाबूलालजी संचोरा भवानीमण्डी R.S.E.B.
३०१) ,, सरावगी आटो मोबाइल्स भवानीमण्डी
३०१) ,, मूलचन्दजी पाटनी भवानीमण्डी
३०१) ,, महावीरप्रसादजी जैन भवानीमण्डी
३०१) ,, देवेन्द्रकुमारजी जैन भवानी मण्डी
२५१) ,, नरेन्द्रकुमारजी A. En. R. S- E. B. भवानीमण्डी
२०१) ,, छप्पनजी रोडजी सोगानी भवानीमण्डी
२०१) ,, गब्बूलालजी काला भवानीमण्डी
२०१) ,, चन्द्रकुमारजी जैन व्याख्याता भवानीमण्डी
२०१) ,, कुशालचन्दजी सेठिया मैनेजर राजस्थान बैंक भवानीमण्डी
२०१) ,, रखबचन्दजी जोधराजजी भवानीमण्डी
१७१) ,, रतनलालजी प्रभूलालजी हरसोला भवानीमण्डी
१५१) ,, कुन्दनमलजी मुकुन्दमलजी चांदवाड़ भवानीमण्डी
१५१) ,, नरेशकुमारजी पांडया भवानीमण्डी
१५१) ,, कन्हैयालालजी सौगानी भवानीमण्डी
१५१) ,, मांगीलालजी जैन मैनेजर सहकारी बैंक भवानीमण्डी
१५१) ,, मांगकचन्दजी बड़जात्या इन्दौर वाले भवानीमण्डी
१११) ,, केसरीमलजी हुकमचन्दजी ठग भवानीमण्डी
१०१) ,, नेमीचन्दजी सरावगी भवानीमण्डी
१०१) ,, अमोलकचन्दजी सांवला भवानीमण्डी
१०१) ,, फूलचन्दजी महावीरकुमारजी ठोरा भवानीमण्डी

१०१) सर्वश्री रूपचन्दजी बिरधीचन्दजी भवानीमण्डी
१०१) ,, लालचन्दजी अजमेरा भवानीमण्डी
१०१) ,, भानुकुमारजी अशोककुमारजी सोगानी भवानीमण्डी
१०१) ,, दाडमचन्दजी रोडमलजी भवानीमण्डी
१०१) ,, बापूसिंहजी दरयावसिंहजी भवानीमण्डी
१०१) ,, मिलापचन्दजी जैन भवानीमण्डी
१०१) ,, मोहनलालजी माणकचन्दजी भवानीमण्डी
१०१) ,, लालचन्दजी आफिस कानुनगो साहब भवानीमण्डी
७१) ,, राजकुमारजी दिल्ली वाले भवानीमण्डी
५१) ,, लालचन्दजी गंगवाल भवानीमण्डी
५१) ,, राजकुमारजी पांडया भवानीमण्डी
५१) ,, अजयकुमारजी जितेन्द्रकुमारजी भवानीमण्डी
५१) ,, जादुलालजी पटवारीजी भवानीमण्डी
५१) ,, पदमकुमारजी छाबड़ा भवानीमण्डी
५१) ,, नरेशकुमारजी पाटनी भवानीमण्डी
५१) ,, किशोरीलालजी कजोड़ीलालजी जैन भवानीमण्डी
५१) ,, मनोहरलालजी ओंकारलालजी भवानीमण्डी
५१) ,, रखबचन्दजी नैनसुखजी भवानीमण्डी
५१) ,, सुरेशकुमारजी केवलचन्दजी भवानीमण्डी
५१) ,, रूपसिंहजी बहादुरसिंहजी भवानीमण्डी
५१) ,, सुखमलजी सरोद वाले भवानीमण्डी
५१) ,, चैनसिंहजी सरदारमलजी भवानीमण्डी
५१) ,, सुरेन्द्रकुमार लालचन्दजी भवानीमण्डी
५१) ,, दिनेशकुमारजी गोधा भवानीमण्डी
५१) ,, कमलसिंहजी सुसनेर वाले भवानीमण्डी
५१) ,, धनसिंहजी भँवरसिंहजी भवानीमण्डी
५१) ,, महावीरकुमारजी मांगीलालजी जैन रटलाई वाले भवानीमण्डी
५१) ,, विजयकुमारजी सोगानी भवानीमण्डी
५१) ,, बुद्धिप्रकाशजी भवानी मण्डी
५१) ,, जितेन्द्रकुमारजी जैन भवानीमण्डी
५१) ,, महेशकुमारजी इन्द्रमलजी भवानीमण्डी
५१) ,, प्रेमचन्दजी लुहाड़ीया भवानीमण्डी
५१) ,, महेशकुमारजी मांगीलालजी रटलाई वाले भवानीमण्
५१) ,, केवलचन्दजी सरदारमलजी भवानीमण्डी
६८) गुप्त दान से

13८८९

□□□□

महिला समाज द्वारा प्राप्त दान

१०५२) श्रीमति कमलाबाई धर्मपत्नि अजयकुमारजी गंगवाल मिश्रोली
१००१) ,, केसरबाई धर्मपत्नि स्वर्गीय श्री धूलीलालजी भूच भवानी मण्डी
१३१) ,, कंचनबाई धर्मपत्नि मोतीलालजी टोंग्या भवानी मण्डी
१११) ,, सुशीलाबाई धर्मपत्नि कंवरलालजी सामरीया भवानी मण्डी
१११) ,, लाडकुवरबाई धर्मपत्नि नानूरामजी सावला भवानी मण्डी
१११) ,, प्रेमलता बाई धर्मपत्नि कमलकुमारजी काला भवानी मण्डी
१११) ,, कस्तूरीबाई अग्रवाल जैन भवानी मण्डी
१११) ,, रतनबाई धर्मपत्नि जुहारीलालजी बागडिया सारोला
१११) ,, चम्पाबाई बागडिया शामगढ़
१११) ,, मोहन बाई धर्मपत्नि अमोलकचन्दजी सावला भवानी मण्डी
१११) ,, निर्मला बाई पुत्री श्री फकीरचन्दजी भवानी मण्डी
१११) ,, बिरजी बाई धर्मपत्नि कस्तूरचन्दजी सावला भवानी मण्डी
१११) ,, निर्मलादेवी धर्मपत्नि रमेशचन्दजी ठग भवानी मण्डी
१११) ,, गुणमाला बाई धर्मपत्नि मूलचन्दजी पाटनी भवानी मण्डी
१११) ,, विमलाबाई धर्मपत्नि कन्हैयालालजी सोगानी भवानी मण्डी
१०१) ,, कजोड़ बाई धर्मपत्नि भंवरलालजी चौधरी भवानी मण्डी
५१) ,, मंजूला देवी धर्मपत्नि रूपचन्दजी काला भवानी भण्डी
५१) ,, इन्द्रा देवी धर्मपत्नि नरेशकुमारजी पाटनी भवानी मण्डी
५१) ,, फूलबाई धर्मपत्नि लालचन्दजी गंगवाल भवानी मण्डी
५१) ,, मन्नु बाई धर्मपत्नि टीकमचन्दजी भवानी मण्डी
६५) गुप्त दान से

३०२८

१७१०८

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	पूजा का नाम	पृष्ठ संख्या
१.	सिद्ध परमेष्ठी पूजा	१
२.	श्री तीन लोक सम्बन्धी समुच्चय जिन भवन पूजा	४
३.	अथः अधोलोक सम्बन्धी जिन भवन पूजा	८
४.	अथः अधोलोक के पंक भाग में असुरकुमार देवन के चौसठ लाख जिन भवन पूजा	१२
५.	अधोलोक के खर भाग में भवन वासी देवों के सात करोड़ आठ लाख जिन भवन पूजा	१५
६.	अथः मध्यलोक के सुदर्शन मेरु की भद्रशाल वन में चार श्री जिन भवन पूजा	२१
७.	सुदर्शन मेरु की नन्दन वन सम्बन्धी चार श्री जिन भवनों की पूजा	२४
८.	सुदर्शन मेरु सम्बन्धी सौमनस वन के चार श्री जिन भवनों की पूजा	२८
९.	सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन के चार श्री जिन भवन पूजा	३१
१०.	अथः सुदर्शन मेरु के गज दंतस्थ चार श्री जिन भवन पूजा	३६
११.	सुदर्शन मेरु सम्बन्धी जम्बू शालमली वृक्षों पर दो जिन भवन पूजा	३९
१२.	सुदर्शन मेरु के पूर्व दिशा में आठ वक्षार श्री जिन भवन की पूजा	४४
१३.	सुदर्शन मेरु के पूर्व दिशा में सोलह रूपाचल जिन भवन पूजा	५१
१४.	सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल सम्बन्धी तीन श्री जिन भवन पूजा	५९
१५.	सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र में रूपाचल जिन भवन पूजा	६६
१६.	सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भरत क्षेत्र में तीन चौबीसी पूजा	७३
१७.	अथः सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा में आठ वक्षार गिरि पर आठ जिन भवन पूजा	८२
१८.	सुदर्शन मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्र मध्य सोलह रूपाचल जिन भवन पूजा	९१
१९.	सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा तीन कुलाचल जिन भवन पूजा	१००
२०.	सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल श्री जिन भवन पूजा	१०६
२१.	सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य तीन चौबीसी पूजा	११०
२२.	श्री विजय मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चार जिनालय पूजा	११७
२३.	श्री विजय मेरु सम्बन्धी नन्दन वन पूजा	१२१
२४.	श्री विजय मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की चहुँ दिश जिन भवन पूजा	१२४
२५.	श्री विजय मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी श्री जिन भवन पूजा	१२७
२६.	श्री विजय मेरु की चारों कोण चार गजदन्त पूजा	१३१

क्र. सं.	पूजा का नाम	पृष्ठ संख्या
२७.	श्री विजय मेरु सम्बन्धी धात की शालमलि वृक्ष दो जिन भवन पूजा	१३५
२८.	श्री विजय मेरु दिश आठ वक्षार गिरि पर आठ जिन भवन पूजा	१४०
२९.	श्री विजय मेरु के पूर्व दिश विदेह क्षेत्र बीच षोडस रूपाचल जिन भवन पूजा	१४६
३०.	श्री विजय मेरु की दक्षिण दिशा तीन कुलाचल पूजा	१५५
३१.	श्री विजय मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र रूपाचल जिन भवन पूजा	१६०
३२.	श्री विजय मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र में तीन चौबीसी पूजा	१६४
३३.	श्री विजय मेरु की पश्चिम दिशा आठ वक्षार गिरि पूजा	१७०
३४.	श्री विजय मेरु की पश्चिम दिशा सोलह रूपाचल श्री जिन भवन पूजा	१७४
३५.	श्री विजय मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल पूजा	१८१
३६.	श्री विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल जिन भवन पूजा	१८५
३७.	श्री विजय मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र आर्य खण्ड में तीन चौबीसी पूजा	१८९
३८.	श्री अचल मेरु के भद्रशाल वन में ४ श्री जिन भवन पूजा	१९५
३९.	श्री अचल मेरु के नन्दन वन में ४ श्री जिन भवन पूजा	१९९
४०.	श्री अचल मेरु के सौमनस वन में चार श्री जिन भवन पूजा	२०१
४१.	श्री अचल मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी चार श्री जिन पूजा	२०४
४२.	श्री अचल मेरु के चारों कोण चार गजदन्त पूजा	२०८
४३.	श्री अचल मेरु सम्बन्धी धात की वृक्ष शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा	२११
४४.	श्री अचल मेरु पूर्व दिश आठ वक्षार गिरी आठ श्री जिन भवन पूजा	२१५
४५.	श्री अचल मेरु की पूर्व दिशा में सोलह रूपाचल श्री जिन भवन पूजा	२२०
४६.	श्री अचल मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल सीस तीन श्री जिन भवन पूजा	२२७
४७.	श्री अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य एक रूपाचल सीस पूजा	२३१
४८.	श्री अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में तीन चौबीसी पूजा	२३४
४९.	श्री अचल मेरु की पश्चिम दिश आठ वक्षार गिरि शीस आठ श्री जिन भवन पूजा	२३९
५०.	श्री अचल मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्र बीच सोलह रूपाचल शीश श्री जिन भवन पूजा	२४४
५१.	श्री अचल मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल शीश तीन श्री जिन भवन पूजा	२५१
५२.	श्री अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा	२५५
५३.	श्री अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में तीन चौबीसी पूजा	२५९
५४.	श्री धात कीं द्वीप सम्बन्धी दो इष्वाकार गिरि दो जिन भवन पूजा	२६४
५५.	श्री मन्दर मेरु के भद्रशाल वन की चार जिन भवन पूजा	२६८

क्र. सं.	पूजा का नाम	पृष्ठ संख्या
५६.	श्री मन्दर मेरु के नन्दन वन की चार जिन भवन पूजा	२७१
५७.	श्री मन्दर मेरु के सौमनस वन की चार जिन भवन पूजा	२७४
५८.	श्री मन्दर मेरु पांडुक वन की चार जिन भवन पूजा	२७६
५९.	श्री मन्दर मेरु की चारों कोण चार गजदन्त पूजा	२८०
६०.	श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी पुष्कर शालमलि तरु जिनालय पूजा	२८३
६१.	श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व दिश आठ वक्षार गिरी आठ श्री जिन भवन पूजा	२८६
६२.	श्री मन्दर मेरु की पूर्व दिशा सोलह रूपाचल श्री जिन भवन पूजा	२९१
६३.	श्री मन्दर की पूर्व दक्षिण दिशा में तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा	२९९
६४.	श्री मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य एक रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा	३०३
६५.	श्री मन्दर मेरु के भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी पूजा	३०७
६६.	श्री मन्दर मेरु के पश्चिम दिश आठ वक्षार गिरो शीष आठ श्री जिन भवन पूजा	३११
६७.	श्री मन्दर मेरु की पश्चिम दिशा में सोलह रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा	३१७
६८.	श्री मन्दर मेरु की उत्तर दिसि तीन कुलाचलों पर तीन जिन भवन पूजा	३२३
६९.	श्री मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा	३२७
७०.	श्री मन्दर मेरु के ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी पूजा	३३१
७१.	श्री विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन की चार श्री जिन भवन पूजा	३३५
७२.	श्री विद्युन्माली मेरु के नन्दन वन की चार जिनालय श्री जिन भवन पूजा	३३९
७३.	श्री विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन की चार दिसि श्री जिनालय पूजा	३४३
७४.	श्री विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की चार श्री जिन भवन पूजा	३४६
७५.	श्री विद्युन्मालो मेरु की चारों कोण चार गजदन्त जिन भवन पूजा	३५०
७६.	श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पुष्कर शालमलि वृक्ष दो जिनालय पूजा	३५४
७७.	श्री विद्युन्मालो मेरु की पूर्व विदेहन में आठ वक्षार गिरी शीश आठ श्री जिन भवन पूजा	३५७
७८.	श्री विद्युन्माली मेरु की पूर्व दिशा सोलह रूपाचल शीश सोलह जिन भवन पूजा	३६२
७९.	श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल पर तीन जिन भवन पूजा	३६९
८०.	श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीश श्री जिन भवन पूजा	३७४
८१.	श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी जिन भवन पूजा	३७८
८२.	श्री विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह में आठ वक्षार गिरि शीश आठ जिन भवन पूजा	३८२
८३.	श्री विद्युन्माली मेरु की पश्चिम दिसि पोडस रूपाचल शीश पोडस श्री जिन भवन पूजा	३८७
८४.	श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा	३९४

क्र. सं.	पूजा का नाम	पृष्ठ संख्या
८५.	श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा	३९९
८६.	श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी जिन भवन पूजा	४०४
८७.	श्री पुष्करार्ध द्वीप सम्बन्धी दक्षिण उत्तर दो इष्वाकार जिनालय पूजा	४०९
८८.	श्री मानुषोत्तर पर्वत चतुं दिक चार जिनालय पूजा	४१३
८९.	श्री नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशि तेरह श्री जिन भवन पूजा	४२२
९०.	श्री नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिस तेरह जिनालय पूजा	४२८
९१.	श्री नन्दीश्वर द्वीप पक्षिम दिस तेरह जिनालय पूजा	४३४
९२.	श्री नन्दीश्वर द्वीप उत्तर दिस तेरह जिनालय पूजा	४४०
९३.	श्री ग्यारहवां कुण्डल द्वीप सम्बन्धी चार जिनालय पूजा	४४६
९४.	श्री तेरहवां रुचिक द्वीप चहुँ दिस चार जिनालय पूजा	४५०
९५.	श्री उर्ध्वलोक में सोधर्म ईशान प्रथम युगल में ६० लाख जिन भवन पूजा	४५९
९६.	श्री सनत्कुमार दूजा युगल में बीस लाख जिन भवन पूजा	४६४
९७.	श्री ब्रह्म ब्रह्मोत्तर तीजा युगल में चार लाख जिन भवन पूजा	४७०
९८.	श्री लांतव कापिष्ठ चौथा युगल श्री पचास हजार जिन भवन पूजा	४७४
९९.	श्री शुक्र महाशुक्र पंचम युगल में चालीस हजार जिन भवन पूजा	४७८
१००.	श्री सतार रु सहश्रार छटा युगल श्री छः हजार जिन भवन पूजा	४८१
१०१.	श्री आनत प्राणत सष्ठम युगल श्री चार सौ चालीस जिन भवन पूजा	४८६
१०२.	श्री आरण अच्युत अष्टम युगल में दो सौ साठ जिन भवन पूजा	४९०
१०३.	श्री नव ग्रेवेयक सम्बन्धी तीन सौ नव जिन भवन पूजा	४९४
१०४.	श्री नव अनुदिश सम्बन्धी नव श्री जिन भवन पूजा	५०३
१०५.	श्री पंचानुत्तर सम्बन्धी पांच श्री जिन भवन पूजा	५०५
१०६.	श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजा	५१०
१०७.	श्री तीन लोक पूजा का भजन	५१६
१०८.	श्री तीन लोक पूजा आरती	५१८

卐 मंगलाचरण 卐

अरहंत सिद्धाचार्य पाठक साधु परमेष्ठी परम ।
जिनवर भवन प्रतिमा जिनेश्वर जैनवाणी जिन धरम ॥
नव देवता ये पूज्य जग में ध्यावते जो तजि भरम ।
तिनिके अनादी से लगे सब कर्म भ्रागें हो नरम ॥

—परिपुष्पांजलि

नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य

सिद्ध परमेष्ठी पूजा नं. १

दोहा—गुण अनंत युत सिद्ध वर, लोका लोक प्रकाश ।
तिन पद कमल सु पूजहूं, धरि मन परम हुलास ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध चक्राधिपते सिद्ध परमेष्ठिने अत्र अत्र अवतर सवोषट् आह्वाहनं अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्नि हितो भव भव वसट सन्निधी करणं परि पुष्पांजलि छिपेन–

कव्वाली— मनोहर भृङ्ग सुवरण का चीर दुहरा सम्हारा है ।
जुगति से छानि निर्मल नीर कलशा हाथ धारा है ॥
चरण में धार ढारत ही नशे संसार सारा है ।
सिद्ध परमेष्ठि पद पूजन हिया हुलसा हमारा है ॥

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने जन्म जरामरण विनासनाय ॥ जलं ॥१॥

लिया कुमकुम अगर चन्दन और करपूर डारा है ।
घिसा प्रासुक उदधि के संग झारी मांहि धारा है ।।
मिटे जग की तपन इस हेतु तुम चरणों मंझारा है ।
सिद्ध परमेष्ठि पद पूजन हिया हुलसा हमारा है ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने संसार ताप विनासनाय ।। चन्दनं ।।२।।

बिना टूटे लिये तन्दुल पुंज कीने अपारा है ।
बहुत उत्साह से धारे सु तुम चरणणि अगारा है ।।
मिले शिवपुर में खाली सीट बस ये ही सहारा है । सिद्ध ···· ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने अक्षय पद प्राप्ताय ।। अक्षतं ।।३।।

सुमन उत्तम छपरिया में चुने नाना प्रकारा है ।
भेट करने का यह कारन कि मम उर में विकारा है ।।
छुटे पीछा मदन रिपु से यही मतलब हमारा है । सिद्ध·····।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने काम बाण नासनाय ।। पुष्पं ।।४।।

अठारह थाल सुवरण के व चाँदी के अठारा है ।
सजाये जुगति से छत्तीस व्यंजन तिनि मझारा है ।।
छुदा नाशन के हित चरणों में धरि लीना सहारा है । सिद्ध····· ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने छुदा रोग विनासनाय ।। नेवद्यं ।।५।।

कनक मइ दीप ले उत्तम घिरत भरि के प्रजारा है ।
आरती करि युगल कर से तुम्हारे अग्र धारा है ।।
मैं अपनी वस्तु पहिचानूं मिटे मोहांधकारा है । सिद्ध····· ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने मोहांधकार विनास नाय ।। दीपं ।।६।।

मदारी जिस तरह बन्दर नचावे जग मंझारा है ।
उसी विधि कर्म वेरी ने बनाया ठाट सारा है ।।
धूप खेवत कर्म नासें चहूं अहसां तुम्हारा है । सिद्ध····· ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने अष्ट कर्म दहनाय ।। धुपं ।।७।।

ढमोला भरि के फल लायो गिनत पाऊं न पारा है।
चरण में भेट धरि नाचूं बजाऊं साज सारा है॥
कृपा करिये मुझे शिव तिय बनावे निज पियारा है।
सिद्ध परमेष्ठि पद पूजन हिया हुलसा हमारा है॥

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने मोक्ष फल प्राप्ताय फलं ॥ ८ ॥

वारि चन्दन व तन्दुल फूल चरु दीपक उजारा है।
धूप फल सब मिलाकर अर्घ धरि तुम्हरे अगारा है॥
भक्ति मिल जाय चरणों की दया ने कर पसारा है। सिद्ध ·· ॥

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घम ॥ ९ ॥

अड्डिल छंद—विरंग विदोष विकोप विमान विपार हो।
विमल विराग विसंक विखंड विहार हो॥
हो निरंग निर्भय निर्मल निरकार हो।
अचल असंक अरूप अशब्द अधार हो॥

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने महा अर्घम निर्व पामीत ॥ स्वाहाः ॥
यहाँ १०८ वार जाप्य ॐ णमो सिद्धाणं। (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—नमो सिद्ध परमातमा, अद्भुत परम रसाल।
तुम गुण अगम अपार हैं, सरस रची जयमाल॥

नमस्ते—सिद्ध अमित गुण धार नमस्ते। चरणनि धोक हमार नमस्ते॥
छायक सम्यक धार नमस्ते। दृग अन अंत अपार नमस्ते॥
लोका लोक निहार नमस्ते। करहु हमें भव पार नमस्ते॥
सुख अनंत भंडार नमस्ते। मेरा दुःख निरवार नमस्ते॥
बल का नाही पार नमस्ते। निर्बल का दुःख हार नमस्ते॥
अव गाहन गुण धार नमस्ते। सिद्ध में सिद्ध अपार नमस्ते॥

अव्या बाध सुधार नमस्ते । मम बाधा करि छार नमस्ते ।।
अगुरु लघु विस्तार नमस्ते । शूक्षमता हिय धार नमस्ते ।।
वसु गुण महा निहार नमस्ते । और गुणनि नहीं पार नमस्ते ।।
मेरी सुनहु पुकार नमस्ते । मैं दुखिया निरधार नमस्ते ।।
और न चाह हमार नमस्ते । भक्ति मिले हर बार नमस्ते ।।
'दयाराम' बलिहार नमस्ते । झोली रहा पसार नमस्ते ।।

ॐ ह्रीं सकल सिद्ध परमेष्ठिने पूर्णार्घं अर्घं निर्मयामित ।। स्वहाः ।।

सोरठा--सिद्ध गुणनि की खान, बरनत हारे मुनिवरा ।
मैं अति अल्प अज्ञान, 'दया' तने विस्यय कहा ।।

इत्यार्शीवाद

श्री तीन लोक सम्बन्धी समुच्चय जिन भवन पूजा नं. २

चौपाई स्थापना--आठकरोड़ रु छप्पन लाख । सहस सत्याब्रह्म चतु शत भाख ।।
जोड़ि इक्यासी जिनवर थान । तोन लोक आह्वान करान ।।

ॐ ह्रीं श्रीं त्रिलोक सम्बण्धी आठ करोड़ छप्पन लाख सित्याणवे हजार चार सौ इक्यासी श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।। संस्थापनं ।।

छंद त्रिभंगी-क्षीरोदधि नीरं, उज्ज्वल क्षीरं, छानि सुचीरं भरि झारी ।
अति मधुर लखावन परम सुपावनं, तृषा बुझावन गुण भारी ।।
वसु कोटि सु छप्पन लाख सत्यानव सहस चार सत इक्यासी ।
जिन गेह अकीर्तम तिहुं जग भीतर पूजत पद लहि अविनासी ।।

ॐ ह्रीं त्रिलोक सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा, मृत्यु विनाशनाय जलं ।

मलयागिरि पावन चंदन बावन ताप बुझावन घसि लीनो ।
धरि कनक कटोरी, दोउ कर जोरी तुम पद औरी चित दीनो ।। वसु···चन्दनं

बहु भांति अनोखे, तंदुल चोखे, लखि निर्दोषे, हम लीने ।
धरि कंचन थाली, तुम गुणमाली, पुंज विशाली कर दीने ॥ वसु···अक्षतं

शुभ पुष्प सु जाती, हैं बहु भांती, अलि लिपटाती लेय वरं ।
धरि कनक रकेबी, करगहि लेवी, तुम पद युग की भेट धरं ॥ वसु···पुष्पं

खुरमा जु गिंदोड़ा बरफी पेड़ा, घेवर मोदक भर थारी ।
विधि पूर्वक कीने, घृत पय भीनें, खंड मिली ने सुखकारी ॥ वसु···नैवेद्य

मिथ्यात्व महातम छाय रह्यो हम, निज भव परणति नहिं सूझे ।
इह कारण पाके, दीप सजाके, थाल धराके हम पूजे ॥ वसु···दीपं

दस गंध कुटाके, धूप बनाके, निज करि लेके धरि ज्वाला ।
तसु धूम्र उड़ाई, दश दिशि छाई, बहु महकाई, अति आला ॥ वसु···धूपं

बादाम छुहारे श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे दाख वरं ।
इन आदि अनोखे, लखि निर्दोखे थाल संजोके भेट धरं ॥ वसु···फलं

जल चंदन तंदुल कुसुम रु नेवज दीप, धूप फल थाल रचूं ।
जयघोष कराऊं, बीन बजाऊं, अर्घ चढ़ाऊं खूब नचूं ॥ वसु···अर्घं

प्रत्येक अर्घं

चौपाई—अधोलोक जिन आगम साख, सात करोड़ बहत्तर लाख ।
श्री जिन भवन महा छवि देय, ते सब पूजूं वसु बिधि लेय ॥
ॐ ह्रीं अधोलोक सम्बन्धी सात करोड़ बहत्तर लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घ ।

मध्यलोक जिन मन्दिर ठाठ, साढ़े चार शतक अरु आठ ।
ते सब पूजूं अर्घ चढ़ाय, मन वचतन त्रियोग लगाय ॥
ॐ ह्रीं मध्य लोक सम्बन्धी चार सौ अट्ठावन श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घं ।

अडिल्ल—ऊर्द्ध लोक के मांहि भवन जिन जानिये ।
लाख चौरासी सहस सत्यानव मानियो ॥

तापें धरि तेवीस जजूं सिर नायके ।
कंचन थाल मंझार जलादिक लायके ॥

ॐ ह्रीं ऊर्ध्व लोक सम्बन्धी चोरासी लाख सत्याणवे हजार तेवीस श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घं ।

गीता छन्द--वसु कोटि छप्पन लाख ऊपर सहस सत्यानव मानियो ।
सत चार पे गिन ले इक्यासी भवन जिनवर जानियो ॥
तिहुं लोक भीतर सासते सुर असुर नर पूजा करे ।
तिन भवन को मे अर्घ देकरि पूजहूं जग दुःख हरे ॥

ॐ ह्रीं तीन लोक सम्बन्धी आठ करोड़ छप्पन लाख सत्याणवे हजार चार सौ इक्यासी श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घं ।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—अब वरणों जय मालिका, सुनो भव्य चितलाय ।
जिन मन्दिर तिहूं लोक के, देऊ सकल दरसाय ॥

पद्धरी छन्द–जय अमल अनादि अनंत जान, अनमित जू अकीर्त्तिम अचल मान ।
जय अजय अखंड अरूप धार, षट द्रव्य नहीं दीखे लगार ॥१॥
जय निराकार अविकार होय, राजत अनन्त परदेश सोय ।
जय शुद्ध सुगुण अवगाह पाय, दस दिशा मांहि इह विधि लखाय ॥२॥
यह भेद अलोकाकाश जान, ता मध्य लोक नभ तीन मान ।
स्वयमेव बन्यौ अविचल अनन्त, अविनाशी अनादि जु कहत सन्त ॥३॥
पुरुषा आकार ठाड़ो निहार, कटि हाथ धारि दोय पग पसार ।
दक्षिण उत्तर दिस सर्व ठौर, राजु जु सात भाख्यौ निचौर ॥४॥
जय पूर्व अपर दिस घाटि बाधि, सुनि कथन कहूं ताको सु साधि ।
लखि शुभ्र तले राजू जु सात, मध्य लोक एक राजू रहात ॥५॥

फिर ब्रह्म स्वर्ग राजु जु पांच, भू सिद्ध एक राजू जूं सांच ।
दस चार ऊंच राजू गिनाय, षट् द्रव्य लिये चतु कौण पाय ॥६॥
तसु वात वलय लिपटाय तीन, इह निराधार लखियो प्रवीन ।
त्रस नाड़ी तामधि जानि खास, चतु कोण एक राजू जु व्यास ॥७॥
राजू उतंग चौदह प्रमान, लखि स्वयं सिद्ध रचना सुथान ।
ता मध्य जोव त्रस आदि देय, निज थान पाय तिठठे भलेय ॥८॥
लखि अधो भाग में शुभ्र थानं, गिन सात कहै आगम प्रमान ।
षट् थान मांहि नारकि बसेय, इक शुभ्र भाग फिर तीन भेय ॥९॥
तसु अधोभाग नारकि रहाय, पुनि ऊर्द्ध भाग द्वय थान पाय ।
बस रहे भवन व्यंतर जु देव, पुरहर्म्य छजै रचना स्वयमेव ॥१०॥
तिस थान गेह जिनराज भाख, गिन सात कोड़ि बहत्तर जु लाख ।
ते भवन नमूं मन वचन काय, गति शुभ्र हरण हारे लखाय ॥११॥
पुनि मध्य लोक गोला अकार, लखि दीप उदधि रचना विचार ।
गिन असंख्यात भाखे जु संत, लखि स्वयम्भू रमण सबके जु अन्त ॥१२॥
इक राजू व्यास में सर्व जान, मध्यलोक तणौं इह कथन मान ।
सब मध्य द्वीप जम्बू गिणेय, त्रय दशम रुचिकवर नाम लेय ॥१३॥
इन तेरह में जिन धाम जान, शत चार अठ्ठावन है प्रमान ।
खग देव असुर नर आय आय, पद पूजि जाइ सिर नाय नाय ॥१४॥
जय ऊर्द्ध लोक सुर कल्पवास, तिह थान छजै जिन भवन खास ।
जय लाख चौरासी पै लखेय, जय सहस सत्यानव और ठेय ॥१५॥
जय बीस तीन पुनि जोड़ देय जिन भवन अकीर्त्तिम जान लेय ।
प्रति एक भवन रचना कहाय, जिन बिंब एक शत आठ पाय ॥१६॥
शत पंच धनुष उन्नत लखाय, पद्मासन स्थित ध्यान लाय ।
सिर तीन छत्र शोभित विशाल, त्रय पाद पीठ मणि जड़ित लाल ॥१७॥

भामण्डल की छवि कौन गाय, पुनि चंवर दुरैं चौसठि लखाय।
जय दुंदुभिरव अद्भुत सुणाय, जय पुष्प वृष्टि गंधोदकाय ॥१८॥
जय तरु अशोक शोभा भलेय, मंगल विभूति राजत अनेय।
घट तूंप छजै मणि माल पाय, घट धूप धुम्रदिय सर्व छाय ॥१९॥
जय केतु पंक्ति सोहे महान्, गंधर्व देवगण करत गान।
सुर जन्म लेत लखि अवधि पाय, तिस थांन प्रथम पूजन कराय ॥२०॥
जिन गेह तणो वरणन अपार, हम तुच्छ बुद्धि किम लहत पार।
जय देव जिनेश्वर जगत भूप, नमि 'नेम' मगे निज देहु रूप ॥२१॥

दोहा--तीन लोक में सासते, श्री जिन भवन विचार।
मन वच तन करि शुद्धता, पूजो अर्घ उतार ॥२२॥

ॐ ह्रीं तीन लोक सम्बन्धी आठ करोड़ छप्पन लाख सत्यानवे हजार चार सौ इक्यासी (८,५६,९७,४८१) श्री जिन भवनेभ्यो ।।अर्घं।।

छन्द चौपया--तिहुं जग भीतर श्री जिन मन्दिर बने अकृत्रिम अति सूखदाय।
नर सुर खग करि वंदनीक जे तिनको भविजन पाठ कराय ॥
धन धान्यादिक सम्पति तिनके पुत्र पौत्र सुख होय भलाय।
चक्री सुर खग इन्द्र होय के कर्म नाश शिवपुर सुख थाय ॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

अथः अधोलोक सम्बन्धी जिन भिवन पूजा नं. ३

स्थापना दोहा–अधोलोक जिन भवन लखि, प्रतिमा श्री जिनराज।
आव्हानन तिनकी करूं, इस थल पूजन काज ॥

ॐ ह्रीं अधोलोक सम्बन्धी सात करोड़ बहत्तर लाख श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि करणम्।

छन्द गीता–अति मधुर शीतल सरित गंगा नीर निर्मल लीजिए
मणि जड़ित झारी माहि भरिके तासु धार करीजिए ॥
गिण सात क्रोडरू लाख बहत्तर भवन जिन पाताल में ।
ते पूज भवि शिव थान चालो क्यों फंसे जग जाल में ॥

ॐ ह्रीं अधोलोक सम्बन्धी सात करोड़ बहत्तर लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥जलं॥१॥

मलयागिरी घसि लेय सुन्दर माहि केशर डारिकें ।
धरि कनक रतन जु जड़ित प्याले ताप भव दे टारिकें ॥गिण सात···चंदन
आछे अखंडित लेय तन्दुल परम कोमल जोयके ।
भवि करहु जिन पद पुज नीके थाल कंचन धोयके ॥गिण सात···अक्षतं
केतकीं चम्पा आदि देकर फूल प्रासुक ल्यावने ।
मणि जड़ित हाडक थाल कर ले चरण निकट धरावने ॥गिण सात···पुष्पं
बहु माँति व्यंजन दुग्ध सर्पी डारि शक्करि पाचिके ।
फिरि शुद्ध विधि तें लेहु भविजन थाल कंचन राचिकें ॥गिण सात···नैवेद्य
बर दीप द्युति को रतन लखि के दीप कीजे तास को ।
धरि कनक थाली लेहु भविजन ज्योति जगमग कास को ॥गिण सात···दीपं
श्रीखण्ड अगर जु तगर आदिक गंध दस बिध लेय कें ।
कर धूप हरष जु धारि मन में अग्नि घट में खेय कें ॥गिण सात···धूपं
बादाम पिस्ता दाख पूंगी लोंग श्रीफल आदि जू ।
धरि शुद्ध फल ले भेंट तुमरी, अशुभ फल करि वादि जू ॥गिण सात···फलं
ले नीर चन्दन आदि वसु विध, द्रव्य अर्घ बनोजिए ।
धरि हेम थाल उठाय कर गहि घोष जय जय कीजिए ॥गिण सात···अर्घ्यं

चोपई–भवन पताल जिनेश्वर गेह । अर्घ जजूं तिनके घर नेह ॥
जल आदिक वसु द्रव्य मिलाय । कंचन थाली उर हर्षाय ॥

ॐ अधोलोक सम्बन्धी सात करोड़ बहत्तर लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं। जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अब वरणों पाताल की जिन मंदिर जयमाल।
सुनत पढ़त सुख उपजै, बाढ़ै पुण्य विशाल॥

बेसरी छन्द—भवन पताल विषैं भवि जानो, तिनमें नारक सात पिछानो।
रतन प्रभा पहलो मन भावे, तामें रचना इस विधि पावे॥१॥
खर अरु पंक अब्बहुल भागा, खर अरु पंक भवन सुर जागा।
तिनकी गिणती इस विधि भाखि, आगम माहि जिनेश्वर गाई॥२॥
पंक भाग सुर असुर कुमारा, चौंसठ लाख भवन गिण सारा।
तितने ही जिन गेह लसावें, तिनको मन वच तन सिर नावे॥३॥
नाग कुंवर खर भाग बसावें, लाख असी अरु चार गिणावें।
तितने ही तहं जिनवर गेहा, ताहि नमों मैं उर धरि नेहा॥४॥
सुवरण सुर तिस थल में जानों, लाख बहत्तर थान बखानो।
तिनमें तितने श्री जिन धामा, द्वयकर जोड़ि जु करूं प्रणामा॥५॥
दीप कुंवर तिस थान बसावें, लाख छिहंतर भवन लसावें।
तितने मंदिर श्री जगदीशा, द्वयकर जोड़ि नमूं निज शीशा॥६॥
अब्धि कुमर तिस थल के मांही, लाख छिहंतर भवन कहाही।
तितने जिनवर मंदिर गाऐ, तिनके चरण कमल सिर नाऐ॥७॥
विद्युत प्रभु थल वोहि लहायो, लाख छिहंतर गेह जुड़ायो।
तिस थल जितने श्री जिन थाना, द्वयकर जोड़ शीश धरवांना॥८॥
स्तनित कुंवरा वहाँ लखीजे, लाख छिहत्तर धर गिण लीजे।
तिनके घर सम श्री भगवाना, मंदिर बन्दूं उर धरि ध्याना॥९॥
दिक्कुमार लेखो थल वोही, लाख छिहंतर धर गिण सोही।
तितने राजत भवन जिनेशा, तिनको शीश नमूं जु हमेशा॥१०॥

अग्निकुंवर सुर उस थल देखो, लाख छिहंतर घर गिण लेखो ।
तिन सब भवन जिनेश्वर केरे, तिनके चरण कमल हम चेरे ॥११॥
वात कुंवर तिस थान बसेवो, छिणवे लाख भवन गिण लेवो ।
तितने श्री जिन धाम बखाने, तिनको नमन शीश कर ठाने ॥१२॥
भवन-अमर ये वस जु प्रकारा, थान वास पाताल विचारा ।
जानि अकृतिम रचना सारी, अविनाशी अरु है अविकारी ॥१३॥
श्री जिन भवन सकल गिण भाखं, सात करोड़ बहत्तर लाखं ।
तिनमें श्री जिन बिंब विराजे, एक शतक अरु आठ जु छाजे ॥१४॥
एक भवन के मांहि निहारो, इह विधि भवन सकल विस्तारो ।
तिनकी संख्या सुनि भव भाई, भाषत हूं सब ठीक धराई ॥१५॥
आठ अरब कोड़ो तेतीसा, ता पर छिहंतर लाख धरीसा ।
इतने जोड़ि भवन पाताला, श्री जिन बिंब नमूं त्रय काला ॥१६॥
तिनकी महिमा कब लों कीजे, नाम लेत भव ताप हरीजे ।
तुम जगदीश सकल सुखदाता, अशुभ मेटि तुम करन जु साता ॥१७॥
तुम देवन के देव कहावो, दुरित नाश शिव थान बसावो ।
तुम त्रिभुवन के नायक नामी, घट-घट के तुम अन्तर्यामी ॥१८॥
मोह महा भट तुमने चूरा, तुम ही प्रभु तिहुं जग में सूरा ।
तुम ही हो प्रभु केवल ज्ञानी, तुम महिमा हम आज पिछानी ॥१९॥
काल अनन्त वितीत्यो मोकूं, अब लों मैं नहीं जान्यो तोकूं ।
कर्म आठ संग लागे मेरे, नाहक भव वन मांहि जु घेरे ॥२०॥
मोह देत दुःख बहुत जु भारी, मैं इनको कछु नांहि बिगारी ।
निज निधि लूटि दीन मुझ कीनो, सो तुम ज्ञान मांहि सब चीन्हो ॥२१॥
तुम पद दीनदयाल जु केरों, मैं अति दीन भयो प्रभु हेरो ।
'नेमि' अरघ धरि तुम पद आगे, शीस हाथ धरि निज गुण मांगे ॥२२॥

चौपाई–सात किरोड़ रु बहत्तर लाख, मुख सूं इह विधि वचन जु भाख ।
श्री जिन भवन बसै पाताल, तिनकूँ पूजूँ देदे ताल ।।

ॐ ह्रीं पाताल लोक सम्बन्धी सात करोड़ बहत्तर लाख जिनश्री भवनेभ्यो नमः जय-माला पूर्णार्घ्यम् ।

चाल छन्द–सात कोडि रु लाख बहत्तर, जिन मन्दिर पाताल निहारा ।
पाठ पढ़े तिनको जे भवि जन, मन वच तन त्रय योग विचारा ।।
मंडलीक नर नाथ होय फिर, इन्द्र पदी के सुख ले सारा ।
भव तन कूं फिर कूंचो देके, शिवपुर थान लहे अघ टारा ।।

❀ इत्याशीर्वाद ❀

अथ अधोलोक के पंक भाग में असुरकुमार देवन के चौसठ लाख (६४ लाख) जिन भवन पूजा नं. ४

स्थापना सोरठा–पंक भाग दरम्यान, असुरकुमारन के भवन ।
६४ लाख प्रमाण, सकल बिम्ब बन्धन करूं ।।

ॐ ह्रीं अधोलोक के पंक भाग में असुरकुमार देवन के ६४ लाख जिन भवन समूह अत्रावतर अवौषठ आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सनिधि करणम् ।

जोगीरासा–निर्मल नीर गंग सरिता का, भरिके कंचन झारी ।
जन्म जरा मृत्यु नाशन कारण धार देय त्रय भारी ।।
पंक भाग पाताल लोक में असुरकुमार बिमाना ।
चौसठ लाख तणी जिन प्रतिमा पूजूं करि सरधाना ।।

ॐ ह्रीं पंक भाग में असुर कुमार सम्बन्धि सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम ।।

मलिया गिरि अरु केसरि घिसि के संग कपूर मिलाया ।
जगत ताप मेटन के काजे जिन पद अग्र चढ़ाया ।। पंक भाग'''चंदनं

हीरा, लाल, जवाहर, मोती अरु पुखराज नवीने ।
थाल बड़े बहुतेरे भरिके जिन पद भेट करीने ।। पंक भाग'''अच्छतम

चम्प चमेली जुही केबड़ा बहु विधि पुष्प मंगाये ।
मदन वान नासन हित जिनके चरणों माही चढ़ाये ।। पंक भाग···पुष्पम

बहु विधि के पकवान रसीले ताजे मधुर बनाये ।
नागिन छुदा मिटाने कारण जिनवर चरण चढ़ाये ।। पंक भाग···नेवजम्

रतन जड़ित सुवरण का दीपक सुन्दर अधिक सजाया ।
दोऊ हाथ से आरति करके फूला नहीं समाया ।। पंक भाग···दीपम

धूप दसांगी अति ही चंगी तत क्षण त्यार कराई ।
अष्ट कर्म जारण हित जिन ढिग अगनी संग जराई ।। पंक भाग···धूपम

फल सब ऋतु के अक्ष लुभावन थाल लवालव भरिके ।
मोक्ष महल में वास करण को जिनवर आगे धरिके ।। पंक भाग·· फलम

जल चंदन तंदुल नेवज अरु दीप धूप फल फूला ।
अर्घ चढ़ाय प्रभु के सनमुख नाचा गाया ऊला ।। पंक भाग···

ॐ ह्रीं पंक भाग में असुर कुमार सम्बन्धि सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। अर्घ्यम ।।

प्रत्येक अर्घ

छन्द–अधोलोक चित्रा पृथ्वी के तीन भाग करिये चिन्तन ।
मधि में पंक तासु ऊंचाई सहस चुरासी है योजन ।।

चौसटि लाख भवन वासी देवों के तिस थल बने सदन ।
सब में श्री जिन भवन एक इक करूं हर्ष मन से वंदन ।।

ॐ ह्रीं पंक भाग में असुर कुमारों के चौसठि लाख विमानों में चौसठि लाख जिन भवन सम्बन्धि समस्त जिन बिम्बेभ्यो नमः ।। अर्घ्यम ।।

व्यंतर देव राक्षसों के इस पंक भाग में बने सदन ।
असंख्यात है मध्य सभी में एक-एक जिन राज भवन ।।

ऊपर की हद में रहते हैं यहां आते जाते निस दिन ।
इन सब थान तणो जिन प्रतिमा में कर जोरि करूं वन्दन ।।

ॐ ह्रीं पंक भाग में राक्षस देवों के असंख्यात जिनालय सम्बन्धि सकल जिन बिम्बेभ्यो नमः ।। अर्घ्यम ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

दोहा—पंक भाग में जिन भवन अब बरणों जयमाल ।
पढ़त सुनत संसार का मिटे सकल जंजाल ॥

जयमाला

चौपाई—अधो लोक की पृथ्वी सात चित्रा ऊपर को विख्यात ।
तासु मुटाई योजन सार, एक लाख अस्सी हज्जार ॥
ऊपर का खर भाग कहाय, सोलह सहस मुटाई थाय ।
मध्य भाग का पंक सु नाम, सहस चुरासी मोटा ठाम ॥
इसही पंक भाग दरम्यान, असुर कुमारों के सु मकान ।
चौंसटि लाख अनादी बने, श्री सर्वज्ञ धुनी ये भनें ॥
सब में इक इक जिनवर धाम, सहित सुरचना और तमाम ।
पंक भाग के हिस्सा दोय, निचले का यह वर्णन सोय ॥
ऊपर के में व्यंतर देव, राक्षस जाती के स्वमेव ।
असंख्यात तिनके सु विमान, सब में श्री जिनबर के थान ॥
दोइ जगह के जिनगृह मांहि, इक इक में प्रतिमा तिष्ठाय ।
इकसो आठ रतन मई सार, पदमासन तिष्ठे निर धार ॥
ऊंची पांच सतक धनु जान, देखत उपजे सुक्ख महान ।
हम उपयोग वहाँ पहुँचाय, करें वन्दना ध्यान लगाय ॥
तो चहु गति का दुःख छुटि जाय, शिवपुर में क्वाटर बनिजाये ।
श्रुत सागर यह आस लगाय, पूरो आस श्री जिनराय ॥

दोहा—अधो लोक में जानिये पंक भाग सुरथान ।
सकल श्री जिन भवन को दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अधोलोक के पंक भाग में सकल जिन भवन सम्बन्धि जिन बिम्बेभ्यो नमः ।।अर्घ्यम ।।

❀ इत्याशीर्वाद ❀

अधोलोक के खर भाग में भवन वासी देवों के सात करोड़ आठ लाख जिन भवन पूजा नं. ५

स्थापना अड़िल—चित्रा भू अवगाह भाग त्रय लसत है।
ऊपर के खर भाग दुविधि सुर वसत है॥
सात कोटि वसु लाख जिनालय लसत है।
आव्हानन विधि करत कर्म सब नशत है॥

ॐ ह्रीं अधोलोक के खर भाग में नौ प्रकार के भवन वासी देवों के सात करोड़ आठ लाख जिन भवन समूह अत्रावतर संवोषठ आह्वाननं अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्नि हितो भव भव वषट् सनिधि करणम।

छन्द—गंगा पानी भरवाय हाथ लिया कलशा।
तल चरण त्रिलोकी नाथ ढारत हिय हुलसा॥
वसु लाख रु सात करोड़ जिन गृह सुर भावन।
खर भाग मांहि कर जोड़ पूजूं शिव पावन॥

ॐ ह्रीं खर भाग में भवन वासी स्थान सम्बन्धि सकल जिन भवनेभ्यो नमः॥ जलम॥

मलिया गिरि चंदन सार केसर संग घिसा।
पद कमल शिवा भरतार चरचत हिय हुलसा॥वसु लाख·····चंदनं॥
रतन निके थाल भराय उर धरिके चसका।
जग नाथ शरण में आय छेपत हिय हुलसा॥वसु लाख·····अक्षतम॥
अलि भावन पुष्प चुनाय डाला भरि यसका।
जिनवर सनमुख उमगाय धारत हिय हुलसा॥वसु लाख·····पुष्पम॥
पकवान मधुर बनवाय लायो षट् रसका।
करुणा सागर ढिग आय पूजत हिय हुलसा॥वसु लाख·····नेवजम॥
अर्जुन का दीप सजाय जिन गृह मांहि धसा।
आरति करके शिव नाथ देखत हिय हुलसा॥वसु लाख·····दीपम॥
दस अंगो धूप कुटाय पावक घट खुसका।
पद दीनानाथ अगार खेवत हिय हुलसा॥वसु लाख·····धूपम॥

फल मृदुल मनोहर लाय जितना था वसका ।
मृत्युञ्जय लखि हर्षाय भेटत हिय हुलसा ॥वसु लाख ·····फलम॥
जलआदो सकल मिलाय अर्घ बना उसका ।
प्रभु आगे दिया चढ़ाय नाचत हिय हुलसा ॥वसु लाख·····

ॐ ह्रीं खर भाग में भवन वासी देवो के सकल जिन भवनेभ्यो नमः ॥ अर्घ्यम ॥

प्रत्येक अर्घ

दोहा–अधोलोक खर भाग में नागकुमार सुथान ।
लाख चुरासी जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ १

अधोलोक खर भाग में हेमकुमार सुथान ।
लाख बहत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ २

अधोलोक खर भाग में वातकुमार सुथान ।
लाख छयानवे जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ३

अधोलोक खर भाग में विद्युतकुमार सुथान ।
लाख छयत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ४

अधोलोक खर भाग में तेजकुमार सुथान ।
लाख छयत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ५

अधोलोक खर भाग में मेघकुमार सुथान ।
लाख छयत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ६

अधोलोक खर भाग में उदधिकुमार सुधान ।
लाख छयत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ७

अधोलोक खर भाग में दीपकुमार सुथान ।
लाख छयत्तर जिन भवनपूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ८

अधोलोक खर भाग में दिक्कुमार सुथान ।
लाख छयत्तर जिन भवन पूजों कर श्रद्धान ॥अर्घ ९

अधोलोक खर भाग में भवन वासि नवथान ।
सात कोटि वसु लाख जिन गेह जजुं रुचि ठान ॥
अधोलोक खर भाग में व्यंतर देव सुथान ।
असंख्यात जिनवर भवन बंदू मन थिर आन ॥

ॐ ह्रीं अधोलोक खर भाग में नो प्रकार भवन वासी देवों के क्रम से नागकुमार ८४ लाख हेमकुमार ७२ लाख वातकुमार ९६ लाख विद्युतकुमार ७६ लाख तेजकुमार ७६ लाख मेघकुमार ७६ लाख उदधिकुमार ७६ लाख दीपकुमार ७६ लाख दिवकुमार ७६ लाख ।
कुल सात करोड़ आठ लाख तथा व्यंतरो के असंख्यात जिन भवनेभ्यो नमः ॥ अर्घम ॥

जाप :—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्य सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—जयमाला खर भाग में जैन, भवन की गाय ।
भव समुद्र संसार से, पढ़त पार हो जाय ॥

पद्धरी छन्द—जय जय जय श्री अरहंत देव, मैं मन वच तन से करूं सेव ।
तुम भवन अकृत्रिम जग मंझार, है असंख्यात जिनका न पार ॥
खर भाग मांहि के कहूं गाय, कोटी जु सात वसू लाख भाय ।
नव भेद भवनवासी सु लेहु, इक असूरकुमारहि छोड़ि देहु ॥
अब प्रथक प्रथक इनका बयान, में करूं तनक शक्ती प्रमान ।
सुर असुर कुमार सुकृष्ण रंग, सिर मुकुटों में है मणी चिन्ह ॥
पच्चीस धनुष तन का प्रमान, उत्कृष्ट आयु सागर समान ।
सूर नाग कुमार सू चिन्ह नाग, पांडूर रंग तन है सूहाग ॥
उत्कृष्ट आयु है पल्य तीन, दस धनुष ऊंच तन लेहु चीन ।
तन हेमकुमर कंचन समान, तन ऊंच धनुष दस लेहुं जान ॥
है चिन्ह गरुड़ का मुकुट होय, पर आयू ढाई पल्य होय ।
सुर दीपकुमार सु नील रंग, है चिन्ह मुकुट में गज उतंग ॥
उत्कृष्ट आयु है पल्य दोय, दस धनुष ऊंचाई देह होय ।
सुर उदधिकुमर पांडूर रंग, अवगाह देह दस धनु उतंग ॥

सिर मुकुट मगर का चिन्ह थाय, अरु डेढ़ पल्य आयू लहाय ।
विद्युत कुमार तन नील जान, स्वस्तिक का सिर में चिन्ह मान ॥
दस धनुष ऊंच तन का प्रमान, पर डेढ़ पल्य आयु पिछान ।
सुर मेघकुमर कंचन समान, अरु मुकुट वज्र का चिन्ह थान ॥
दस धनुष ऊंचाई है शरीर, अरु डेढ़ पल्य आयु अखीर ।
सुर दिक्कुमार कंचन सुरंग, दस धनुष तना तन है उतंग ॥
है चिन्ह सिंह का मुकुट थाय, अरु डेढ़ पल्य उत्कृष्ट आय ।
सुर तेजकुमार सु नील वर्ण, अरु चिन्ह कलश का मनोहर्ण ॥
लहि डेढ़ पल्य उत्कृष्ट आय, दस धनुष ऊंच तन अति सुहाय ।
सुर वातकुमार सु रंग लाल, अरु मुकुट चिन्ह घोड़ा विशाल ॥
पर डेढ़ पल्य की आयु पाय, दस धनुष ऊंच तन मन हराय ।
यह देव सर्व ही जनम पाय, जिन देव प्रथम पूजन कराय ॥
वसु द्रव्य दिव्य लेकर महान, अरहंत देव गुण करें गान ।
जय छयालीस गुण मूल सार, उत्तर गुण अति सोहें अपार ॥
जनमत ही दश अतिषय महान, दस होवें पावत पूर्ण ज्ञान ।
चौदह करते हैं देव आय, इमि अतिषय सब चौंतिस कहाय ॥
होइ तरु अशोक जिनवर अगार, तन भामण्डल कांती अपार ।
भव सात नजर आते प्रतक्ष, सूरज छिपि जाते कई लक्ष ॥
कमला शन युत होय सिंह पीठ, ऊपर ऊपर मय रतन दीठ ।
सिर छत्र तीन फिरकी लगाय, मनु तीन लोक पति को बसाय ॥
गंधोदक वर्षा सुर कराय, बहु भांति वीन बाजा बजाय ।
बरसावें फूल सु चउ प्रकार, तुम धुनी खिरे कल्याण कार ॥

चौंसटि इंदर ले चमर हाथ, नाचें जय बोलें जगन्नाथ।
तुम ज्ञान अनंता नंत धार, दर्शन अनंत गुण लगातार॥
सुख है अनंत उपमा न कोय, अरु वीर्य अनंनानंत होय।
इत्यादि गुणनिके हो करंड, चर अचर प्रकाशन मार तंड॥
तुम गुण वर्णन करि सके कोय, कोई न हुआ ना कभी होय।
मेरे अवगुण चित में न लेउ, भव सागर से मोहि तारि देउ॥
तुम सुजस बखानू सरे आम, दिन राति निरंतर सुबह शाम।
जिमि और अनेका करे पार, तिमि श्रुत सागर की आज वार॥

धता—जय जय अरहंता पार करंता कर्म हनंता गुण आगर।
मम विनय सुनीजे देर न कीजे सुधि लीजे करुणा सागर॥

ॐ ह्रीं खर भाग में भवन वासी व्यंतर दोनों देवों के सकल भवनेभ्यो नमः॥ अर्घ्यम॥

वीतराग भगवान को जो ध्यावे मन लाय।
सो शिवपुर में जायकर अविचल सुक्ख लहाय॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सूचना

तीन लोक की ऊँचाई चौदह राजू है पैर पसार कर कमर पर दोनों हाथ रखकर खड़े पुरुष के आकार हैं—अधोलोक नीचे का सात राजू तक ऊँचाई है जिसमें नीचे से ऊपर सात पृथ्वी है ऊपर की पृथ्वी के तीन भाग हैं नीचे के भाग में पहिले नरक की रचना है बीच के पंक भाग तथा ऊपर के खर भाग में व्यंवर और भवन वासी देवों के विभान है जिनकी अधोलोक पूजन कीनी है कारण इन विमानों में जिन भगवान का हर एक में एक एक मंदिर है।

सूचना

यहाँ तक अधोलोक पूजन समाप्त हुआ, तब मध्य लोक में चलिये सबसे पहले मध्य लोक के ४५८ जिनालयों का चार्ट देखो।

मध्यलोक के ४५८ चैत्यालय नमः

संख्या	नाम	विशेष
८०	मेरु सम्बन्धी	भद्रशाल, नंदन, सोमनस, पांडुक, चारो वनो में चार चार
२०	गजदन्तों के	मेरु से लगे चारो विदिसा को लम्बाई गजदन्तो पर
१०	वृक्षों के	जम्बू शाल्मली, धातकी शाल्मली, पुष्कर शाल्मली,
		२ ४ ४
८०	वक्षारों के	मेरु ओं से पूर्व पक्षिम में सीता के दोनो तरफ विदेहो में
१६०	विदेह क्षेत्रों के	सोलह सोलह दोनो तरफ पांचो मेरु के ३२×५=१६०
१०	भरत एरावतों के	पांच भरत पांच एरावतो में विजयार्ध पर्वतों पर
३०	कुलाचलों के	मेरु से दक्षिण उत्तर में तीन तीन पांचो मेरु ६×५=३०
४	इष्वाकारो के	दूसरे व तीसरे दीप के अर्ध हिस्सा को दो भाग वाले इष्वाकार
४	मानुषोतर के	ढाई दीप को घेरा देकर पड़े हुये मनुषोत्तर पर चार दिसा मे
५२	नंदीश्वर के	आठवे दीप नदीश्वर में चारो दिसा मे तेरह तेरह=५२
४	कुंडलगिर के	ग्यारहवें दीप कुंडल दीप में कुंडल पर्वत पर चारो ओर
४	रुचिक गिर के	तेरहवे दीप रुचिक दीप में रुचिक पर्वत पर चारो ओर
	४५८	

इनके अलावा व्यंतर ज्योतिषियों के असंख्यात

अथ मध्यलोक के सुदर्शन मेरु की भद्रशाल वन में चार श्री जिन भवन पूजा नं. ६

स्थापना छंद गीतिका—मेरु सुदर्शन गिरद देकर मूल भाग विचारियो।
जिन भवन चतुवन भद्र की चउ दिशा में सु निहारियौ ।।
सुरराय खगधर जजत तिस थल शक्ति बिन हम भावना।
करते इसी थल पूजने कूं हरषि उर आव्हानना ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवन अत्रावतरातवर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

चाल जोगीरासा

सीतोदा को नीर मनोहर शीतल मधुर लहायो।
भरि कंचन मय झारी मांही सिर नय धार ढरायो ।।
भद्रशाल वन की चहूं दिश में चार जिनालय जानो।
पूजूं तिनकूं मन वच तन सूं चाहूं शिवपुर थानो ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।।

मलियागिर सूं केशर घसि के अति ही निर्मल लेवूं।
कनक कटोरी हाथ गहत ही भव भव ताप भुजेवूं ।।भद्रशाल वन · चंदनं
उज्ज्वल निर्मल देखि अखंडित तंदुल जल सूं धोये।
पुंज कनक मय थाल धरत ही तुम गुण उर में जोये ।।भद्रशाल वन···अक्षतं
चम्प चमेली आदि अनेकों प्राशुक फूल मंगायो।
धरि कंचन मय पात्र हाथ ले काम बाण नसवायो ।।भद्रशाल वन पुष्पं
कर उत्तम विधि सूं शुभ नेवज ताजे तुरत बनाये।
धरि कंचन मय थाल हाथ में ले छुद रोग नशाये ।।भद्रशाल वन···नैवेद्यं

विमल मनोहर दीप रतनमय धरि ले कंचन थाली ।
तुम पद पंकज भेट धरत तम मोह कियो पेमाली ।।भद्रशाल वन'' दीपं

आठ करम को अष्ट गंध ले कूट जू चूर्ण करायो ।
अग्नि कुण्ड में तुम पद आगे ताते देत जलायो ।।भद्रशाल वन'''धूपं

फल शुभकारी दाख सुपारी आदिक बहु विधि लीजे ।
तुम शिवफल के दाता तातें भेंट तुम्हारी कीजे ।।भद्रशाल वन'''फलं

निर्मल नीर गंध धरि तन्दुल फूल रु नेवज लेऊं ।
दीप धूप फल थाल कनक के तुम पद ढिग धर देऊं ।।भद्रशाल वन'''अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—भद्रशाल पूर्व दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय कें, मन में धरि बहु चूप ।। पूर्व दिस भवनेभ्यो नमः अर्घ १

भद्रशाल दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकें, मन में धरि बहु चूप ।। दक्षिण दिस भवनेभ्यो नमः अर्घ २

भद्रशाल पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकें, मन में धरि बहु चूप ।। पश्चिम दिस भवनेभ्यो नमः अर्घ ३

भद्रशाल उत्तर दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकें, मन में धरि बहु चूप ।। उत्तर दिस भवनेभ्यो नमः अर्घ ४

भद्रशाल चौगिरद ही, सुर व्यन्तर आवास ।
तिनमें भवन जिनेक के, पूजूं वसु विधि खास ।। चोगिरद ,, ,, ,, अर्घ ५

भद्रशाल वन चार दिश, श्री जिनवर के थान ।
तिनकूं पूजूं अर्घ सूं, शिवफल दाता जान ।। चोदिस ,, ,, ,, अर्घ ६

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

भद्रशाल दिश चार में भवन चार जिनराज।
तिनकी भवि जयमालिका वरणुं अक्षर आज ॥

चोपई--मेरु सुदर्शन गिरद दिवाय, भूमि भाग में लखि मन लाय।
भद्रशाल वन ताको नाम, चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम ॥१॥
रचना उत्कृष्टी भवि जोय, श्री जिन आगिम भाषित सोय।
प्रातिहार्य आदि सब रीति, भविजन जानो उरधरि प्रीति ॥२॥
एक भवन में बिम्ब जिनेश, एक शतक पै आठ धरेश।
पद्मासन छवि है प्रियकार, प्रतिमा श्री अर्हंत निहार ॥३॥
मुनि सुर खग धर तिस थल आय, पूजत है वसु द्रव्य लहाय।
मन वच तन की शुद्धता ठाय, हरषि हरषि जिनवर गुण गाय ॥४॥
तुम शिवनायक दीन दयाल, करुणा सागर ज्ञान विशाल।
दीन बन्धु जगतारक देव, तीन जगत के नाथ कहैव ॥५॥
तुम ही भवदधि शोषणहार, जग चूड़ामणि निज सुखकार।
मिथ्या तिमिर विनाशक भान, तुमही सकल चराचर जान ॥६॥
तुम ही क्षायिक समकित धार, परपरणति तुम दई विडार।
बूढत भव्य तिरावण हार, अशरण शरण जगत में सार ॥७॥
तुम शिवरमणी के भरतार, तुम ही काम रिपू क्षयकार।
जे नर तुमको ध्यावे नाथ ते, भवदधि की पावे पाथ ॥८॥
तुम गुण महिमा अन्त न पार, कबलों वरणों करि विस्तार।
या जग में तुम ही हो धन्य तुम, सम देव वख्यो नहीं अन्य ॥९॥
कर्म रिपु या जग के माहि, घेरि रहे मोंक्र शक नांहि।
ताके दूर करन के काज, 'नेम' नमें तुमकूं जिनराज ॥१०॥

दोहा--भद्रशाल वन चार दिशु चार भवन जिनराय ।
अर्घ चढाऊं हरषसू आठौ द्रव्य लहाय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भद्रशाल जन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। अर्घं. ।।

छन्द गीतिका--भद्रशाल वन को चार दिश में, भवन जिनवर चार ही ।
पाठ तिनको करो भविजन, धार उर में प्यार ही ॥
नरनाथ काम सुरेश सम्पति, मिलत तिनकूं आपतें ।
शिवधाम के सुख जाय भोगे, बचत भव की तापतें ॥

❀ इत्यार्शीवाद ❀

सुदर्शन मेरु की नंदन, वन, सम्बन्धी चार श्री जिन भवनों की पूजा नं. ७

चोपाई वृत्त स्थापनं—नदैनवन की चार दिशा गिन चार बताये ।
श्री जिनवर के थान अकृत्रिम खूब लसाये ।।
हीन शक्ति तिस थान भला हम कैसे जावें ।
आह्वानन इस थान ठाय हम भावन भावें ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नंदन वन की चहुं दिशा चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतावतर संवोषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

सोरठा--निर्मल नीर अपार, धार करूं भर झारिगा ।
नंदन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन की चहुँ दिश में चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।।जलम्।।

चंदन केसर डार, घनघुट देकर लीजिये ।
नदनवन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥ चंदनं

लेय अखंडित सार, तंदुल थाल धरायके ।
नंदन वन के चार, चहु दिश जिन गृह में जजूं ॥ अक्षतं

फूल विविध प्रकार, प्रासुक लखि के लीजिये।
नन्दन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥पुष्पं

नेवज करि तैयार, विधि सूं लेकर थाल मैं।
नन्दन वन के चार चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥नैवेद्यं

मोह तिमिर क्षयकार, ज्ञान प्रकाशक दीप से।
नन्दन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥दीपं

अग्नि कुम्भ में डारि, निर्मल धूप बनाय के।
नन्दन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥धूपं

उत्तम फल दातार, शुभ फल देख लहीजिये।
नन्दन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥फलं

लीजे अष्ट प्रकार, नीरादिक मन भावना।
नन्दन वन के चार, चहुं दिश जिन गृह में जजूं ॥अर्घ्यं

प्रत्येक अर्घ

दोहा--नन्दन वन पूरब विशा, श्री जिन भवन निहार।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन पूरब दिशा में श्री जिन भवनाय नमः। अर्घं ॥१॥

नन्दन वन दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन निहार।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन दक्षिण दिशा में श्री जिन भवनाय नमः। अर्घं ॥२॥

नन्दन वन पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन निहार।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन पश्चिम दिशा में श्री जिन भवनाय नमः। अर्घं ॥३॥

नन्दन वन उत्तर दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन उत्तर दिशा में श्री जिन भवनाय नमः । अर्घ ॥४॥

नंदन वन चौगिरद ही, व्यन्तरादि के गेह ।
तिनके श्री जिन भवन कूं, पूजूं मैं धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन की चौगिरद व्यन्तरादि स्थानक विषें सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घ ॥५॥

नंदन वन में भवन जिन बने अकृत्रिम जोय ।
तिनकूं ले नीरादि सूं, पूजूं मैं शुचि होय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन विषै चहुं दिशा चार जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घ ॥६॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—नन्दन वन में भवन जिन, चहुं दिश में लखि चार ।
तिनकी अब जय मालिका, भाषत हूं प्रियकार ॥

अडिल्ल—मेरु सुदर्शन ऊंच पांच से जोजना ।
नन्दन वन चौगिरद लषें पादप घना ॥
योजन शत गिण पाँच व्यास लखि लीजिये ।
चहुं दिश ता बन की जु भव्य चित दीजिये ॥१॥

श्री जिनवर के गेह चार दरशात हैं ।
खग धर सुर समुदाय नमन कूं आत हैं ॥
बहु विधि उत्सव ठान गाय पूजन करें ।
केई मुख सों पाठ स्तवन उच्चरैं ॥२॥

केई भाषैं धर्म परस्पर प्रीत सूं ।
केई सुमरें पंच परम पद रीत सूं ॥

केई नाचत तान लेत पग धरत हैं।
केई बजावत बीन मधुर मन हरत हैं॥३॥
केई कर में लेय चंवर ढुरबात हैं।
केई दृग तें देखि चित्त हरषात हैं॥
केई पूजन करिकें निज घर जात हैं।
केई वसु ले द्रव्य जिनालय आत हैं॥४॥
इह विधी श्री जिन गेह मांहि उत्सव रहें।
और सकल विस्तार कहो हम किम कहें॥
तीन जगत की लच्छि इकट्ठी तहां भई।
ऐसो स्थानक और जगत में है नहीं॥५॥
तिष्ठे तहँ जिनराज महा सुखदाय जी।
इन्द्र चरण की सेव करे तहाँ आय जी॥
तुमही त्रिभुवन ईश दयानिधि नाथ हो।
शिव रमणी भर्तार भवोदधि पाथ हो॥६॥
तुम ही ज्ञाता सर्व सकल गुण के धनी।
तुमरी तिहुं जग मांहि कीर्ति अद्भुत बनी॥
कानन सुनि के नेम चित्त ललचाइयो।
भव भव से हो भीति शरण तुम आइयो॥७॥

दोहा—चहुं दिश नंदन वन विषें, चार धाम जिनराय।
अर्घ चढ़ाऊं हर्ष सूं, निज सिर नमन कराय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी नन्दन वन विषै चहुं दिशा चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः।

चौपाई—नन्दन वन दिस चार मंझार, भवन लसें श्री जिनवर चार।
तिनको पाठ करे भवि कोय, शिवपुर सीधो जावे सोय॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सुदर्शन–मेरु सम्बन्धी सौमनस वन के चार श्री जिन भवनों की पूजा नं. ८

स्थापना छंद गीता

जोजन उतंग हजार साढ़े बासटी मेरु गयो ।
सौमनस वन शत पांच योजन व्यास सूं गिर दो दयो ।।
ता विपन की चारूं दिशा में, चार श्री जिन थान की ।
आह्वान तिनकी करत इस थल शक्ति नहिं हम जान की ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी सौमनस वन चहुँ दिश चार श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मन सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणमं ।

गीता छंद–अति ही पवीत्र मनोग्य सुन्दर मधुर सुन्दर नीर सूं ।
भरि कनक झारी हाथ गहिके धार दीजे धीर सूं ।।
सौमनस वन की चार दिश में, चार जिनवर थान कूं ।
भवि पूज भव दुःख नाशने क्रूं, मिलन शिव के ठाम कूं ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी सौमनस वन चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।।१।।

घसि के पवित्र सुगन्धि चंदन मांहि केसर भेलिके ।
धरि कनक पात्र उठाय कर ले ताप भव दे ठेलिके ।। सोमनस ··· चंदनं
अति ही महीन अनूप तंदुल लखि अखंडित लीजिये ।
मन वचन तन की शुद्धता करि, पुंज गुण धरि दीजिये ।। सोमनस ··· अक्षतं
अति ही सुगंधित फूल प्रासुक भ्रमर शब्द करावने ।
धरि पात्र कंचन हाथ गहि के काम वाण हरावने ।। सोमनस ··· पुष्पं
कर विविध नेवज विमल विध सूं, तुरत ताजे लीजिये ।
मन वचन तन त्रय योग सेती, भूख व्याधि हरीजिये ।। सोमनस ··· नैवेद्यं
तुम मोह हरता ज्ञान करता भक्ति भरता देवजी ।
शुभ रत्न दीप धराय थाली करत तुमरी सेवजी ।। सोमनस ··· दीपं

वसु कर्म जालन के जु कारन, धूप निर्मल लेय के।
उर हरषि धरि करि नाय, मस्तक अग्नि घट में खेय के॥ सोमनस'''धूपं

नारेल पिस्ता जायफल शुभ, आदि बहु फल भेंटिकैं।
मैं करन एक जिनेश अरजी, अशुभ फल देउ मेटिकैं॥ सोमनस'''फलं

ले नीर चन्दन कुसुम अक्षत, दीप नेवज लेय के।
फल धूप कंचन थाल धरके, अर्घ लेहु बनेय के॥ सोमनस'''अर्घ्यं

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पूरब दिश सौमनसबन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरा दिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शम मेरु सम्बन्धि सौमनसवन की पूरब दिशा में श्री जिन भवनाय नमः॥ अर्घं॥ १

दक्षिण दिश सौमनसवन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पुजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धि सौमनसवन की दक्षिण दिशा में श्री जिन भवनाय नमः॥ अर्घं॥ २

पश्चिम दिश सोमनसवन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धि सोमनसवन की पश्चिम दिशा में श्री जिन भवनाय नमः॥ अर्घं॥ ३

उत्तर दिश सोमनसवन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धि सौमनसवन की उत्तर दिशा के श्री जिन भवनाय नमः॥ अर्घं॥ ४

चारों दिश सोमनसवन, व्यन्तरादि के थान।
तिनमें भवन जिनेश के, जजूं जलादि लहान॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धि सौमनसवन की चहुं दिशा में व्यन्तरादि स्थानक सम्बन्धि सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः॥ अर्घं॥ ५

चहुं दिश चतु सौमनसवन, जिनवर थान लखाय।
पूजूं आठूं द्रव्य सूं, हरषि-हरषि गुण गाय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धि सौमनसवन की चहुं दिशा विषे चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥अर्घं ॥६

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मेरु सुदर्शन मध्य में, वन सौमनस विचार।
तिनकी अब जयमालिका, भाषत हूं प्रियकार॥

छन्द पद्धड़ी—जय मेरु सुदर्शन मध्यजाय, चहुं गिरद विपन सौमनस पाय।
शत पांच व्यास जोजन कहाय, बहु भेद वृक्ष शोभा धराय ॥१॥

ता वन की चतु दिश में निहार, जिनराज भवन खासे जु चार।
त्रय द्वार युक्त शोभा धराय, पूरब दक्षिण उत्तर समान ॥२॥

त्रय कोट युक्त विधि सकल पाय, मंगल विभूति छाजत भलाय।
इक गेह मांहि जिन बिम्ब गाय, शत एक आठ गिनती कराय ॥३॥

छवि शाम केश सिर खूब देत, शशि वदन देखि दूरो भगेत।
भू नयन पलक लखि धवल शाम, रद अधर स्वेत आरक्त धाम ॥४॥

सम चतुर लसें संस्थान गात, सब कथन कहत नहि अंत आत।
सिर तीन छत्र लुम्बित लखाय, सुर चंवर ढुरत चौसठि गिणाय ॥५॥

त्रय पाद पोठ मय हेम पाय, भा मंडल छवि अद्भुत लखाय।
राजत अशोक पादप महान, सुर पुष्प दृष्टि वरषत भलान ॥६॥

अरजोत दुंदुभी सौर ठाय, त्रय काल दिव्य ध्वनि खिरत पाय।
जय तीन जगत सिर ताज देव, सुर राज करें तुमरी जु सेव ॥७॥

तुम कर्म रिपू निर्मूल कीन, तुम सकल तत्व ज्ञायक प्रवीन।
तुम दया सिंधु तिहुं जगत ईश, तुम नाम जपत सुर नर मुनीश ॥८॥

शिव थान दाय, तिहुं जगत मांहि, बिन तोहि और दीसे जु नांहि।
लखि नेम सीस नावत जिनेश, शिववास देहुं हनि जग कलेश ॥९॥

दोहा—मेरु सुदर्शन मध्य में, वन सौमनस लखाय।
चारों दिश में जिन भवन, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी सौमनसवन स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ अर्घं ॥

अडिल्ल—वन सौमनसं मांहि चार दिश में कहै।
जिन मन्दिर गिण चार अकृत्रिम बनि रहे ॥
जे नर तिनको पाठ पढ़े मन लायके।
ते नर निश्चय लेत थान शिव जायके ॥

❀ इत्यार्शीवाद ❀

सुदर्शन मेरु सम्बन्धी, पाँडुक वन के चार श्री जिन भवन पूजा नं. ९

स्थापना छन्द गीतिका—मेरु सुदर्शन शीस पांडुक नाम वन मन आनियो।
ताकी चहुंदिश मांहि श्री जिन भवन चार पिछानियो ॥
तिस थान सुर गण जाय पूजें, शक्ति हमरी है नहीं।
तातें हरष इस थान तिनको करत आह्वानन सही ॥

ॐ ह्रीं जम्बू डीपे सुदर्शन मेरु पांडुक वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

छन्द अडिल्ल—उत्तम तीरथ नीर लियो भरि झारिका ।
ताको धारा देत रोग त्रय टारिका ॥
मेरु सुदर्शन शीस विषन पांडुक तणें ।
श्री जिन के चतु धाम जजुं अघ सब हणं ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पांडुक वन में चार जिन भवनेभ्यो जनमजरा मृत्यु नासनाय । जलम्

केशर घसि कर्पूर बहुत मलियागिरा ।
कनक पात्र धर लेय ताप भव की हरा ॥ मेरु सुदर्शन···चन्दनं

अक्षत उज्ज्वल धोय लीजिये नीर सूं ।
कंचन थाल मंझार पुंज धर धीर सूं ॥मेरु सुदर्शन···अक्षतं

चंप चमेली आदी फूल मंगायके ।
प्रासुक विविध प्रकार लेत हरषायके ॥मेरु सुदर्शन···पुष्पं

उत्तम बिधि पकवान किये मन भावना ।
धरि कंचन के थाल भूख मिटवावना ॥मेरु सुदर्शन···नैवेद्यम्

निर्मल रतन प्रदोप थाल संजोयकैं ।
स्वगुण प्रकासन काज मोह तम खोयकैं ॥मेरु सुदर्शन··दीपम्

चन्दन अगर जु आदि धूप करि लीजिये ।
ज्वाला घट के मांहि खेय हरषीजिये ॥मेरु सुदर्शन···धूपम्

खारिक पिस्ता दाख लौंग ले श्रीफला ।
पावन फल बहु लेय अशुभ फल कूंदला ॥मेरु सुदर्शन···फलम्

जल चंदन चरु दीप धूप फल अक्षतं ।
निर्मल कंचन थाल पुष्प शुभ रक्षतं ॥मेरु सुदर्शन···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

पूरब

दोहा—पांडुक वन ~~दक्षिण~~ दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठूं द्रव्य मिलायकैं, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीप मध्य सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन की पूर्व दिशा में श्री जिन भवनयानमः । अर्घ्यं १

पांडुक वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठूं द्रव्य मिलायकैं, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन की दक्षिण दिशा में श्री जिन भवनाय नमः । अर्घ २

पांडुक वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठूं द्रव्य मिलायकैं, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु नेम्बन्धी पांडूक वन की पश्चिम दिशा में श्री जिन भवनाय नमः । अर्घ ३

पांडुक वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठूं द्रव्य मिलायकैं, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की शीश पांडुक वन सम्बन्धी उत्तर दिशा में श्री जिन भवनाय नमः । ४

पांडुक नामा वन विषैं, कौण ईशान लहाय ।
पांडुक शिल पै जिन जजूं, वसु विध अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी ईशान कोण पांडूक शिला पै भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय अर्घ्यं निर्व स्वाहा । अर्घ ५

पांडुक नामा वन विषैं, अग्निकोण सुखदाय ।
पांडुकंबला शिल जजूं, वसु विधि द्रव्य चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडूक वन अग्निकोणे पांडुकंबला शिला पश्चिम विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कराणां जन्मोत्सव स्थानकाय अर्घ्यम् । अर्घ ६

पांडुक नामा वन विषैं, नैऋत्य कौण लहाय ।
रक्तानामा शिल जजूं, वसु विध अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन नैऋत्य कोण रक्ता नामा शिला ऐरावत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थंकराणां जन्मोत्सव स्थानकाय अर्घ्यम् । अर्घ ७

पांडुक नामा वन विषैं, वायु कोण मन लाय ।
रक्त कंबला शिव जजूं, वसु विध द्रव्य चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पांडुक वन वायु कोण रक्तम् कंबला शिला पूर्व विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कराणां जन्मोत्सव स्थानकाय अर्घ्यम् । अर्घ ८

पांडुक वन की सब मही, लखि जिनवर के धाम ।
अर्घ जजूं नीरादि ले, तिनकूं करि परिणाम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन विषैं व्यन्तरादि सकल स्थानक विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घ्यम् । अर्घ ९

नीरादिक अति हरष सूं, धरि कंचन के ठाम ।
पूजूं पांडुक वन विषैं, श्री जिनवर के धाम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पांडुक वन विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घ्यम् । अर्घ १०

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—पांडुक वन में जिन भवन, चहुं दिशि में गिन चार ।
तिनकी अब जयमालिका, सुणो भव्य रुचि धार ।।

चाल छन्द—सब द्वीपन में सिरदारा, लखि जम्बू द्वीप विचारा ।
ता मध्य सुदर्शन मेरू, छवि रत्न अनेक जु हेरू ।।१।।
जोजन शत सहस्र उतंगा, पांडुक वन तिस थल चंगा ।
चहु गिरद फेरि घर आवे, बहु पादप शोभा पावे ।।२।।
जोजन शत पांच जू व्यासा, षट ऊन करो गिण खासा ।
यह अदभुत् वन सुख कारी, अब कथन सुनो जु अगारी ।।३।।
पूरव दिश ता वन मांही, जिनराज भवन शक नाँही ।
दिश दक्षिण उत्तर नामा, लखि पश्चिम में जिन धामा ।।४।।
यह चार भवन सुख कारी, रचना जु अकृत्रिम सारी ।
सुर खगधर तिस थल आवे, पूजत जिन उर हर्षावे ।।५।।
लखि विदिशा चारूं भाई, शिल पांडुक आदि धराई ।
तिन मध्य सिंहासन छाजे, जिन जन्म महोत्सव काजै ।।६।।
सुरराय जनम लखि आवे, सजि सेना सब ही धावे ।
सजि ऐरावत गज शीसा, ते इन्द्र धरे जगदीशा ।।७।।

सब जुड़ि मिलि इस थल आवे, सिंहासन जिन बैठावे ।
जल क्षीरो दधि सूं लावे, इक सहस कलश वसु पावे ॥८॥
फिर करत न्हवन विधि सारी, धुनि भार्खं मुख जयकारी ।
ये थान अनूपम जानों, महिमा कब लों सु बखानों ॥९॥
जिनराज न्हवन की जागा, परसत ही अघ डरि भागा ।
चहूं गिरद महल फिर जानों, सुर व्यंतर वास प्रमानो ॥१०॥
तिन महलन के सिर सोहैं, जिनराज भवन मन मोहैं ।
सुर असुर देव धर आवें, जिन पूजत आनंद पावें ॥११॥
फिर मुख स्तवन उचारें, सुर मधुर नृत्य विस्तारें ।
तुम तीन जगत के राजा, तुमने कीनो निज काजा ॥१२॥
तुम मोह महातम नास्यो, तुम केवल ज्ञान प्रकास्यो ।
तुम शिवरामा उर लाई, तुमने निज संपति पाई ॥१३॥
तुम भविजन को शिव दाता, तुम दीन दयाल विख्याता ।
तुम गुण के सागर पूरे, तुम अष्टकर्म रिपु चूरे ॥१४॥
तुम गुण महिमा कूं गावत, गणधर हूं अंत न पावत ।
कवि और अल्प मति वारे, गुण वर्णत कैसे सारे ॥१५॥
तातें उर 'नेम' विचारी, तुम पद कूं धोक हमारी ।
तुम चरण तनी मोहि सेवा, भव भव में द्यो जिन देवा ॥१६॥

दोहा—इह विध पांडुक वन विषैं, चहुं दिश चतु जिन धाम ।
पूजो भविजन हर्ष सूं, भिन्न भिन्न ले नाम ॥

ॐ ह्रीं पांडुक वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला ॥ पूर्णार्घ्यं ॥

आडिल—पांडुक वन के मांहि, चार जिन देहरा ।
तिनको मन वच काय, पाठ नर जे करा ॥
ते नर सब सुख भोगि होय, फिर शिव-धनी ।
तिहुं जग भीतर कीर्ति, रहे तिनकी बनी ॥

अथ सुदर्शन मेरु के गज दंतस्थ चार
श्री जिनालय पूजा नं. १०

गीता छन्द—मेरु सुदर्शन के मनोहर चार शुभ गजदंत है।
तिनपे अकृत्रिम भवन श्री जिन चार खूब लसंत है॥
तिस थान सुर खग जाय पूजें शक्ति बिन हम इस थला।
आह्वानन तिनको करत त्रय विध पूजने को लखि भला॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चार गजदंत शिर चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतार वतार संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपइयावृत—क्षीरो दधि को नीर मनोहर, कंचन झारी मांहि भर्‌यो।
कर तें ले त्रय धार देत ही, जन्म मरण दूख दूरि टर्‌यो॥
मेरु सुदर्शन कोण चार में, गजदंते गिण चार लसैं।
शीष तिन्हो के चार जिनेश्वर, मन्दिर पूजत कर्म नसैं॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की चार कोण चार गजदन्तन पै चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः॥ जलम्॥

चन्दन केसर घन घसि लेके, हेम कटोरी हाथ गही।
मन वच तन की शुचिता करिता, भव तप तब ही दूर भई॥ मेरु सु०···चंदनं

तन्दुल कोमल सरस अखंडित, उज्ज्वल जल सों धोय लिये।
कंचन थाल हाथ में गहिकें, तुम गुण के फिर पुंज दिये॥ मेरु सु०···अक्षतं

बहुविधि प्रासुक कुसुम मनोहर, पंच वरण मय थाल धरे।
तुमरे पद की भेंट करत ही, काम बाण दुःख दूर करे॥ मेरु०···पुष्पं

घेवर मोदक आदिक नेवज, विधि पूर्वक वणवाय लये।
कंचन थाल हाथ में गहिके, भूख व्याधि सूं दूर भये॥ मेरु०···नैवेधं

मोहि तिमिर अंधियार हरण कूं, या जग में तुम दीख परो।
तातें निर्मल रतन दीप ले, तुम चरणन की भेंट करो॥ मेरु०···दीपं

मलयागिर की धूप मनोहर, खेय अग्नि घट मांहि सही ।
कर्म पुञ्ज के जालन काजे, मो उर में यह चाहि भई ।। मेरु०···धूपम्

श्रीफल लोंग सुपारी आदिक, फल कंचन के थाल भरे ।
शिवफल चाह भई मन मेरे, ताते ले तुम भेंट धरे ।। मेरु०···फलम्

जल चन्दन अरु अक्षत लेवूं, फूल चरु ले दीप धरूं ।
धूप सुवासित फल बहु उत्तम, वसु विधि ले मैं अर्घ करूं ।। मेरु०·· अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मेरु सुदर्शन कोन इशान, माल्यवान गजदंत पिछान ।
सिर नव कूट तणे जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के इशान कोन में माल्यवान गजदन्त पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा नवकूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।१।।

दिसि आग्नेय मेरु की पाय, गजदन्तां सोमनस लखाय ।
सात कूट व्यंतर जिन धाम, वसु विधि पूजूं करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु कीं आग्नेय कोन में सोमनस गजदन्त पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा सात कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल जिनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।२।।

मेरु सुदर्शन ने ऋत्य कोण, विद्युत प्रभ गजदन्तों होण ।
नव कूटनि में जिनवर थान, वसु विधि पूजूं हर्ष धरात ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की नेऋत्य कोण में विद्युत प्रभ गजदन्त पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा नव कटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।३।।

मेरु सुदर्शन वायव कोण, गंध मादना गजदन्तोण ।
सात कूट व्यंतर जिन धाम, हर्षित होय पूजूं वसु याम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की वायव कोण में गंध मादन गज दन्त पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा सात कूटों पर व्यण्तर देव सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।४।।

मेरु सुदर्शन चारों कोण, चारूं ही गजदन्ते होण ।
तिनपें भवन जिनेश विचार, सब थल पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरुकी चारों कोण चारों गजदन्तन सिर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। पूर्णार्घ्यम।।५।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—मेरु सुदर्शन कोण चतु, गजदन्ते गिण चार ।
तिनपैं भवन जिनेश की, जयमाला सुनि सार ।।

आडिल्ल—मेरु सुदर्शन कोण चार, लखि लीजिये ।
गजदन्ते गिण चार, भव्य चित दीजिये ।।
तीस सहस शत दोय, और नव योजना ।
षट् जु कला धरि जोड़ि, भव्य लखियोमना ।।१।।
यह लम्बाई जाणि, बरोबर सब तणी ।
श्री जिन आगम मांहि, जिनेश्वर इम भणी ।।
तिन चतु के सिर चार, कूट सिध है सही ।
श्री जिनवर के थान लसे, उस ही मही ।।२।।
चारण मुनि खगदेव, हरषि तहां आत है ।
श्री जिन पूजन काज, द्रव्य वसु लात है ।।
केई पूजन ठान, बहुरि घर जात है ।
केई दर्शन देखि, हरष गुण गात है ।।३।।
तुम देवन के देव, शिरोमणि जग विषें ।
केवल ज्ञान प्रकाश लियो, थल तुम अखें ।।
शिव-रमणी भर्तार, दया तुम ईश हो ।
रत्न त्रय करतार, विमल जगदीश हो ।।४।।
भव दधि तारन हार, रतन चिन्ता मणी ।
पंचम गति कर वास, चहूं गति तुम हणी ।।
अशुभ करम क्षयकार, चराचर ज्ञेय हो ।
क्षायक समकित धार, भव्य सुख देय हो ।।५।।
कल्पवृक्ष अरु काम, धेनु तुम हो सही ।
मन वांछित फल दाय, और तो सम नहीं ।।

तुम निज गुण अवकाशि, भये जग भूप जी ।
लोक शिखर थिर थाय, भये जु अरूप जी ॥६॥

पंच कल्याणक आय, करे हरि तुम तणे ।
चहुं विधि सुर समुदाय, हरिषि उत्सव ठणे ॥
महिमा तुमरी और, प्रभु को कह सके ।
तातें "नेम" विचार, हाथ मस्तक रखे ॥७॥
अरज करे हित पाय, सुणो जिन देव जी ।
मोकूं या जग मांहि, करम भरमेवजी ॥
यो दुख देहु नशाय, दया उर लायके ।
तिष्ठूं शिवपुर मांहि, आय थित थायके ॥८॥

दोहा—मेरु सुदर्शन कोण चतु, गजदन्ते गिण चार ।
तिनके सिर जिन भवन कूं, अर्घ चढ़ावूं सार ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की चार गजदान्तान पै चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यम् महार्घ्यम् निर्वपामीति ॥ स्वाहा ॥

चाल जोगीरासा—मेरु सुदर्शन चार कोण में, गजदन्ते जिण चारी ।
तिनके मस्तक पै जिनवर के, भवन चार सुखकारी ॥
तिनको पाठ करे नर कोई, मन वच तन लौ लाके ।
नर सुर के सुख ते नर लेके, थिर है शिवपुर जाके ॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सुदर्शन मेरु सम्बन्धी जम्बू शालमली वृक्षों पर दो जिन भवन पूजा नं ११

स्थापना छन्द गीतिका—ईशान नैऋत्य कोण माहीं, मेरु की जु लखी जियो ।
जम्बु व शाल्मली विरछ है, दोय चित्त धरी जियो ॥
तिन वृक्ष पै जिन भवन द्वय की, करत हम आह्वानना ।
मन काय वच की शुद्धता करि, वार त्रय मुख सूं भना ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की ईशान कोण जम्बू वृक्ष नैऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष इन द्वय वृक्षन की दक्षिण उत्तर में द्वय डालन पै द्वय श्री जिन भवन अत्रावतरा व नर संवोषट् आह्वाननम् । अत्रतिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल जोगीरासा

उत्तम गंगा जल की झारी, भरि के हाथ गहीनौ ।
तुम पद आगे धारा देतां, जनम मरण क्षय कीनौ ।।
मेरु सुदर्शन कोण ईशान रू, नैऋत्य में उर लाके ।
जम्बू शाल्मली पै मन्दिर, दोय जजूं गुण गाके ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की ईशान कोण जम्बू वृक्ष नैऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष स्थित द्वाभ्याम जिन भवनाभ्यां नमः ।। जलम् ।।

केशर चन्दन निर्मल घसि के, कनक कटोरी लीनों ।
अति हि सुगंधित करते गहना, भव तप दूरि भगीनो ।। मेरु सु०···चंदनम्
अमल अखंडित अति ही उज्ज्वल, कोमल तंबुल लेवूं ।
अक्षय पद के दाता तुम ही, लखि गुण पुञ्ज धरेवूं ।। मेरु सु०···अक्षतम्
फूल सुगंधित प्राशुक नाना, भांति कनक धरि थाली ।
गुञ्जन षट् पद प्रेम धराके, काम बाण दुःख टाली ।। मेरु सु०···पुष्पम्
उत्तम विधि सूं नाना नेवज, बहुत भांति बणवाया ।
क्षुदा वेदना मेटन कुं में, कनक थाल धरि लाया ।। मेरु सु०···नैवेद्यम्
हम कूं मोह महातम छायो, आप्पा पर नहिं भासे ।
तुम ढिग दीपक धरि करि जिनजी, ताकूं सहज विनासे ।। मेरु सु०···दीपम्
मलयागिर आदिक वसु विधि ले, धूप अनूप बनावूं ।
आठ करम दुःख दाहक तुम ढिग ज्वाला कुम्भ जलावूं ।। मेरु सु०···धूपम्
खारिक पिस्ता लोंग सुपारी, आदिक फल शुभकारी ।
कंचन थाल धराय हरषि सूं, शिवफल वांछा धारी ।। मेरू सु०···फलम्
जल चन्दन अक्षत नेवज फल, फूल दीप धरि लेवूं ।
कनक थाल में अर्घ बनाकर, धूप सुगन्धित खेवूं ।। मेरू सु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मेरु सुदर्शन कोण ईशान, जम्बू नामा वृक्ष महान।
ताकी उत्तर दिश की डाल, श्री जिन भवन जजूँ नयं भाल ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की ईशान कोण जम्बू वृक्ष की उत्तर डाल स्थित श्री जिन भवनाय नमः ।अर्घं ॥१॥

ता तरु की त्रय दिश की डाल, अनावृतादि यक्ष धर भाल।
तिन पै भवन जिनेश्वरदेव, पूजूं वसु विधी अर्घ चढ़ेव ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की ईशान कोण जम्बू वृक्ष की शेष तीन दिशा की डालन पै अनावृतादियक्षन के के स्थानक विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घं ॥२॥

चहुं दिश जम्बू तरु परिवार, एकलाख चालीस हजार।
एक शतक उगणीस गिनाय, तिनपै भवन जजूं जिनराय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की ईशान कोण जम्बू वृक्ष चहुं दिश एक लाख चालीस हजार एक सौ उगणीस परिवार वृक्ष व्यन्तरवास स्थित सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घं ॥३॥

मेरु सुदर्शन नैऋत्य कोण, शाल्मली तरु तिस थल होण।
ताकी दक्षिण डाल जिनेश, भवन जजूं नीरादिक वेश ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की नैऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष की दक्षिण डाल स्थित श्री जिन भवनाय नमः । अर्घं ॥४॥

तीन दिशा ता तरु की डाल, व्यन्तर भवन बनें जु विशाल।
तिन भवनों में जिनवर धाम, वसुविधि पूजूं सब ही ठाम ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु नैऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष की शेष तिहुं दिशा की डालन स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घं ॥५॥

शाल्मली तरु की चहुं ओर, जम्बू सम परिवार निहोर।
तिन तरु पै व्यन्तर सुरवास, भवन जजूं तहां श्री जिन खास ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की नेऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष की चहुँ दिश एक लाख चालीस हजार एक सो उगणीस परिवार वृक्ष व्यन्तरवास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घं ॥६॥

मेरु नैऋत्य कोण ईशान, जम्बू शाल्मलो पहिछान।
तिनपैं श्री जिनवर के थान, पूजूं वसु विधि के अमलान ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की नैऋत्य कोण ईशान कोण विषैं जम्बू शाल्मली वृक्षन की डालन स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घं ॥७॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—जम्बु शाल्मलि वृक्ष पैं, श्री जिन भवन लसाय।
जयमाला तिनकी कहूं, सुणो भव्य हरषाय ॥

॥ ढाल—अहो जगत गुरु की ॥

मेरु सुदर्शन नाम, कोण ईशान लखावे।
जम्बू नामक वृक्ष, शोभा बहुत धरावे ॥१॥
तीन पीठिका युक्त, वज्र भई जड़ जानौ।
पत्र रतन वैडूर्यतिसही के फल मानौ ॥२॥
ता तरु के सिर तीन, छत्तर लुंबित सोहे।
उन्चो जोजन दोय, पेड़ महा मन मोहे ॥३॥
जड़ योजन लख आध, शाखा चहुं दिश चारूं।
मोटी योजन दोय, योजन दस विस्तारूं ॥४॥
उत्तर दिश की डाल, श्री जिन भवन लखावो।
शेष डाल दिश तीन, व्यंतर देव बसावो ॥५॥
जम्बू वृक्ष सु जाय, अग्नि दिशा में भाई।
वृक्ष लखो परिवार, सहस बत्तीस गिणाई ॥६॥
अंत पारिषद देव, तिन पैं बसतैं जानो।
दक्षिण दिश तरु पाय, सह चालीस बखानों ॥७॥

मध्य पारिषद देव, तिन पैं थान लहाये।
अड़तालीश हजार, नेऋत कोण धराये ॥८॥

बाह्य पारिषद देव, तिन तरुवन पै गेहा।
वायु कोख ईशान, चार सहस तरु लेवा ॥९॥

सामान्यक सुर वास, चार सहस गिण लेवो।
पश्चिम दिस तरु सात, सात अनीक बसेवो ॥१०॥

चहुं दिश तरु लखि लेय, षोड़स सहस गिणाकै।
अंग-रक्षक लखि देव, तिष्ठं थान लहाकै ॥११॥

एक शतक अरु आठ, वसु दिश तरुवर सोहे।
प्रति हारोत्तम देव, वसते मो मन मोहे ॥१२॥

चौ दिश तरु परिवार, शोभा धरत जु खासा।
अनावृत सुर चार, पटदेवी का वासा ॥१३॥

अब ले तरूं सब जोड़ि, लख इक सहस चलीसा।
एक शतक उगणीस, भाषैं श्री जगदीशा ॥१४॥

इह विधि जम्बु वृक्ष, जानो भवि परिवारा।
जम्बु वृक्ष सु आध, ऊंच लखो तरु सारा ॥१५॥

जम्बु वृक्ष समान, सब परिवार धरावे।
शाल्मली है वृक्ष, नेऋत्य कोण बसावे ॥१६॥

ताकी दक्षिण डाल, श्री जिन मंदिर सोहे।
पूजत खग सुर राय, दर्शन तैं मन मोहै ॥१७॥

रचन अकृत्रिम गात, हमसूं बरणत न सारी।
तुम त्रिभुवन के नाथ, तुम पद ढोक हमारी ॥१८॥

तुम रागादिक नाश, केवल ज्ञान लहायो ।
सातों तत्व प्रकाश, भवि मिथ्यात उड़ायो ।।१९।।
कर्म अरिन कूं जीति, तुम शिव थान पधारे ।
ज्ञान अनन्त लहाय, हुये जगत ठकुरारे ।।२०।।
तुमरी महिमा नाथ, तिहुं जग मांहि विख्याता ।
गावे कवि सुर कौन, ताको अन्त न पाता ।।२१।।
नेम लखो निज दास, आशा मन की पूरो ।
दीजो शिवपुर वास, चहुं गति दुख कर दूरो ।।२२।।

दोहा—जम्बू शाल्मलि वृक्ष पै, श्री जिन भवन लखाय ।
तिनकूं भवि उर हरषि धरि, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु स्थित जम्बू वृक्ष शाल्मली वृक्ष के चहुं दिश स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला ।।पूर्णार्घ्यम् ।।

चौपाई—जम्बु शाल्मली वृक्ष जु दोय, दोय भवन तिन पै जिन जोय ।
तिनको पाठ करे नर कोय, सो निश्चय शिवपुर-पति होय ।।

ॐ इत्याशीर्वाद ॐ

सुदर्शन मेरु के पूर्व दिशा में आठ वक्षार श्री जिन भवन की पूजा नं. १२

स्थापना छन्द गीतिका

मेरु सुदर्शन पूर्व दिशि में, सरित सीता द्वय तटा ।
वक्षार अचल विदेह में वसु, कनक वरण जु है छटा ।।
तिन आठ गिरि पै आठ, श्री जिन भवन शोभा देत हैं ।
आह्वान तिनकी करत इस थल, पूजने के हेत हैं ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन में आठ वक्षार गिर सिर आठ श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणम् ।

चौपया वृत छन्द

सीता को जल निर्मल शीतल, कनक झारिका मांहि लियो ।
करतैं ले त्रय धारा देतां, जनम मरण दुःख दूरि कियो ॥
मेरु सुदर्शन पूरब दिश में, आठ अचल वक्षार लसैं ।
जिन पै आठ जिनेश्वर मंदिर, पूजत ही सब कर्म नशैं ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच आठ वक्षार गिर सिर आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ जलम् ॥

केशर चन्दन खूब घिसा के, कनक पात्र के मांहि धरूं ।
तुम चरणन की भेट करत हो, भव आतप को सहज हरूं ॥ मेरु सु०...चन्दनम्

तन्दुल कोमल अमल अखंडित, जल सूं उज्ज्वल धोय लिये ।
धरि कंचन के थाल मनोहर, हरषि हरषि गुण पुंज दिये ॥ मेरु सु०...अक्षतम्

बहु विधि फूल मनोहर प्रासुक, माला गूंथ जु थाल धरी ।
मनमथ बाण महादुख दायक, नाशन कूं तुम भेंट करी ॥ मेरु सु०...पुष्पम्

षट्रस व्यंजन तुरत जु ताजे, विधिवत करिके थाल धरूं ।
शीश नायकर छेपूं तब ही, क्षुदा रोग कं दूर करूं ॥ मेरु सु०...नैवेद्यम्

निर्मल दीप रतनमय कंचन, थाल धरा के अरज करूं ।
मिथ्या तिमिर नशावो मेरी, हाथ जोड़ि तुम पांय परूं ॥ मेरु सु०...दीपम्

कर्म शत्रु दुःख दायक मोकूं घेरि रहे या जगमांही ।
तातैं धूप खिपाय अग्नि में, जालत हूं मैं शक नांही ॥ मेरु सु०...धूपम्

श्रीफल लौंग बिदाम सुपारी, पिस्ता आदिक लाय धरूं ।
कंचन थाल भराय हरष सों, शिवफल को मैं चाह करूं ॥ मेरु सु०...फलम्

आठ करम दुखदायक जग में, ताके नाशन हार लखे ।
नीरादिक निर्मल आठूं ले, ता कारण तुम भेट रखे ।। मेरु सु०···अर्घम्

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच आठ वक्षार गिर सिर आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। अर्घम् ।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—पहिला चित्रकूट वक्षार, सिद्धकूट जिनवर गृह सार ।
तीन कूट में व्यन्तर धाम, मैं पूंजूं तजिकें सब काम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शम मेरु पूर्व विदेह सीता के उत्तर नीला चल से दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी के पास चित्रकुट वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा सेस तीन कुटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

पदम कूट वक्षार ललाम, सिद्ध कूट श्री जिनवर धाम ।
तीन कूट व्यन्तर सुर थान, अर्घ चढ़ाऊं मन थिर आन ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के उत्तर नीला चल से दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी के पूव पदम कुट वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीन कुटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

तीजा नलिन कुट वक्षार, सिद्ध कूट पूरब दिसिसार ।
तीन कूट में व्यन्तर वास, मैं पूजूं मन धरि हुल्लास ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के उत्तर नील चल से दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी के पूर्व नलिन कूट वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीनों कूंटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

एक सेल वक्षार सु नाम, पूरब में जिन गृह अभिराम ।
व्यन्तर थानक तीन सूं कूट, पूजूं लेकर द्रव्य अटूट ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूव विदेह सीता के उत्तर नीलाचल से दक्षिण देवारण्य की वेदी के पास एक सेल वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा सेस तीन कूटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

नाम त्रिकूट गिरी वक्षार, तापर सिद्ध कूट जिनसार।
व्यन्तर वास कूट हैं तीन, पूजन करूं हेरि लवलीन ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के दक्षिण नीसधाचल के उत्तर देवारण्य वेदी के पास त्रिकूट वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीन कूटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ५ ॥

नाम वै श्रवण है वक्षार, सिद्ध कूट पूरब में सार।
बाकी तीन कूट सूर थान, पूजन करूं सहित सरधान ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के दक्षिण नीसधाचल के उत्तर देवारण्य वेदी के पश्चिमवै श्रवण वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीनों कूटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ६ ॥

सप्तम अंजन गिरि वक्षार, तापर सिद्ध कूठ मनहार।
तीन कूट व्यन्तर सूरवास, पूजूं करि मन में विश्वास ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के दक्षिण नीसधाचल के उत्तर देवारण्य वेदी के पश्चिम अंजन वक्षार गिर पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीन कूटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ७ ॥

आत्मांजन वक्षार महान, सिद्ध कूट पूरब दिसि जान।
व्यन्तर सुर के कूट सुतीन, पूजन करूं होइ स्वाधीन ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु पूर्व विदेह सीता के दक्षिण नीसधाचल के उत्तर भद्रशाल वन वेदी के पास आत्मांजन वक्षार पर श्री जिन भवनाय तथा शेस तीन कूटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ८ ॥

पंदरी छंद–सीता मधि दस द्रह देवि वास, कंचन गिरि सत दोउ तरफ खास।
वन भद्रशाल वेदिका पास, दो यमक गिरि व्यन्तर जु वास ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के मध्य दस द्रह तथा दोनों तट पर दो सौ कांचन गिरी और भद्रशाल वन वेदी के पास दो यमक गिर सम्बन्धी व्यन्तर देव स्थानों पर सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ९ ॥

पूरब दिसि सीता तट जु दोय, छै नदी विभंगा वहें सोय।
इक लाख सहस असंटि प्रमान, उपकारक नदियां मिली आन ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सम्बन्धी छै विभंगा नदी क्रमशः ग्राहवती, हीरदवती, पंकवती तत्तजला, मत्तजला, उन्मत्तजला तथा इन छः नदियों की एक लाख अड़सठ हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १० ॥

दक्षिण उत्तर सीता जु पास, वेदी युत देवारण्य खास।
पूरब सम्बन्धी सकल थान, जिनवर गृह पूजूं हर्ष ठान ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह सीता के उत्तर दक्षिण देवारण्य वेदी सम्बन्धी व्यन्तर थानक विषें सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥११॥

सीमन्धर जुगमन्धर जिनेश, जो भये और होवें हमेश।
पूजूं अति ही मन धारि प्रीत, जल फलादि सब लेकर पुनीत ॥

ॐह्रीं सुदर्शन मेरु पूर्व विदेह मध्य श्री सीमंधर स्वामी तथा जुग मन्दिर स्वामि वर्तमान में विराजमान तथा भूतकाल में जितने हुए भविष्यत काल में जितने होवेंगे समस्त अरहंन्त परमेष्टियों भाव सहित नमः। अर्घम् ॥ १२ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—आठ अचल वक्षार लखि, सोलह क्षेत्र विदेह।
शीस जिनेश्वर भवन की, जयमाला सुण लेह ॥

ढाल बीस तीर्थङ्कर पूजा

जम्बु दीप के मध्य में जगसार हो, मेरु सुदर्शन गाय।
तासुं पूरव दिश विषें, जगसार हो क्षेत्र विदेह कहाय ॥
कहलाय क्षेत्र विदेह नामी, सरित सीता मधि बहे।
ता सरित दिसट दखिन उत्तर, देश सोलह जिन कहै ॥
वन भद्रशाल सु वेदिका तें, पूरब कछु जे देश है।
नील गिर से दक्षिण मानों, उत्तर सीता वेस है ॥१॥

व्यास गिणो ता देश को जगसार हो, बाबीसे दश दोय।
इतने योजन जोड़ि के जगसार हो, हूटकोस पुनि जोय॥
जोय भवि जन फिर लम्बाई, कहत हूं अवधारियो।
सहस षोडश शतक षट में, आठ योजन टारियो॥
ईकुणीस भाग धराय योजन, एक के जु बिचार कैं।
गिण दोय भाग धराय तापैं, जोड़ लेहु निहार कैं॥२॥
इह विधि सब ही देश की, जगसार हो व्यास लम्बाई जान।
वक्षारा तासूं लग्यो जगसार हो, चित्रकूट मन आन॥
मन आनि योजन पांच सै, गिण व्यास ताको लीजियो।
देश सम आयाम हयमुख, अचल नयन लखीजियो॥
ऊंच योजन पांचसै, गिण सरित सीता कै कनें।
नील गिरि की तरफ ऊँचो, चार सै योजन भनें॥३॥
ऊँडो सब ही थल विषैं, जगसार हो चोथे भाग कहाय।
ताके सिर पै शोभने जगसार हो, कूट चार गिणवाय॥
गिणवाय चौथे भाग ऊँचे, कूट गिर पै जहाँ बने।
लखि सिद्ध कूट समीप सीता, भवन श्री जिनवर तनें॥
शेष कूट जु तीन पै सुर, बसत व्यंतर प्रीत सूं।
इह भांति सब वक्षार, गिरि की जानिं रचना रीत सूं॥४॥
तासुं लगतो है सही जगसार हो, देश सु कच्छ कहाय।
नदी विभंगा फिर लगी जगसार हो, तासू पूरव गाय॥
गाय भवि जिय देश सुन्दर, महा कच्छ सुहावनों।
ता देश फिरि वक्षार परवत, पद्मकूट लखावनो॥
सिर चार कूट जु धरत तापैं सिद्ध कूट निहार कैं।
मन काय वच करि वंदना, जिन भवन भव्य विचार कैं॥५॥

तासूं देश निहारियो जगसार हो, कछ कावति मन लाय ।
तासूं नदी विभंग है जगसार हो, सीमा कारक पाय ॥
पाय आवर्ताज्य सुन्दर, देश पंचम जानियो ।
है नलिन कूट वक्षार पर्वत, देश अंत पिछानियो ॥
चतु कूट शीस धरात तामें सिद्ध कूट जु की मही ।
मंदिर श्री जिनराज को हैं, भाव धर वंदु सही ॥६॥
तासूं देश लगत ही जगसार हो, लांग लवर्त महान ।
सरित विभंगा फिर लगी जगसार हो, देशे अंत पिछान ॥
पिच्छान पुष्कल देश भवि जिय, सातमो सुखदाय है ।
फिर एक शैल वक्षार ताको, अंत में कहलाय है ॥
ता अचल सिर चतु कूट तायें सिद्ध कूट बखान कै ।
मंदिर अकृत्रिम है जिनेश्वर, बंदि भवि पहिचान कै ॥७॥
अष्टम देश सुहावनो जगसार हो, पुष्कलवति लखिनाम ।
श्री मंदिर जिनराज तैं जगसार हो, विचरत सब ही ढाम ॥
ढाम सब विचरत मनोहर, समवसरण सुहावनों ।
चतुसंघ द्वादश सभा संयुक्त, भविक जन मन भावनों ॥
तिहुं काल वाणी खिरत तिनकी, सप्ततत्त्व प्रकाशिनी ।
रुचि धारि भवि जिय श्रवण करते, जगत दुख निवारनी ॥८॥
तिस थल तिनके चरणकूं जगसार हो, नावूं सिर हरषाय ।
ताही देश सूं लग रही जगसार, वन वेदी मन लाय ॥
मन लाय देवारण्य वन में, भवन श्री जिन देव के ।
सिर नाय वदूं भाव सेती, अमर व्यंतर सेव कै ॥
इह भांति रचना सरित सीता, दक्षिण दिस में जानिजो ।
वक्षार गिर चतु भवन जिनवर, चार भव्य पिछानियो ॥९॥

सरित विभंगा तीन है जगसार हो, व्यास लखो मन लाय ।
मील लाख पन है सही जगसार हो, एक नदी गिणवाय ॥
गिणवाय अंतर आदि वेदी, देश आठ विचारियो ।
देवाजुरण्य समीप भवि जिय, वत्स देश निहारियो ॥
वन्दूं सुबाहु जिनेश तिस थल, काय मन वच योग सूं ।
'नेम' निर्भय थान दीजै, मेटि तिहुं जग रोग सूं ॥१०॥

दोहा--इह विधि वसु वक्षार गिर, आठ भवन जिनराम ।
भविजन तिनकूं ध्याय के, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं जम्बू द्वीप की पूर्व विदेहों में आठ वक्षार गिर शीस श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला ॥ पूर्णार्घ्यम ॥

जोगीरासा

मेरु सुदर्शन की दिश पूरव आठ अचल वक्षारा ।
तिनके सिर पे भवन जिनेश्वर, आठ लसैं सुखकारा ॥
तिनको पाठ पढ़े नर सोई, मन वच काय लगाके ।
ते नर सुर सुख भोगि भले रे, थिर ह्वै शिवपुर जाके ॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सुदर्शन मेरु के पूर्व दिशा में सोलह रूपाचल जिन भवन पूजा नं. १३

स्थापना अडिल्ल छन्द-मेरु सुदर्शन पूर्व विदेहन कर मही ।
सोल खगाचल शीस भवन जिनवर सही ॥
तिनकी पूजन हेत करूं आह्वानना ।
मन वच तन करि शुद्ध विमल गुण गावना ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पूर्व दिशि सोलह विदेह क्षेत्रों में सोलह ही रूपाचल शीष, सोलह श्री जिन भवन समूह अत्रावनरावतव संवोषट् आह्वाननं । अत्र विष्ठ ठः ठः स्थापन । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

चाल छन्द त्रिभंगी

ले गंगादिक सम, निर्मल उज्ज्वल, सुन्दर शीतल जल लायो ।
भरि कंचन झारी, त्रय गद हारी, लखि हितकारी सिर नायो ॥
लखि मेरु सुदर्शन की दिश पूरब, सोलह परवत रजत तणे ।
तिन परवत ऊपर, भवन जिनेश्वर, पूजत सुर नर आय घणे ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पूर्व दिशि सोलह विदेह क्षेत्रन के बीच सोलह रूपाचल शीष, सोलह ही श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

घसि चंदन बावन, शीतल पावन, बहुरि मिलावन धन सारा ।
धरि कनक पियाले, मधुकर काले नचत रसाले दृग सारा ॥ लखि मेरु···चंदनम्
वारिद जल पोखे, सरस अनोखे, तंदुल चोखे थाल भरूं ।
जल ते बहु धोवूं, मल सब खोवूं तुम पद जोवूं पुञ्ज धरूं ॥ लखि मेरु···अक्षतम्
सुर पादप केरे, कुसुम घनेरे, भ्रासुक हेरे बहु वरणा ।
अलि दोड़े आवे, नाहिं अघावे, गिरद भ्रमावे मन हरणा ॥ लखि मेरु···पुष्पम्
विधि पूर्वक कीनो, षट् रस भीनो, नेवज लीनो शुभ ताजा ।
हे छुदै दुखदाई, कारण पाई, तुम ही नशाई जिनराजा ॥ लखि मेरु···नैवेद्यम्
तम मोह हरंता, ज्ञान करंता, नमत जु सन्ता पद तेरे ।
लखि ऐसो कारण, दीप उजारण, तुम जग तारण प्रभु मेरे ॥ लखि मेरु···दीपम्
कृष्णागर लायो, तगर मिलायो, कूट रलायो श्री खंडं ।
ले धूप सुगंधं, पावक कुम्भं, जलत प्रचण्ड वसु वंडं ॥ लखि मेरु···धूपम्
फल कल्प तरु के, बहु-विधिहु-के, उत्तम भू के महि दीसे ।
ऐसे फल आदिक, भेंट धरादिक, शिव फल-सादिक अघ पीसे ॥ लखि मेरु···फलम्
फल, चंदन तांदल, फूल हु पावन, चरु मन भावन दीप धरूं ।
फल धूप मनोहर, आठो गिण करि, आठो परिहर अर्ज करूं ॥ लखि मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

कच्छ देश पहलो लखि लेय, रूपाचल नव कूट लसेय ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में पहिला कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

दूजा देश सु कच्छ कहाय, रूपाचल नव कुट ललाम ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की दक्षिणवेदी की पूर्व दिशा में दूसरा सु कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

तीजा देश महा कच्छ नाम, रूपाचल नव कुट ललाम ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में तीजा महा कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

चौथा कच्छ कावती देश, रूपाचल नव कूट लसेस ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में चौथा कच्छ कावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

पंचम आवर्ता है देश, रूपाचल नव कुट विशेष ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में पंचम आवर्ता देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में शकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

लांगल वर्ता छट्ठा देश, रूपाचल नव कूट हमेस ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में छटा लांगला वर्त देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। अर्घम् ।।

सप्तम देश पुष्कला नाम, रूपाचल नव कूट ललाम ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में सप्तम पुष्कला नाम देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कटों पर व्यंन्तर देव थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

पुष्क लावती अष्टम देश, रूपाचल नव कूट लसेस ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण देवारण्य वेदी के पास आठवा पुष्कलावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्ध कूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर देव थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

वत्सा नौंवा देश कहाय, रूपाचल नव कूट सुहाय ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ नौवां वत्सा देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्ध कूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक में सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

दसवां देश सू वत्सा जान, रूपाचल नव कूट महान ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ दसवां सू वत्सा देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्ध कूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक ने सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

महावत्स ग्यारहवां देश, रूपाचल नव कूट विशेष ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ ग्यारहवां महावत्स देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्ध कूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ११ ।।

वत्स काबती बारम देश, रूपाचव नवकूट लसेस ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदशन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ बारहवां वत्स कावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

रम्या देश तेरमा नाम, रूपाचल नव कूट ललाम ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ तेरहवां रम्या देश मध्ये रूपाचल पर्वत श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

देश सु रम्या चौदम जान, रूपाचल नव कूट महान ।
सिद्ध कूट में लिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ चोदहवां सुरभ्या देश मध्य रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यंतर थानक में सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

देश रमणियां पन्द्रम नाम, रूपाचल नव कूट ललाम ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधालय की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ पन्द्रहवां रमणिया देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

मंगलावति सोलम देश, रूपाचल नव कूट विशेष ।
सिद्ध कूट में जिनवर धाम, आठ कूट व्यन्तर निश्राम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा भद्रशाल वन की

वेदी के पास सोलवां मंगलावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कटों पर व्यंतर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

योजन दस ऊपर खग थान, दक्षिण उत्तर कटनी जान ।
फिरि दस ऊपर व्यन्तर थान, सब थल पूजूं जिन भगवान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह क्षेत्र में १६ रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊँची दक्षिण उत्तर दोनों कटनी पर एक सौ दस-एक सौ दस विद्याधर की नगरियों में तथा बीस योजन ऊँची दोनें तरफ व्यंतर देव थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग नीलाचल सोय, रक्ता रक्तोदा नदि दोय ।
आन मिली सीता में सोय, आठ देस की सोलह होय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में पहिले आठ देश सम्बन्धी रक्ता रक्तोदा सोलह नदियां नीलाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिलि इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियां चौदह चौदह हजार इस सब के भी दोनों तट पर व्यंतर देवों के थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग निषधा चल सोय, गंगा सिन्धू नदियां दोय ।
आन मिली सीता में सोय, आठ देश की सोलह होय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में दूसरे आठ देश सम्बन्धी गंगा सिन्धु सोलह नदियां निषधाचल के मूल भाग से निकल कर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता मे मिली इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियां चौदह चौदह हजार इस सब के भी दोनों तट पर व्यंतर देवों के थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १९ ।।

म्लेक्ष खंड के बीच निहार, वृषभाचल कंचन मय सार ।
आर्य खंड में नगरी सार, तीर्थङ्कर उपजे गुण धार ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सोलह देश सम्बन्धी पांच पांच म्लेक्ष खण्ड हैं उत्तर के तीन के बीच में वृषभाचल पर्वतों सम्बन्धी तथा आर्य खंडों में एक एक नगरी जिसमें तीर्थंकरादि होते हैं उन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप :—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्य सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मेरु सुदर्शन पूर्व दिसि, रूपाचल पर भौन ।
पढ़ते ही जयमालिका, दुक्ख रहे नहीं कोन ।।

छन्द—जय जय जय श्री अरहंत, तुम्हारे गुण गाऊँ ।
दुख हरो त्रिलोकीनाथ चरण में सिर नाऊँ ।। टेक ।।
मेरु सुदर्शन पूर्व दिस, सोलह देस महान ।
इक इक रूपाचल गिरी, सब ही के दरम्यान ।।
तिनि पर नव कूट लसंत, नाम तिनके गाऊँ । दुःख हरो···।।१।।

सिद्ध कूट है पूर्व में दूजा है दक्षिणार्ध ।
खण्ड प्रताप सु तीसरा, चौथा पूरण भद्र ।।
पंचम विजयारध नाम, पूज कर हर्षाऊँ । दुःख हरो···।।२।।

मणीभद्र है छट्ठमा, सप्तम तमिश्राख्य मान ।
अष्टम उत्तराधिप कहा, नवम वैश्रवण जान ।।
सोलह थानक यही नाम हृदय में अपनाऊँ । दुःख हरो···।।३।।

सिद्धकूट में मुख्य है श्री जिनवर का धाम ।
सेष आठ कूटनि विषे, व्यंतर सुर विश्राम ।।
सब में जिन पूजन काज द्रव्य उत्तम लाऊँ । दुःख हरो···।।४।।

दस योजन ऊपर कटनि दक्षिण उत्तर ओर ।
पचपन पचपन खग नगर, राजत है सिरमोर ।।
इन सब थल जिन गृह देखि, भाव उत्तम भाऊँ । दुःख हरो···।।५।।

दखिन उत्तर दोऊ तरफ ऊपर योजन बीस ।
व्यंतर शुर थानक विषें, भवन बने जगदीस ।।
मैं नाचि गाइ हुलसाय, निरखि बलि-बलि जाऊँ । दुःख हरो···।।६।।

छै छै खण्ड विजयार्ध तल दो दो नदि निकसाय ।
एक लाख अरसटि सहस और नदि मिली आय ।।
इन सबके दोनों तरफ जैन मन्दिर भाऊँ । दुःख हरो···।।७।।

सोलह देसनि के कहे, अस्सी म्लेक्ष खंड ।
तिनमें सोलह के विषें, वृषभाचल गुण मंड ।।
नमि थल में जिनवर भवन पार तातें पाऊँ । दुःख हरो···।।८।।

सौलह देसनि के विषें, इक इक नगर महान ।
पुरुष सलाका हों तहां, करे आत्म कल्यान ।।
सोलह नगरों के नाम सुनो मैं बतलाऊँ । दुःख हरो···।।९।।

छेमा छेमपुरी सुनो अरिष्ट तीजा नाम ।
अरिष्टपुर चौथा सुनो पंचम खड़गा ठाम ।।
इन सब में श्री जिन गेह, जोरि कर मुक्काऊँ । दुःख हरो···।।१०।।

मंजूसा अरु औषधी, पुडरीकिनी जान ।
नाम सुसीमा नवम है, दसम कुंडला मान ।।
इनमें जिनवर गृह देखि, पुष्प बहु वर्षाऊँ । दुःख हरो···।।११।।

अपराजिता प्रभंकरा, अंका तेरम नाम ।
पदमावती सु भाख्य है, रतन संचयाधाम ।।
इन माहि जिनेश्वर देव प्रती मंगल गाऊं । दुःख हरो···।।१२।।

बार बार मैं क्या कहूँ, सुनो अर्ज भगवान ।
पास तुम्हारे में मेरा, भी बनि जाय मकान ।।
मे शरण तुम्हारी छोड़ि और कछु नहीं चाऊं । दुःख हरो···।।१३।।

तुम गुण अपरम्पार है, को करि सके बखान ।
पर भक्ति वस होइ कर, किया अल्प गुणगान ।।
मे छोड़ि पराई दृष्टि आत्म रस में न्हाऊँ । दुःख हरो···।।१४।।

रसना इन्द्री होय वस, खाये विविध पदार्थ ।
मनुआ तनक नहीं भरा, हुआ परिश्रम व्यर्थ ।।
अब तजि कवला आहार नो करम को खाऊँ । दुःख हरो···।।१५।।

शादी में इतनीं करीं गिनीं सकें नहीं जाय ।
श्रुत सागर की आस यह पूरो श्री जिनराय ।।
अब शिव सुन्दरि के साथ भामरें डरवाऊँ । दुःख हरो···।।१६।।

जय जय जय श्री अरहंत तुम्हारे गुण गाऊँ ।
दुःख हरो त्रिलोकीनाथ चरण में सिर नाऊँ ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के पूर्व विदेह में सोलह रूपाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घ्यम् ।

अडिल्ला—मेरु सुदर्शन पूर्व विदेहन में भला, षोडश श्री जिन गेह शीस रूपाचला ।
तिनको करिये पाठ भव्य मन लायकें,सो होवे जग भूप थान शिव पायकें ।।

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल सम्बन्धी तीन श्री जिन भवन पूजा नं. १४

गीता छन्द—मेरु सुदर्शन की दक्षिण दिशि तीन कुल गिरि जानियो ।
हिम वन महा हिमवान तीजो निषधगिरि उर आनियो ।।
तिन्ह कूट सिर लखि भवन, जिनवर करत हम आह्वानना ।
हेत तिन के पूजने को वार त्रय मुख सों मना ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश हेमाचलादि तीन कुलाचल सम्बन्धी श्री जिन भवन समूह । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निहित करणम् ।

छन्द त्रिभंगी–गंगाजल झारी, शीतल भारी, तृषा विडारी ले आयो ।
तुम चरन अगारी, ले बलिहारी धारा देकर गुण गायो ।।
मेरु सुदर्शन की दिस दक्षिण, तीन कुचालन शीस लसै ।
पूजत श्री जिनवर के मंदिर, भव भव संचित पाप नसै ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु दक्षिण दिश तीन कुलाचल सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो जनम जरा मृत्यु नासनम् जलम् ।

अति निर्मल चंदन ताप निकंदन तुम पद वंदन घसि लावो ।
भव ताप सतायो अति दुख पायो तुम ढिग आयो सिर नायो ।। मेरु सु०···चंदनं

ले अमल अखंडित, उज्ज्वल अक्षत, गुणकरि मंडित पुञ्ज धरूं ।
तुम शिव पद दाता हो विख्याता दे मुझि साता अर्ज करूं ।। मेरु सु०···अक्षतं

बहु फूल सुगंधं नाना रंगम् प्रासुक चंगम् ले लीने ।
मन्मथ मुझ खेटे, ताकूं मेटे, तुम पद भेटे हम चीन्हे ।। मेरु सु०···पुष्पं

षटरस करि पूरं मोती चूरं, सेव खजूरं अरु खाजा ।
विधि पूर्वक लावूं गुण कूं गावूं क्षुदा मिटावन के काजा ।। मेरु शु०···नैवेद्यं

मिथ्यातम छायो, ज्ञान नशायो, हम दुख पायो बहुतेरो ।
लखि दीपक लायो, तुम ढिग आयो, शीस नमायो प्रभु मेरो ।। मेरु सु०···दीपं

वसु कर्म लुटेरे, मोकूं घेरे, सुन प्रभु मेरे दुःख पावूं ।
ता कारण थाके, धूप बनाके, अग्नि खिपाके गुण गावूं ।। मेरु सु०···धूपं

फल लोंग बिदामा, आदिक नामा, कंचन ढामा धरि लीने ।
तुम शिव फल दायक, तिहुं जग नायक हो गुण लायक हम चीन्हे ।। मेरु सु०···फलं

जल आदिक लेवूं थाल धरेवूं अर्घ बनेवूं अर्ज करूं ।
पद अभय जु दीजे, ढील न दीजे, विरद लखीजे पाय परूं ।। मेरु सु०···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा--एकादस हिमवान सिर, कूटनि में जिनराय।
पूरब दिस के प्रथम में, सिद्ध कूट मनलाय॥
बचे शेष दस कूट में, व्यन्तर देव निवास।
सब थल पूजूं अर्घ ले,, धरि मन में हुल्लास॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिस सम्बन्धी तीन कुलाचलों में से प्रथम हिमवान गिरि पर ग्यारह कूटन में से पूर्व की ओर के सिद्ध कूट में महा जिन मन्दिर तथा बाकी दस कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥१॥

सीस महा हिमवान के आठ कूट शोभाय।
पूरब दिसि के प्रथम में, सिद्ध कूट मन लाय॥
सेष कूट सातोनि मैं, व्यन्तर देव निवास।
सब थल पूजूं अर्घ ले, धरि मन में हुल्लास॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी तीन कुलाचलों में से दूसरे महा हिमवान गिरि पर आठ कूटन में से पूर्व की ओर के प्रथम सिद्ध कूट में महा जिन मन्दिर तथा बाकी सात कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥२॥

निषधालय पर कूट नव, राजत हैं सुखदाय।
पूरब दिसि के प्रथम में, सिद्ध कूट मन लाय॥
सेष कूट आठोनि पर, व्यन्तर देव निवास।
सब थल पूजूं अर्घ ले, धरि मन में हुल्लास॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी तीन कुलाचलों में से तीसरे निषध गिरी पर नव कूटों में से पूर्व की ओर के प्रथम सिद्ध कूट में महा जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥३॥

हिम वन गिरि के सीस पर, पदम नाम द्रह थाय।
तीन नदी निकसीं तसु, बीच कमल तिष्ठाय॥
महल बने हैं दलनि पर, श्री देवी परिवार।
पूजूं सब थल तहां के, जिन मन्दिर मनहार॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी हिमवन पर्वत पर पदम नाम के तालाब से गंगा, सिन्धु रोहितास्या तीन नदियाँ निकलीं तथा तालाब के मध्य में कमल की पाँखुड़ियों पर श्री देवी के परिवार सहित, महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ७ ।।

शीस महा हिमवान के, महा पदम द्रह थाय।
दोय नदी निकसी तसु, बीच कमल सोभाय ॥
महल बनि रहे दलनि पर, ह्री देवी परिवार।
सब थल पूजूं जिन भवन, अष्ट द्रव्य ले सार ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी महा हिम वन पर्वत पर महा पदम नाम के तालाब से दोय नदि निकलीं तथा तालाब के मध्य में कमल की पाँखुड़ियों पर ह्री देवी के परिवार सहित महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ५ ।।

निषध गिरी के शीस पर, तिगंछ द्रह कहलाय।
दोय नदी निकसी तसु, बीच कमल सुखदाय ॥
महल बनि रहे दलनि पर, धृत देवी परिवार।
पूजूं मन वच काय ये, तीनों योग सम्हार ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी निषधागिरी पर्वत पर तिगंछ नाम के तालाब से दोय नदी निकलीं तथा तालाब के मध्य में कमल की पाँखुड़ियों पर धृति देवी के परिवार सहित महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ६ ।।

गंगा सिन्धू दोय ये, रोहितास्या और।
दोनों तट पर में जजूं, जिन मन्दिर सब ठौर ॥
छप्पन सहस नदी मिली, और इन्हीं में आय।
तिन सबके दोनों तरफ, भवन जजूं जिनराय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी हिमवन पवत पर पदम नाम तालाब से गंगा, सिन्धु और रोहितास्या नदी निकली तथा छप्पन हजार सहायक नदियाँ इनमें आकर मिलीं, इन सब नदियों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ७ ।।

रोहित अरु हरि कांता, इन दो के दो तीर।
व्यन्तर थानक में जजूं, जिन मन्दिर तस्वीर॥
सहस चुरासी नदि मिली, और इन्हीं में आय।
तिन सबके दोनों तरफ, भवन जजूं जिनराय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी, महा हिमवान पर्वत पर महा पदम नाम के तालाब से रोहित अरु हरिकांता दोनों नदी निकली तथा चौरासी हजार सहायक नदियाँ इनमें आकर मिलीं, इन सब नदियों के दोनों तट पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ८॥

हरित रु सीतोदा नदी, इनके दोउ किनार।
पूजूं अधिक उछाह से, लेकर द्रव्य अपार॥
एक लाख चालिस सहस, मिली इन्हीं में आय।
सब थल पूजूं प्रीत से, जिन मन्दिर गुण गाय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी निषध पर्वत के तिगंछ नाम के तालाब से हरित रु सीतोदा दोनों नदी तथा एक लाख चालीस हजार सहायक नदियाँ इनमें आकर मिली इन सब नदियों के दोनों तट पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥९॥

जघन रु मध्यम दोय ही, भोग भूमि सुखदाय।
दोय नाभि गिरि बीच में, तहां पूजूं जिनराय॥
भोग भूमि उत्तम कही, देव कुरु सुखदाय।
सकल भवन पूजूं तहां, हरसि हरसि गुणगाय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी जघन और मध्यम भोग भूमि में तथा देव कुरु उत्तम भोग भूमि में दोय नाभि पर्वत सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १०॥

गंगा दी सातों नदी, मिली समुद्र में जाय।
जम्बू वेदी द्वार पर, भवन जजूं जिनराय॥
और तहां जिन भवन दो, सुर व्यन्तर स्थान॥
ते सब पूजूं रुचो से, छोड़ि खान अरु पान॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के दक्षिण दिशा सम्बन्धी गंगा आदि समुद्र में जाकर मिली तथा जम्बू द्वीप की वेदी का मुख्य द्वार पर तथा जहाँ-जहाँ भी व्यन्तर स्थानकों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ११ ॥

जाप :- ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा--मेरु सुदर्शन दक्षिण दिश, तीन कुलाचल शीस।
वरणूं श्री जिन भवन की, जयमाला अघ खीस ॥

॥ छन्द पद्धड़ी ॥

जय मेरु सुदर्शन दक्षिण भाग, जय तीन कुलाचल की जु जाग।
हिमवान कुलाचल प्रथम गाय, शत एक ऊंच योजन लखाय ॥१॥
एक सहस पचास रु दोय व्यास, दस दोय कला गिण लेहु खास।
सिर कूट लसे ग्यारा प्रमान, सिद्धकूट दिशा पूरब बलान ॥२॥
सब कूट ऊंच चौथो जु भाग, गिरि को ऊंचाई तें जु लाग।
सिद्धकूट विषै जिन भवन खास, गिरि शीस मध्य इह परम भास ॥३॥
गंगादि तीन सरिता निकासि, तिस थल जिन भवन नमो जु खासि।
हिमवान अचल छवि कनक गाय, जिन भवन नमूं निज शीसनाय ॥४॥
छवि श्वेत महा हिमवान देत, सिर आठ कूट ताके बसेत।
सत दोय ऊंच योजन कहाय, सम भाग शीस तक ले लखाय ॥५॥
वोयालीसे दश पै धराय, लखि व्यास कला दश और गाय।
इक योजन के उगणीस टूक, लखि लेहु कला भवि नाहिं चूक ॥६॥
जय महा पद्म द्रह पद्म भाग, सरिता प्रवाह द्वय की जु जाग।
जय सिद्ध कूट दिश पूर्व पाय, जिन भवन नमूं मन वचन काय ॥७॥
लखि सात कूट गिरि शीस और, जिन भवन जजूं व्यन्तर जु ठोर।
सब कूटन को ऊंचत्य मान, गिरिते जु भाग चौथो प्रमान ॥८॥

जय निषध अचल तपनीय रंग, सत च्यार ऊंच योजन अभंग।
नव कूट शीस शोभायमान, शत एक ऊंच योजन बखान ॥९॥
जय सिद्ध कूट दिश पूर्व जाय, जिन भवन नमूं मन वचन काय।
वसु कूटन पै व्यन्तर प्रसाद, सिर नाय भवन जिन तजि प्रमाद ॥१०॥
गिरि शीस मध्य तिगंछ नाम, द्रह बीच लसे धृति देवी ठाम।
तिन महलन पै जिनराज गेह, सब ठौर नमूं उर धरि स्नेह ॥११॥
द्रह दक्षिण उत्तर द्वार पाय, सरिता जु दोय निकसी लखाय।
तिन सरिता के तट उभय जोय, जिन भवन नमूं जितने जु होय ॥१२॥
गिरि निषिध व्यास सतरा हजार, सत डेढ़ आठ योजन जुटार।
पुनि दोय कला ऊपर बखान, सब जोड़ लेय समझो सुजान ॥१३॥
हिमवान महा हिमवान बीचि, लखि भोग सु भूमि जघन्य खींचि।
इकबीस शतक योजन सु पांच, धरि पांच कला लखि व्यास सांच ॥१४॥
तिस क्षेत्र मांहि सब ही जु ठौर, जिन भवन नमूं कर दोय जोर।
गिरि-नाभि-कनकमय मध्य भाग, तिस थान नमूं जिन भवन जाग ॥१५॥
गिरि निषध महा हिमवान मध्य, लखि भोग भूमि मध्यम प्रसिद्ध।
वसु सहस चार शत बीस एक, लखि बीस कला इक धरि विवेक ॥१६॥
जय क्षेत्र मध्य गिरि नाभि जानि, जिन भवन नमूं निज हेत मानि।
पुनि क्षेत्र मध्य सब ही जु थान, जिन राज गेह वंदूं महान ॥१७॥
गिरि नील निषध के बीच पाय, वीदेह क्षेत्र रचना कहाय।
लखि भोग भूमि उत्कृष्ट लेय, गिरि मेरु-सुदर्शन-मध्य ठेय ॥१८॥
तेंतीस सहस शत सात गाय, लखि लेह व्यास सोलह घटाय।
पुनि चार कला जोड़ो सुथान, जिनराज कही आगम प्रमान ॥१९॥
तिस क्षेत्र मध्य त्रय-लोकनाथ, सब भवन नमूं सिर दोय हाथ।
तुम अधम उधारण हो जिनेश, हनि कर्म कियो शिवपुर प्रवेश ॥२०॥

तुम गुण अनन्त महिमा अपार, तुम मोह महातम दलन हार।
तुम काम बाण विध्वंसकार, तुम भव्य भवार्णव करत पार ॥२१॥
तुम दीनबन्धु ज्ञाता समस्त, तुम नाम कीर्ति तिहुं जग प्रशस्त।
तुम तुल्य देव नहि और कोय, तुम अष्ट कर्मभल देत धोय ॥२२॥
जयवन्त होहु जिनराज देव, नमि नेम करत तुमरी जु सेव।
तुम देहु मोहिं शिव थान वास, जग त्रास मेटि निज जानि दास ॥२३॥

दोहा—मेरु सुदर्शन दक्षिण दिश, तीन कुलाचल शीस।
अर्घ जजूं जिन भवन कूं फिर भव दुख नहिं दीस ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

छन्द गीतिका–हिमवान महा हिमवान दूजो, निषध गिर तीजो लखो।
इन तीन के सिर भवन जिनवर, सिद्ध कूटन के रखो ॥
तिनको जु मन वच काय सेती, पाठ जे नर करत हैं।
ते जगत दुख कूं देत पानी, मुक्ति सुख फिर धरत हैं ॥ इत्याशीर्वाद

सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र में रूपाचल जिन भवन पूजा नं. १५

॥ स्थापना छन्द गीतिका ॥

मेरु सुदर्शन दखिन दिश में भरत क्षेत्र मनोहरो।
मधि भाग ताके रजत गिरि है भवन जिनवर है खरो ॥
तिस भवन की हम करत इस थल नाय सिर आह्वानना।
भई पूजने की चाह मेरे हर्ष-धर मन वच तना ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत दोत्र मध्य रूपाचल शीस श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मन सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणम्।

चाल अठाई की पूजा

उत्तम गंगा का नीर, कंचन भरि झारी।
जर जनम मरण की पीर, नाशउ प्रभू म्हारी॥
जय मेरु सुदर्शन भरत, रूपाचल सोहै।
जिन गृह का पूजन करत, सुर नर मन मोहै॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस सिद्ध कूट स्थित श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

केशर घनखंड कपूर, कंचन ठाम धरूं।
भव जल तप ताप प्रचण्ड, टारो अरज करूं॥जय मेरु०···चंदनं

अक्षत उज्ज्वल अति धोय, कंचन थाल धरु।
अक्षय मय पद तब होय, तुम गुण पुंज धरूं॥जय मेरु०···अक्षतं

प्रासुक मैं लेहू फूल, परम सुगन्ध मई।
हो काम बाण निर्मूल, कर दे मेट दई॥जय मेरु०···पुष्पं

नेवजते विविध प्रकार, लीनों थर थाली।
कारण ये हि जु विचार, क्षुधा जु तुम टाली॥जय मेरु०···नेवेद्यं

मणिमय दीपक धरि थाल तुम ढिग लाय धरूं।
मममोह, तिमिर तत्काल, मेटो पाय परूं॥जय मेरु०···दीपं

धरि धूप अग्नि घटि माहिं, जलते गंध चलै।
यामें कछु संशय नाहिं, आठों कर्म जलैं॥जय मेरु०·· धूपं

फल बहुते लेय अनूप, भेटत तुम चरणां।
दे दीनी है जन धूप, शिव फल सुख करणां॥जय मेरु०···फलं

जय फल आदिक सब लेय, अर्घ बनावत हूं।
आठों कर्मन को ठेय, तुम गुण गावत हूं॥जय मेरु०···

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सिद्ध कूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मेरु सुदर्शन क्षेत्र सु भरत, रूपाचल सुर नर मन हरत।
शीस कूट नव जिनवर धाम, ले जलादि पूजूं सब ठाम॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस नव कुटन में स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

पूर्व दिश रूपाचल शीस, सिद्ध कूट मन्दिर जगदीश।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज माल॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस पूर्व दिश सिद्ध कूट सिद्ध स्थित श्री जिन भवताय नमः अर्घम् ॥ २ ॥

दक्षिणार्द्ध लखि दूजो नाम, व्यंतर थानक में जिन धाम।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश स्थित भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस पै दूजा दक्षिणार्द्ध कूट विषै व्यंतरवास के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

तीजो खंड प्रताप कहाय, नटमाती सुर घर जिन राय।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस तीजा खंड प्रताप कूट विषै नट माली सुरादि स्थानक विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

पूरण भद्र चतुरथ नाम, व्यन्तर थानक में जिन धाम।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस चौथा पूरण भद्र कूट विषै व्यंतरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

पंचम लखि विजया रथ नाम, व्यंतर थानक के जिन धाम ।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीप पै पोचवा विजयारध कूट व्यंतरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

छठो लखि मणि भद्र जू नाम, व्यन्तर थानक में जिन धाम ।
पूजूं वसु विधि कंचल थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस पै छट्ठा मणि भद्र कूट विषै व्यंतरवास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

तमिश्राख्य लखि सप्तम् नाम, व्यंतर थानक में जिन धाम ।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीश पे सातवां तमिश्राख्य कूट विषै व्यंतरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

अष्टम उतराधिप लखि नाम, व्यन्तर थानक में जिन धाम ।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस पै आठवां उत्तराधिप कूट विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

नवमो लखि वैश्रमण जु नाम, व्यन्तर थानक में जिन धाम ।
पूजूं वसु विधि कंचन थाल, तिनके चरण नमूं निज भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिस भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीस नवमां वैश्रवण कूट विषै व्यतरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

दोड़—जय मेरु सुदर्शन की दक्षिण दिस, भरत क्षेत्र में विजयारध ।
ताकी ऊपर दस योजन जा, दक्षिण श्रेणी में विद्याधर ।।
है नगर पचास अनादि निधन, चौथे जु काल की होइ फिरन ।
इन सब नगरों में हिरदय से, पूजूं वंदू में जैन भवन ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिस भरत क्षेत्र के बीच विजयार्ध पर्वत पर दस योजन ऊँची दक्षिण श्रेणी में विद्याधरों में पचास नगर क्रम से १. किन्नामित २. किन्नरगीत ३. तरगीत ४. बहु केतुक ५. पुण्डरीक ६. सिंहध्वज ७. श्वेतध्वज ८. गरुड़ध्वज ९. श्री प्रभ १०. श्रीधर ११. लोहार्गल १२. अरिंजय १३. वज्रार्गल १४. वज्राढ्य १५. विमोची १६. पुरंजय १७. शकटमुखी १८. चतुर्मुखी १९. बहुमुखी २०. अरजस्का २१. विरजस्का २२. रथनूपुर २३. मेखलापुर २४. क्षेमचरी २५. अपराजित २६. कामपुष्प २७. गगनचरी २८. विनयचरी २९. शुक्रपुर ३०. संजयन्ती ३१. जयन्ती ३२. विजया ३३. वैजयन्ती ३४. क्षेमंकर ३५. चन्द्राभ ३६. सूर्याभ ३७. पुरोत्तम ३८. चित्रकूट ३९. महाकूट ४०. हेमकूट ४१. त्रिकूट ४२. मेघकूट ४३. विचित्रकूट ४४. वैश्रवणकूट ४५. सूर्यपुर ४६. चन्द्रपुर ४७. नित्योद्योतिनी ४८. विमुखी ४९. नित्य वाहिनी ५०. सुमुखी इन सब नगरों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ११ ॥

इस विजयार्ध की भू में, दूजी तरफ योजना दस ऊपर।
है उत्तर श्रेणी में नगरी ये साठि, मनोभावन सुन्दर॥
ये सभी नगर हैं एक सार, बारह नो योजन सीमा में।
मैं करूं तनो मन से पूजन, जा बसूं सिद्ध की सीमा में॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश में भरत क्षेत्र के बीच विजयार्ध पर्वत पर दस योजन ऊंची उत्तर श्रेणी में विद्याधरों के साठ नगर क्रम से १. अर्जुना २. अरुणी ३. कैलास ४. वारुणी ५. विद्युतप्रभ ६. किलकिल ७. चूडामणि ८. शशिप्रभ ९. वंशाल १०. पुष्पचूल ११. हंसगर्भ १२. बलाहक १३. शिवशंकर १४. श्री सौध १५. चमर १६. शिवमंदिर १७. वसुमत्का १८. वसुमती १९. सिद्धार्थपुर २०. शत्रुंजय २१. केतुमाल २२. सुरेन्द्रकान्त २३. गगन नन्दन २४. अशोका २५. विशोका २६. वीतशोका २७. अलका २८. तिलका २९. अम्बर तिलक ३०. मंदर ३१. कुमुद ३२. कुन्द ३३. गगन वल्लभ ३४. दिव्य तिलक ३५. भूमि तिलक ३६. गन्धर्वपुर ३७. मुक्ताहार ३८. नैमिष ३९. अग्निज्वाल ४०. महाज्वाल ४१. श्री निकेत ४२. जयावह ४३. श्रीवास ४४. मणिवज्र ४५. भद्राश्व ४६. धनंजय ४७. गोक्षीरफेन ४८. अक्षोभ्य ४९. गिरिशिखर ५०. धरणी ५१. धारिणी ५२. दुर्ग ५३. दुर्धर ५४. सुदर्शन ५५. महेन्द्रपुर ५६. विजयपुर ५७. सुगन्धिनी ५८. वज्रावर्तर ५९. रन्ताकर ६०. रतनपुर इन सब नगरों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १२ ॥

योजन बीस रजत गिर तुंग, दक्षिण दिश की कटनी चंग ।
व्यन्तर सुर के नगर मंझार, श्री जिन भवन जजूं हितकार ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल गिर शीस पै बीस योजन ऊँचा दक्षिण दिश की कटनी विषै व्यंतरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

योजन बीस रजत गिर तुंग, उत्तर दिश की कटनी चंग ।
व्यंतर सुर के नगर मंझार, श्री जिन भवन जजूं हितकार ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल गिर पै बीस योजन ऊँचा उत्तर दिस की कटनी विषै व्यन्तरन के नगरन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

रूपाचल पै सब थल गाय, रत्न त्रय युत्त मुनिवर पाय ।
तिनके चरण नमूं त्रय काल, हरषि हरषि उर धरि नय भाल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल गिर पै दस योजन ऊँचा दक्षिण उत्तर दिश की कटनी विषैं सकल थानक रत्नमय युत सकल मुनिवरेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मेरु सुदर्शन भरत में, रूपाचल अभिराम ।
जयमाला ताकी सुनो, होइ सभी आराम ।।

रेखता छन्द—देव अरहंत जी तुम्हरे गुणों की है नहीं सीमा ।
जिन्हें कथकर सुनाने की नहीं मेरी जु है धीमा ।।
मृगी ज्यू मोह बालक के शेर के साथ लड़ती है ।
बिना गाये नही मुझको इसी विधि चैन पड़ती है ।।
सुजम्बू दीप के दक्षिण भरत में है यही पर्वत ।
कूट नव से सुहाता है मनो चांदी का है अदभुत ।।
है जो मधि लोक में श्री जैन मंदिर चार सो ठावन ।
हमारे क्षेत्र में तो बस यही है एक मन भावन ।।

कहाँ पर है यह जिन मंदिर सुनो निज मनको स्थिर कर।
ताकि हम कर सकें वंदन वहाँ उपयोग पहुंचाकर॥
है लम्बा मील अस्सी लाख आरज खंड जो अपना।
लाख नो सहस्र बावन है चुड़ाई ध्यान में रखना॥
है पूरब में नदी गंगा सु दक्षिण में समुद्र है।
नदी सिंधु है पक्षिम में सु उत्तर में ये मंदिर है॥
अयोध्या खंड आरज के जु बीचंबीच में जानो।
चारिसो मील के लगभग दिसा पक्षिम में पहिचानो॥
हमारा नगर है यहाँ पर नाम मंडी भवानी है।
सु आरज खंड की आधी चुड़ाई मन में लानी है॥
चार लख सहस्र छयत्तर मील आयोध्या से उत्तर में।
लगन अपनी लगावें वहाँ आपने इसी मंदिर में॥
तभी जयमाल पढ़ना यह हमारा काम में आये।
करें जल्दी न मालुम कब हमारा अंत हो जावे॥
कम से कम दो मिनट जिनराज को निज ध्यान में लाकर।
करो जीवन सफल एसे अनोखे जन्म को पाकर॥
करें भक्ति सुथिर करि योग हम प्रभु वीतरागी की।
समवसर की अगम लक्ष्मी दुविध के पूर्ण त्यागी की॥
प्रभु तुम हो तरण तारण भवो दधि पार गामी हो।
मुझे भी तो करो वैसा की जैसे तुम विरामी हो॥
मेरे पीछे पड़े हैं आठ दुश्मन बांध कर आटा।
वे मेरी खुद की पूंजी में करि रहे रात दिन घाटा॥
तुम्हारा विरद सुनकर में तुम्हारे पास आया हूं।
जगत से पार होने की में आसा ले के आया हूं॥
मेरा है नाम श्रुत सागर मुझे तुम भूल न जाना।
अरज इतनी ही है मुझसे न बारम्बार कहलाना॥

धता—जय जय अरहंता, पार करंता, शिव तिय कंता भगवंता ।
है करुणा सागर सब गुण आगर, जगत उजागर भासंता ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भरत क्षेत्र के विजयार्ध गिरि सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।

अडिल्ल—मेरु सुदर्शन भरत खगाचल पै लसें । देखत श्री जिन गेह सकल पातक नसें ।
तिनको जो नर पाठ करे उर प्रीति सूं । पावे घिरता थानबचैं भवत्रीत सूं ।।

❀ इत्याशीर्वाद ❀

सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भरत क्षेत्र में तीन चौबीसी पूजा नं १६

स्थापना चौपाई—मेरु सुदर्शन भरत जु चीन, आर्य खंड चौबीसी तीन ।
भूत भविष्यत वरत जु मान, आह्वानन करतो उम यान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्यत, वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी श्री जिन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् .अत्र मम शन्निितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल जोगीरासा—शीतल सुन्दर मधुर अनुपम, गंगादिक जल ल्याऊं ।
भरि कंचन मय झारी, कर में गह पद शीस नवाऊं ।।
मेरु सुदर्शन भरत क्षेत्र में, आरज खंड मंझारा ।
पूजत त्रय चौबीसी श्री जिन पातक नाशक सारा ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत, भविष्यत, वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी के श्री जिनेभ्यो नमः । जलम्

बावन चन्दन केसर घसि के कनक पियाले लेऊं ।
भव तप दुद्धर पीड़ित मोकूं इस विधि अरज करेऊं ।। मेरु सु०···चंदनम्

राजा भोग मनोज्ञ अनुपम तन्दुल लेय अखण्डम् ।
कंचन थाल विषैं चित हर्षित पुञ्ज धरूं गुण मंडम् ।। मेरु सु···अक्षतम्

विविध सुगंधित अमल अनुपम प्राशुक ले वर फूलम् ।
काम बाण मोहि जोर सतावें क्यों न करो निर्मूलम् ।। मेरु सु०···पुष्पम्

नेवज विविध प्रकार बनाकर विधि पूर्वक भरि धाली ।
याते भेट धरूं तुम आगे क्षुधा वेदनी टाली ।। मेरु सु०···नैवेद्यम्

मोह तिमिर तिहुं जग में फैलो शिव मग नाशन हारो ।
ताके नाशन कूं तुम भानु यातैं दीप उजारो ।। मेरु सु०···दीपम्

अति हि सुगन्धित धूप अनुपम पावक घट में खेवूं ।
कर्म शुभाशुभ तुमने जालें कारण इह ढर सेवूं ।। मेरु सु०···धूपम्

शिवफल दायक तिहुं जग नायक पायक हो जग सारो ।
तातैं अति ही उत्तम फल खे भेटूं चरण तुम्हारो ।। मेरु सु०···फलम्

जल आदिक फल आठ निशानी तुम ढिग आनी यातैं ।
अष्ट कर्म रिपुकूं जग मांही तुम बिन कोऊ न घातैं ।। मेरु सु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

।। भूतकाल चौबीसी अर्घ ।।

दोहा—वसु विधि द्रव्य मिलायके, धरि कंचन के थाल ।
भूतकाल चौबीस जिन, पूजूं दे दे ताल ।।१।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के भरत क्षेत्र में भूतकाल की चौबीसी क्रमशः १. निर्माण, २. सागर, ३. साधुर्य, ४. विमल प्रभ, ५. श्री धर, ६. श्री धरि, ७. दन्त नाथ, ८. अमल प्रभ, ९. उद्धर, १०. अग्नि नाथ, ११. संयम, १२. पुष्पांजलि, १३. शिवगण, १४. उत्साह, १५. ज्ञानेश्वर, १६. जिनोत्तम, १७. विमलेश्वर, १८. यथार्थ, १९. यशोधर, २०. कृष्ण, २१. ज्ञानमति, २२. शुद्धमति, २३. भद्र कान्त, २४. पद्मकान्त जिनेन्द्रेभ्यो नमः । अर्घम्

।। वर्तमान चौबीसी का अर्घ ।।

दोहा—वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कंथन के थाल ।
आदिनाथ जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में वर्तमान काल सम्बन्धी श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कंचन के थाल ।
अजित जिनेश्वर के चरण, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कंचन के थाल ।
संभव श्री जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में श्री संभव नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

वसु विधि द्रव्य मिथाय के, धरि कंचन के थाल ।
अभिनन्दन जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र आर्यखण्ड में श्री अभिनन्दन जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि चञ्चन के थाल ।
सुमति जिनेश्वर देव कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
पद्म प्रभु जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में पद्म प्रभू जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
श्री सुपार्श्व जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
चन्द्रप्रभ के चरण कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
पुष्पदन्त जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ९ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
शीतलनाथ जिनेश कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १० ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
श्री श्रेयांस जिनेश कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ११ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
वासुपुज्य जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री वासुपुज्य जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १२ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
विमल जिनेश्वर के चरण, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री विमल नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १३ ।।

वसु विधि द्रय मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
अनन्तनाथ जिनदेव कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री अनंत नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १४ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
धरमनाथ के चरण युग, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १५ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
शान्तिनाथ जिन देव कूं पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १६ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
कुन्थनाथ जिनराज कूं- पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १७ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
अरहनाथ महाराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १८ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
मल्लिनाथ के चरण कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री मल्लि नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १९ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
मुनि सुव्रत के चरण कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री मुनि सुव्रत नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २० ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
श्री नमिनाथ जिनेश कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की यक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २१ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
नेमिनाथ जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २२ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
पार्श्वनाथ जिनदेव कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २३ ।।

वसु विधि द्रव्य मिलाय के, धरि कञ्चन के थाल ।
वर्द्धमान जिनराज कूं, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री वर्द्धमान जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २४ ।।

।। आगामी चौबीसी अर्घ ।।

दोहा--वसु विधि द्रव्य मिलाय के धरि कञ्चन के थाल ।
होनहार चौबीस जिन, पूजूं दे दे ताल ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के भरत क्षेत्र में भविष्यत काल की चौबीसी क्रमशः १. पद्मनाभि, २. सुरदेव, ३. सुपार्श्वनाथ, ४. स्वयं प्रभु, ५. सर्वात्मभूत, ६. देव पुत्र, ७. प्रमोदय, ८. उदंक, ९. प्रश्नकीर्ति, १०. जयकीर्ति, ११. सुव्रत, १२. अरहनाथ, १३. पुन्य मूर्ति, १४. निष्कषाय, १५. विमलनाथ, १६. निर्मल, १७. चित्रगुप्त, १८. समाधि गुप्त, १९. स्वयं भू, २० अनुवृत्तिक, २१. जयदेव, २२. विमलेश, २३. दिव्य पाद, २४. अनन्त जिनेन्द्रेभ्यो नमः ।। अर्घम् ।।

मेरु सुदर्शन के भरत, आरज खंड कहाय ।
कृत्याऽकृत्रिम भवन जिन, सब थल पूजूं गाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में कृत्रिमाकृत्रिम सब थल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घ्यम् ।।२।।

मेरु सुदर्शन के भरत, आरज खण्ड कहाय ।
रत्नत्रय युत सकल मुनि, पूजूं अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र बीच आर्य खण्ड में रत्नत्रय युत सकल मुनिश्वरेभ्यो नमः । अर्घ्यम् ।।३।।

गीतिका छन्द—जल गंध चावल फूल नेवज दीप धूप रु फल धरूं ।
मणि जड़ित कंचन थाल गहिके, जोड़कर विनती करूं ।।
भूत जिनवर वर्तमान जु होणहार विचार के ।
पूजूं सदा चौबीस तीनों, भाव मिथ्या टार के ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत, वर्तमान, भविष्यत् काल के तीनों चौबीसी के चरण कमलेभ्यो नमः । अर्घ्यम्

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

अडिल्ल छन्द—मेरु सुदर्शन भरत क्षेत्र आरज धरा ।
चोबीसी लखि लेय तीन तिस में खरा ।।
तिनकी भवि जयमाल, सुणो चित लाय कैं ।
भाषूं परम पुनीत चरण सिर नाय कैं ।।

चौपाई छन्द—जम्बू द्वीप सुदर्शन मेरूं, क्षेत्र भरत में आरज हेरूं ।
तहाँ तीन चौबीसि बखानी, भूत भविष्यत वर्त जुमानी ।।१।।
श्री निर्वाण जिनेश्पर बन्दू, सागर जिन नमि पाप निकन्दूं ।
श्री साधुर्य जिनेश्वर स्वामी, विमल जिनेश्वर तिहुं जग नामी ।।२।।

श्रीधर जिनवर हरत कलेशा, धीर जिनेश्वर नमत सुरेशा ।
दन्तनाथ जिनके गुण गाऊँ, अमल प्रभ पद शीस नमाऊँ ।।३।।

उद्धर जिनवर भव दुख हारी, अग्निनाथ वसु अरि क्षयकारी ।
संयम जिनवर संयम दाता, पुष्पांजलि तिहूं जग विख्याता ।।४।।

शिवगण शिव रमणीपति सोहे, जिन उत्साह सकल मन मोहे ।
ज्ञान चक्षु जिन मोह हरन्ता, जिना जिनोत्तम नमत जु संता ।।५।।

विमलेश्वर पद विमल लहायो, नमत यथार्थ महासुख पायो ।
नमूं यशोधर भव तप नासी, धरम धवल जिन शिवपुर वासी ।।६।।

ज्ञानमती जिन केवल ज्ञानी, शुद्धमती परणी शिवरानी ।
भद्रकान्त जिन भद्र करन्ता, पद्मकान्त मद मोह हरन्ता ।।७।।

बन्दूं वृषभ वृषभ करतारा, प्रणमूं अजित हरत संसारा ।
संभन भव दुख तुरत निवारे, अभिनन्दन आनद विस्तारे ।।८।।

वन्दूं सुमति सुमति करतारा, पद्म प्रभ सब काज सुधारा ।
नमत सुपार्श्व मिटे भव फेरी, चन्द्रप्रभ पद ढोक हमेरी ।।९।।

पुष्पदंत शिवराह बताई, शीतल जिन जग ताप मिटाई ।
श्री श्रेयांस महासुख दाता, वासु पूज्य तिहुं जग जन भ्राता ।।१०।।

बन्दू विमल विमल सुखदाई, प्रणनम् अनन्त तिहुं जगराई ।
बन्दू धरम धरम के धोरी, शांति जिनेश्वर भवथिति तोरी ।।११।।

कुन्थु जिनेश्वर दीन दयाला, नमत अरह नहिं व्यापत काला ।
मल्लि जिनेश्वर शीस नवावूं, मुनि सुव्रत नमि दुरित नशावूं ।।१२।।

नमि जिनके पद अविचल दानी, नेमिनाथ करुणानिधि नामी ।
पार्श्वनाथ मद कमठ नसावा, वर्धमान बन्दू धरिभावा ।।१३।।

पद्मनाभि तीर्थेश मनावूं सूर देव जिनवर गुण गावूं ।
सुपार्श्व लिनवर पाप हरंता, स्वयं प्रभ गुण धरत महन्ता ।।१४।।
नमि सर्वातमभूत सुरेसा, देव देव कीनों शिव वेसा ।
नमूं प्रमोदय जी सुखकारी, सेय उदंग महा दुख टारी ।।१५।।
प्रश्न कीर्ति बन्दू जिनराजा, नमि जयकीर्ति करूं निजकाजा ।
सुव्रत जिनके पद जुग सेवूं, अरहनाथ नमि शिवथल लेवूं ।।१६।।
पुण्य मूर्ति जिन गुण भंडारा, निष्कषाय नाशै संसारा ।
विमल नाथ जिन अघमल धोये, जिन निर्मल निर्मल पद जोये ।।१७।।
चित्रगुप्त जग गहन नशाई, गुप्त समाधि जजूं उर लाई ।
नमूं स्वयंभु आनन्द करता, अनुवृतिक बन्दू दुख हरता ।।१८।।
दिव्यपाद पर परणति नासी, अनंत वीर्य बन्दू सुखरासी ।।१९।।
ये ही तीन चौबीसी नामां, मन वच तन सुमरों वसु जामा ।
ये ही भवदधि तारत हारे, इनको ध्यान धरें मुनि सारे ।।२०।।
तातैं 'नेम' चरण सिर नावे, कर जोड़या इक अरज कराये ।
मोकूं भवदधि पार करीजे, निज गुण संपति श्री जिन दीजे ।।२१।।

दोहा—मेरु सुदर्शन भरत मधि, तीन चौबीसी गाय ।
तिनके चरण सरोज कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिश आर्यखण्ड मध्य भूत, भविष्यत, वर्तमान तीन चौबीसी के सकल श्री जिनेभ्यो नमः जयमाला ।। पूर्णार्घम् ।।

अडिल्ल—मेरु सुदर्शन भरत बीच आरज धरा ।
तीन चौबीसी होय काल त्रय की खरा ।।

तिनको भवि जन पाठ करे उरधर सही ।
इन्द्रादिक सुख भोग लहै शिव की कही ।। इत्याशीर्वाद

अथ सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा में आठ वक्षार गिरि पर आठ जिन भवन पूजा नं. १८

स्थापना छन्द गीतिका—मेरु सुदर्शन अपर दिश में, आठ गिर वक्षार है।
तिन अचल के सिर आठ सुन्दर, भवन जिन सुखकार है ।।
आह्वान तिनको करत त्रय विधि, पूजने को इस थला।
सिर नाय तिनके चरण जुग कूं हरणि धरि उर में भला ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिश आठ वक्षार गिरि शीस आठ श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननं । तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

छंद गीतिका—सरिता सितोदा कामनोहर, नीर निर्मल लैय कै ।
भरि कनक झारी भाव सेती, धार द्यूं गुण गेय कै ।।
मेरु सुदर्शन अपर दिशि में, आठ गिरि वक्षार के ।
पूजूं जिनेश्वर भवन आठों कर्म, शत्रु टार के ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पच्छिम दिशि विदेह क्षेत्र मध्य आठ वक्षार गिरि शीस आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

केशर पुनीत सुवास चन्दन, घोलि धन पुट देय के ।
भव ताप नाशन के जु कारण, लेत हूं हरषेय के ।। मेरु सु०···चन्दनं
हीरे समान अखंड उज्जवल, विमल तन्दुल लेय के ।
मन हरषि धर गुण गान सुमरे, पुंज देत धरेय कै ।। मेरु सु०···अक्षतं
वर फूल बहु विधि हेरि प्रासुक, लीनि माल बनाय के ।
धरि कनक भाजन भेट तुमरी, कामबाण नशाय के ।। मेरु सु०···पुष्पं
नेवज मनोहर तुरत ताजो, विमल विधि से कीजिये ।
धरि हेम भाजन हाथ लेता, क्षुधा रोग हरीजिये ।। मेरु सु०···नेवेद्यम्

तम मोह हरता जानि तुम कूं, दीप भेट धरायकै ।
मैं करत अरजी मोह तम कूं, देहु तुरत मिटायकै ।। मेरु सु०···दीपं

दसनादिक्षवनाय निर्मल, धूप ज्वाला घट दहूं ।
वसु दुष्ट पुष्ट जलायदे, जिनराज अरजी या कहूं ।। मेरु०···धूपं

फल मुक्ति काजे भेंट तुमरी, करत मन वच काय ते ।
पिस्ता नरेल बिदाम प्रासुक आदि बहुत मंगाय कै ।। मेरु सु०···फलं

जल आदि आठुं द्रव्य निर्मल, लेत हूँ हर्षाय कै ।
धरि कनक थाल उठाय, कर तें देत अर्घ चढ़ा कै ।। मेरु सु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—प्रथम गिरी वक्षार जो श्रद्धावान कहाय ।
चार कूट हैं शीस पर शोभा अति अधिकाय ।।
पूरब में सिद्ध कूट है शेष तीन सुरथान ।
सब थल पूजूं भाव से अति की भक्ति ठान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में प्रथम श्रद्धावान वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मंदिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

पूजे गिरि वक्षार का विजट वान है नाम ।
चार कूट ऊपर लसें तिन में जिनवर धाम ।।
पूरब में सिद्ध कूट है सेष तीन सुरथान ।
पूजूं अति उमगाय के करण हेतु कल्याण ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में द्वितीय विजठवान वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

आसीविष है तीसरा पक्षिम में वक्षार ।
चार कूट मन मोहने शोभा अपरम्पार ।।
सिद्ध कूट पूरब दिशा, त्रय में सुर विश्राम ।
में पूजूं वसु द्रव्य से, तजि के सारे काम ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में तृतीय आसीविष वक्षार गिरी पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

चौथे गिरि वक्षार का नाम सुखावह ज्ञान ।
कूट चार ऊपर दिपें बतलायें भगवान ।।
सिद्ध कूट है प्रथम में त्रय में देव रहाय ।
सब में जिनवर भवन है में पूजूं हर्षाय ।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सुखावह वक्षार गिरी पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

चंद्रमाल है पंचमा सेलसु गिरि वक्षार ।
ता पर कूट सुंचार है परमानंदातार ।।
सिद्ध कूट पहिले विषै रहै तीन में देव ।
जिन मंदिर है सभी में बने हुवे स्वयंमेन ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में पंचमा चंद्रमाग वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

सूर्य माल छट्टा कहा, है वक्षार महान ।
चार कूट मन हरण है लखत होय कल्याण ।।
सिद्ध कूट है एक में रहैं तीन में देव ।
जैन भवन में करत है आतम हित स्वयंमेव ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में छठा सूर्यमाल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् । ।। ६ ।।

सप्तम के वक्षार का नागमाल है नाम ।
कूट सु ऊपर चार है तिनिकी दीप्ति ललाम ।।
सिद्ध कूट है पूर्व में है त्रय में सुर थान ।
पूज करें जिन गेह में मन में आनंद मान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सप्तम नाग माल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

देव माल है आठवां अपर दिशा वक्षार।
कूट चार हैं सास्वते तिनि में जिन ग्रह सार॥
पूरब में सिद्ध कूट है शेष तीन सुरधाम।
मैं पूजूं मन वचन से लेकर द्रव्य ललाम॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में आठवां देव माल वक्षार गिरी पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यंतर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ८॥

जय मेरु सुदर्शन अपर थान।
सुर व्यंतर के जहाँ हो विमान॥
तहां सकल जिनालय नादिनंत।
में पूजि करूं संसार अन्त॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में व्यंतर देवों के स्थानकों में जहाँ-जहाँ भी जिनालय हो तहाँ तहाँ सकल जिन भवन सम्बन्धी जिन बिम्बेयो नमः। अर्घम्॥ ९॥

बाहू सुबाहु दोनों जिनेश।
जो भये और होंगे हमेश।
तिनि प्रति ले आठौ द्रव्यसार।
गुण गाय गाय नाचूं अपार॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में बाहु सुबाहु दो तिर्थङ्कर तथा जो पहले हुवे हैं आगे होवेंगे तिन सकल केवलीयों को भाव पूर्वक नमस्कार हो। तथा विभंगा छै नदियों के तट सम्बन्धी सकल भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १०॥

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—मेरु सुदर्शन अपर दिश, वसु पर्वत गिर शीस।
जयमाला जिन भवन की, सुणत होय अब खीस॥

सब द्वीपन के मध्य में, जम्बू द्वीप लसाय।
मध्य सुदर्शन मेरु है, तातैं पश्चिम जाय ॥१॥
भद्रशाल वन वेदिका, लखिये पद्मा देश।
सीतोदा सूं दक्षिणो, निषधाचल उतरेश ॥२॥
ताकी अन्त पिछानियो, शब्दवान वक्षार।
कंचन वर्ण सुहावने, लसैं कूट सिर चार ॥३॥
सिद्ध कूट पे राजतो, मन्दिर श्री जगतेश।
शेष कूट त्रय के विषै, व्यन्तर वास कहेश ॥४॥
कूटन के उर धारियो, नाम कहूं समझाय।
पूरब पश्चिम देश के, निज निज नाम धराय ॥५॥
ऐसे सब वक्षार पै, कूट भविक मन लाय।
सिद्ध कूट जिन भवन कूं, वन्दूं मन वच काय ॥६॥
देस सुपद्मा दूसरो, सिंहपुरी मध्य पाय।
जिन मन्दिर सब देश के, प्रणमूं निज सिर नाय ॥७॥
नदी विभंगा जानियो, क्षीरोदा तट दोय।
जिन मन्दिर सिर नावता, पाप रहै नहीं कोय ॥८॥
महा पद्म पुनि देश है, जिन मन्दिर सब ठौर।
मन वच तन सु वंदता, नाशै सब ही छोर ॥९॥
तासूं लगतो है सही, विजट नाम वक्षार।
सिद्ध कूट जिनराज को, भवन नमों सुखकार ॥१०॥
फिर भवि चौथो जानियो, पद्म कावती देश।
सब थल चित्त लगाय के, भवन नमो जिनवेश ॥११॥

नदी विभंगा लागती, सीतोदा लखि नाम ।
दोनों तट जिन भवन को, भविजन करो प्रणाम ॥१२॥
पंचम देश सुहावनो, संखा नाम कहाय ।
तामे श्री जिन धाम को, वन्दूं मन वच काय ॥१३॥
तासूं भवि लखि लीजियो, आसी विष वक्षार ।
सिद्धकूट जिन गेह को, प्रणमूं कर सिर धार ॥१४॥
नलिन देश, छट्ठो लखो, भवन लसैं जिनराय ।
तिन भवनन को मैं नमूं, हरषि हरषि गुण गाय ॥१५॥
क्षेत्र वाहनी नाम की, लगै विभंगा फेर ।
वन्दूं श्री जिन भवन को, दोनों तट में हेर ॥१६॥
देश सातवों है सही, कुमुदा नाम कहाय ।
सब थल में चित्त देय के, भवन नमों जिनराय ॥१७॥
नाम सुखावह जानियो, चौथा गिरि वक्षार ।
नमूं शीस सिद्धकूट पै, जिन मन्दिर सुखकार ॥१८॥
सरिता अष्टम देश है, सब के अन्त पिछानि ।
समवशरण युत मैं नमूं, बाहुवीर्य जिनराज ॥१९॥
वेदी भूतारण्य की, लागि रही शोभंत ।
व्यन्तर महलन के विषै, भवन नमूं अरहंत ॥२०॥
भूतारण्य वन के विषैं, जिन गृह जितने होय ।
तितने को मैं बीनऊ, शीस हाथ धर दोय ॥२१॥
सीदोदा सूं जानियो, उत्तर दिश सुखदाय ।
नीलाचल सूं दक्षिणो, वप्रा देश कहाय ॥२२॥

विचरैं ताही देश में, श्री सुबाहु जिनराय।
समवशरण युत सासते, नमतां पातक जाय ॥२३॥

पूरब दिश तासूं लखो, चन्द्रमाल वक्षार।
सिद्ध कूट जिन धाम को, नमता पातक टार ॥२४॥

नाम सुवप्रा जानियो, दसम देश कहलाय।
तामे श्री जिन गेह को, नमन करूं हरषाय ॥२५॥

गन्ध मालनी नाम की, नदी विभंगा जान।
दोनों तट जिन गेह को, वन्दूं निज हित मान ॥२६॥

महा वप्र पुनि देश में, जिन मन्दिर सुखदाय।
वन्दूं मैं सब ही थलां, मन वच तन लौ लाय ॥२७॥

सूर्य माल के नाम को, जानो गिर वक्षार।
सिद्ध कूट जिनदेव को, नमूं भवन जग सार ॥२८॥

वारम देश विचारियो, वप्र कावती नाम।
वन्दूं मन, वच, काय सूं, श्री जिनवर सब धाम ॥२९॥

फेन मालनी नाम की, नदी विभंगा जोय।
दोनों तट जिन गेह को, वन्दूं शुचि मन होय ॥३०॥

तेरम गन्धा देश में, श्री जिन मन्दिर थोक।
कृत्रिम अकीर्त्रिम भवन, तिनको दूं मैं ढोक ॥३१॥

नागमाल वक्षार पे, सिद्ध कूट जिन गेह।
उपमा ताकी को कहे, वन्दूं उर धरि नेह ॥३२॥

नाम सुगन्धा पुनि लखो, देश महा रमणीक।
तामें भवन जिनेश को, प्रणवूं करि तहकीक ॥३३॥

ऊर्ममालिनी नाम की, नदी विभंगा पाय।
तट दोनों जिनराज के, भवन नमों हितदाय ॥३४॥

नाम गन्धिला जानियो, देश पन्द्रमा गाय।
भवन जिनेश्वर ता विषैं, वन्दूं शीस नवाय ॥३५॥

फेर वहां पर जानियो, देवमाल वक्षार।
वन्दूं जिन गृह प्रीति सूं सिद्ध कूट सुखकार ॥३६॥

गन्ध मालिनी नाम को, अष्टम देश अनूप।
तामें धाम जिनेश को, प्रणमूं उर धरि चूप ॥३७॥

भद्रशाल वन वेदिका, भविजन लेहु निहार।
यमका दिक द्रह आदि दे, कंचन गिरी विचार ॥३८॥

जहं जहं श्री जिनदेव के, थान लसैं सुखदाय।
तिस तिस थानक मैं नमूं, मन वच शुद्धि कराय ॥३९॥

आठों गिर वक्षार की, सोलह देश विचार।
लम्बाई लखि लीजियो, भाषत हूं निरधार ॥४०॥

षट सो सोलह सहष में, योजन आठ घटाय।
योजन के उगणी समे, भाग दोय मन लाय ॥४१॥

चौड़ाई वक्षार की, योजन लख शत पांच।
भिन्न भिन्न आठों तणी, भाषी श्री जिनराज ॥४२॥

ऊंचाई वक्षार की, चतुसत कुल गिरी पास।
लखि सीतोदा के कनै, उंच पांच सै खास ॥४३॥

तिस थानक सिद्ध कूट है, ऊंच सवा सौ गाय।
तापै श्री जिनराज को, भवन पुनीत लसाय ॥४४॥

तामैं प्रतिमा है सही, एक शतक अरु आठ।
लखि अरहंती सासती, और अनेक जु ठाठ ॥४५॥

तिनके सिर पै लूंबते, छत्र तीन शोभाय।
राजा तीनों लोक के, कारण यह दरशाय ॥४६॥

प्रातिहार्थ आठों लसैं, मंगल द्रव्य अनेक।
तिस थानश कूं देखता, निज पर होय विवेक ॥४७॥

सकल सुरासुर आयकें, पूजत हैं तिस थान।
श्री जिनवर महाराज के, करत मधुर गुणगान ॥४८॥

तुमने रिपु आठों नशैं, तुम शिव-रमणी नाथ।
ता कारण लखि "नेमजी" शोश धरे निज हाथ ॥४९॥

भव दुःख मेरो मेट के, कीजो शिवपुर वास।
सुख दीजो तुम सासतो, अजर अमर अविनाश ॥५०॥

दोहा—मेरु सुदर्शन अपर दिश, आठ अचल वक्षार।
शीस भवन जिन निरखि कें, अर्घ चढ़ावूं सार ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशि विदेह क्षेत्रों में आठ वक्षार गिरि शीस पे आठ श्री जिन भवनेभ्यः नमः ॥ पूर्णार्घ्यम् ॥

चौपाई—जम्बू द्वीप को अपर विदेह, वसु वक्षारन पै जिनगेह।
तिनको पाठ करे नर कोय, भवदधि तीर लहे नर सोय ॥

❀ इत्यार्शीवाद ❀

सुदर्शन मेरुकी पश्चिम विदेह क्षेत्र मध्य सोलह रूपाचल जिन भवन पूजा नं. १८

॥ स्थापना ॥ त्रिभंगी छन्द

लखि मेरु सुदर्शन की, दिश पश्चिम क्षेत्र विदेहन में जु बसैं।
मधि भाग खगाचल, सोलह सिर पे सोलह श्री जिन भवन लसैं॥
आह्वानन तिनकी करत जु सबकी, शुध करि मन अरु वच काई।
ते भवदधि तारण पाप निवारण, शिव सुख कारण लखिभाई॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिश विदेह क्षेत्र बीच सोलह श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोसट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चाल जोगीरासा

सीतोदा जल शीतल सुन्दर, मधुर कनक भरि झारी।
जन्म जरादिक नाश करण कूँ, तुम पद ढोक हमारी॥
मेरु सुदर्शन की दिश पश्चिम, सोलह क्षेत्र विदेहा।
तिनमें खगचल पैं जिनवर के, भवन जजूं धरि नेहा॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिश सोलह विदेह क्षेत्र बीच सोलह रूपाचल पै षोडस श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

अति ही सुगन्धित चंदन केशर, और कपूर घिसावूं।
कंचन भाजन में धरि लेके, भव आताप मिटावूं॥ मेरु सु०···चंदनम्
राजा भोग मनोज्ञ अखंडित, तन्दुल उज्ज्वल ल्याऊं।
तुम गुण पुञ्ज धरूं ततक्षिण ही, अक्षय पद सुख पाऊं॥ मेरु सु०···अक्षतम्
फूल सुगन्धित कल्पतरु के, प्रासुक विविध लहाये।
कामबाण तुम नाशन हारे, ताते भेंट धराये॥ मेरु सु०···पुष्पम्
षट् रस मय नैवेद्य मनोहर, विधि पूर्वक कर लेऊं।
क्षुधा रोग निर्वार्यो तुम ही, ताते तुम ढीग ठेऊं॥ मेरु सु०···नैवेद्यं

मोह महातम नाशन काजे, तुम्हीं अपूरब भानूं ।
ताते मणिमय दीपक लेके, कारण इह दरशावूं ॥ मेरु सु०···दीपं

आठों करम जलाकर तुम्हीं, लीनों भवदधि पारा ।
ताते धूप सुगन्धी खेवूं, पावक कुम्भ मंझारा ॥ मेरु सु०···धूपं

मोक्ष महाफल दायक तुमही, नायक तिहुं जग केरे ।
श्री फल, लोंग सुपारी, आदिक, भेट धरूं पद तेरे ॥ मेरु सु०···फलं

अष्ट द्रव्य कंचन की थाली, धरि करि अर्घ बनाये ।
पद अनर्घ दाता तुम ही लखि, भेंट करन मन भाये ॥ मेरु सु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

जोगीरासा--मेरु सुदर्शन अपर दिसा में, पदमा देस बसो है ।
बीच तासु के है रूपाचल, नव कूटौं से सोहै ॥
सिद्धकूट पूरब में है, बाकी में सुरगण मोहै ।
सब थल में जिन भवन वंदने मेरो दिल उमगो है ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर दिशा में भद्रशाल वन की वेदी के पास पदमा देश ताकि बीच रूपाचल पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १ ॥

देस सु पदमा में नव कूटों सहित सु रूपागिर है ।
सिद्ध कूट जिन भवन प्रथम में वसु में व्यंतर घर है ॥
सब में श्री जिन भवन सास्वते पूज करे सुर नर है ।
मैं भी तिनकी करूं वंदना आठ द्रव्य ले कर है ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में शीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन की वेदी के पश्चिम दिशा में सुपदमा देश तामें रूपाचल पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ २ ॥

देस महा पदमा ताके भी बीच रूप गिर जानो ।
नव कूटनि मे से पहिले में सिद्ध कूट पहिचानो ।।
आठ कूट में जिन मन्दिर युत व्यंतर सुर के थानो ।
सब थल भाव सहित पूजा करि मोहि मोक्षपुर जानो ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन की वेदी के पश्चिम दिशा में महापदमा देश तामें रूपाचल पर पूरव में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

पदम कावती देस मध्य में रूपाचल है खासा ।
नव कूटनि में से पहिले में सिद्ध कूट परकासा ।।
बाकी आठ कूट के माही व्यंतर करे तमासा ।
सब थल में जिन पूजा करि के करूं मोक्ष में वासा ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन को वेदी के पश्चिम दिशा में पदम कावती देश तामें रूपाचल पर पूरव में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

पंचम संखा देस मध्य में रूपाचल मन हारा ।
ऊपर है नव कूट पूर्व में सिद्ध कूट है प्यारा ।।
बसु में व्यन्तर देव रहत है जो हे आठ प्रकारा ।
जैन भवन सब थल में पूजूं तब ही होइ गुजारा ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन को वेदी के पश्चिम दिशा में पंचम संखा देश तामें रूपाचल पर पूरव में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

नलिना देस मांहि रूपाचल, बीचा बीचहि राजे ।
नव कूटनि में से पूरब में सिद्धकूट छवि छाजे ।।
आठ कूट में सुर व्यंतर नित खूब बजावें बाजे ।
में सब थल जिन भवन वन्दना करूं आतम हित काजे ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन की वेदी के पश्चिम दिशा में नलिना देश तामें रूपाचल पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ६ ।।

कुमुदा देस बसे पक्षिम में ता बिच रूपाचल है ।
ऊपर कूट लसें नव पूरब सिद्ध कूट स्थल है ।।
आठ कूट में जिन मन्दिर युत व्यंतर देव महल है ।
करूं वंदना सब थल जाकर तब हि पड़े मोहि कल है ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन की पश्चिम दिशा में कुमुदा देश में रूपाचल पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

सरिता देस आठवां जानो भूतारण्य के पासा ।
ता विच रूपाचल चौड़ा है योजन महा पचासा ।।
ऊपर नव कूटनि में पहिला सिद्ध कूट ही खासा ।
बाकी आठ मांहि सुरव्यंतर जैन भवन युत वासा ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की दक्षिण निषधाचल की उत्तर भद्रशाल वन की पश्चिम दिशा में सरिता देश में रूपाचल पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

नौवां वप्रा देस बीच में रूपाचल सोहाना ।
ता ऊपर नव कूट पूर्व में है सिद्धकूट महाना ।।
आठ मांहि व्यंतर देवों के सुन्दर बने विमाना ।
मैं जिन मन्दिर पूजूं सब थल द्रव्य लेय विधि नाना ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा की उत्तर निलाचल की दक्षिण दिषा में भुतारण्य वेदी के पास वप्रा देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

देस सुवप्रा के विच भागा रूपाचल मन हारी।
ताके ऊपर नव कूटनि में रचना है बहु भारी॥
पहिले में सिद्ध कूट अनोखा सेष आठ मंझारी।
देव करें विश्राम जजूं में सब थल जा बलिहारी॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भुतारण्य वेदी को पूरण दिशा में सुवप्रा देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १०॥

देश महा वप्रा के विच में रूपाचल अति सुन्दर।
पच्चिस योजन है ऊंचाई कूट सु नव है ऊपर॥
सिद्ध कूट पूरब दिसि के मैं बाकी में सुर व्यंतर।
भाव सहित में करूं वंदना सब थल में ग्रह जिनवर॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भुतारण्य वेदी को पूरब दिशा में महा वप्रा देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ११॥

वप्र कावती देस तासु के बीच खगाचल साश्वत।
सीस तासु के नव कूटों में जैन भवन श्री हरहत॥
इक में सिद्ध कूट विख्याता वसु में देव विराजत।
सब थल में जिन पूजन करते अनुपम निधि सब पावत॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भुतारण्य वेदी को पूरब दिशा में वप्र कावती देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १२॥

गंधा देस नील पर्वत सीतोदा के बिच जानो।
एक तरफ वक्षार दूसरी तरफ विभंगा मानो॥
नो कूटनि युत रूप गिरी में सिद्ध कूट पहिचानो।
आठ थान देवों के में भी पूजन रुचि से ठानो॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भुतारण्य वेदी की पूरब दिशा में गंधा देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १३ ।।

देस सुगंधा मधि रूपाचल ऊपर नव है कूटा ।
पूरब में सिद्धकूट विराजे, रचना अधिक अनूठा ॥
आठ जगह सुर थानक जानो इसमें रंच न झूंठा ।
सब थल मांहि करूं मैं पूजा लेकर द्रव्य अटूटा ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भुतारण्य वेदी की पूरब दिशा में सुगंधा देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १४ ।।

देस गंधिला बसे बीच में रजताचल परवत है ।
नव कूटों में श्री जिन मन्दिर पूजन सुर आवत है ॥
पूरब में सिद्धकूट बिशाला वसु में सुर वरतत है ।
जो सब थल में करें वन्दना वो शिवपुर जावत है ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल की दक्षिण भूतारण्य वेदी की पूरब दिशा में गंधिला देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १५ ।।

गंध मालिनी देस आखरी विजयारध ता माही ।
नो कूटों से शोभा पाता रचना है अधिकाही ॥
पहिले में जिन धाम प्रधाना देव रहैं वसु मांही ।
पूजन कर मैंने भी शिवपुर भूमि देखना चाही ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा के उत्तर निलाचल के दक्षिण भद्रशाल वन वेदी के पास गंधमालिनी देश तामें रूपाचल पर्वत पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठों कूटों में व्यन्तर देवों के निवास में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १६ ।।

योजन दस ऊपर खग थान, दक्षिण उत्तर कटनी जान ।
फिर दस ऊपर व्यन्तर थान, सब थल पूजूं जिन भगवान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिशा में सोलह देश सम्बन्धी सोलह रूपाचल पर्वतों पर दस योजन ऊँचाई पर दक्षिण उत्तर दोनों कटनीनियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर तथा बीस योजन ऊँचाई पर दोनों कटनियों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग नीलाचल सोय, रक्ता रक्तोदा नहिं दोय ।
आन मिली सीतोदा सोय, आठ देस की सोलह होय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा में आठ देश के मध्य रक्ता रक्तोदा दोय नदि नीलाचल की मूल भाग से निकलकर रूपाचलों की दोनों गुफाओं में होकर सीतोदा में मिलि तथा दो लाख चोबीस हजार इन दोनों की सहायक नदियों के तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग निषधाचल सोय, गंगा सिन्धू नदियां दोय ।
आन मिली सीतोदा सोय, आठ देश की सोलह होय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा में आठ देश के मध्य गंगा सिन्धू दोय नदि निषधाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचलों कीं दोनों गुफाओं में होकर सीतोदा में मिले तथा दो लाख चोबिस हजार इन दोनों की सहायक नदियों के दोनों तटों पर सकलश्री जिन भवनेभ्यो नमः । अघम् ।। १९ ।।

म्लेक्ष खंड के बीच निहार, वृषभाचल कंचन मय सार ।
आर्य खंड में नगरी सार, तीर्थङ्कर उपजे गुणधार ।।

ॐ ह्रां सुदर्शन मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा के सोलह देशों के अस्सी मलेक्ष खण्डों में से उत्तर की तरफ के तीन के बीच वाले खण्ड में वृषभाचल पर्वत सम्बन्धी तथा सोलह देशों की सोलह प्रमुख नगरीयों जिसमें तीर्थङ्करादि होते हैं । सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २० ।।

सूचना

१. सुदर्शन मेरु के पूर्व पश्चिम दोनों दिशा में सोलह सोलह देशों में जो ३२ प्रमुख नगरियां हैं जिनमें तीर्थंकर नारायण प्रति नारायण आदि त्रेसठ सलाका पुरुष होते रहते हैं उनके नाम क्रम से यह हैं।

१. छैमा	९. सुसीमा	१७. अश्वपुरी	२५. विजय
२. छैमपुरी	१०. कुंडला	१८. सिंहपुरी	२६. वेजयंत
३. अरिष्टा	११. अपराजितपुर	१९. महापुरी	२७. जयंत
४. अरिष्टपुरी	१२. प्रभंकरा	२०. विजयापुरी	२८. अपराजित
५. खड़गा	१३. अंका	२१. अरजा	२९. चक्रा
६. मंजूसा	१४. पद्मावति	२२. विरजा	३०. खड़गपुरी
७. ओषधी	१५. शुभा	२३. अशोका	३१. अयोध्या
८. पुडरीकनी	१६. रतन संचया	२४. वीतशोका	३२. अवध्या

२. इन सब विदेहों में चौथे काल की आदि की रीति रहती है तथा क्षत्री, वैश्य, शूद्र, तीन वर्ण है ब्राह्मण कभी नहीं है सर्दी गर्मी वर्षा भी प्राणियों की इक्षा के समान होती है।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

चौपाई—मेरु सुदर्शन पश्चिम जाय, क्षेत्र विदेह खगाचल पाय।
तिनके सिर पै जिनवर गेह, जयमाला तिनकी सुन लेय ।।

अडिल्ल—मेरु सुदर्शन की जु, अपर दिश जाय कै।
क्षेत्र विदेह मंझार, खगाचल पाय कै ।।१।।
पूरब पश्चिम जोय, लम्बाई लीजियो।
देश बरावर जान, भव्य चित्त दीजिगो ।।
दक्षिण ऊत्तर की जु, चौड़ाई है सही।
योजन गिणो पचास, जिनागम में कही ।।२।।

योजन उच्च पचीस, लसै मन भावने ।
ताके सिर नवकूट, भव्य हरसावने ।।
योजन दस भवि ऊँच, धरा तै है सही ।
दक्षिण उत्तर भाग, दोय कटनी कही ।।३।।
योजन दस इक, और चौड़ाई जानियो ।
तेसी दूजी और, भव्य मन आनियो ।।
लम्बा गिर लौं जानि, नगर खगधर बसैं ।
एक शतक दस जोड़ि, दोय तरफा लसैं ।।४।।
योजन बीस उतंग, भूमि ते फिर कही ।
लखि कटनी दुय, और प्रथम वन है सही ।।
तिस थल नगर मंझार, बसैं सुर हेत सूं ।
और कथन सुण लेहु, भव्य धरि चेत सूं ।।५।।
आठ कूट के मांहि, बसे सुर व्यन्तरा ।
पूर्व दिशा सिद्ध कूट, भवन जिनवर खरा ।।
मीलि सहस पच्चीस, उच्च सब कूट है ।
भविजन उर अवधारि, नाहिं यह झूंठ है ।।६।।
तिनमें श्री जिन बिम्ब, जजैं सुर खगधरा ।
अष्ट द्रव्य कर जोर, रटैं गुण जिनवरा ।।
तुम ही जगपति देव, महा सुखदाय हो ।
तुम ही गुण भन्डार, चराचर ज्ञाय हो ।।७।।
अधम ऊधारणहार, जिनेश्वर आपजी ।
तुम पद शीस नमंत कटे, सब पापजी ।।
तुम ही भव दुख नाश, लियो शिवथान जी ।
आयो तुम पद शरण "नेम" इह जानजी ।।८।।

बीत्यो काल अनन्त महा दुःख पावता ।
कब लों भुगतूं नाथ, अन्त नहीं आवता ।।
भव दुःख मेरो मेट देउ जिनराय जी ।
अर्ज चित्त अब धारि सुधारो काज जी ।।९।।

दोहा—इह विधि मुख सूं गाय के, रूपाचल के शीस ।
सब थल भवन जिनेश के, अर्घ जजूं अध पीस ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की पश्चिम दिश सोलह रूपाचल शीस नीलाचल वृषभाचलादि स्थानक विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।।। जयमाला पूर्णाऽर्घ्यम् ।।

चौपाई—मेरु सुदर्शन अपर विदेह, रूपाचल पै जिनवर गेह ।
तिनको पाठ करे नर कोय, सो निहचे शिव तिय पति होय ।। इत्यार्शीवाद

सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल जिन भवन पूजा नं १९

गीता—मेरु सुदर्शन की उत्तर दिश, तीन कुल गिर राजते ।
लखि नील रुक्मी, शिखरि सिर पै भवन श्री जिन छाजते ।।
तिन भवन के हम पूजने कूं, करत इहां आह्वानना ।
मन वचन तन त्रय शुद्ध करिके, वार त्रय मुख सूं मना ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश नील, रुक्मी, शिखरि तीन कुलाचल पै श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

त्रिभंगी—सीतोदा पानी, मधुर सुहानी, शीतल छानी, भरि भृंगा ।
कर दोय गहाऊं, शीस नमाऊं, धार ढुराऊं मन चंगा ।।
जय मेरु सुदर्शन की दिश उत्तर, तीन कुलाचल खूब बने ।
तिनके सिर ऊपर, भवन जिनेश्वर, पूजत ही वसु कर्म हनें ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल पै तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय ।।जलम्।।

मलया गिर लायो, तुम ढिग आयो, शीस नवायो हरषायो ।
धरि कनक पियाले, दे दे ताले, तुम गुण माले, मन लायो ।। जय मेरु···चंदनम्

चामल बहु चोखा बहुत अनोखा, मधु रस पोखा ले लीने ।
कंचन मय भाजन, हरषि२ मन, पुञ्ज भली विधि धर लीने ।। जय मेरु···अक्षतम्

बहु फूल मनोहर, परम जु सुन्दर, प्रासुक लखि कर ले आयो ।
तुम काम नशायो, मन ललचायो, ताते धायो गुण गायो ।। जय मेरु···पुष्पम्

तुम भूख विनाशी, हो सुख राशी, ज्ञान प्रकाशी, हम जाने ।
करि नेवज चोखे, षट् रस पोखे, बहुत अनोखे हम आने ।। जय मेरु···नैवेद्यम्

तुम मोह विडारं, हो सुखकारं, भवदधि पारं तुम लीनो ।
लखि ऐसो कारन, दीप उजारन, थाल संभारन, धर दीनो ।। जय मेरु···दीपम्

अगरादि मंगावूं, धूप बनावूं, तुम ढिग आऊँ, सिर नाऊँ ।
घट अग्नि खिपाऊं, कर्म जलाऊं, तुम गुण गाऊं, हरषाऊँ ।। जय मेरु···धूपम्

फल लोंग बिदामा, ले बहु नामा, दे शिवधामा, अरज करूं ।
तुम तिहुं जगराजा, निज गुण साजा, करि मम काजा पाय परूं ।। जय मेरु···फलम्

जल चन्दन चोखा, फूल अनोखा, षट् रस पोखा लेय चरूं ।
धरि दीपक लेवूं, धूप जू खेवूं, तुम ढिग ढेरी हरष धरूं ।। जय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा---नीलाचल के शीस पर, नौ हैं कूट महान ।
सिद्धकूट है पूर्व में, बाकी में सुर थान ।।

पूजन करते भाव से, सुर नर खग वहां जाय ।
मे पूजूं इस थान से, चित्त वहाँ पहुंचाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु को उत्तर दिशा में नील कुलाचल पर नवकूटों में पूर्व दिशा सम्बन्धी सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा आठ कूटों पर व्यन्तर सुर थानक सम्बन्धी सकल श्री भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।१।।

ॐ ह्रीं सुदशन मेरु की उत्तर दिशा में रुकमी पर्वत पर महापुंडरीक तालाब से दोय नदि नारी और रूप्यकूला तथा इन दोनों की चौरासी हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

है तलाब सिखरी ऊपर, पुण्डरीक है नाम ।
तीन नदी निकसी तहां, बीच कमल अभिराम ।।
महल बने हैं दलनि पर, लक्ष्मि देवि परवार ।
मैं पूजूं ले द्रव्य वसु, गाऊं गुण गण सार ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा में सिखरी पर्वत पर पुंडरिक ताखाब से तीन नदियाँ निकलीं सुवर्णकूला, रक्ता रक्तोदा, इन तीनों की छप्पन हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर यानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घ्यम् ।। ६ ।।

जघन रु मध्यम दोय ही, भोग भूमि सुखदाय ।
दोय नाभि गिरि बीच में, तहं पूजूं जिनराय ।।
भोग भूमि उत्तम कही, देव कुरू सुखदाय ।
सकल भवन पूजूं तहां, हरषि-हरषि गुणगाय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के उत्तर दिशा सम्बन्धी जघन और मध्यम योग भूमि में तथा उत्तर कुरु उत्तम योग भूमि में दोय नामि पर्वत सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

सीता दी सातों नदी, मिली समुद्र में जाय ।
जम्बू वेदी द्वार पर, भवन जजूं जिनराय ।।
और जहां जिन भवन हो, सुर व्यंतर स्थान ।
ते सब पूजूं रुचि से, छोड़ि खान अरु पान ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के उत्तर दिशा सम्बन्धी सीता आदि सात नदियाँ समुद्र में जाकर मिलि तथा जम्बूद्वीप की वेदी के मुख्य द्वारों पर तथा और जहाँ जहाँ भी व्यन्तर स्थानकों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

चौपाई—नील, रुक्मि, शिखरि गिरि तीन, सिर पै भवन जिनेश्वर चीन ।
तिनकूं पूजूं मन वच काय, कञ्चन थाल जलादि लहाय ।।

ॐ ह्रीं रुक्मि शिखरि पर्वत पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।
जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—नील रुक्मि शिखरी अचल, तीन कुलाचल शीस ।
जयमाला जिन भुवन की, सुनता हुय अघ खीस ।।

सुन्दरी छन्द चाल—मेरु सुदर्शन तें दिश जाई, उत्तर तीन कुलाचल भाई ।
तिनके शीस भवन जिन सोहें, देखत सुर नर अति मन मोहे ।।१।।

पहलो नील कुलाचल छाजे, हरित वर्ण पन्ना सम राजे ।
योजन चार शतक परमाना, उन्नत सब भाख्यो भगवाना ।।२।।

दक्षिण उत्तर दिश चौड़ाई, सोलह सहस आठ शत गाई ।
बियांलीस योजन धरि लेवो, कला दोय गिणती करि देवो ।।३।।

पूरब पश्चिम की जु लम्बाई, लवणो दधि लों श्री जिन गाई ।
मूलरु मस्तक लौं सम व्यासा, ऊपर कूट बने नव खासा ।।४।।

सिद्धकूट दिश पूर्व कहावे, तिस थल श्री जिन गेह लसावे ।
कूट आठ औरन के मांही, व्यन्तर देव बसे शक नांही ।।५।।

तिनके महलन में जिन गेहा, सब थल पूजूं उर धरि नेहा ।
केसरि द्रह मधि कीरत देवी, सरिता द्वय निकसत गिण लेवी ।।६।।

तिस थल भवन जिनेश्वर जेते, मन वच काय नमूं मैं तेते ।
रम्यक क्षेत्र जगे फिर नीका, सब थल भवन लसैं जिनजी का ।।७।।

रत्नत्रय युत मुनिवर पावे, तिनके पद हम शीस नवावें ।
रुक्मी गिर दूजो गिण भाई, योजन दोय शतक ऊंचाई ।।८।।

दिक्खण उत्तर दिश गिण चौड़ो, चार सहस्र द्वय शत दस जोड़ो ।
फेरि कला दस ऊपर सारा, मूल शीस लो सम विस्तारा ।।९।।

सिर पै आठ कूट सुखदाई, पूरब दिश सिद्धकूट लखाई ।
भवन जिनेश्वर को सुखकारी, मन वच तन करि ढोकहमारी ।।१०।।

शेष कूट व्यन्तर सुरवासा, तिस थल भवनजजूं जिन खासा।
द्रह मधि भाग महा पुण्डरीका, दोय नदी निकसी तहकीका ॥११॥
सब थल देख जिनालय बन्दूं, भव भव संचित पाप निकन्दूं।
हैरण्यवत फिर क्षेत्र कहावे, तिस थल भवन जिनेश्वर पावे ॥१२॥
तिनको मन वच तन करि भाई, बन्दूं निश दिन गुण मुख गाई।
मुनिजन तीन रतन के धारी, तिन सबके पद ढोक हमारी ॥१३॥
तीजो शिखरी पर्वत प्यारा, कंचन वर्ण कूट सिर ग्यारा।
दिखण उत्तर चौड़ो [illegible] लेवो, योजन एक सहस परि देवो ॥१४॥
बावन जोड़ि कला फिर बारा, भाख्यो श्री जिन करि निरधारा।
पूरव दिश सिद्धकूट विराजे, तिस थल भवन जिनेश्वर छाजे ॥१५॥
व्यन्तर सुरदश कूट बसावे, निज निज कूट नाम धरवावे।
द्रह पुण्डरीक जानि मधि भागा, तीन नदी निकसन की जागा ॥१६॥
गिरपुर सरितादिक सब थाना, मन्दिर खूब लसे भगवाना।
सुर खगधर तहं पूजन आवे, हरष हरष जिनवर गुण गावें ॥१७॥
नाचत इन्द्र शची सुर नाना, कबहूं भूमि कबहुं असमाना।
ठुमकि ठुमकि पग पैंड धरावे, झनन झनन सुर मधुर सुनावे ॥१८॥
घुमकि घुमकि कर थेई थेई लेता, सारंगी मुरचंग बजेता।
जय जय शब्द करत बहु भारे, निरखत जिन छवि सुर मिलि सारे ॥१९॥
श्री जिन रूप महा सुख राशी, निरखत थान मिले अविनाशी।
तातें हमरो मन ललचावे, शक्ति बिना हम किस विधि जावे ॥२०॥
ऐसी बात जानि इस जागा, करि पूजन इतनी हम मागा।
'नेम' जिनेश्वर द्यो शिव वासा, पुरो मो मन की तुम आसा ॥२१॥

दोहा—इह विधि तीन कुलाद्रि सिर, भवन जिनेश्वर गाय।
मन वच तण करि शुद्धता, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा तीन कुचाचल पै तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

गीता—मेरु सुदर्शन की उत्तर दिश, तीन कुल गिर शीस है।
अद्भूत अनुपम तीन सुन्दर, भवन श्री जगदीश है॥
तिन भवन को इह पाठ नर जे करन मन वच कायतै।
ते इन्द्र के सुख भोग अनुक्रम, बसत शिवपुर जायकै॥ इत्याशीर्वाद

सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल श्री जिन भवन पूजा नं. २०

गीता—मेरु सुदर्शन की उत्तर दिश, क्षेत्र लखि ऐरावता।
मधि भाग रूपाचल जु ऊपर, भवन श्रीजिन पावता॥
तिस भवन की हम करत, इस थल नाय सिर आह्वानना।
मन काय वच त्रय शुद्ध करिके, बार त्रय मुख सूं भना॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल पै श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम। अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जोगीरासा—रक्तोदा जल उज्ज्वल शीतल मधुर मनोहर लीजे।
भरि कंचन मय झारी कर गहि तुम ढिग धार करीजे॥
मेरु सुदर्शन की उत्तर दिश क्षेत्र ऐरावत मांहीं।
रूपाचल जिन भवन जजत ही भव दुख दीसत नांहीं॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः जलम्।

मलियागिर को बावन चन्दन, परम सुगन्धित भारी।
धरि कंचन मय भाजन कर गहि; अलिगण गुंजत कारी॥ मेरु सु०...चंदनं

श्याम जीर कंमोद सुवासित, मधुर अखंडित लेवूं ।
तन्दुल उज्वल हेम रकेबी, तुम गुण पुंज धरेवूं ॥ मेरु सु० अक्षतं

कल्पतरु के विविध सुगन्धी, प्रासुक फूल लहाये ।
लेत सुवास खड़े ही रूचि सूं, तुम पद मेट धराये ॥ मेरु सु० पुष्पं

घेवर मोदक आदिक नेवजषट्, रसमय कर ताजे ।
विधि पूर्वक धरि कंचन थाली, कर गहि तुम गुण गाजे ॥ मेरु सु० नेवेद्यं

मिथ्या मोह अंधेरा आगे, शिवमग नहीं पावैं ।
तातैं दीप सु निर्मल द्युति, को लेके तुम गुण गावैं ॥ मेरु सु० दीपं

अष्ट करम रिपु या जग मांही, मोको बहु दुःख देवे ।
तातैं धूप सुगन्धी लेकर, पावक घट में खेवे ॥ मेरु सु० धूपं

कर्म शुभाशुभ सुख दुःख दायक, तिहुं जग मांहि भ्रमावे ।
श्रीफल आदिक तुम पद मेटत, मुक्ति महा फल पावै ॥ मेरु सु० फलम्

निर्मल नीर सुगन्धित चन्दन, तन्दुल फूल अनोखे ।
नेवज दीपक धूप रू फल, धरि वसु विधि अर्घ पजोखे ॥ मेरु सु० अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मेरु सुदर्शन उत्तर जाय, क्षेत्र जु एरावत कहलाय ।
ताके बीच रूप गिरि एक, नव कुटनि युत रचनानेक ॥
सिद्ध कूट पूरब की मांहि, वसु में व्यन्तर देव रहांहि ।
नव में श्री जिनवर के धाम, हाथ जोड़ के करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश एरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर नव कूटों में से पूरब की तरफ सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १ ॥

दस योजन ऊपर है सोय, दक्षिण दिसि की कटनी होय ।
विद्याधर के नगर पचास, सब में जैन भवन है खास ॥

दूजो तरफा कटनी सोय, उत्तर दिसि की कटनी होय।
विद्याधर के नगर जू साठ, पूजन करूं बनाकर ठाठ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश में एरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर दस योजन ऊपर दक्षिण उत्तर दोनों कटनियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर जिनके नाम अलग अलग भरत क्षेत्र की पूजन में लिख दिये गये हैं। इस सब नगरों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

भूते ऊपर योजन बीस, उभय तरफ मंदिर जगदीस।
व्यंतर थल में जिनवर गेह, पूज करूं धरि उर में नेह ॥
रूपाचल पे सब थल गाय, रतनत्रय युत श्री मुनिराय।
तिन के चरणनि अर्घ चढ़ाय, बीन बजाऊं अति हर्षाय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश में एरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊपर दोनों तरफ व्यन्तर देवों के स्थानों में श्री जिन मन्दिर तथा रूपाचल सम्बन्धी सब थल मांहि रतनत्रय युत मुनिन्द्रेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ३ ॥

अडिल्ल--ऐरावत मधि भाग खगाचल की मही।
खगधर व्यन्तर वास शीस जिनधर सही ॥
नीरादिक ले आठ सकल थल कूं जजूं।
भव वन कूंचो देय जाय शिव सुख सजुं ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश एरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल पर्वत पर विद्याधर व्यन्तरन के स्थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा – ऐरावत के क्षेत्र मध्य, रूपाचल के शीस।
जयमाला जिन भवन की, सुनत होय अघ खीस ॥

सुन्दरी छंद--उत्तर मेरु सुदर्शन जावता, लसत क्षेत्र भलो ऐरावता।
भरत क्षेत्र बरोबर जानिया, मध्य भाग खगाचल मानिबो ॥

कथन पूर्व खगाः ल को कह्यौ, लखहुँ तद्धत सर्व जु बणि रह्यौ ।
सिरलसैं नवकूट मनोहरा, वसत आठ कूट में व्यंतरा ॥
दक्षिण दिसि को कटनी के विषै, नगर पचास विद्याधर के लसैं ।
दिश जु उत्तर की कटनी लसै, पुर साठ विद्याधर के बसैं ॥
लसत पूर्व दिशा सिद्ध कूट, जू गृह जिनेश लखो नहिं झूंठ जू ।
जजत आय विद्याधर देव जू, दरब अष्ट करैं नित सेवज् ॥
गुण जिनेश कहैं मुख से सदा, सकल नाश दिये तब ही मदा ।
तुम जिनेश सदा सुखदायजी, तुम तिहुं जग भूप कहायजी ॥
तुम हरो जग पीर जिनेशजी, तुम किय शिवथान प्रवेश जी ।
तुम किको वसु कर्म निपातजी, तुम लख्यो निज रूप रू जात जी ॥
तुम अपूरब भानु उदैं सदा, घन विकार न अस्त नहीं कदा ।
निरकलंक सदा तुम चंदजी, हरत मोह महातम फंद जी ॥
गुण समुद्र दयानिधि नाथ जी, तुम प्रशस्त कियो शिव पाथ जी ।
गुण अनन्त बणैं नहिं गावता, गण धरादिक अंत न पावता ॥
तुम बिना भव दुःख न जात है, प्रगट बात यही दरसात है ।
उर विचार नमैं सिर "नेमजी" हरिअरिष्ट करौ प्रभु क्षेम जी ॥

चौपाई--ऐरावत के क्षेत्र मंझार, रूपाचल जिन भवन निहार ।
अर्घ चढ़ावो मन वच काय, हरषि हरषि जिनवर गुण गाय ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल पै सिद्धकूट व व्यन्तरन के स्थानक विषै सकल श्री जिन भवभ्यो नमः पूर्णार्घम् ।

गीता--मेरु सुदर्शन की उत्तर दिश क्षेत्र लखि ऐरावता ।
मधि भाग ताके रजत गिर पै भवन जिन दरसावता ॥
तिन भवन को यह पाठ भवि जन करत अति हा प्रीतसूं ।
ते जाय शिवपुर परम सुख ले बचत जग की रीतसूं ॥ इत्याशीर्वाद

श्री सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश एरावत क्षेत्र मध्य तीन चौबीसो पूजा नं. २१

अडिल्ल—मेरु सुदर्शन क्षेत्र लखो ऐरावता।
पांच म्लेच्छ नि बीच जु आरज पावता॥
तीन चौबीसी होय जिनेश्वर की तहां।
आह्वानन करि चरण जजूं तिनके इहां

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में भूत भविष्यत वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीस, जिन समूह, अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चौपया—गंग नदी को मधुर मनोहर, कंचन झारी नीर भरूं।
तुम पद पंकज धारा देके, जन्म मृत्यु दुख दूर करूं॥
मेरु सुदर्शन की दिश उत्तर, ऐरावत को क्षेत्र लसे।
तिस थल तिन चौवीसी, पूजत भव संचित अघ तुरत नसें॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में भूत भविष्यत वर्तमान काल सम्बन्धी सकल जिनेन्द्रेभ्यो नमः जलम्।

चंदन केशर लीनो घसि कर कंचन, पातर मांहि धरूं।
भव तप भारी मेटि हमारी, चरण तुम्हारी भेंट धरूं॥ मेरु सु० चंदनम्
तन्दुल उज्ज्वल अमल अखंडित, मुक्ताफल द्युति दूर करे।
ताकूं गहि कंचन के भाजन, तुम गुण के शुभ पुंज धरे॥ मेरु सु०···अक्षतम्
प्रासुक फूल सुगन्धित सुन्दर, विविध जाति के धरि थाली।
गान करावे, चित्त हरावे, तिन पर गुंजत अलि काली॥ मेरु सु०···पुष्पम्
घेवर फेणी लाडू गुंजा सेव, अनरसा अरु खाजा।
और घनेरे विधिवत केरे, थाल धरें रे ले ताजा॥ मेरु सु०···नैवेद्यं

मोह विनाशक, ज्ञान प्रकाशक, दीप उजासक ले आयो।
तुम गुण गावूं, हर्ष बढ़ावूं, नित्य करावूं सिर नायो ॥ मेरु सु०···दीपं

धूप सुगन्धी अग्नि खिपंदी, धूम्र चलंदी दिक् छाई।
कर्म जलावे इह दरसावे, तुम गुण गावे जिनराई ॥ मेरु सु०···धूपं

फल शुभ लीने, प्राशुक चीन्हे, थाल धरीने अरज करूं।
शिवफल दाता हो, विख्याता हरो, असाता पाय परूं ॥ मेरु सु०···फलम्

ले जल चन्दन चांवल कुसुमा, नेवज दीपक धूप फलां।
वसु दुखकारी, देवो टारी, सुणहु हमारी अरज भला ॥ मेरु सु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

गजल—सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशा में क्षेत्र एरावत।
है ताके ठीक बीचा बीच में इक रूपगिर परवत ॥

रक्त-रक्तोदा नदीयों से बने छै खण्ड हैं इसके।
तीन उत्तर दिशा के हैं, तीन हैं दाहिनी दिसके ॥

पाँच हैं खण्ड म्लेक्षों के, आर्यखण्ड एक हो जानो।
इसी में तीन चौबीसी, सदा से होती है मानो ॥

सु बीते काल के चौबीस, जिनको हम करें पूजा।
जगत में काम उत्तम ये न इसके सम कोई दूजा ॥१॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के उत्तर दिश एरावत क्षेत्र में तीन चौबीस में से भूतकाल की चौबीसी के तीर्थङ्करों के नाम क्रम से १. पंचरूप जिनाय २. जिन देवाय ३. संपुट जिनाय ४. जयान्तिक जिनाय ५. अधिष्ठ जिनाय ६. अभिनन्दन जिनाय ७. रत्नेश जिनाय ८. रामेश्वर जिनाय ९. अंगुष्ट जिनाय १०. विज्ञास जिनाय ११. आरोस जिनाय १२. सुभिधान जिनाय १३. प्रदत्तनाथ १४. कुमार जिनाय १५. सर्व सैल जिनाय १६. प्रभजन जिनाय १७. सौभाग्य जिनाय १८. दिनकर जिनाय १९. व्रतबन्धु जिनाय २०. सिद्धकर जिनाय २१. सरीरकजी जिनाय २२. कल्पद्रुम जिनाय २३. तीर्थादि जिनाय २४. फलेश जिनाय सकल श्री जिनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १ ॥

हुए हैं काल चौथे में, जु फिर चौबीस तीर्थङ्कर ।
अभी उनही का शासन है, काल है पंचमा वहां पर ॥
जिस तरह भरत अपने में, काल छै ऊ बरतते हैं ।
क्षेत्र एराबता में भी, इसी के साथ फिरते हैं ॥
इन्हीं भगवान जिन चौबीस को, करता हूं मैं पूजा ।
जगत में काम उत्तम ये, न इसके सम कोई दूजा ॥२॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के उत्तर दिश एरावत क्षेत्र में तीन चोबीसी में से वर्तमान की चोबीसी के तीर्थङ्करों के नाम क्रम से १. बालचन्द्र जिनाय २. सुव्रत जिनाय ३. अग्निसेन जिनाय ४. नंदिषेण जिनाय ५. वृषभदत्त जिनाय ६. वृषभधर जिनाय ७. सोमचन्द्र जिनाय ८. दीर्घ सेनाय जिनाय ९. सत्तायुस जिनाय १०. शिवाश्रित जिनाय ११. श्रेयांस जिनाय १२. स्वयं जाल जिनाय १३. १४. उपशांत जिनाय १५. गुप्तासन जिनाय १६. महावीर्य जिनाय १७. पार्श्वनाथ जिनाय १८. अभिवान जिनाय १९. मरुदेव जिनाय २०. श्रीधर जिनाय २१. श्यामकंट जिनाय २२. अग्निप्रभ जिनाय २३. अग्निदत्त जिनाय २४. वीरसेन जिनाय सकल श्री जिनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ २ ॥

फेरि होवेंगे चौथे काल में, चौबीस तीर्थङ्कर ।
नाम उत सर्पिणी होगा, आयु अवगाह वृद्धि कर ॥
चक्रवर्ती अर्ध चक्री आदि, इस काल में होते ।
बहुत प्राणी तपस्या करिके, अपने कर्म मल धोते ॥
इन्हीं भगवान जिन चौबीस को, करता हूं मैं पूजा ।
जगत में काम उत्तम ये, न इसके सम कोई दूजा ॥३॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में तीन चौवीसी में से भविष्य की चौवीसी के तीर्थङ्करों के नाम क्रम से १. सिद्धारथ जिनाय २. विमल जिनाय ३. जयघोष जिनाय ४. नंदिषेण जिनेन्द्राय ५. स्वर्गनंगल जिनाय ६. वज्रधारी जिनाय ७. निर्वाण जिनाय ८. धर्मध्वज जिनाय ९. महासेन जिनेन्द्राय १०. सिद्धसेन जिनाय ११. रविमित्र जिनाय १२. सत्यसेन जिनाय १३. चन्द्रकांत जिनाय १४. महेन्द्रनाथ जिनाय १५. स्वयंजल जिनेन्द्राय १६. देवसेन जिनेन्द्राय १७. सुव्रत जिनेन्द्राय १८. श्री जिनजी जिनेन्द्राय १९. सुपार्श्वनाथ जिनाद २०. कौशल जिनाय २१. अनन्त जिनाय २२. विमल जिनाय २३. अमृतसेन जिनाय २४. अग्निदत्त जिनाय सकल श्री जिनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ३ ॥

मेरु सुदर्शन उत्तर दिश, ऐरावत मधि आर्य ।
सिद्ध भूमि सब थल विषै, पूलूं निज हित कार्य ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में गिरीपुर वन सरितादि स्थानक विषै मुनि कर्म हानि केवल ज्ञान उपाय मुक्ति गये तिनके चरण कमलेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥४॥

मेरु सुदर्शन उत्तर दिश ऐरावत मधि आर्य ।
कृतिम अकृत्रिम भवन जिन, पूजूं निज हित कार्य ॥

ॐ ह्रीं ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में कृत्रिम अकृत्रिम सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ।५।

मेरु सुदर्शन उत्तर दिश, ऐरावत मधि आर्य ।
रत्नत्रय युत मुनि चरण, पूजूं निज हित कार्य ॥

ॐ ह्रीं ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में रत्नत्रय युत सकल मुनिश्वरेभ्यो नमः ॥ अर्घम् ॥६॥

नीरादिक आठूं जजूं, चरण कमल चित लाय ।
पंच रूप जिन आदि दे, अग्निदत्त लौं गाय ॥

ॐ ह्रीं पंचरूप आदि अग्निदत्त पर्यन्त तीन चौबीसी के सकल श्री जिन जिनेन्द्रेभ्योनमः ॥ अर्घम् ॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा--ऐरावत के क्षेत्र में, तिन चौबीसी जानि ।
तिनको जयमाला कहूं, सुनो भव्य गुण खानि ॥

पद्धड़ी—जय मेरु सुदर्शन उत्तर जाय, ऐरावत मांही चित्त लाय ।
गिण पांच म्लेछ अरु आर्यखंड, पुर सरिततात वन सघन मंड ॥१॥

तिस थान चौविसी तीन जान, अब नाम कहूं तिनके बखान ।
जय पंच रूप जिन प्रथम ईस, पद नमत होत अघ तुरत खीस ॥२॥

जिन देव दयानिधि गुण अपार, शिव थान लियो हनि कर्म भार ।
पद नमत शीस संपुट जिनेश, भग जात तुरत ही सब कलेश ॥३॥

जिनदेव जयांतिक गुण गरिष्ट, भवि तोष दिये कहि वचन मिष्ट।
जय जय अधिष्ट जिन राजदेव, सुर राज करैं तुम चरन सेव ॥४॥

अभिनन्दन के पद शीस नाय, दुःख दाय कर्म आठूं नसाय।
रत्नेश देव तिहुं जगत राय, कर जोड़ि नमूं मन वचन काय ॥५॥

जय रामेसुर जगपति जिनेश, हनि कर्म कियो शिवपुर प्रवेश।
जयवन्त होहु अंगुष्ट देव, तुम जन्म मृत्यु नाशी कुटेव ॥६॥

जय कुमति हरन विज्ञा सराय, पद शीस नमूं गुण गाय गाय।
जय जिन अशेस शिव नारि कंथ, जग प्रकट कियो जिन धर्म पंथ ॥७॥

सुमिथान नाथ अति ही दयाल, कर जोड़ ढोक देवूं त्रिकाल।
परदत्त नाथ करुणा निधान, भवि कमल विकासन उदय भान ॥८॥

जय जयकुमार जिन जगत भूप, शिव थान बसें सुन्दर सरूप।
जय सर्वशैल दाता उदार, वसु कर्मशैल क्षयकरण हार ॥९॥

जय जयहि प्रभंजन धर्म ईस, सुर नमत आय निज चरण शीस।
सौभाग्य नाथ गुण सिन्धु जोय, शुभ अशुभ कर्म काटे जु दोय ॥१०॥

दिनकर जिनेश जुग चरण शीस, भविनाय करहु सब पाप खीस।
व्रत बन्धु देव जिन धर्म राखि, बूढ़त भवाब्धि भवि लेत राखि ॥११॥

जयवंत सिद्धि कर जगत तात, जय दीनबन्धु बिन काज मात।
अध नासि सरीरक देव जानि, सिर नमन करूं उर में पिछानि ॥१२॥

जय कल्पद्रुम जिनराज देव, जय मम वांछित पुरण अछेव।
तीर्थादि देव जग तरण तार, जय जय अतीत गिन बीस चार ॥१३॥

जय वालचन्द्र जिन गुण अथाह, सुव्रत जिन शिव रमणीह नाह।
जय अग्निसेन भव वन तुषार, जय नंदिषेण भव करत पार ॥१४॥

जय वृषभदत्त ज्ञाता समस्त, जय वृषधर वृष किनो प्रशस्त।
जय सोमचन्द्र तिहुं जग उजास, जय दीर्घसेन भव हरन त्रास ॥१५॥

जय जय सत्तापुस निर्विकार, पद नमत शिवाशित कर्म टार।
श्रेयांस नाथ सुर नमत पाय, जय स्वयं जाल तिहुं जग सहाय ॥१६॥
जय सिंहसेन तिहुं जगत सूर, उपशांत नाथ जिन धर्म पूर।
जय गुप्ता सन त्रय गुप्त पाल, जय महावीर्य जिन गुण विसाल ॥१७॥
जय पार्श्वनाथ शिव करत भेट, अभिधान देत वसु कर्म मेंट।
मरु देव नमत पातक पलाय, श्रीधर वंदू मन वचन काय ॥१८॥
जय श्याम कंड देवाधि देव, जय अग्निप्रभ वशु अघ मिटेय।
जय अग्निदत्त भव विपिन आग, जय वीरसेन के चरण लाग ॥१९॥
जय सिद्धारथ सब सिद्धकार, जय विमल विमल गुण करण हार।
जय घोष जिनेश्वर गुण पुनीत, जय नंदिषेण शिवरमणि मीत ॥२०॥
जयवन्त स्वर्ग मंगल जिनेश, जय वज्र धार नासै कलेश।
निर्वाणनाथ शिवअधिप गाय, धर्मध्वज के पद शीस नाय ॥२१॥
जय सिद्धसेन गुण धरत खास, जय महासेन केवल प्रकाश।
रविमित्र मोह तम नाश कार, जय सत्यसेन जिन वचन सार ॥२२॥
श्री चन्द्रनाथ भव तप निवार, माहेन्द्रनाथ वंदू निहार।
जय जयहि स्वयंजल तीर्थनाथ, जय देवसेन भव जलधि पाथ ॥२३॥
जय जय सुव्रत गुण के भंडार, जिनराज नमूं कर शीस धार।
जय जय सुपार्श्व करुणा निधान, कोशल जिनेश सेवत महान् ॥२४॥
जय जय अनन्त बिन काज बीर, जय विमल हरण भव विषम पीर।
जय अमृत सेन पद नमत संत, जय अग्निदत्त भवि नमत अन्त ॥२५॥
गिण तीन चौविसी नाम येह, भवि ऐरावत में जानि लेह।
भव सिन्धु तरण तारण विचार, पद "नेम" नमें सिर बार बार ॥२६॥
भव भ्रमण रोग नाशो जिनेश, फिर वास देहु शिवथान वेस।
मैं सुख अनन्त विलसूं अबाध, बल वीरज दर्शन ज्ञान साथ ॥२७॥

दोहा---ऐरावत के क्षेत्र में, जिन चौबीसी तीन।
अर्घ चढ़ावूं भव्य जन, करो कर्म वसु खीन॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी सकल जिनेन्द्रेभ्यो नमः पूर्णार्घम् निर्वमापित। स्वाहा॥

अडिल्ल---ऐरावत के क्षेत्र चौबीसो तीन जी, धर्म प्रकाशन हार करे अघक्षीण जी।
तिनको भविजन पाठ करें सुर धार कें, ते पावें शिव थान कर्म रिपु टार कें॥

❀ इत्याशीर्वाद ❀

जम्बू द्वीप की गिरद कोट कंचन तणो, योजन आठ उत्तंग द्वार सोलह थणो।
गोपुर तोरण शीस बसै सुर व्यंतरा, तिस थल श्री जिन धाम जजूं वसू विध खरा॥

ॐ ह्रीं द्वीप की गिरद कोट कंचन मई आठ योजन ऊँचा जिसके सोलह द्वार तोरण युक्त व्यन्तरवास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १॥

सब थल जम्बू दीप मंझार, कृत्या कृतिम मन्दिर सार।
पूजन करूं आठ परकार, भव सागर से होने पार॥

ॐ ह्रीं सकल जम्बू द्वीप सम्बन्धी कृत्रिम अकृत्रिम जिनालयेभ्यो नमः। अर्घम्॥ २॥

सब थल जम्बू द्वीप मंझार, रतनत्रय युत मुनिवर सार।
पूजूं धरि के हर्ष अपार, तासु मिले शिवपुर का द्वार॥

ॐ ह्रीं समस्त जम्बू द्वीप मध्ये रत्नत्रय सहित आचार्य उपाध्यक्ष सर्व साधुभ्यो नमः। अर्घम्॥ ३॥

दे गिरद जम्बू द्वीप की, लवणोदधी सु विचारियो।
दो लाख योजन व्यास ताको, तरफ चारि निहारियो॥
कू भोग भूमी आठ चालिस तासु की गति छेदने।
पूजन करूं जिनवर चरण में आत्म रस को वेदने॥

ॐ ह्रीं लवणधि सम्बन्धी अड़तालीस कुभोग भूमि वास निवारक जिनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ४॥

श्री विजय मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चार जिनालय पूजा नं. २२

स्थापना चौपाई—भद्रशाल वन विजय सुमेर । चहुंदिश सघन रह्यो तसु घेर ।।
चहुं दिश चतु जिनवर के धाम । आह्वानन करि पूजूं ठाम ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की चहुंदिश चार श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अडिल्ल—गंगानदि को नीर मधुर शीतल लियो ।
कंचन झारी हाथ लेत हरष्यो हियो ।।

विजय मेरु वन भद्रशाल चहुं दिश मही ।
श्री जिन मंदिर चार जजूं इस थल सही ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु के भद्रशाल वन की चहुंदिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

बावन चन्दन घोलि सुगन्धित लेय के ।
केशर घन पुट देय चित्त हरषेय के ।।

विजय मेरु वन भद्रशाल चहुं दिश मही ।
श्री जिन मन्दिर चार जजूं इस थल सही ।। विजय मेरु···चंदनम्

तन्दुल सरस पुनीत अखंडित जोय कैं ।
कनक थाल गुण पुंज धरूं सुचि होय कैं ।। विजय मेरु···अक्षतम्

फूल मनोहर थाल धरूं मन भावने ।
प्रासुक बहुत सुगन्ध भ्रमर गुंजावने ।। विजय मेरु···पुष्पम्

विविध जात पकवान किये विध सु भली ।
कनक थाल धरि लेत भूख बाधा टली ।। विजय मेरु···नैवेद्यम्

जगमग ज्योति प्रकाश तिमिर क्षयकार जी ।
निरहिंसक सुर दीप लियो सु विचार जी ।। विजय मेरु···दीपम्

धूप सुगन्धित लेय शिखाघट में दहूं ।
आठों दुष्ट जलाय देहु तुमसूं कहूं ।। विजय मेरु···धूपम्

फल बहु लेय पुनीत कनक थाली धरूं ।
फल शुभ अशुभ मिटाय देऊं अरजी करूं ।। विजय मेरु···फलम्

जल चन्दम चरू फूल धूप तन्दुल फला ।
निर्मल दीप धराय अर्घ कीनो भला ।। विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—भद्रशाल पूरब दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की पूर्व दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। १ ।।

भद्रशाल दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। २ ।।

भद्रशाल पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

भद्रशाल उत्तर दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायके, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की उत्तर दिशाश्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

भद्रशाल चौगिरद ही, सुर व्यन्तर आवास।
तिनमें भवन जिनेश के, पूजूं वसु विध खास ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की चोगिरद व्यन्तरादिक स्थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ५ ।।

भद्रशाल वन चार दिसि, श्री जिनवर के थान।
तिनकूं पूजूं अर्घ से, दाता शिव थल जान ।।

ॐ ह्रीं दिजय मेरु के भद्रशाल वन की चहुं दिशा सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ६ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु कूं धेरि के, भद्रशाल बन पाय।
चहूं दिश चतु जिन भवन की जयमाला वरणाय ।।

पद्धरी छन्द–जय द्वीप धात की पूर्व गाय, जय विजय मेरु मधि भाग पाय।
जय भद्रशाल वन गिरद देय, भू भाग मांहि शोभा धरेय ।।२।।

चहूं दिशि ताके भवि द्वार चार, जिन राज भवन सुन्दर निहार।
जय शिखर मनोहर बहु उतंग, छवि देत महाप्रिय कनक रंग ।।३।।

जय कोट युक्त चतु दार पाय, बहु केतु लसें नभ जाय जाय।
ते चलत पवन की इम लखात, जिन सेव काज मनु ले बुलात ।।४।।

मंगल विभूति राजत अनेक, तिस थान माँहि जानों विवेक।
जिनराज बिम्ब शत एक आठ, जय रत्नमई शोभादि ठाठ ।।५।।

वसु प्रातिहार्य शोभा महान, सब कथन करूं कवलों बखान।
तिहुं थान सुरासुर नर समाज, जिनराज जजें वसु द्रव्य साज ।।६।।

हरि नृत्य करे गुण गाय गाय, पद घूमकि-घूमकि सिर नाय-नाय ।
सुर बजत बीन मिरदंग ताल, ध्वनि मधुर२ लागत रसाल ।।।७।।
जय देव जिनेश्वर जगत तात, तुम रूप लखत दृग ना अघात ।
हरि सहस्र नेत्र लीने बनाय, तोहू न तृप्ति फिर थकि रहाय ।।८।।
तुम गुण अनन्त धारी जिनेश, तुम दुष्ट अष्ट कीजे जु शेष ।
तुम मुक्ति बधू चित हरणहार, तुम कल्प वृक्ष गुण अधिक धार ।।९।।
तुम विघन विनाशन सुक्खकार, लखि नेम नमें सिर बार-बार ।
इक बात कहत तुमसु जिनाय, निज विरद चीन्ह दुख धो मिटाय ।।१०।।

दोहा—विजय मेरु कूं घेरि के, भद्रशाल बन पाय ।
चहुं दिश चतु जिन धाम कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भद्रशाल वन की चहुं दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—भद्रशाल वन विजय मेरु घेरा दियो,
चहुँ दिश चतु जिन धाम देख हरषा हियो ।
तिनको करत जु पाठ भव्य जिन रोज जी,
ते सुर पद सुख भोगत है शिव मोजजी ।। इत्यार्शीवाद

विजय मेरु सम्बन्धी नन्दन वन पूजा नं. २३

स्थापना चौपाई—योजन पाँच शतक उंचाय, विजय मेरु नन्दन वन पाय।
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ।।

ॐ ह्रीं धात की खण्ड द्वीप की पूर्व दिश विजय मेरु के नन्दन वन को चहुं दिश चार श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल अष्टादिका पूजा—ले क्षीरोदधि को नीर झारी कनक भरूं।
जर जन्म मरण की पीर नाशो अरज करूं ।।
श्री विजय मेरू अभिराम, नन्दन वन सोहे ।
चहुं दिश में चतु जिन धाम पूजन मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के नन्दन वन की चहुं दिश चतु श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

केशर चन्दन घिसि लेय कंचन ठाम धरूं ।
भव ताप दुःख बहु देय नाशो अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···चन्दनं

शुभ तन्दुल उज्ज्वल लेय कंचन थाल भरूं ।
अक्षय पद मुझको देय तुमसे अरज करूं ।। श्री श्रीविजय मेरु···अक्षतं

शुभ प्रासुक फूल मंगाय, तुम पद भेंट धरूं ।
मम काम बाण मिट जाय तुम सूं अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···पुष्पं

ले नाना विधि नेवेद्य उत्तम थाल भरूं ।
मम हरो क्षुधादिक खेद तुम सूं अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···नेवेद्यम्

वर दीप रतन मय जोय सुवरण थाल धरूं ।
मम मोह तिमिर दे खोय तुम सूँ अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···दीपं

ले निर्मल धूप बनाय पावक कुण्ड भरूं ।
अरि आठों देहुँ जलाय तुम सूं अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···धूपं

बहु प्रासुक फल भर थाल, बहु विधि भेंट धरूं ।
मम शिवफल देहुं दयाल तुम सुं अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···फलम्
वसु जल फल आदिक लेय वसुविधि अर्घ करूं ।
पद अनर्घ मुझको देय तुम पद शीश धरूं ।। श्री विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नन्दन वन पूरब दिशा जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के नन्दन वन की पूर्व दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। १ ।।

नन्दन वन दक्षिण दिशा जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के नन्दन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

नन्दन वन पश्चिम दिशा जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

नन्दन वन उत्तर दिशा जिनवर भवन निहाह ।
मन वच तन त्रय योग सूं पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के नन्दन वन उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

नन्दन वन चो गिर्द ही व्यन्तरादि के मेह ।
तिनमें श्री जिन भवन कूं पूजूं में धरिबेह ।।

ॐ ह्रीं विजयमेरु के नन्दन के चोगिर्द व्यन्तरादिक स्थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

नन्दन वन में भवन जिन बने अकीर्तम जोय ।
तिनको ले नीरादि से पूजूं में शुचि होय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के नन्दन वन को चहुं दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—दीप धात की पूर्ण दिश विजय मेरु शोभाग्य ।
नन्दन वन जिन भदन की जयमाला वरणाय ।।

छन्द केसरी—दीप घातकी पूरब माया, विजय मेरु मधि भाग लखाया ।
योजन ऊँच पाँच से जावें, नन्दन वन चहुं गिरद बसावें ।।१।।
योजन पाँच शतक चौड़ाई, सब थल श्री जिन आगम गाई ।
ताके मध्य चहुं दिश पावें, चार भवन जिनराज कहावें ।।२।।
अद्भुत रचना है सुखकारी, हम सूं कहत बनत नहीं सारी ।
शिखर उतंग लगे नभ जाके, सुर नर पूजत तिस थल आके ।।३।।
वसुविधि द्रव्य लिऐ धर थाली, पूजत भाषत जिनगुण माली ।
तुम त्रिभुवन के नाथ कहावों, तुम ही भव वन पार करावों ।।४।।
तुम विन और नहीं सुखदाता, तुम ही दीनदयाल विख्याता ।
तुम ही चहुं गति नासन हारे, तुम ही ज्ञायक तिहुं जग सारे ।।५।।
तुम ही मोह सुभट पद नास्यो, तुम ही केवल ज्ञान प्रकाशस्यो ।
तुम ही लोकालोक निहारों, तुम ही भवजन को दुःख टारयो ।।६।।
तुम ही तारण तरण जिनेशा, तुम ही नाशत सकल कलेशा ।
तुम ही अष्ठ करम चकचूरा, तुम ही त्रिभुवन में इक सूरा ।।७।।
तुम ही निज गुण सम्पति सारी, अक्षय पद कीना अविकारी ।
तुमरो नाम लेत जिनराजा, ततछिन शुधरत सब ही काजा ।।८।।
तुमरी महिमा कबलों गावूं, तुच्छ बुद्धि नहीं पार लहावुं ।
नेम नमें इक अरज सुणीजें, तुम पद सेवा भव भव दीजे ।।९।।
जबलों मुक्ति नही में पावूं, तबलों मन में तोहि बसावूं ।
इतनी मेरी पूरो आसा, मैं किंकर तुम मालिक खासा ।।१०।।

दोहा—विजय मेरु नन्दन विपिन, चहुं दिश चतु जिन थान ।
अर्घ चढ़ाऊं हेत सूं, ले ले बहु विधि तान ।।

ॐ ह्रीं धात की खण्ड द्वीप श्री पूर्व दिश विजय मेरु के नन्दन वन की चहुं दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपाई—विजय मेरु वन नन्दन धाम, चहूं दिश चार जिनेश्वर धाम ।
तिनको पाठ करे नर कोय, सो नर शिवतिय वल्लभ होय ।। इत्यार्शीवाद

श्री विजय मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की चहुं दिश जिन भवन पूजा नं. २४

स्थापना अडिल्ल—भू तैं योजन ऊंच सहस गिरण छप्पना ।
विजय मेरु सौमनस विपिन मन भावना ।।
तामें चहुं दिश चार जिनेश्वर गेह जी ।
आह्वानन इल थान करूं धरि नेह जी ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु पै भूते छप्पन हजार योजन ऊंचाई पर सोमनस वन विषै चहुं दिशि चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीतिका छन्द–शुचि नीर निर्मल मधुर शीतल क्षीर सम अति उज्ज्वलो ।
भरि कनक झारी धार देकर जनम मृत्यु दुःख दलो ।।
सोमनस वन चहुंगिरद फिरयो विजय मेरु की सही ।
तामें चहुंदिश चार जिनवर भवन पूजूं इस मही ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु पै सोमनस वन की चहुं दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

शीतल सुगन्ध पुनीत चंदन घिसत केशर डारि कें ।
धरि कनक प्याले होय, ठाड़ो ताप भव दे टारि कें ।। सोमनस वन···चंदनम्

मोती समान अखण्ड सुन्दर हेरि तन्दुल लीजिये ।
धर कनक थाल उठाय कर तैं पुञ्ज गुण गिण दीजिये ।। सोमनस वन···अक्षतम्

ले फूल प्रासुक कल्प तरु के बहु सुगन्धित हेरि कैं।
ले कनक थाल धरात तिन पै भ्रमर गुञ्जन घेरि कैं ॥ सोमनस वन···पुष्पम्

घृत खंड क्षीर मिलाय मेवा करत नेवज पावनो।
धरि कनक भाजन हाथ लीने क्षुधा रोग मिटावनो ॥ सोमनस वन···नैवेद्यम्

तुम मोह तम को नाश करिके, मुक्ति मग परगट कियो।
मणि जड़ित कंचन थाल निर्मल, दीप हम ताते लियो ॥ सोमनस वन···दीपम्

वसु दुष्ट कर्म जलाय जिनजी मुक्ति रमणी तुम वरी।
तातें सुगन्धित अग्नि घट में धूप लेके हम धरी ॥ सोमनस वन···धूपम्

श्रीफल सुपारी आदि शुभ फल लिये कंचन थाल जी।
कर जोड़ शीस नवाय ठाड़ो जपत तुम गुण माल जी ॥ सोमनस वन···फलम्

नीरादि आठों कनक थाली, लेय विधि पूर्वक धरूं।
वसु दुष्ट कर्म निवार, श्री जिन अरज इस विधि मैं करूं ॥ सोमनस वन···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—सुमनस वन पूर्व दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के सौमनस वन की पूर्व दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम् ॥ १ ॥

सुमनस वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के सौमनस वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

सुमनस वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के सौमनस वन की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम् ॥ ३ ॥

सुमनस वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के सोमनस वन की उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ ४ ॥

चहुं गिरद सौमनस वन, व्यन्तरादि के थान ।
तिनमें भवन जिनेश के, जजूं जलादि लहान ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की सोमनस वन की चहुं गिरद व्यन्तरादि स्थानक सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अघम् ॥ ६ ॥

चहुं दिश ही सौमनस वन, जिनवर थान लहाय ।
पूजूं आठों द्रव्य सूं, हरषि वचन मन काय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु सोमनस वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ५ ॥

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु सौमनस वन, चहुं दिशि चतु जिन धाम ।
जयमाला तिनकी कहूं, सुनो भव्य दे कान ॥

चौपाई—पूरब धात की दीप कहाय, मेरु विजय मध्य तसु पाय ।
कंचन मणिमय दृग-प्रियकार, अद्भुत रचना बहु विस्तार ॥१॥
भू तें योजन ऊंच विचार, भाषे श्री जिन छप्पन हजार ।
वन सौमनस तहां लखि लेय, चहुं दिश में घेर्‌यो गिर देय ॥२॥
योजन पांच शतक प्रमाण, सब थल चौड़ो लेहुं पिछान ।
ताको चहुं दिश मांहि निहार, श्री जिन मन्दिर सोहे चार ॥३॥
तिनमें प्रतिमा श्री जिनराय, एक शतक अरु आठ गिनाय ।
एक भवन की भाषी ऐह, ऐसे ही चारूं लखि लेह ॥४॥
धनुष पांच से ऊंच प्रमाण, लक्षण व्यञ्जन सब ही लसान ।
सशल सुरासुर पूजन काज, तिस थल आवत जुड़त समाज ॥५॥

अष्ट द्रव्य ले पूजै पाय, हरषि हरषि जिनवर गुण गाय।
जग नायक जयवन्त जिनेश, शिव सुख करता हरत कलेश ॥६॥
दीन बन्धु करुणा निधि ईस, नित प्रति नावूं तुम पद शीस।
तुम ही मोह महा रिपु जीत, शिव रमणी संग लाई प्रीति ॥७॥
तुम गुण महिमा का नहिं पार, वरणत गणधर बहु गए हार।
धन्य धन्य तुम त्रिभुवन चन्द, धन्य धन्य भव भ्रमण निकन्द ॥८॥
"नेम" नमैं तुमरे पद शीस मेरी अरज सुनो जगदीश।
मोकूं कर्म रहे वसु घेर, मेटो अब ही करो न देर ॥९॥

दोहा—विजय मेरु सौमनस वन, चहुं दिश चतु जिन गेह।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, मन वच तन धरि नेह॥

ॐ ह्रीं धात की खंड में पूर्व दिश विजय मेरु के सोमनस वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः पूर्णार्घम्।

अडिल्ल—विजय मेरु सौमनसं वन, लखि लीजियो।
चहुं दिश श्री जिन धाम, चार चित दीजियो॥
तिनको जे भवि जीव, पाठ रुचि सूं करैं।
ते नर सुर सुख भोग जाय शिव तिय वरैं॥ इत्याशीर्वाद

विजय मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी श्री जिन भवन पूजा नं. २५

स्थापना चौपाई—द्वीप धात की पूरब होय, विजय मेरु पांडुक वन जोय।
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, आह्वानन करतो इस ठाम॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी पांडुक वन की चहुंदिश चार श्री जिन भवन स्थित श्री जिन अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल—क्षीर समद को नीर, कनक झरि झारिका।
शीतल परम पुनीत, देत सुमधारिका॥

विजय मेरु के शीष, विपिन पांडुक लसैं।
चहुं दिश चतु जिन धाम जजत सब अघ नसैं॥

ॐ ह्रीं धातकी खंड पूर्व दिश विजय मेरु के शीस पांडुक वन में चारूं दिश चार श्री भवनेभ्यो नमः जलम्।

मलया गिर कर्पूर, बहुरि केसर घंसूं।
हेम ~~झिलाय~~ पियाले लेय, ताप भव को नसूं॥ विजय मेरु···चंदनं

तंदुल सरस पुनीत, अखंडित लेय कै।
कंचन थाल धराय, पुंज गुण देय कै॥ विजय मेरु···अक्षतं

प्रासुक फूल सुगन्धित, ले बहु जाति कै।
लायो कंचन थाल, भ्रमर लिपटाति कै॥ विजय मेरु···पुष्पं

षट् रस मय पकवान भली, विधि से करे।
कंचन थाल मंझार, लेय कर में खरै॥ विजय मेरु नेवेद्यं

दीपक ज्योति प्रकाश, दसहुं दिश में करे।
तुम पद भेंट करंत, मोह तम कूं हरै॥

विजय मेरु के शीस, विपिन पांडुक लसैं।
चहुं दिश चतु जिन धाम, जजत सब अघ नसैं॥ विजय मेरु···दीपं

अति ही सुगंधित धूप, अनुपम लेय के।
पावक कुंभ मंझार, देत वसु खेय के॥ विजय मेरु···धूपं

श्री फल आदि अनूप, विविध फल जोय के।
कंचन थाल धराय, शुद्ध मन होय के॥ विजय मेरु···फलम्

जल फलादि गिण आठ, कनक थाली धरूं।
पद अनर्घ दे मोहि, अरज तुम से करूं॥ विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पांडुक वन पूरब दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य लहाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन विषै पूरब दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ १ ॥

पांडुक वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य लहाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पाँडुक वन विषै दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ २ ।

पांडुक वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य लहाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन विषै पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ ३ ॥

पांडुक वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य लहाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन विषै उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

पांडुक नामा वन विषै, कोण ईशान लहाय ।
पांडुक शिल पै, शिल जजूं, वसु विधी द्रव्य चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन की ईशान कोण ने पांडुकनामा शिल्ल पै भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

पांडुक नामा वन विषैं, अग्नि कोण में गाय ।
पांडुकंविला शिल जजूं, बसु विधि अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन को अग्नि कोण में पांडुकंविला पश्चिम विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानाकाय नमः । अर्घम् ॥ ६ ॥

पांडुक नामा वन विषै, नैऋत्य कोण लहाय ।
रक्ता नामा शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन को नैऋत्य कोण ने रक्तानामा शिला पै ऐरावत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः । अर्घम् ॥ ७ ॥

पांडुक नामा बन विषै, वायु कोण में पाय ।
रक्त कंवला शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन की वायु कोण में रक्त कंवला सिला पै पूर्व विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः । अर्घम् ॥ ८ ॥

पांडुक वन सब ही महो, लखि जिनवर के धाम ।
अर्घ जजूं नीरादि ले, करि तिनको परिणाम ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक बन सम्बन्धी सुरहर्म्य के विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ९ ॥

नीरादिक अति हर्ष सूं, धरि कंचन के ठाम ।
पूजूं पांडुक वन विषै, श्री जिनवर के धाम ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पांडुक वन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १० ॥

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु के शीस पै, पांडुक वन छवि देय ।
चहुं विश चतु जिन धाम को, जयमाला सुणि लेय ॥

चौपाई—द्वीप धातकी पूरब होय, विजय मेरु भविजन अवलोय ।
सहस चौरासी योजन तुंग, कञ्चन मणिमय नाना रंग ॥१॥
पांडुक वन का व्यास विचारि, योजन पांच शतक छह टारि ।
चहुं दिश घेर रह्यो छवि देय, ताकी शोभा को वरणेय ॥२॥
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, पूजत इंद्र सुरादिक ठाम ।
शिला चार विदिशन में पाय, तिनपै तीन सिंहासन गाय ॥३॥
मध्य सिंहासन पै जिनराज, बैठावे हरि न्हवन सुकाज ।
क्षीरोदधि से ल्यावे नीर, असुर सुरादिक लगत कतीर ॥४॥
एक सहस वसु कुम्भ विचार, जिन सिर ढोरत एक ही बार ।

धारा पड़त जु फूल प्रमाण, अतुल बली जिन बाल पिछान ॥५॥
ज्ञान अनन्त धारि जिनराय, नर सुर सेवे तुमरे पाय ।
तुम ही तीन जगत सिरदार, तुम ही कर्म रिपु क्षयकार ॥६॥
तुम सम देव तिहुं अग मांहि, कोई और जु दीखे नांहि ।
शिव रमणी पति गुण भण्डार, तुम ही हो तिहुं जग सुखकार ॥७॥
तुम ही चराचर जानन हार, तुम ही धर्म प्ररूप्यो सार ।
भविदधि बूढ़त भव्य तिराय, तुम ही तिहुं जग शरण सहाय ॥८॥
तुम पद पंकज मन वच काय, "नेम" नमे इक अरज कराय ।
जन्म जरादिक दुःख नशाय, निज गुण सम्पति द्यो जिनराय ॥९॥

दोहा--विजय मेरु पांडुक विपिन, चहुं दिश जिनधर च्यार ।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, उर में धरि बहु प्यार ॥

ॐ ह्रीं धातकी खण्ड में पूर्व दिश विजय मेरु के शीस पांडुक वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥अर्घम् ॥

अडिल्ल--विजय मेरु के शीस, विपिन पांडुक लखो,
तामें श्री जिन धाम, चार चहुं दिश रखो ।
तिनको भविजन पाठ करें, मन लायकें,
ते होवे जग भूप, मुक्तिपुर जायकें ॥ इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु की चारों कोण चार गजदन्त पूजा नं. २६

स्थापना चौपाई–विजय मेरु की चारों कोण, गजदन्ता गिण चार हि कोण ।
तिन चतु पै जिन मन्दिर चार, आह्वानन करतो धरि प्यार ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की चारों कोण चार गजदन्तन पै चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट आह्वानन । अत्र त्रिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्नि विकरणम् ।

चौपया छन्द–क्षीरोदधि को नीर मनोहर, कंचन झारी मांहि भर्‌यो ।
कर तैं ले त्रय धारा देता, जन्म मृत्यु दुःख दूर कर्‌यो ।।

विजय मेरु के चारों कोणा, गजदन्ते गिण चार लसैं ।
शोस तिन्हों के चार जिनेश्वर, मन्दिर पूजत कर्म नसैं ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी चार गजदन्तन पै चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

चंदन केसर घन घसि लेके, हेम कटोरी हाथ गही ।
मन वच तन की शुद्धता करता, भव-तप तब ही दूर भई ।। विजम मेरु···चंदनं

तन्दुल कोमल सरल अखंडित, उज्ज्वल जल सूं धोय लिये ।
कंचन थाल हाथ में गहि के, तुम गुण के फिर पूंज दिये ।। बिजय मेरु···अक्षतं

बहु विधि प्रासुक कुसुम मनोहर, पंच वरणमय थाल धरें ।
तुम पद पंकज भेट करत ही काम बाण दुःख दूर करें ।। विजय मेरु···पुष्पं

घेवर मोदक आदिक नेवज, विधि पूर्वक बनवाय लये ।
धरि कंचन के थाल हाथ गहि, भूख व्याधि सूं दूर भये ।। विजय मेरु···नैवेद्यं

मोह मिमिर अंधिगार हरन कूं या जग में तुम दिखम् परो ।
तातैं निर्मल रतन दीप ले तुम चरणन की भेट करो ।। विजय मेरु···दीपं

मलयागिरि की धूप मनोहर, खेय अग्नि घट मांही सही ।
कर्म पुञ्ज के जालन काजे, मो उर में यह चाह भई ।। विजय मेरु···धूपं

श्री फल लोंग सुपारी आदिक फल कंचन के थाल भरे ।
शिव फल चाह भई मन मेरे तातैं ले तुम भेट धरे ।।विजय मेरु···फलम्

जल चन्दन अरु अक्षत लेवूं, फूल चरु फिर दीप धरूं ।
धूप सुवासित फल बहु उत्तम वसु विधि लै मैं अर्घ करूं ।।विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

जोगीरासा—माल्यवान गजदंत विजय ईशान कोण में जानो ।
नव हैं ऊपर कूट तिन्हों में, जैन भवन सरधानो ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी माल्यवान गजदंत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यः तथा नव कूटों में व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

सौमनस्य गजदंत विजय, आग्नेय कोण में जानो ।
सात कूट हैं ऊपर सब में, जिन चैत्यालय मानो ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी सौमनस गजदंत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यः तथा सात कूटों में व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

विद्युतप्रभ गजदंत विजय, नेऋत्य कोण में जानो ।
नौ कूटों में जैन भवन की मैं अब पूजा ठानो ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी विद्युत्प्रभ गजदंत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यः तथा नव कूटों में व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

गंध मादना नाम कोण वायव्य मांहि गजदंता ।
सहित सात कूटों से शोभित सबके भन भावंता ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी गंध मादन गजदंत स्थित सिद्ध कूट जिनायस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यः तथा सात कूटों में व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

विजय मेरु के कोण चतु गजदंता गिरि चार ।
ऊपर चतु जिन भवन को प्रणमू बारम्बार ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी विदिशयां चतुर्गजदंता चल स्थित सिद्ध कूट जिनायस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यं नमः पूर्णार्घम् ।। ५ ।।

जाप : – ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—गजदंता चारों विदिश, विजय मेरु के पाय ।
तिस सिर जिनवर भवन की जयमाला वरणाय ।।१।।

अडिल्ल–द्वीप धातकी पूरब दिशा मन भावनों, विजय मेरु मधि भाग लखो जु सुहावनो ।
ताकि चारों कोण चार गजदंत हैं, हरित श्वेत दय हेम वरण दरसंत हैं ।।२।।
तीन [illegible] लाख छप्पन हजार शत दोय जी, योजन बीस रु सात लंबाई जोयजी ।
लवणोदधि की तरफ दोय गजदंत की, साखि जान त्रैलोक्य सार सिद्धांत की ।।३।।
कालोदधि की और दोय गजदंत हैं, पांच लाख हजार गुणंतर तन्त हैं ।
दो सौ गुनसठ और धरो गिण योजना, इतनी लम्बे जोड़ लखो निश्चल मनां ।।४।।
इन चारों के शीस चार सिद्धकूट हैं, विजय मेरु के निकट लखो नहिं झूंठ है ।
तिस थल श्री जिन गेह विराजे सासतैं, सुर खगधर मिल आय जजैं अघ नाशतें ।।५।।
गावें गुण जिनराज भक्ति उर लायकें, केई नाचत तान लेत हरसायकें ।
केई बजावत बीन मृदंगादिक भला, केई करें जय शब्द चित्त करि निर्मला ।।६।।
केई आपस मांहि करें चरचा सही, जैसी श्री जिनराज पुराणन में कही ।
ऐसे अद्भूत ठाठ सदा तहँ लगि रहे, सब वरणत नहिं जात कछु इक हम कहे ।।७।।
धन्य२ जिनराजा तिहुं जग के धनी, धन्य धन्य जिनराजा करम सेन्या हनी ।
धन्य२ जिनराजा दयानिधि नाथ जी, धन्य२ जिनराज भवोदधि पाथजी ।।८।।
अशरण के आधार जिनेश्वर देवजो, अरज करे नमि 'नेम' एक सुण लेवजी ।
चहुं गति के दुःख नाश देहु शिव थानजी, दर्शन सुखः अरु वीर्य अनंतो ज्ञानजी ।।९।।

दोहा—विजय मेरु चतुकोण में, गजदन्ते चतु पाय ।
तिनपैं चतु जिन गेह के, दीने अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की चहुं दिश चार गज दंतन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

जोगीरासा–विजय मेरु की चारों कोणा चार गिणो गजदन्ते ।
तिन चारों पै चार जिनेश्वर मंदिर खूब लसन्ते ।।
तिनको पाठ करे नर कोई मन वच तन सुध करिकें ।
सो शिवथान तणे सुख विलसैं चहुंगति के दुख हरिकें ।। इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु सम्बन्धी घातकी शाल्मलि वृक्ष दो जिन भवन पूजा नं. २७

स्थापना जोगीरासा छंद–विजय मेरु के उत्तर कुरु में, वृक्ष घातकी सोहे ।
इसी मेरु के देव कुरु में, शाल्मलि मन मोहे ।।
इनकी एक एक शाखा पर, जिन मंदिर सुखकारी ।
इन दो मंदिर की जिन प्रतिमा, पूजों अघतम हारी ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी धातकी शाल्मली वृक्ष सम्बन्धी दो जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्ब समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणम् ।

टेक—सुं गुरु हम ध्यावें, सु गुरु हम ध्यावे जय पूज न इन्द्र खगेन्द्र सु आवे ।
जय उत्तम गंगा जल भर लावे, जय श्री जिन आगे धार ढरावे ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे, जय तिनि पर दो जिन गृह मन लावे । सु···

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु सम्बन्धी धातकी शाल्मली वृक्ष स्थित जिनालयस्थ सर्व श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः जलम् ।

जय केसरि घिसि कर्पूर मिलावे ।
जय जिनपद अर्चत हर्ष बढ़ावें ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे ।
जय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···चन्दनं

जय हीरा, लाल, जवाहर लावे ।
जय थाल लबालब कनक भरावे ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे ।
जय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···अक्षतम्

जय भाँति-भांति के पुष्प चुनावे ।
जय महक पाय भौंरा मंडरावे ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे ।
जय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···पुष्पम्

जय खुरमा खाजा घेवर लावे ।
जय थाल अठारह दुगुण सजावे ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे ।।
जय तिनि पर दो जिनगृहमन लावे ।। सु० गुरु···नेवैद्यम्
जय रतनमयी वर दीप सजावे ।
जय आरति करि फूलें न समावे ।।
जय घातकि शाल्मली तरु ध्यावे ।
जय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···दीपम्
जय अगर तगर तत्क्षण कुटवावें ।
जय खेवत धूप करम जरि जावें ।।
जय घातकि शाल्गली तरु ध्यावे ।
जय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···धूपम्
जाय एला केला दाख मंगावे ।
जाय भेंट करत में नाचें गावे ।।
जाय घातकि शाल्मली तरु ध्यावें ।
जाय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···फलम्
जाय आठ दरब मय अर्घ बनावें ।
जाय अनर्घ पद की वांछा लावे ।।
जाय घातकि शाल्मलि तरु ध्यावें ।
जाय तिनि पर दो जिनगृह मन लावे ।। सु० गुरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

पद्धरी छन्द—मेरु सु विजयविदिसा इशान, घातकी वृक्ष सिद्धकूट थान ।
त्रय डाले पर व्यन्तर मकान, तिनि में जिनभवन जजूं प्रधान ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी धात की वृक्ष के डाले पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा शेष तीन डालों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

इस तरु के सब परिवार वृक्ष, चालीस सहस अरु एक लक्ष ।
एक सतक और ऊपर उन्नीस, जिनगेह जजूं निज नमू सीश ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी धात की वृक्ष के एक लाख चालीस हजार एक सौ उन्नीस परिवार वृक्षों पर सकल जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

नेरित में शाल्मलि पिचान, तरु के डाले सिद्धकूट थान ।
त्रय डाले पर व्यन्तर सकान, तिनिमें जिन भवन जजूं प्रधान ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी शाल्मली वृक्ष पर सिद्ध कूट जिन मन्दिर तथा शेष तीन डालों पर व्यन्तर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

इस तरु के सब परिवार वृक्ष, चालीस सहस अरु एक लक्ष ।
एक एतक और ऊपर उन्नीस, जिन गेह जजूं निज नाय सीश ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी शालमली वृक्ष के एक लाख चालीस हजार एक सौ उन्नीस परिवार वृक्षों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

चौपाई—दीप धातकी पूरब दिशा, विजय मेरु मध्य भाग जु लसा ।
ताकी लखि ले कोण ईशान, नीलाचल सूं दक्षिण जान ।।१।।
सीता तट सूं पूरब जोय, वृक्ष धातकी तिस थल होय ।
भोग भूमि उत्तर कुरु नाम, आगे कथन सुनो अभिराम ।।२।।
योजन पांच शतक गिण व्यास, गोलाकार थली लखि खास ।
मध्य भाग में मोटी जान, योजन आठ कही भगवान ।।३।।
हेम वरण छवि अद्भूत लाग, तास थली के मध्य जु भाग ।
योजन आठ उतंग जु पीठ, मूल भाग में चौड़ी दीठ ।।४।।
योजन बारा गोलाकार, सिर पै योजन चौड़ी चार ।
ताके ऊपर शोभा देय, वृक्ष धातकी चित्त करेय ।।५।।

गहरो [redacted] योजन आध गिणाय, दस योजन ऊंचा मन लाय ।
मध्य भाग में गिण विस्तार, छै योजन को करि निरधार ।।६।।
सिर ऊपर को सुण विस्तार, श्री जिन भाष्यौ योजन चार ।
मूल भाग में योजन दोय, ऊंचे पै चतु डाला होय ।।७।।
पूरब दिश को आदि दिवाय, भवि जन समझो मन हुलसाय ।
लम्बी योजन आठ बखान, चौड़ी योजन आध प्रमान ।।८।।
तामें उत्तर दिश की डाल, श्री जिन भवन लसै सुविशाल ।
शेष डाल [redacted] तीनू दिश तीन, व्यन्तर रक्षक बसते चीन ।।९।।
लघु डाली हैं और अनेक, व्यन्तर बसते जान विवेक ।
वज्रमई तरु की जड़ जोय, नाना रत्ना डाली होय ।।१०।।
मूंगा सम लखि फूल सुजान, फल जानों मृदंग समान ।
नाहीं है जु वनस्पति काय, पृथ्वी काय लखो मन लाय ।।११।।
आगे भाषूं कथन जु और, ता तरु के परिवार की ठौर ।
प्रथम थली के ऊपर पाय, लगी पीठ सूं गिरद दिवाय ।।१२।।
अम्बुज वेदी बारह जान, ऊंची योजन आध बखान ।
पाव कोस की चौड़ी गाय, कंचन वर्ण लसै सुखदाय ।।१३।।
बिनां कंगुरा भीति समान, सोही वेदी लखहुं सुजान ।
बारह ही अन्तराल गिणाय, वेदी अन्त पीठ लों पाय ।।१४।।
वेदी प्रथम रु पीठ नगीच, अन्तराल पहलो लखि बीच ।
अन्तराल पहला में जोय, वृक्ष सात पश्चिम दिस होय ।।१५।।
सैन्या सप्त तणैं परधान, बसतैं तिनतैं सात प्रमान ।
अन्तराल चौथो मन लाय, नैऋत्य दिश में वृक्ष गिणाय ।।१६।।
अड़तालीस सहस के शीस, बाह्य परीषद वसते दीस ।
अन्तराल भवि तीजो होय, चालीस सहस वृक्ष तहां होय ।।१७।।

दक्षिण दिस में सोहै खास, मध्य परीषद सुर को वास ।
अन्तराल दूजो लखि लेय, सहस बत्तीस वृक्ष चित देय ॥१८॥
अभ्यन्तर परिषद के देव, अग्निकोण बसते स्वयमेव ।
अन्तराल पंचम गिण लेय, वायु कोण दिशी चित्त देय ॥१९॥
चार हजार तरु छवि देय, सामानिक सुर वास करेय ।
अन्तराल छट्ठो उर लाय, सोलह सहस वृक्ष गिणवाय ॥२०॥
अंगरक्ष सुर तिनपै बसैं, चहुं दिश शोभा अद्भुत लसैं ।
सप्तम अन्तराल के मांहि, जानो भविजन रचना नांहि ॥२१॥
अन्तराल अष्टम वन हौण, गोल बावड़ी अरु चौकोण ।
अन्तराल नवमों जु निहार, चहुं दिश मांहि वृक्ष गिण चार ॥२२॥
बसैं यक्षणी तिनपैं बास, भविजन जानों मन हुल्लास ।
अन्तराल दशमों जु कहाय, एक शतक पै आठ गिनाय ॥२३॥
आठों तिस तरु सोहै खास, है उत्कृष्ट यक्ष सुर वास ।
अन्तराल एकादश जोय, तहाँ भी रचना कछु नहिं होय ॥२४॥
द्वादश में भी कछु नहिं पाय, इह विधि भेद लखो मन लाये ।
ये ही धातकी तरु परिवार, एक लाख चालीस हजार ॥२५॥
एक शतक उगणीस धराय, जोड़ लेहु सब ही चित्त लाय ।
ऐसे ही लखि विजय सुमेरु, नेऋत्य कोण दिशा भवि हेर ॥२६॥
निषधाचल सूं उत्तर जोय, सीतोदा सूं पश्चिम होय ।
देव कुरु भू भोग मंझार शाल्मली है वृक्ष निहार ॥२७॥
सब ही रचना ऐसी पाय, कथन विशेष कहूं मन लाय ।
या तरु की दक्षिण दिश डाल, भवन जिनेश्वर लेहुं सम्हाल ॥२८॥
सुर खगधर आवैं तिस थान, आठूं विधि पूजें भगवान ।
हमरो मन ललचावे जोर, कैसे जावे तिस ही ठौर ॥२९॥

ऐसी शक्ति धरावै नाहिं, शक्ति बिना कहो कैसे जांहि ।
तातैं भावन इस थल भाय, तुम पद 'नेम' नमें सिरनाय ।।३०।।
तुम से जांचू येही सही, अष्ट कर्म हनि द्यो शिव मही ।

दोहा—नेऋत्य अरु ईशान दिश, विजय मेरु की जाय ।
कुरु वृक्ष जिन भवन कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की नैऋत्य ईशान कोण विषै धातकी व शाल्मली वृक्षन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला ।। पूर्णार्घम् ।।

छन्द गीता—नैऋत्य कोण ईशान विदिशा विजय मेरु की रखो ।
कुरु वृक्ष दोय जु धातकी पै भवन जिनवर द्वय लखो ।।
तिन भवन को जे पाठ भवि जिय, करत मन वचकाय जी ।
ते लेय इन्द्र नरेन्द्र पदवी, फेर शिवपुर जाय जी ।। इत्यार्शीवाद

विजय मेरु पूर्व दिस आठ वक्षार गिरि पर आठ जिन भवन पूजा नं. २८

स्थापना चौपया वृत—विजय मेरु की पूरब दिश में, शोडष क्षेत्र विदेह बसाय ।
तिनके बीच अश्वमुख सुन्दर, आठ अचल वक्षार गिणाय ।।
तिन आठन के सिर पर जिनवर, भवन आठही हैं सुखदाय ।
तिन भवनों की पूजा कारण, आह्वानन करते इस ढाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिश सोलह विदेह क्षत्र न बीच आठ वक्षार गिर शीस आठ जिन भवनाय अत्रावतरावतर संवोषट आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापन । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

गीता छन्द—सुर गंग नीर भराय झारी, कनक की कर में लई ।
सिर नाय गुण उच्चार, तुमरे चरण ढिग धारा दई ।।
श्री विजय मेरु विदेह, पूरव देश सोलह मधि बसै ।
वक्षार गिर शिर आठ, जिनवर भवन पूजत अघ नसै ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब विदेह के सोलह देशन बीच आठ वक्षार गिर शीस आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

शीतल पुनीत सुगन्ध चन्दन, घिसत केसर डारि कै।
धरि कनक भाजन लेत, कर में देहुं भव तप टारि कै॥ श्री विजय मेरु···चन्दनम्

द्युतिचन्द सम ही श्वेत सुन्दर, लखि अखंडित लीजिये।
जल धोय तन्दुल कनक, थाली पुंज विधि से दीजिये॥ श्री विजय मेरु···अक्षतम्

शुभ फूल जाति अनेक प्राशुक, लखि सुगन्धित लाइये।
अरु रजत कंचन के मनोहर, लेय जिन गुण गाइये॥ श्री विजय मेरु···पुष्पम्

षट् रस प्रपूरित शुद्ध, विधि कर लेत बहु नैवैद्य जी।
धरि कनक थाली अरज, तुम सूं करहुं दुःख कूं छेद जी॥ श्री विजय मेरु···नैवेद्यम्

मिथ्यात तम हर प्रगट, शिवमग करण हारे आप जी।
तातैं रतनमय दीप लेके, देत तुम गुण गायजो॥ श्री विजय मेरु···दीपम्

जाकी पवन चलती सकल वन, कूं करत चन्दन तरु।
ताकी अनूपम धूप लेके, अग्नि घट मांही धरूं॥ श्री विजयमेरु···धूपम्

वर मोक्ष फल के मिलन काजे, अशुभ फल के मेटने।
नारेल पिस्ता आदि शुभ फल, लेत तुम पद भेटने॥ श्री विजय मेरु···फलम्

शुचि नीर चन्दन फूल तन्दुल, दोप नेवज लेय के।
फल धूप थाल धराय कीनो, अर्घ उर हरषेय के॥ श्री विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा--चित्रकूट वक्षार पर चार कूट अभिराम।
पूरब में सिद्धकूट है प्रमुख जिनेश्वर धाम॥
तीन मांहि व्यन्तर वसें सहित जिनेश्वर गेह।
वे पूजें बहु ठाठ से मैं पूजूं धर नेह॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा में चित्रकूट वक्षार पर चार कूट पूरब में सिद्ध कूट जिन भवन बाकी तिन में व्यन्तर देवों के निवास नेम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १॥

दूजा जो वक्षार है पदम कूट तसु नाम।
चारि कूट ऊपर लसें सबमें जिनवर धाम॥
पहिले में सिद्धकूट है शेष तीन में देव।
मैं मन की पहुंचाय कर पूजूं श्री जिन देव॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा में पदम कूट वक्षार पर पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी तीन कूटों में व्यतन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

नलिन कूट वक्षार सिर कूट सुहावन चार।
सिद्ध कूट पहले विषें बाकी सुर परिवार॥
जैन भवन सब के मधि पूजें हर्ष मनाय।
मैं पूजूं इस थान से जनम मरण मिट जाय॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा में नलिन कूट वक्षार पर चार कूट में से पूरब में सिद्ध कट जिन मन्दिर बाकी तीन कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

चार कूट मय सोभना एक सेल वक्षार।
सिद्ध कूट है प्रथम में तिन में देव विहार॥
सर्व ठोर जिन भवन हैं पूजें सूरनर जाय।
मैं पूजूं इस थान से अपना चित्त लगाय॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु को पूरब दिशा में एक सेल वक्षार गिर पर चार कूटों में से पूरब में सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी तीन कूटों में व्यतन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ४ ॥

है त्रिकूट वक्षार फिरि चार कूट तसु शीस।
पूरब के सिद्ध कूट में मुख्य भवन जगदीश॥
पूजें सुर गण तीन में धरि मन में हुललास।
मैं भी निज हित कारने पूजूं करि विश्वास॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा त्रिकूट वक्षार गिर पर चार कूटों में से पूरब सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी तीन कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ५ ॥

छट्ठे गिरि वक्षार का नाम वैश्रवण जान।
चार कूट में सोभनी रचना वे परमान॥
जिन मंदिर चारों जगह पूजें करें नर देव।
मैं पूजूं यह मानिके होय कर्म का छेव॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा वैश्रवण वक्षार गिर पर चार कूटों में से पूरब दिशा में सिद्ध कूट जिन मन्दिर बाकी तीन कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ६॥

अंजन गिरि वक्षार पर बने चारि हैं कूट।
पहिले में सिद्ध कूट है रचना कहो अटूट॥
शुर खग नर पूजा करे लगातार दिन रात।
मैं भी पूजूं भाव से मिटें पांच हू गात॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा अंजन गिर वक्षार पर चार कूटों में से पूरब दिशा में सिद्धकूट बाकी तीन कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ७॥

अष्टम गिरि विचार की महिमा अपरम्पार।
चार कूट ऊपर लसें सबमें जिनगृह सार॥
धन्य भाग है उन्हीं का पूजन करे प्रतक्ष।
मैं पूजूं श्रद्धा सहित करि सन्तोष परोक्ष॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूरब दिशा में आत्मांजन गिरि वक्षार पर चार कूटों में से पूरब दिशा में सिद्धकूट बाकी तीन कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यों नमः। अर्घम्॥ ८॥

पद्धरी छन्द—सीता मधि दस द्रह देविवास, कंचन गिरि दोऊ तरफ खास।
वन भद्रशाल वेदिका पास दो, यमक गिरी व्यन्तर जू वास॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु पूर्व विदेह सीता के मध्य दस द्रह तथा दोनों तट पर दो सौ कंचन गिरि और भद्रशाल वेदी के पास दो यमक गिरि सम्बन्धी व्यन्तर देव स्थानों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ८॥

पूरब दिश सीता तट सुदोय, छै नदी विभंगा वहे सोय।
इकलाख सहष अर्सटि प्रमाण, उपकारक नदियाँ मिलीं आन ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु पूर्व विदेह सम्बन्धी छ विभंगा नदी ग्राहवती हरिवती पंकवती तत्तजला मत्तजला उन्मत जला तथा इन छः नदियों की एक लाख अड़सठ हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानक विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १० ॥

दक्षिण उत्तर सीता जू पास, वेदी युत देवारण्य खास।
पूरब सम्बधि सकल थान, जिनवरगृह पूजूं हर्ष ठान ॥

ॐ ह्रीं दिजय मेरु पूर्व विदेह सीता के उत्तर दक्षिण देवारण्य वेदी सम्बन्धी व्यन्तर थानक विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ११ ॥

जो भये और आगे जु होय, तीर्थङ्कर जात सुयंभु दोय।
पूजूं में अति मन धारि प्रीत, जल फलादि सब लेकर पुनीत ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह मध्य श्री सुजात स्वामी व श्री स्वयंभू स्वामी वर्तमान में विराजमान तथा भूतकाल में जितने हुये भविष्यत काल में जितने होवेंगे समस्त परमेष्ठियों को भाव सहित नमः अर्घम् ॥ १२ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार) .

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की पूर्व दिश आठ अचल वक्षार।
शीस जिनेश्वर भवन की जयमाला सुण सार ॥

चाल छन्द—लखि विजय मेरु की भाई, दिसि पूरब में सुखदाई।
षोडस जू क्षेत्र विदेहा, भवि जानो उर धरि नेहा ॥२॥
सब जम्बु द्वीप समानां, देशन के नाम पिछाना।
सरितादि आठ वक्षारा, इक गिर पर कूट जु चारा ॥३॥
ते सब गिर कंचन वरणां, भवि देखत मन को हरणां।
दक्षिण उत्तर लम्बाई, लखि देश बरोबर भाई ॥४॥

पूरब जु अपर विस्तारा, योजन है आध हजारा।
इस विधि से आठ लसावें, अब देश अनुक्रम गावें ॥५॥
पूरब जू अपर चौड़ाई, सुण एक देश की भाई।
इस विधि सूं आठों देशा, भवि एक तरफ लखि वेसा ॥६॥
फिर दूजी ओर निहारों, गिण देश आठ उर धारो।
सरिता षट ही वीभंगा, मध्य भाग लसें बहु चंगा ॥७॥
पन लाख मील की भाई, लखि एक नदी चौड़ाई।
सब पोन हजार जुड़ावो, षट् सरिता व्यास लखावो ॥८॥
यों पूरब पश्चिम व्यासा, सबको समझो भवि खासा।
इन आठ गिरन के शीसा, सब कूट गिणों जु बतीसा ॥९॥
तिनमें लखि आठ जु कुटा, निज अचल नाम नहीं झूंठा।
पूरब पश्चिम में जो देशा, जा गिर तें लगि भवि वेसा ॥१०॥
ते सोलह कूट कहावें, वसु कूट सिद्ध मन भावें।
सिद्ध कूटन में जिन गेहा, सब थल वन्दु धरि नेहा ॥११॥
चौबीसों कूटन मांही, व्यन्तर बसते सक नांही।
सिद्धकूट तणी सुणि जागा, तट सीता लखि बड़ भागा ॥१२॥
इह रचना अद्भुत भारी, भवि गात बणे नहीं सारी।
जे और कथन सुण चाहो, त्रैलोक्य सार मन लावो ॥१३॥
नमि 'नेम' जिनेश्वर चरणां, इक अरज करे चित धरणां।
निज गुण की सम्पति करणां, मेटो जन्मा अरु मरणां ॥१५॥

दोहा—आठ अचल वक्षार सिर, मन्दिर श्री जिनरान।
तिस थल गाय बजाय के, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥१५॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व विदेह सोलह देशन बीच आठ वक्षार गिर सीस सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः।जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

चौपाई—विजय मेरु की पूर्व विदेह वसु वक्षार जिनेश्वर गेह।
तिनकूं पाठ पढ़े नर कोय, इन्द्रादिक पद पावे सोय॥ इत्यार्शीवाद

श्री विजय मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्र बीच षोडस रूपाचल जिन भवन पूजा नं. २९

स्थापना चौपाई—विजय मेरु की पूर्व विदेह षोडस रूपाचल जिन गेह ।
आह्वानन तिनकी जु करेय, पूजन काजे उर में ध्येय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच षोडस रूपाचल शीस षोडस श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरम् ।

ले उत्तम गंगा नीर झारी कनक भरूं,
तीनों रोगों की पीर नाशो अरज करूं ।
श्री विजय मेरु की पूर्व षोडस रजत गिरा,
षोडस जिनवर गृह सर्व पूजूं नमित सूरा ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व विदेह क्षत्र मध्य षोडप रूपाचल शीस षोडस श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

चन्दन मलयागिर नीर कंचन धाम धरूं ।
नाशो भवदधि की पीर इतनी अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···चंदनं
बहु तंदुल उज्ज्वल लेय तुम गुण पुंज धरूं ।
अक्षय पद मुझको देय इतनी अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···अक्षतं
शुभ प्रासुक ले बहु फूल तुम पद भेट धरूं ।
अरि कामबाण के शूल नाशो अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···पुष्पं
वर णेवज निर्मल लेय कंचन थाल धरूं ।
मम क्षुधा जु रोग हरेय तुमसूं अरज करूं ।। श्री विजग मेरु···नैवेद्यं
मणि नाना रनत लहाय दीपक नाम धरूं ।
मम मोह तिमिर नशवाय दीजे अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···दीपं
शुभ धूप अनूप बनाय पावक कुम्भ धरूं ।
अरि आठों देहु जलाय तुम सूं अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···धूपं

धरि शुभफल कंचन थाल तुम पद शीश धरूं ।
मोहि शिवफल देहु दयाल इतनी अरज करूं ।। श्री विजय मेरु···फलं
सब जल फल आदिक आठ सुवरण थाल धरूं ।
तुम गुण को करिके पाठ शिवतिय जाय वरूं ।। श्री विजय मेरु···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व विदेह क्षेत्रन मध्य षोडस रूपाचल शीस षौडस श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

प्रथम देश कच्छा विषै, रूपाचल मन लाय ।
कूट सु नव हैं प्रथम में, सिद्धकूट सुखदाय ।।
वसु कूटनि में सुर रहे, जिनवर भवन सुहाय ।
सब थल पूजूं भाव से, मैं अति ही उमगाय ।।
हो ताते बनि जाऊं, शिवनारी भरतार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में पहिला कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

देस सु कच्छा दूसरो, बीच रूप गिरि सेल ।
नव कूटों से सोभता, रचना रेलम पेल ।।
सिद्ध कूट है पूर्व में, जिनवर भवन महान ।
आठ कूट में बने हैं, देवों के स्थान ।।
हो पूजा में करि के, गाऊं गुण गण सार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में दूसरा सु कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

देस महा कच्छा विषें, रूपाचल अभिराम ।
पूर्व दिसा के कूट में, सिद्धकूट जिन धाम ।।

आठ निमे पूजन करे, व्यन्तर देव विसेष ।
में पूजूं मन लाय के, कर्म रहें ना शेष ।।
हो तब पांच तरह का, नशि जावे संसार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर दिशा नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में तीजा महा कच्छ देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

कच्छ कावती देस में, रूपाचल मनहार ।
ऊपर नव कूटनि विषें, बने जिन भवन सार ।।
पहिले में सिद्धिकूट है, जिन मंदिर विख्यात ।
शेष आठ में व्यन्तरा, करे परस्पर बात ।।
हो में पूजन करता, लेकर द्रव्य अपार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता को उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में चौथा कच्छ कावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

पंचम देस सुहावना, आवर्ता है नाम ।
रूपाचल के शीस पर, नव हैं कूट ललाम ।।
पहिले में सिद्धिकूट है, महिमा है अधिकाय ।
शेष आठ में सुर करे, पूजा जिनगृह जाय ।।
हो में भी ललचाऊं, मन वच काय सम्हार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल को दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में पंचम आवर्ता देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

देस लांगला वर्त है, मध्य रूप गिरि सोय ।
ऊपर नव कूटनि विषें, जिनवर पूजा होय ।।

सिद्धकूट में देवनर करे, आत्म कल्यान ।
में इस ही जिन धाम में, खुव लगाऊं तान ।।
हो मन श्रद्धा लाकर, हो जाइं भव पार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी की पूर्व दिशा में छट्टा लांगलावर्त देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अघम् ।। ६ ।।

सप्तम देस सुहावना, नाम, पुष्कला जान ।
रूपाचल के सीस पर, नव है कूट महान ।।
पहिला जग विख्यात है, सिद्धकूट सुखदाय ।
वसु में व्यन्तर देवता, पूजन करि हर्षाय ।।
हो वह धन्य कहावे उनका जीवन सार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता को उत्तर नीलाचल की दक्षिण भद्रशाल वन को वेदो को पूर्व दिशा में सप्तम पुष्कलां नाम देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। ७ ।।

देस पुष्कलावती है, अष्टम पूरब मांहि ।
ताके बीचा बीच में, रूपाचल तिष्ठाय ।।
नव कूटों से सोभता, पहिले में सिद्धकूट ।
वाको वसु में देवता, बसें रंचना झूंठ ।।
हो वहां मंग्रल गावें, देव और नर नार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता को उत्तर नीलाचल की दक्षिण देवारण्य वेदी के पास आठवां पुष्पकलावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

वतसा देस सुहावना, रजत गिरी मधि थाय ।
सीस कूट नव के विषें, जैन भवन मन लाय ।।

पूरब में सिद्धकूट है, वसु में सुर स्थान ।
पूजें सब मिलि ठाठ से, मैं पूजूं धरि ध्यान ।।
हो फिर क्यों न मिलेगा, शिवपुर का दरबार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ नौंवा वत्स देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

देस सु वत्सा पूर्व में, अति सुन्दर सुखदाय ।
बीच रूप गिरि तासु के, नव कूटनि समुदाय ।।
सिद्धकूट है पूर्व में, बांकी आठनि माहि ।
देव पूज करि के मनहि, फूले नही समाय ।।
हो मैं भी सुचि होकर, बोलूं जय जयकार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं दिजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पक्षिम तरफ दसवां सु वत्सा देश मध्ये रूपाचल पर्वत वर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देवस्थान में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १० ।।

देस महावत्सा वसे, तामें गिरि रजतास ।
कूट सु नव ऊपर लसें, जिन मन्दिर युत खास ।।
प्रथम सिद्ध वर कूट की, महिमा कहीं न जाय ।
देव खगानर पूजते, नाचि गाय हर्षाय ।।
हो वह धारि आठ भव, निश्चय उतरे पार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ ग्यारवां महावत्सा देश मध्ये रूपाचल पर्वत श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर देव थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ११ ।।

देसवत्स कावती है, सब जीवनि सुख कार ।
रजताचल ता बीच में, तोन कटनि युत सार ।।

नव कूटों में पूर्व में, सिद्धकूट रमणीक ।
आठनि में व्यंतर सुरा, पूज करे विधि ठीक ।।
हों में भाव लगाऊं, छोड़ि सभी निरधार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ बारहवां वत्सकावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १२ ।।

रम्या देस विषे लखो, बीच रूप गिरि सार ।
तापर कूट सु नव कहे, जिन मन्दिर मनहार ।।
पहिले में सिद्धकूट है, वसु में सुर विश्राम ।
पूज करें हर्षाय कर, छोड़ि और सब काम ।।
हो में करूं वंदना, आठों अंग सम्हार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विवेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ तेरहवां रूपा देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १३ ।।

देस सुरम्या के विशे, रूपाचल सुविचार ।
ऊपर कूट सु नव कहे, जिनमन्दिर मय सार ।।
सिद्धकूट पूरव विशे, बाकी में सुर थान ।
पूजन पाठ करें तहाँ, करन हेतु कल्याण ।।
हो मैं अर्घ चढ़ाऊं, भव से होने पार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह सीता को दक्षिण निषधाचल को उत्तर तथा देवारण्य वेदी को पश्चिम की तरफ चोदहवां सुरम्या देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १४ ।।

देस रमणीया बीच में, रूपाचल चित लाय ।
ऊपर नव कूटनि विषें, जिन मन्दिर सुखदाय ।।

पहिले में सिद्धकूट है, श्री जिन धाम महान् ।
वसु में देवों के बने, जिन मन्दिर मय थान ।।
हो मैं उन जिनवर को, ध्याऊं हिये मंझार ।
जिया तू सोच समझ ले, झूंठा है संसार ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदा की पश्चिम की तरफ पन्द्रहवां रमणीया देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय तथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १५ ।।

देस मंगलावती है, अन्तिम पूरव माहिं ।
रूपाचल है मध्य में, नवकूटों सहिताय ।।
सिद्धकूट पूरब लखो, शेष देव विश्राम ।
सब ही के मन भावना, सभी जपे प्रभू नाम ।।
हो सब वीर प्रभूजी को, बोलो जय-जयकार । जिया तू···टेक

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सीता की दक्षिण निषधाचल की उत्तर तथा देवारण्य वेदी की पश्चिम की तरफ सोलहवां मंगलावती देश मध्ये रूपाचल पर्वत पर श्री सिद्धकूट जिनालय रथा शेष आठ कूटों पर व्यन्तर थानक मे सकल श्री भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १६ ।।

पद्धरी छन्द—सोलह रूपाचल गिरि जू सोय, दस योजन ऊपर कटनि दोय ।
दस अधिक एक सत नगर जान, जो विद्याधर के कहे थान ।।
फिरि दूजो कटनी दोय और, सुर न्यंतर वसु के बने ठौर ।
इन सब थल जिन मन्दिर निहार, मैं पूज करूं ले द्रव्य सार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सोलह रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊंची दक्षिण उत्तर दोनों कटनी पर एक सौ दस विद्याधर की नगरियों में तथा बोस योजन ऊंची दोनों तरफ व्यन्तर देवस्थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १७ ।।

गिर नीलाचल से नदी दोय, रक्ता रक्तोदा निकसि सोय ।
सीता में आकर मिलि सोय, वसु देस प्रथम की सोल होय ।।
इनकी उपकारक नदी जान, दो लाख सहस चौविस प्रमान ।
इन सब नदियों की दोई ओर, जिन मन्दिर पूजूं हाथ जोर ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में पहिले आठ देस सम्बन्धी रक्ता रक्तोदा सोलह नदियाँ नीलाचल के मूल भाग से निकल कर रूपाचल की गुफाओं से होकर सीता में मिलि इन सोलह नदियोंके दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियां चौदह-चौदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के स्थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। १८ ।।

गिरि निषधाचख से नदी दोय, गंगा अरु सिंधू नाम होय।
सीता में आकर मिली सोय, वसु देसनि की सोलह जु होय ।।
इनकी जु सहायक नदी जान, दो लाख सहस चौबिस प्रमान।
इन सब नदियों की दोइ और, जिन मन्दिर पूजूं हाथ जोर ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में दूसरे आठ देस सम्बन्धी गंगा सिन्धु सोलह नदियाँ निषधाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिली इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियाँ चौदह चौदह हजार इस सबके भी दोनों तट पर व्यंतर देवों के स्थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। १९ ।।

सोलह देसनि के मध्य जान, जु म्लेक्ष खंड सोलह पिछान।
वृषभाचल पर्वत है महान, वहाँ व्यन्तर के जिन भवन जान ।।
अरु सोलह देसनि के मंझार, इक इक नगरी कल्याण कार।
तिनि सम्बन्धी जिन भवन सार, मैं पूजूं होइ हर्षित अपार ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के पूर्व विदेह में सोलह देश सम्बन्धी पाँच पाँच म्लेक्ष खण्ड हैं उत्तर के तीन के बीच में वृषभाचल पर्वतों सम्बन्धी तथा आर्य खण्डों में एक एक नगरी जिसमें तीर्थङ्करादि होते हैं उन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। २० ।।

अडिल्ल छन्द—जल चन्दन वसु धारि सु आठ गिणीजिये,
कंचन थाल संजोय शुद्ध मन कीजिये।
सोल खगाचल शीष भवन श्री जिनवरा,
पूजूं षोडश धाम गाय कर सिर धरा ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व दिश षोडस विदेह क्षेत्र मध्य षोडस विजया रध शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। पूर्णार्घम्।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की पूर्व दिश, सोलह क्षेत्र विदेह ।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला गुण लेह ।।

छन्द बेसरी—विजय मेरु तैं पूरब जाना, षोडस क्षेत्र विदेह लखाना ।
जिन षोडस के ही मधि भागा, रूपा षोडस लखि जागा ।।१।।
लम्बे पूरब पश्चिम जाई, देश बराबर हैं सुखदाई ।
चौड़े योजन जानि पचासा, तासें आधे उन्नत खासा ।।२।।
योजन दस दस लखि ले व्यासा, विद्याधर दो कटनी खासा ।
मूल भाग तैं ऊंच गणीजे, योजन दस भवि चित में दीजे ।।३।।
दक्षिण उत्तर द्वय द्वय खासा, योजन दस दस लखि ले व्यासा ।
विद्याधर द्वय कटनी मांही, नगर एक सौ दस शक नांही ।।४।।
तिस थल गिरि के व्यास लखावो, योजन बीस भव्य चित लाओ ।
तहां ते योजन दस फिर जावो, ऊंच दखन उत्तर मन लावो ।।५।।
कटनी दोय उसी तहां पावैं, व्यन्तर सुर के नगर बसावैं ।
तिस थल गिर के व्यास बखानूं, कटनी बिन योजन दस जानूं ।।६।।
तहां तैं योजन पांच ऊंचाई, गिर को शीस समान चढ़ाई ।
गिरण नवकूट शीस पर सोहैं, रूपामय छवि देखत मोहैं ।।७।।
पूर्व दिशा सिद्धकूट धरावे, आठ कूट व्यन्तर लखवावे ।
सिद्धकूट पर जिनवर गेहा, इन्द्र जजें शुचि खगधर नेहा ।।८।।
जल आदिक आठों सामग्री, निरखि निरखि जन मन है मोही ।
जिन गुण गावत बहु विस्तारा, बाजे बाजें विविध प्रकारा ।।९।।
जय जय शब्द करत मिलि सारे, जयवन्ते हो नाथ हमारे ।
इह विधि 'नेम' जिनेश्वर देवा, नमि निज शीस करे नित सेवा ।।१०।।

इस सेवा को फल मोहि दीजे, आठ करम दुख दूर करीजे।
बार बार मैं ये ही चाहूं, भव भव के सब दुःख नशाऊं ॥११॥

दोहा—मेरु विजय की पूर्व दिश, रूपाचल के शीष।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, भवन देख जगदीश ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पूर्व विदेह क्षेत्र सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। पूर्णार्घम्।

अडिल्ल छंद—मेरु विजय की पूर्व विदेहन में बसै।
सोलह भवन जिनेश खगाचल पैं लसै ॥
तिनके पाठक पढ़ें सुणें रुचि सों सदा।
ते पावें शिव थान तोड़ि चहुंगति फंदा ॥ इत्यशीर्वाद

विजय मेरु की दक्षिण दिसा तीन कुलाचल पूजा नं. ३०

स्थापना चौपाई—विजय मेरु सूं दक्षिण जाय, तीन कुलाचल पै जिनराय।
भवन तणी हम करत आह्वान, पूजन को त्रय बार बखान ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल शीस तीन श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्रयम सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधिकरणम्।

गीता छंद—पद्मद्रह लो नीर लेके कनक को झारी भरूं।
सिर नाय तुम गुण गाय जिनजी हरषि उर धारा करूं ॥
मेरु विजय की दक्षिण दिश में तीन कुलगिर सिर लसैं।
जिनराज मन्दिर तीन पूजन, तुरत भव भव अघ नसैं ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल शीस तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जलम्।

शीतल सुगंधित हेरि चंदन गेरि केशर सूं घसूं।
धरि कनक पात्र उठाय कर द्वय लेत ही भव तप नसूं ॥ मेरु विजय की···चंदनं

तन्दुल अखंडित बहुत उज्ज्वल, कांति विधु की परि हरैं।
जल धोय ताके कनक भाजन, पुञ्ज तुम गुण के धरैं ॥ मेरु विजय की···अक्षतं

कल्प तरु के फूल सुन्दर लेय तुम पद धरत हैं।
कामबाण निवार जिनवर अरज इह हम करत हैं॥ मेरू विजय की···पुष्पं
क्षुधा नासन नाम तुमरो जगत में जाहिर खरो।
नैवेद्य निर्मल भेट तुमरी धरत बाधा परिहरो॥ मेरू विजय की···नैवेद्यं
मोहांध अति ही छाय हमको, ज्ञान धन दीसै नहीं।
ताके निवारण के जु कारण, दीप ले मेटूं सही॥ मेरू विजय की···दीपं
सब कर्म पुञ्ज जलाय तुमने लियो शिवपूर जाय के।
इस हेतु धूप अनूप घट ले आनि हेत खिपाय के॥ मेरू विजय की···धूपं
वर मुक्तिफल दातार तुम ही, तीन जग में एक जी।
या हेत तुम पद भेट शुभ फल धरत लाय अनेक जी। मेरू विजय की···फलं
जल गंध आदि पुनीत आठों, कनक थाल धराय के।
जय शब्द कर द्वय हाथ सेती लेत ताहि उठाय के। मेरू विजय की···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

जय जय देव श्री अरहंत, तुम्हें हम वन्दन करते हैं।
वन्दन करते हैं तुम्हें हम वन्दन करते हैं॥ जय जय···
विजय मेरु की दक्षिण जाय, कुलाचल हिमवन है सुखदाय।
सीस पर ग्यारह कूट सुहाय, पूर्व में सिद्धकूट जिनराय॥
बाकी दस में सुर व्यन्तर नित पूजन करते हैं। जय जय···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के दक्षिण दिस सम्बन्धी तीन कुलाचलों में से प्रथम हिमवान गिरि पर ग्यारह कूटन में से पूर्व की ओर के सिद्धकूट में महाजिन मन्दिर तथा बाकी दस कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १॥

कुलाचल दूजा है, अभिराम महा हिमवान है ताको नाम।
कूट है आठ ऊपरी ठाम, पूर्व में सिद्धकूट जिन धाम॥
सात कूट में व्यन्तर सुर जित पाठ उचरते हैं। जय जय···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी तीन कुलाचलों में से दूसरे महा हिमवान गिरि पर आठ कूटन में से पूर्व की ओर के प्रथम सिद्धकूट में महा जिन मन्दिर तथा बाकी सात कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ २ ॥

तीसरा निषध कुचाचल जान, कूट है नो ऊपर उचतान ।
प्रथम में मुख्यश्री जिन थान, शेष में व्यन्तर देव मकान ॥
हम इन सब थल मांहि, यहीं से पूजन करते हैं । जय जय···

ॐ ह्रीं विजर मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धो तीन कुलाचलों में से तोसरे निषधगिरी पर नव कटों में से पूर्व की ओर के प्रथम सिद्धकूट में महा जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ३ ॥

पद्म द्रह हिमवन ऊपर जान, कमल पर श्री देवी के थान ।
तीन नदियां निकसी जु महान, सहायक नदी मिली हैं आन ॥
सब थल जिनवर भवन निकी हम पूजा करते हैं । जय जय···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी हिमवन पर्वत पर पदम नाम के तालाव से गंगा, सिंधु, रोहितास्या, तीन नदियाँ निकलीं, तथा तालाव के मध्य में कमल की पंखुड़ीयों पर श्रीदेवी के परिवार सहित, महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ४ ॥

महा हिमवन ऊपर महा पदम, कमल पर ह्री देवी का सदन ।
दोय नदियां तट जिनवर भवन, सहायक नदी सहित कर मनन ॥
भाव सहित सब थान प्रती हम वंदन करते हैं । जय जय···

ॐ ह्रों विजय मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी महा हिमवन पर्वत पर महा पदम नाम के तालाव से दोय नदि निकलों, तथा तालाव के मध्य से कमल की पंखुड़ियों पर ह्री देवी के परिवार सहित महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ५ ॥

निषध पर तिगंछ द्रह है सार, धृति देवी है मय परवार ।
दोय नदियां निकसी दो द्वार, सहायक नदियां बहु विस्तार ॥
सब थल श्री जिन मन्दिर की हम वंदन करते हैं । जय जय···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के दक्षिण दिसा सम्बन्धी निषध गिरी पर्वत पर तिगंछ नाम के तालाव से दोय नदी निकलीं, तथा तालाव के मध्य से कमल की पंखुड़ियों पर धृति देवो के परिवार सहित महल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ६ ॥

जघन मध्यम उत्तम त्रय जान, ये तीनों भोग भूमि पहिचान ।
नाभि गिर पर्वत चारों थान, समुद्र में सातों नदी मिलान ॥
दीप वेदिका थान, भवन प्रति वन्दन करते हैं । जय जय···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के दक्षिण दिसा तीन कुलाचल सम्बन्धी उत्तम, जघन, मध्यम योग भूमि तथा चार नाभि गिरी पर्वत सम्बन्धी तथा गंगादि सातों नदि सम्बन्धी व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ७ ॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की दक्षिण दिश, तीन कुलाचल शीस ।
जयमाला जिन भवन की, सुणो भव्य अघ खीस ॥

चौपाई—विजय मेरु दिश दक्षिण जाय, तीन कुलाचल लेहु लखाय ।
प्रथम कुलाचल है हिमवान, दतिय महा हिमवान बखान ॥१॥
तीजो निषधाचल भवि राख, लम्बे योजन चार जु लाख ।
जम्बू द्वीप कुलाचल तीन, तिन तै दुगुणो व्यास प्रवीण ॥२॥
शीस कूट सरिता दिक थान, द्विगुण नहीं तद्वत पहिचान ।
भोग भूमि तीनों की जाग, तिनके बीच लखो बड़ भाग ॥३॥
व्यास लम्बाई में लखि फेर, त्रिलोक सार में समझो हेर ।
और कथन सबही तहकीक, जम्बू द्वीप कुलाचल ठीक ॥४॥
सिद्धकूट में श्री जिन धाम, शेष कूट में व्यन्तर ठाम ।
जिह जिह थानक जिनवर गेह, ते सब बंदूं उर धरि नेह ॥५॥
श्री जिन वंदत नाशै पाप, बहुरि न व्यापे जग संताप ।
श्री जिन चरण कमल की सेव, करते हैं इन्द्रादिक देव ॥६॥
क्षीरोदधि सूं ल्यावे नीर, परम सुगंधित मलियागीर ।
मुक्ताफल के अक्षत जोय, कल्पतरु के फूल जुहोय ॥७॥

अमृत मय नैवेद्य लहाय, दीप रतनमय लेत बनाय ।
धूप अनूप सुगन्धित सार, कल्पतरु फल लेत विचार ।।८।।
इस विधि आठों दरब पुनीत, लेवत है उर धर बहु प्रीत ।
पूजत जिनवर गुण को गाय, नाचत हरषित तान लहाय ।।९।।
क्षण में भू पर क्षण आकाश, क्षण में लघु क्षण दीरघवास ।
क्षण में एक रू क्षण में अनेक, बहु विधि रूप रू बहुविधि भेष ।।१०।।
झानन झनन झनन झंकार, नूपुर शब्द लगे बहू प्यार ।
धृग धृग धृग धृग ध्वनि बहु होय, बजे मृदंग लखो भबि लोय ।।११।।
बहु विध बाजे बजत रसाल, सुरसूं मिलवा लागत तान ।
श्रवण सुनत उर उपजत चैन, देख्यां नाहि अघावे नैन ।।१२।।
तहां विराजे त्रिभुवन ईस, तिनकों "नेम" नमे जिन शीस ।
अरु इक अरज करे सुनि खास, मौको दीजे शिवपुर वास ।।१३।।

दोहा—विजय मेरु की दक्षिण दिश, तीन कुलाचल पाय ।
तिन पै श्री जिन भवन कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—विजय मेरु दिस दखिण कुलाचल तीनजी ।
तिनके श्री जिन गेह तीन गिण तीनजी ।।
तिन भवनन को पाठ सुणे अरु जो पढ़े ।
ते बसु बैरी जीति जाय शिवगढ़ चढ़े ।। इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र रूपाचल जिनभवस पूजा नं. ३१

स्थापना छन्द—मेरु विजय की दक्षिण दिश में, भरत क्षेत्र निहारियो।
मधि भाग ताकें रजत गिर सिर भवन जिन इक धारियो ।।

आह्वान ताकी करत, इस थल पूजने के कारणे।
मन वचन काय, लगाय चहुं गति भ्रमण भाव निवारणें ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल के शीष श्री जिन भवनाय नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल—गंगा नीर पुनीत, कनक झारी भरूं।
करते देत सु धार, जन्म मृत्यु हरूं ।।

विजय मेरु की दक्षिण, खगाचल जोय के।
श्री जिन मन्दिर, एक जजूं सुचि होय के ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नम। जलम्।

परम सुगन्धित तोय घिसूं, सु मिलायके।
भव तप नाशन काज लियो, सिर नायके ।। विजय मेरु···चन्दम्

उज्वल मधुर अखंड, सरल शुभ अक्षतं।
करते कंचन थाल, पुंज, गुण रक्षतं ।। विजय मेरु···अक्षतम्

कल्पतरु के फूल, मनोहर लायके।
कंचन थाल धराय, लिये सिर नायके ।। विजय मेरु···पुष्पम्

क्षुदा वेदनी रोघ, महा दुःख देत है।
ता कारण नैवेद्य, पुनीत जु लेत है ।। विजय मेरु···नैवेद्यं

निर्मल द्युत लो दीप कनक के थाल में।
धरि लीनों फिर नांहि फसूं जगजाल में ॥ विजय मेरु···दीपं

परम सुगंधित धूप अनूपम लेय के।
मन वच तन हरषाय शिखा घट खेयके ॥ विजय मेरु···धूपं

मोक्ष महाफल काज दयानिधि नाथ जी।
प्रासुक फल शुभ भेट धरूं ले हाथ जी ॥ विजय मेरु···फलं

जल चन्दन चरु फूल दीप फल अक्षतं।
धूप कनक धरि थाल अर्घ ले रक्षतं ॥ विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—विजय मेरु दक्षिण दिश जाय, पहला भरत क्षेत्र कहलाय।
ताके बीच रूप गिरि एक, नवकूटन युत रचनानेक ॥

सिद्धकूट पूरब के मांहि, वसु में व्यन्तर देव रहांहि।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, मैं यहां पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिशा में भरत क्षेत्र के बीच रूपाचल पर्वत पर नव कूटन में पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी आठों में व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १ ॥

दश योजन ऊपर है सोय, दक्षिण दिश की कटनी होय।
विद्याधर के नगर पचास, सब में जैन भवन हैं खास ॥

दूजी तरफा कटनि सोय, उत्तर दिशि की जानों सोय।
विद्याधर के नगर जो साठ, पूजन करूं बनाकर ठाठ ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिशा में भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल पर्वत पर दक्षिण उत्तर दोनों श्रेणियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

भू तें ऊपर योजन बीस, उभय तरफ मन्दिर जगदीश।
व्यन्तर थल में जिनवर गेह, पूज करूं धर उर में नेह ॥

रूपाचल पर सब थल जाय, रत्नत्रय युत सब मुनिराय ।
तिनके चरणनि अर्घ चढ़ाय, बीन बजाऊं अति हर्षाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर बोस योजन ऊपर दोनों श्रेणियों व्यन्तर स्थानकों सम्बन्धी श्री जिन मन्दिर तथा रत्नत्रय युक्त सकल श्री मुनीराज नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

अडिल्ल—विजय मेरु के भरत खगाचल की मही ।
खगधर व्यन्तर बास, शीष जिनवर सही ।।
नीरादिक ले आठ सकल थल कों जजूं ।
भव वन कूंचो देय, जाय शिव सुख सजूं ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत सर्व जिनालयस्थ विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की दक्षिण दिश रूपाचल जिन थान ।
जयमाला ता भवन की, सुणों भव्य दे कान ।।

छन्द पद्धड़ी—जय विजय मेरु दिश दक्षिणजाय ।
जय भरत क्षेत्र भवि मन हराय ।।
जय भरत क्षेत्र के मध्य भाग ।
लखि लेहु खगाचल की जु जाग ।।१।।
लखि ले लम्बाई चित्त आन ।
गिरा लाख च्यार योजन प्रमान ।।
गिर व्यास कूट कटनी जु आदि ।
लखि पूर्व कथन लीज्यो जु सादि ।।२।।
सिद्धकूट जिनेश्वर को मकान ।
नभ जाय शिखर लाग्यो महान ।।

छवि रजत वरण अद्भुत धराय ।
चहुं गिरद ध्वजा बहु विधि लसाय ।।३।।
जय प्रातिहार्य आठों निहार ।
जय कोट तीन चहुं गिरद कार ।।
त्रय द्वार चहुं दिशि जाणि लेय ।
पर अपर उत्तर अरु दक्षिणेय ।।४ ।।४।।
जय द्वार सर्व सोहैं अपार ।
त्रय पीठ थंभ मानस विचार ।।
दृग देखि मान गल जाय दूर ।
गुण थम्भ मांहि मानू जु पूर ।।५।।
जय लक्ष्मि सर्व इकट्ठी जु होय ।
तिस थान आय तिष्ठी जु जोय ।।
मंगल विभूति बहु भांति पाय ।
घट तूप धूप आदिक जु ध्याय ।।६।।
अब और कथन कहाँ लौं बखान ।
नहिं बनत बुद्धि थोरी लहान ।।
तिस थाल मांहि जिन बिम्ब जानि ।
शत एक आठ मन लेहु मानि ।।७।।
तिस थली सुरासुर सर्व आय ।
खगधर धनेन्द्र पूजन कराय ।।
तहं हीरण पुण्य धारी न जाय ।
बहु पुण्य उदय तब दरश पाय ।।८।।
उस थानक की महिमा महान ।
दृग देखति ही पातक टरान ।।

तातैं जु "नेम" चित उमग धारि ।
सिर नाय कहै अघ देहु हारि ।।६।।

दोहा--विजय मेरु की दक्षिण दिश, रूपाचल सिर जोय ।
अर्घ चढ़ाऊं भवन जिन, मन वच तन शुचि होय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु भरत क्षैत्र रूपाचल पर भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।

छन्द--विजय मेरु की दक्षिण विचार ।
रूपाचल जिन भवन निहार ।।
ताको पाठ सुणैं अरु पढ़ैं ।
ते नर मुक्ति महल पर चढ़ैं ।। इत्यार्शीवाद

विजय मेरु की दक्षिण दिसा भरत क्षैत्र में तीन चौबीसी पूजा नं. ३२

स्थापना छन्द--विजय मेरु की दक्षिण दिश में, भरत क्षैत्र मधि आरज खंड ।
तामें तीन चौबीसी वरतैं, मिथ्यामत के करते खण्ड ।।
तिनकी हम आह्वानन करते, इस थल पूजन कारण आय ।
मन वच तन त्रय योग मिलाके, तिनही के पद शीष वनाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षैत्र मध्य आर्य खण्ड में तीन चौविसी के ७२ जिनेन्द्राय नमः । अत्रावतरा वतर सवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्रमम स्थापनं । सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीता छन्द--पंचम उदधि को परम, शीतल मधुर नीर लहाय कें ।
भरि हेम झारी हाथ गहि कैं, धारि दे सिर नायकैं ।।
मेरु विजय के भरत क्षैत्र जु, बीच आरज खंड जी ।
तीन चौबिसि पूजतां भग, जाय आठों बंड जी ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिश भवत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्यत वर्तमान तीनों चौविसी के ७२ श्री जिनेद्रेभ्यो नमः । जलम् ।

निर्मल सुगन्धित मलयगिर, मिलवाय चन्दन बाबनूं ।
घसि कनक जाम धराय भविजन, हाथ ले सिर नावनूं ।। मेरु विजय···चन्दम्
तन्दुल अखंडित सरस सुन्दर, चन्द्र की द्युति को हरैं ।
जल धोय तुम गुण पुंज धरतो, अखय पद प्राप्ति करैं ।। मेरु विजय···अक्षतम्
प्रासुक सुगन्धित कल्पतरु के, फूल बहु विधि लाईये ।
धरि कनक भाजन हाथ लेता, काम बाण नसाईये ।। मेरु विजय···पुष्पम्
विधि पूर्व रीति बणाय सुन्दर, बहुत विधि पकवान जी ।
धरि कनक थाल उठाय करु, तैं लेत भूख मिटावजी ।। मेरु विजय···नैवेद्यं
तम मोह भारी दुःखकारी, बुद्धि सारी हरत है ।
ले थाल निर्मल दीप यातैं, भेट तुम पद धरत है ।। मेरु विजय···दीपं
ले अगर चन्दन तगर आदिक, कूट धूप बनाय जी ।
घट अग्नि मांही खेवतो, वसु कर्म देय जलाय जी ।। मेरु विजय···धूपं
कल्प द्रुम के फल मनोहर, विविध प्रासुक लाय कै ।
अशुभ फल के मेटने को, कनक थाल धराय कै ।।विजय मेरु···फलं
निर्मल मनोहर नीर आदिक, आठ फल लौं लीजिये ।
कंचन रकेबी मांहि धरि के, भाव शुद्ध करीजिये ।।
मेरु विजय के भरत क्षैत्र जु, बीचि आरज खंड जी ।
तीन चौविसि पूजतां, भग जाय आठों बण्ड जी ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के भरत क्षेत्र में भूत, भविष्यत, वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी के सकल जिनेद्रेभ्यो नमः ।। अर्घम् ।।

प्रत्येक अर्घ

तर्ज—हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधान जी···

जय मेरु विजय की सुजाइ दाहिनी दिसा ।
जय क्षैत्र भरत के सु मांहि रूप गिर बसा ।।

जय सरित गंग सिन्धु तहां नित्य बहै है।
जय इनके कारणें ही छैः सुखंड भये हैं।।
जय पांच है म्येक्ष एक आर्य जानिये।
जय आर्य खण्ड में चतुर्थ काल आनिये।।
जय होइ तीन चौविसी सु तीन काल की।
जय भूत भावि वर्तमान है जु हाल की।। पुष्पांजली

जब भूत में यहां दुःखम सुखम काल चला था।
चौबीस श्री जिनेन्द्र तब हि किया भला था।।
तिनि ही की सु ले आठ द्रव्य चरण कमल की।
पूजन करूं में आस धारि मोक्ष महल की।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिशा में भरत क्षेत्र सम्बन्धीं भूतकाल की चौबीसी क्रम से १. रत्न प्रभ जिनेन्द्राय २. अजित नाथ जिनेन्द्राय ३. संभवनाथ जिनेन्द्राय ४. अकलंक जिनेन्द्राय ५. चन्द्र स्वामी जिनेन्द्राय ६. शुभंकर जिनेन्द्राय ७. तत्वनाथ जिनेन्द्राय ८. सुन्दरनाथ जिनेन्द्राय ९. मुरन्दर जिनेन्द्राय १०. स्वामीनाथ जिनेन्द्राय ११. देवदत्त जिनेन्द्राय १२. वासदत्त जिनेन्द्राय १३. श्रयांस नाथ जिनेन्द्राय १४. विश्वरूप जिनेन्द्राय १५. तपस्तेज जिनेन्द्राय १६. प्रतिबोध जिनेन्द्राय १७. सिद्धार्थ जिनेन्द्राय १८. अमल जिनेन्द्राय १९. देवेन्द्र जिनेन्द्राय २०. प्रवर जिनेन्द्राय २१. विश्वसेन जिनेन्द्राय २२. मेघनन्द जिनेन्द्राय २३. सर्वज्ञ जिनेन्द्राय एवं २४. संयम जिनेन्द्राय नमः। अर्घम्।। १ ।।

फिरि वर्तमान में भी, यही काल पाय कर।
चौवीस जिन्होंने लिया, अवतार आय कर।।
इनके भी चरण कमल की, में वन्दना करूं।
वसु कर्म शत्रुओं की, तभी खंडना करूं।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिसा में भरत क्षेत्र सम्बन्धी वर्तमान को चौबीसी क्रम से १. युगादि जिनेन्द्राय २. सिद्धांत जिनेन्द्राय ३. महेश नाथ जिनेन्द्राय ४. परमारथ जिनेन्द्राय ५. समुद्र

जिनेन्द्राय ६. भूधर जिनेन्द्राय ७. उद्योत जिनेन्द्राय ८. आरज जिनेन्द्राय ९. अभय जिनेन्द्राय १०. अकंप जिनेन्द्राय ११. पद्म स्वामी जिनेन्द्राय १२. परमाक्षन्द जिनेन्द्राय १३. प्रियंकर जिनेन्द्राय १४. सुकृत जिनेन्द्राय १५. भद्रेश्वर जिनेन्द्राय १६. मुनिचन्द्र जिनेन्द्राय १७. पंच मुष्टि जिनेन्द्राय १८. गांगिक जिनेन्द्राय १९. त्रिमुष्टि जिनेन्द्राय २०. गणनाथ जिनेन्द्रनाय २१. सर्वाङ्ग जिनेन्द्राय २२. ब्रह्मेन्द्र जिनेन्द्राय २३. इन्द्रदत्त जिनेन्द्राय एवं २४. जिनपति जिनेन्द्राय नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

फिर भी जु इसी काल में चौविसी होइंगे।
उपदेस दे के मोक्ष का मारग संजोइंगे॥
उनकी भी चरण कमल की मैं अर्चना करि के।
अक्षीण सुक्ख पाऊं शिवा नारि को वरि के॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दक्षिण दिसा में भरत क्षेत्र सम्बन्धी भविष्य काल की चौवीसी क्रम से १. सिद्धनाथ जिन्द्राय २. सम्यक नाथ जिनेन्द्राय ३. अमल जिनेन्द्राय ४. संप्रति नाथाय ५. सर्व स्वामी जिनेन्द्राय ६. नमिनाथ जिनेन्द्राय ७. वसिष्ठ जिनेन्द्राय ८. अपरनाथ जिनेन्द्राय ९. ब्रह्म शांति जिनेन्द्राय १०. पूर्वनाथ जिनेन्द्राय ११. अकामुक नाथ जिनेन्द्राय १२. ध्यान नाथ जिनेन्द्राय १३. कल्पतरु जिनेन्द्राय १४. संवर जिनेन्द्राद १५. स्वथ जिनेत्द्राय १६. आनन्द जिनेन्द्राय १७. रविचन्द्र जिनेन्द्राय १८. प्रभंजन जिनेन्द्राय १९. सुनन्द जिनेन्द्राय २०. सुनक जिनेन्द्राय २१. सुकर्म जिनेन्द्राय २२. अमल जिनेन्द्राय २३. पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय एवं २४. सास्वत जिनेन्द्राय नमः। अर्घम् ॥ ३ ॥

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

दोहा—विजय मेरु के भरत में, तीन चौविसी पाय।
पूजूं तिनके चरण युग, ले जलादि गुण गाय॥

जयमाला

चौपाई—विजय मेरु की भरत बखान, तिन चौवीसी तिस थल मान।
तिनकी भाखूं भवि जयमाल, सुनत पढ़त नाशे अघ जाल॥

पद्धरी छन्द—जय दीप धातकी पूर्व गाय, जय विजय मेरु तै दखिण जाय।
जय भरत क्षेत्र आरज निहार, जय तीन चौविसी ले विचार॥१॥

जय रत्न प्रभ त्रय रतन पूर, जय अमित जिनेश्वर कर्मचूर ।
जय संभव भव दुःख हरन हार, अकलंक जिनेश्वर गुण भंडार ॥२॥
बन्दूं जिनेश्वरा चन्द्र स्वामि, जय जय हि शुभंकर जगत नामि ।
जय तत्व नाथ भव सिंधु नाथ, जय सुन्दर नाथ अनाथ नाथ ॥३॥
जय जय हि पुरंदर जगतराय, जय स्वामिनाथ पद शीस नाय ।
जय देवदत्त सुर नमत शीस, बन्दू सुवास सब दत्त ईस ॥४॥
श्रेयांस जिनेश्वर जगत भूप, जय विश्व रूप राजत अनूप ।
तपतेज नमूं भव तप निवार, प्रतिबोध करत शिव सुख अपार ॥५॥
जय जय, सिद्धारथ धरमराज, जय संयम जिन तिहुं जगत काज ।
जय अमल जिनेश्वर मिष्ट वैन, देवेन्द्र नमूं बिन काज सैन ॥६॥
जय प्रवर जिनेश्वर अघ निवार, जय विश्वसैन हनि कर्म भार ।
जय मेघनन्द आनन्दकार, सर्वज्ञ नमूं सिर बार-बार ॥७॥
वंदू युगादि कर जोड़ि शीस, सिद्धांत नमत अघ होय खीस ।
परमारथ के बहु गुण गरिष्ठ, वन्दू महेश जिन वचन मिष्ठ ॥८॥
जय जय हि समुद्दर शुद्ध भाव, जय भूधर भवदधि तरण हार ।
जय जिन उद्योत अघदेत टारि, अरजव आर्जव सुभ भाव धारि ॥९॥
जय अभय अभयपद देनहार, जय जय अकम्प वंदू विचार ।
जय पद्म स्वामी भवि कमल भान, जय परमानन्द भव थिति घटान ॥१०॥
जयजयहि प्रियंकर प्रिय स्वरूप, जय सुकृत जिनपद नमत भूप ।
जय भद्रेश्वर शिव मग विकास, मुनिचन्द्र हार भवि जननत्रास ॥११॥
जय पंच मुष्टि नाशे प्रपंच, त्रिमुष्टि नमत अघ हनन रंच ॥
गांगिक जिनेश्वर गुण समंद, गणनाथ हरै वसु कर्म फंद ॥१२॥
सर्वाङ्ग सर्व ज्ञायक निहार, ब्रह्मेन्द्र हुये तिहुं जगत पार ।
जय इन्द्रदत्त पद नमत इन्द्र जय जय जनपति जिन धर्मचन्द्र ॥१३॥

जय सिद्धनाथ सब सिद्धकार, सम्यक जु नाथ भव दुःख निवार ।
जिनेन्द्र नाथ गुण अगम धार, संप्रति जिनवर कुगती निवार ।।१५।।
जय सर्व स्वामिगत राग रोष, नमिनाथ दिये भविजन जु तोष ।
वन्दू वसिष्ट त्रयकाल शीस, जय अपरनाथ वन्दू जगीस ।।१६।।
जय ब्रह्म शांति मद मोहचूर, जय पूर्वनाथ जिन सुगुणपूर ।
जय जयहि अकामुक नाथ ईस, जय ध्याननाथ रिपु आठ खीस ।।१७।।
जय कल्प जिनेश्वर कल्प वृक्ष, जय संवर संवर देन दक्ष ।
जय स्वस्थ जिवेश्वर शांतिकार, जय आनंद जिन आनंदकार ।।१८।।
रविचन्द्र जिनेश्वर अमल कांति, जय जयहि प्रभंजन करत शांति ।
वन्दू सुनन्दि गुण गाय गाय, जय सुनक जमु सिर नाय नाय ।।१९।।
सेवूं सुकर्म जिन चरण दोय, जय अमल रखूं उर मांहि तोय ।
जय पार्श्वनाथ भव जलधि तार, शिव थान देत सास्वत निहार ।।२०।।
तुम चरण कमल सिर 'नेमि' नाय, कर जोड़ अरज इतनी कराय ।
गति चारतणों फिरबो नशाय, शिव महल राह देवो बताय ।।२१।।

दोहा—इस विधि बिजय जु मेरु के, भरत क्षेत्र मधि गाय ।
तीन चौबीसी के चरण, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु के भरत क्षेत्र में भूत, भविष्यत वर्तमाम काल सम्बन्धी तीन चौबीसी की सकल जिनेभ्यो नमः ।। पूर्णार्घम् ।।

अडिल्ल—विजय मेरु के भरत क्षेत्र आरज मही,
चौबीसी जिनराज तणी तिन जु कही ।
तिनको भविजन पाठ करे विधि रीति सौं,
ते पावे निर्वाण बचैं जग भीत सौं ।। इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु की पश्चिम दिशि आठ वक्षार गिरि पूजा नं. ३३

स्थापना चौपया वृत छंद—विजय मेरु की पश्चिम दिशि में सोलह देश विदेह बसैं।
तिनके सीमाकार कनकमय आठ अचल वक्षार लसैं॥
तिनके ऊपर भवन आठ जिन तिनको हम आह्वान करैं।
इस थल तिनकी पूजा करके, शिवरमणी को चित हरैं॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम विदेह में आठ वक्षार गिर शोस श्री जिन भवन अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल छंद—ले सीतोदा नीर, कनक भरि झारिका।
मन वच तन सुध ठाय करूं तसु धारिका॥
विजय मेरु की अपर विदेहन में बसैं।
जजूं जिनालय आठ वक्षारन पै लसैं॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम विदेहन में आठ वक्षार गिर शोस आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

चन्दन लेत घिसाय, रलाय कपूर जी।
केशर मांहि मिलात, ताप भव दूर जी॥ विजय मेरु···चन्दनम्

तन्दुल उज्ज्वल हेरि अखंडित लीजिये।
कंचन थाल मंझार पुंज गुण दीजिये॥ विजय मेरु···अक्षतम्

भांति भांति के फूल जु प्रासुक जोयकैं।
लीने कञ्चन थाल शुद्ध चित्त होयकैं॥ विजय मेरु···पुष्पम्

विधि पूर्वक नैवेद्य थाल कञ्चन धरूं।
तुम पद भेटत नाथ भुख बाधा हरूं॥ विजय मेरु···नैवेद्यम्

रत्न प्रदीपक थाल भेंट तुम पद धरूं।
हरो मिथ्यातम आप अरज इतनी करूं॥ विजय मेरु···दीपम्

अष्ट करम क्षयकार, देव जिनराज जी ।
धूप शिखा घट मांहि, खेय इस काज जी ।। विजय मेरु···धूपम्
श्रीफल आदि अनेक, लिये शुभ भाव सूं ।
शिव थल तुम सूं नाथ, मंगू इस दाँव सू ।। विजय मेरु···फलम्
नीरादिक ले आठ, ठाठ बहु विधि करूं ।
तुम गुण को करि पाठ, आठ दुठ परिहरूं ।। विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

अडिल्ल—विजय मेरु की अपर विदेहा जानिये ।
भद्रशाल सन्निध वक्षारा मानिये ।।
तीन कूट पर देव देवियां बसत हैं ।
नदी निकट पर सिद्धकूट सुर जजत हैं ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में प्रथम श्रद्धावान वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

विजटा वान दुतिय वक्षारा खास है ।
ऋषि गण विचरण करते धरि हुल्लास है ।। तीन कूट पर···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में द्वितीय विजट वान वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

आसो विस वक्षार तीसरा शिवकरण ।
सुर गण के प्रासाद मनोहर मन हरण ।। तीन कूट पर···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में तृतीय आसीविस वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

शुभ वक्षार सुखा वह चौथा जानिये।
चार कूट हैं मन को भाते मानिये॥
तीन कूट पर देव देवियां बसत है।
नदी निकट पर सिद्ध कूट सुर जजत है॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु को पश्चिम दिशा में चतुर्थ सुखा वह वक्षार गिरि] पर पूरव में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ४॥

दीप धात की अपर विदेह प्रधान है।
भूतारण्य निकट वक्षार महान है॥
पूरब में सिद्धकूट महान बसात है।
पूजन करें देव खग आन लुभात है॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की दिशा में पंचम चंद्रमाल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ५॥

सूर्य माल छट्टा वक्षार मनोहरा।
तामें सुर नत जिन मन्दिर है खरा॥ पूरब में···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा मे षष्टम सूर्य माल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिनमन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अघम्॥ ६॥

नागमाल सप्तम वक्षार निहारिये।
भव विजई श्रीजिनवर धाम विचारिये॥ पूरब में···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में सप्तम नागमाल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यतन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ७॥

देवमाल अष्टम वक्षार विधात है।
ता पर मदन जई जिनगेह सुहात है॥ पूरब में···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में अष्टम देवमाल वक्षार गिरि पर पूरब में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन कूटों में व्यन्तर थानकों में जिन मन्दिरों सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

जय मेरु विजय सू अपर थान, सुर व्यन्तर के जहां हों विमान ।
तहां सकल जिनालय नादि नन्त, मे पूजि करूं संसार अन्त ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु को पश्चिम दिशा में व्यन्तर देवों के स्थानकों में जहाँ जहाँ भी जिनालय हों तहां तहां सकल श्री जिन भवन सम्बन्धी जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

जय जय श्री रिषि भानन जिनेश, जय नंत वीर्य काटत कलेश ।
जे भूतकाल में भये और, भावी में होंगे अपर ठौर ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में रिषिभानन तथा अनन्त वीर्य दो तीर्थङ्कर तथा वह जो पहले हुये हैं, आगे होंवेंगे तिन सकल केवलीयों को भाव पूर्वक समष्कार हो तथा विभंगादि छे नदी क्रम से १. क्षारोदा २. सीतोदा ३. श्रोता वाहिनी ४. गंध मालिनी ५. फेन मालिनी ६. उर्मि मालिनी सम्बन्धी व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १० ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की अपर दिश, सोलह देश विदेह ।
वसुवक्षारा भवन जिन, जयमाला सुणि लेय ।।

पद्धड़ी छन्द—जय विजय मेरु दिश अपर जाव, जय षोडश देश विदेह पाय ।
जय तिनके सीमाकार जान, जय आठ अचल वक्षार मान ।।१।।
जय तिनके सिर जिन भवन आठ, जय पूर्व कथन भाव्यो जु पाठ ।
जम्बू जु द्वीपवत सर्व जान, गिर नाम देश लेवो पिछान ।।२।।
लखि व्यास लम्बाई कूट आदि, गिण विजय मेरु दिश पूर्व सादि ।
सिद्धकूट जिनालय इन्द्र आय, सुर संघ लाय पूजा रचाय ।।३।।
जय खगधर मुनिवर आय आय, जिनराज चरण उर धारि लाय ।
जय शब्द करत हर्षत अपार, पुनि नृत्य करत गति धरत सार ।।४।।

वसु द्रव्य लिये अति ही पुनीत, जिनराज चरण उर धारि प्रीत ।
जिनराज चरण यश को बखान, ध्वनि मधुर-मधुर लागत सुआन ।।५।।
जय तीन छत्र धारी जिनेश, पद नमत इन्द्र आदिक "नरेश" ।
तुम गुण अनन्त शोभा अपार, वसु कर्म कुटिल दीने विडार ।।६।।
जय मुक्ति वधू के कंथ आप, जग जीवन के तुम हो अबाध ।
जय दयावंत सब जानहार, जय शूर वीर अघ हरण हार ।।८।।
नमि 'नेम' तुम्हारे चरण शीस, इक अरज करे सुणियो जगीस ।
वसु कर्म महा दुःख देत मोहि, हनिदेहु नाथ यह कहत तोहि ।।९।।

दोहा—विजय मेरु की अपर दिश, विर वक्षार जु आठ ।
अर्घ चढ़ावो, भव जिन, भविजन कर बहु ठाठ ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम विदेहन से आठ वक्षार गिर शीस आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।
जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपाई—विजय मेरु दिश अपर निहार, आठ जिनालय गिर वक्षार ।
तिनको पाठ सुने, अरु करे, ते नर चहुंगति दुःख परिहरै ।। इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु की पश्चिम दिशा सोलह रूपाचल
श्री जिनभवन पूजा नं. ३४

स्थापना गीता छंद—जय विजय मेरु विदेह, पश्चिम मध्य भाग विराजतै ।
सोलह खगाचल पै जिनेश्वर, भवन सोलह साजतै ।।
तिन भवन की हम पूजने को, करत इहां आह्वानना ।
सिर नाय तिनके चरण, युग कूं चार गति को दुखहना ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्रन मध्य सोलह रूपाचल शीष सोलह जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल पंचमेरु पूजन—निर्मल गंगा नीर बहाय, कंचन झारी हाथ उठाय।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।।
विजय मेरु की अपर विदेह, षोडश रूपाचल जिनगेह।
जजूं धरि नेह, मन बच काय जजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्रन मध्य रूपाचल शीष सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जनम जरा मृत्यु नासनं जलम्।

मलयागिर कूं लेत घसाय, कंचन भाजन से धरवाय।
जजूं धरि नेह, मन बच काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···चंदनं

तन्दुल उज्जवल जल तैं धोय, पुंज धरूं तुम गुण को जोय।
जजूं धरि नेह, मन वच काय, जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···अक्षतं

प्रासुक फूल सुगंध अपार, लेता काम विथा को टार।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···पुष्पं

नेनज निर्मल थाल धराय, तुम पद भेटत भूख नशाय।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। विजग मेरु···नैवेद्यं

मणि मय दीपक कंचन थाल, मोह नसावो नावूं भाल।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···दीपं

धूप अनूपम लेय बनाय, कर्म जले घट अग्नि खिसाय।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···धूपं

फल बहु उत्तम लीने जोय, तुम पद भेंटत शिवफल होय।
जजूं धरि नेह मन, वच काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···फलम्

नीरादिक वसु थाल धराय, अर्घ लियो मन अति हर्षाय।
जजूं धरि नेह मन, वच, काय जजूं धरि नेह ।। विजय मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

सोरठा—पद्मा देश बिदेह, ताहु में रजत गिरीक है ।
उस पर श्री जिन गेह, पूजत पाप नहीं रहै ।।

पद्मा आरज खंड, अश्वपुरी नगरी कही ।
ताके जन वहां जाय, जैन भवन पूजें सदा ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिसा में पदमा देस मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन यन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नम :। अर्घम् ।। १ ।।

देश सु पद्मा मांहि, रजताचल मन भावना ।
उस पर जिनवर धाम, पूजत पाप नशावना ।।

आरज खंड सुमध्य, सिंहपुरी नगरी कही । ताके जन वहां·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में सुपद्मा देश मध्य रूपाचल गिरी पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

महा पद्मदै देश, रूपाचल ता मध्य में ।
उसके श्री जिन वेस, जजते पाप नशा वही ।।

आरज खंड सुमध्य, महापुरी नगरी कही । ताके छन वहां·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ महा पद्मा देश मध्य विजयार्ध पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनायस्थ तथा आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

पद्म कावती देश, रूपाचल अभिराम है ।
सिद्धकूट के मांहि, पूजत हूं जिन धाम है ।।

आरज खंड सु मध्य, विजयापुरि नगरी कहीं । ताके जन वहाँ·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में पद्मकावती देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।४।।

संखा देश विदेह विजयारध गिरि सोभना ।
सिद्धकूट जिन गेह, पूजत ही सुख होत है ।।
आरज खंड सुमध्य, सुभ अरजा नगरी कही । ताके जन वहां·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में शंखादेश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

नलिना देश विदेह, रूपाचल मन भावना ।
तापर जिनवर गेह, पूजत शोक नशात है ।।
आरज खंड सुमध्य, शुभ विरजा नगरी कही । ताके जन वहां·····

ॐ ह्रीं दिजय मेरु की पश्चिम दिशा में नलिना देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ६ ।।

कुमुदा देश महान रूपाचल अति सोहता ।
तापर श्री जिन थान, पूजत ही सुख ऊपजै ।।
आरज खंड सुमध्य, कही अशोक पुरी सुहै । ताके जन वहां·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में से कुमुदा देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

सरिता देश महान, रूपाचल वर जानिये ।
ताके जिन गृह आन, जिन पद पूजन ठानिये ।।
आरज खंड सुमध्य, वीतशोक नगरी कही । ताके जन वहां·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में सरिता देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

चाल विजयानी—वप्रा मधिजी रजत गिरी मन भावना ।
सिद्ध कूट में जो जैन भवन अति पावना ।।
आरज खंड में, विजयापुरी सुहावनी ।
तसु जन सब जी, पूज करें जिन धाम की ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में वप्रा देस मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अघम् ।। ९ ।।

गिरि विजय सु जी, अपर विदेह निहारिये ।
रूपाचल जी, देस सु वप्रा धारिये ॥
आरज खंड में, वैजयन्त पुरि सोहनी ।
तसु जन सब जी, पूज करें जिन धाम की ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में सुवप्रा देस मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १० ॥

गिरि विजय सु जी, अपर विदेह बिचारिये ।
महावप्राजी, मध्य रूप गिरि धारिये ॥
आरज खंड में, नगर जयन्ती सोहनी । तसु जन ····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में महावप्रा देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों पर व्यन्तर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ ११ ॥

द्वादस वां जी, देश वप्र कावति कहा ।
ताके मधिजी, रूपाचल मन हर रहा ॥
आरज खंड में, अपराजित पुरि सोहनी । तसु जन·····

ॐ ह्रीं विजर मेरु की पश्चिम दिशा में वप्रीकावती देश मध्य रूपाचल गिरी पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १२ ॥

है गंधाजी तेरम देश सुहावनः ।
ताके मधिजी, रूपाचल मन भावना ॥
आरज खंड में, चक्रपुरी अति सोहनी । तसु जन·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में गंधा देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १३ ॥

चौदहवां जी देस सुगंधा सोभता ।
ताके मधिजी रूपाचल मन मोहता ॥
आरज खंड में, खड़गापुरी सुहावनी । तसु जन·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में सुगंधा देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ॥ १४ ॥

पन्द्रहवां जी, देस गंधिला जानिये।
ताके मधिजी, रूपाचल सु पिछानिये॥
आरज खंड में नगर अयोध्या सोहनी।
तसु जन सब जी, पूज करे जिन धाम की॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में गंधीला देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १५॥

सोलहवां जो देस, गंध मालिनि कहा।
ताके मधिजी, रूपाचल सुन्दर वहां॥
आरज खंड में, नगर अवध्या सोहनी। तसु जन.....

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में गंधमालिनि देश मध्य रूपाचल गिरि पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १६॥

चौपाई—योजन दस ऊपर खग जान, दक्षिण उत्तर कटनी जान।
फिर दस ऊपर व्यन्तर थान, सब थल पूजूं जिन भगवान॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम में सोलह देश सम्बन्धी सोलह रूपाचल पर्वतों पर दस योजन ऊंचाई पर दक्षिण उत्तर दोनों कटनीनियों में विद्याधरों के एक सो दस नगर सम्बन्धी तथा बोस योजन ऊंचाई पर दोनों कटनीयों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १७॥

मूल भाग नीलाचल सोय, रक्ता रक्तोदा नदि दोय।
आन मिली सीतोदा सोय, आठ देश की सोलह होय॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में आठ देश के मध्य रक्त रक्तोदा नदी नीलाचल की मूल भाग से निकलकर रूपाचलों की दोनों गुफाओं में होकर सीतोदा में मिली तथा दो लाख चौवीस हजार इनकी सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ १८॥

मूल भाग निषधाचल सोय, गंगा सिन्धु नदियां दोय।
आन मिली सीतोदा सोय, आठ देश की सोलह होय॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिशा में आठ देश के मध्य गंगा, सिन्धु दोय नदी निषधाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचलों की दोनों गुफाओं में होकर सीतोदा में मिली, तथा दो लाख चौविस हजार इन दोनों की सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिनभवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १६ ॥

म्लेक्ष खंड के बीच निहार, वृषभाचल कंचन मय सार।
आर्य खंड में नगरी सार, तीर्थङ्कर उपजे गुण धार।,

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा के सोलह देशों के अस्सी म्लेक्ष खण्डों में से उत्तर को तरफ के तीन के बीच वाले खण्ड में वृषभाचल पर्वत सम्बन्धी तथा सोलह देशों की सोलह प्रमुख नगरीयों सम्बन्धी व्यन्तर थानक में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ २० ॥

जाप :- ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की अपर दिश, सोलह क्षेत्र विदेह।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला सुणि लेह ॥

अडिल्ल-विजय मेरु की अपर दिशा गिण लीजियो, षोडस क्षेत्र विदेह मध्य चित्त दीजियो।
सोलह ही वैताड लसैं मन भावना, रूपामय छवि देत, भव्य उर लावना ॥१॥

जैसी रचना पूर्व विदेहन को कही, तैसी रचना सर्व इहां जानौ सही।
तैसे ही सिद्धकूट विषैं जिन थान है, षोडश लीजो जानि कथा परमान है ॥२॥

पूजन श्री जिन धाम सुरादिक आत है, अष्ट द्रव्य हरषाय लेय गुण गात है।
तुम ही जिनवर देव तरण तारण सही, तुम ही वसुधा जाय आठमी ले लही ॥३॥

गर्भादिक कल्याण तुम्हारे होत जी, भविजनकूं भवसिन्धु तिरण तुम पोत जी।
मिथ्या रजनी तिमिर हरन तुम भानुजी, भव संतति को तोर देत शिवथान जी ॥४॥

जय जय केवल ज्ञान, प्रकाशक ईश जी, अष्ट करम कूं पीसि भये जगदीश जी।
ज्ञायक सकल पदार्थ धरम परकाश जी, जय जय जग नर नाथ भये सुखधाम जी ॥५॥

जयवन्ते तिहुं काल रहो, जिनराय जी, तुम पद कर द्वय जोरि लेय शिवनार जी ।
तातें मैं कर जोरि प्रभु केवल चहूं, दीजे दीनदयाल लेय फिर थिर रहूं ॥६॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की पश्चिम दिश षोडश विजयारध सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । पूर्णार्घम् ।

दोहा—इन सोलह जिन भवन को, जो पूजे मन लाय ।
सो शिवपुर में जाय कर, निश्चय मौज उड़ाय ॥ इत्याशीर्वाद

श्री विजय मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल पूजा नं. ३५

स्थापना अडिल्ल—विजय मेरु की उत्तर दिश चित्त दीजियो ।
तीन कुलाछल शीस भवन जिन कीजियो ॥
तिन भवनन की इहां जु करत आह्वानना ।
पूजन करि सिर नाय कर्म रिपु को हना ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश नील रुक्मी शिखरी कुलाचल पै श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणम् ।

चौपया वृत—सीता, सरिता नीर मधुरता, बहु शीतलता गुण धारे ।
कंचन रंगा भरि ले भृंगा, मन कर चंगा दे ढारे ॥
मेरु विजय की उत्तर दिश में, तीन कुलाचल शोस नसैं ।
तीन जिनेश्वर मंदिर पूजत, तीन लोक धुति दूर नसैं ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल शीस तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् ।

मलयागिर केसर मिलवा कर, घन पुट देकर खूब घसूं ।
कनक कटोरी दो कर जोड़ी, लेके भव आताप नसूं ॥ मेरु विजय ···चन्दनम्

तन्दुल सरस अखंडित सुन्दर, ले कंचन के थाल भरूं ।
अक्षय पद दाता तुम दीखें, ताते तुम गुण पुंज धरूं ॥ मेरु विजय ···अक्षतम्

कमल केतकी आदि मनोहर, ले प्रासुक बहु फूल धरूं।
कामबाण दुःख नाशन काजे, हाथ जोड़ तुम पाय परूं॥ मेरु विजय···पुष्पम्

बहु विधि नेवज विधि सूं, करके ले कंचन के थाल खरो।
मोकूं भूख सतावे जिनजी ताकूं, तुम अब बेग हरो॥ मेरु विजय···नैवेद्यम्

मोह तिमिर के नाश करंता, तिहुं जग में तुम एक सही।
तातें निर्मल दीप लेयकैं, तुम पद भेटन चाह भई॥ मेरु विजय···दीपम्

अष्ट करम को जालि जिनेश्वर, तुमने शिवतिय जाय वरी।
तातें निर्मल धूप बनाकर, पावक घट के मांहि धरी॥ मेरु विजय···धूपम्

मोक्ष महाफल दायक तुम ही, ज्ञायक तिहुं जग जानि परे।
तातें उत्तम फल बहु लेके, थाल कनक शुभ भेट धरे॥ मेरु विजय···फलम्

चंदन चांवल फूल नीर, चरु दीप धूप फल थाल भरे।
अर्घ बणावत तुम गुण गावत, शीश नवावत हर्ष भरैं॥ मेरु विजय···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

तर्ज—झुमका गिर गयो रे बरेली के ·····

विजय मेरु की उत्तर दिस में तीन कुलाचल राजे हैं।
नील रुक्मि सिखरी कहलाते रचना अद्भुत छाजे हैं॥
तीनों परवत पर अट्ठाइस जिनवर थान की।
पूजा कर लो रे अरहत सिद्ध भगवान की॥
भक्ति कर लो रे श्री वीतराग विज्ञान की।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिस में नीलादिक तीन कुलाचल पर पूर्व दिशा सम्बन्धी सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी कूटों पर व्यन्तर सुर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥१॥

नीलाचल है नाम कुलाचल नव है कूट मनोहारी।
वसु में रहते देव देवियां इक में जैन भवन भारी॥
रतन मई है रे मूरती श्री भगवान की। पूजा कर लो रे ·

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिस नीलाचल पर नव कूटों में पूर्व दिशा सम्बन्धी सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठों कूटों पर व्यन्तर सुर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। २ ।।

आठ कूट दूजे परवत पर पहिला मुख्य कहाता है।
सात मांहि सुर पूजन करते चांदी सम दरसाता है ।।
क्या छवि वरणे रे इस रुक्मि गिरी महान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिस में रुक्मि पर्वत पर आठ कूटों में पूर्व दिशा सम्बन्धी सिद्धकूट जिन मन्दिर पथा बाकी सात कूटों पर व्यन्तर सुर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ३ ।।

तपे हुये सोने के माफिक तीजा पर्वत अति सुन्दर।
ग्यारह कूट सीस पर सोहें, पूरव में ऊंचा मन्दिर ।।
करो वन्दना रे इस कुल गिरि सिखरी थान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं गिजय मेरु की उत्तर दिशा में शिखरी पर्वत पर ग्यारह कूटों में से पूर्व दिशा सम्बन्धी प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी दस कूटों पर व्यन्तर सुर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ४ ।।

विरह केसरी नीलाचल पर ताके बीच कमल सोहै।
कीर्ती देवी का वासा है महल अनोखा मन मोहै ।।
प्रतिमा पूजो रे दो नदियों के तट थान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिशा में नीलगिरी पर्वत पर केसरी तालाब से दोय नदी सीता और नरकान्ता तथा इन दोनों की एक लाख चालीस हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ५ ।।

दूजे पर्वत पर जो द्रह है नाम महा पुण्डरीक है।
बुद्धी देवी रहे महल में, द्रह में और अनेक हैं ।।
दो नदियों तट रे प्रतिमा बंदो भगवान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिशा में रुक्मी पर्वत पर महापुंडरिक तालाब से दोय नदी नारी और रुप्यकुला तथा इन दोनों की चौरासी हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यंतर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ।। ६ ।।

सिखरी पर्वत के ऊपर शुभ पुण्डरीक तालाव है।
लक्ष्मी देवी रहे कमल पर नदियां तीन बहाव है ॥
दो तट नदियों के वन्दना करो जिन थान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं विजय मेरु को उत्तर दिशा में सिखरी पर्वत पर पुंडरिक तालाव से तीन नदियों सुवर्णकुला, रक्ता, रक्तोदा तथा इन तीनों की छप्पन हजार सहायक नदियों के दोनों तटों पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ७ ॥

भोग भूमि तीनों सम्बन्धी विजय मेरु के उत्तर में।
नाभिगिरीं परवत दो अथवा, नदियां मिली समंदर में ॥
जिन गृह पूजत हो, भूमी पाऊं निरवान की। पूजा कर लो रे···

ॐ ह्रीं विजय मेरु के उत्तर दिशा सम्बन्धी तीनों भोग भूमि में तथा दोय नाभि पर्वत सम्बन्धी तथा कूटों की वेदिका सम्बन्धी व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ८ ॥

सास्वत श्री जिनराज भवन जो मन से पूजा करते हैं।
श्रुतसागर मुनिराज शीघ्र ही भव से पार उतरते हैं ॥
छटा निरालो है, सम्यक दृग चारित ज्ञान की। पूजा कर लो रे·····

ॐ ह्रीं विजय मेरु सम्बन्धी उत्तर दिशा में सकल साश्वत श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥अर्घम्॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय।
तिनपै भवन जिनेश की, जयमाला कहलाय ॥

चौपाई—विजय मेरु तैं उत्तर जाय, तीन कुलाचल लेहु लखाय।
चतु लख योजन लम्बे गाय, और कथन भाषूं समझाय ॥१॥
जम्बू द्वीप कुलाचल तीन, तिनतैं दुगुणो व्यास गणीन।
कूट नदि द्रह आदि पिछान, तिन सम भाषे श्री भगवान ॥२॥

भोग भूमि तीनों गिण लेय, कांचन जमक नाभि गिरि ढेय ।
सरिता मध्य द्रहादिक थान, जम्बू द्वीप बराबर जान ।।३।।
और कथन भवि लेहु विचार, देखि ग्रन्थ त्रैलोक्य जु सार ।
तीन कुलाचल पै सिद्धकूट, तीन गिणो भवि नाहीं झूंठ ।।४।।
बाकी और कूट बहु होय, तिनमें व्यन्तर बसते जोय ।
सिद्धकूट जिन भवन विचार, उर धर वन्दूं बारम्बार ।।५।।
कूट कुण्ड द्रह देवी वास, गिरि सरिता द्वय तटनी खास ।
व्यन्तरादि थानक जिन गेह, सब थल वन्दूं उर धरि नेह ।।६।।
तिस थल वन्दन आवे इन्द्र, सकल सुरासुर आदि फणीन्द्र ।
विद्याधर चारण मुनिराय, तिस थल वंदन आवें धाय ।।७।।
उस थल की भवि महिमा जोर, कथन करत आवत नहीं ओर ।
तातें 'नेम' कियो जु विचार, बुध थोड़ी किम पावे पार ।।८।।
याते तुम पद शीस नवाय, अरज करूं सुणियो जिनराय ।
ज्ञानावरणी को करि नास, दीजो मेरो ज्ञान प्रकास ।।९।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

दोहा–विजय मेरु तें उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय ।
शीष जिनालय तीन लखि, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।१०।।इत्यार्शीवाद

श्री विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल जिन भवन पूजा नं. ३६

स्थापना चौपाई–विजय मेरु तैं उत्तर जाय, ऐरावत को क्षेत्र लखाय ।
रूपाचल पै जिनगृह जांनि, आह्वानन करतो इस थान ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अडिल्ल छंद–क्षीर समद सम नीर कनक झारी भरूं ।
मन वच तन शुद्ध होय, धार ताकी करूं ।।
विजय मेरु दिश उत्तर में ऐरावता ।
रूपाचल जिन गेह जजूं सिर नावता ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् । निर्वपामोति० ।

चन्दन घसि घनसारी लावूं फेर जी ।
केसर भाजन हेम रहे अलि घेर जी ।। विजय मेरु···चन्दनम्

शाम जीर कसमीर हेरि तन्दुल लिये ।
कंचन भाजन मांहि पुंज तुम गुण दिये ।। विजय मेरु···अक्षतम्

विविध वरण के फूल लिये प्रासुक घने ।
तुम पद भेट धरन्त मदन दुःख को हने ।। विजय मेरु···पुष्पम्

कर लेवूं नैवेद्य भली विधि सौं सही ।
क्षुधा हरो जिनराज अरज इतनी कही ।। विजय मेरु···नैवेद्यम्

कंचन भाजन मांहि विमल दीपक धरूं ।
मिथ्यातम द्यौ नाश तुरत पायन परूं ।। विजय मेरु···दीपम्

जाले आठों कर्म जिनेश्वर देव जी ।
लेके निर्मल धूप करूं तुम सेव जी ।। विजय मेरु···धूपम्

प्राशुक फल धरि थाल भेट तुमरी करूं ।
शिवफल काजै नाथ शीष तुम पद धरूं ।। विजय मेरु···फलम्

जल चन्दन नैवेद्य फूल अक्षत धरूं ।
धूप दीप फल थाल लेय शिव तिय करूं ।। विजय मेरु···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

विजयानी सेठ--दिसि उत्तर जी विजय मेरु से जानियो ।
ऐरावत जी क्षेत्र बीच पहिचानियो ।।
ताके मधि जी रूपगिरी पर्वत लसे ।
तसु ऊपर जी वसु कूटों में सुर बसे ।।
पूरब में जी सिद्धकूट जिन धाम है ।
तसु देखत जी विमल होइ परिनाम है ।।
सुर खगधर जी पूज करें हर्षाय के ।
मैं पूजूं जी आठों द्रव्य चढ़ाय के ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर नव कूटों में पहले में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यतन्तर निवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।अर्घम् ।। १ ।।

दस योजन जी ऊपर कटनी है सही ।
दो तरफा जी जानि खगधरों की मही ।।
दक्षिण में जी नगर पचास कतार से ।
उत्तर में जी साठि इसी विस्तार से ।।
सब पुर में जी जिन मन्दिर ऊंचे बने ।
विद्याधर जी पूज करें मिलि के घने ।।
तन मन से जौ मैं पूजूं सुचि होइ के ।
जल फल सब जी कंचन थाल संजोइ के ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल पर्वत पर दस योजन ऊंची उत्तर दक्षिण दोनों कटनियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

फिरि ऊपर जी दस योजन चढ़ि सास्वते ।
अमरनि के जी थान अनोखे राजते ।।
तिनि सब में जी जैन भवन मन भावने ।
तसु महिमा जी कवि से कहते ना बने ।।

सत आठ सु जी प्रतिमा श्री अरहंत की।
सब रचना जी बनी आदि से अन्त की ।।
जो पूजें जी जिन प्रतिमा जी प्रीत से।
वह छूटे जी जग की सारी रीत से ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल पर्वत पर वीस योजन ऊँचाई पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः तथा सर्व आचार्य उपाध्याय साधूभ्यो नमः ।।अर्घम्।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत सर्व जिनालयस्थ विम्वेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विजय मेरु की उत्तर दिश, ऐरावत में पाय।
रूपाचल जिन मवन की, जयमाला उर लाय ।।

तर्ज : अहो जगत गुरु की विनती

पूरब धात की दीप मेरु मधि मैं सोहै।
तासूं उत्तर जाय, ऐरावत मन मोहे ।।
ताके मध्य गिनाय, रूपाचल की जागा।
ताके सिर पै जानि, सिद्धकूट बड़भागा ।।१।।
देखि त्रिलोक्य जु सार, और कथन सब जानो।
सिद्धकूट सिर एक, मन्दिर श्री जिन मानो ।।
एक शतक अरु आठ, तामें प्रतिमा भाई।
धनुष पांच सै ऊंच, लक्षण सर्व धराई ।।२।।
मंगल द्रव्य अनेक सोहे, तिस थल मांही।
कब लौ भाखूं भव्य, ऐसी बुद्धि जु नाही ।।
पुण्य उपार्जन ठाम हरि, सुर नित तिहां आवे।
श्री जिन पूजन काज, नीरादिक वसु ल्यावे ।।३।।

श्री जिनवर कूं पूजि, मुख से सदगुण गावे ।
अहो जगत गुरु नाथ तुम से अरज करावे ।।
'नेम' पे करुणा ल्याय, चहु गति दुःख निवारो ।
तुम पद नावूं शीष, अरजी उर में धारो ।।४।।

दोहा--विजय मेरु की उत्तर दिश, ऐरावत मधि पाय ।
रूपाचल जिन भवन कूं दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । पूर्णार्घम् ।

चौपाई--विजय मेरु ऐरावत नाम, रूपाचल पे श्री जिन धाम ।
ताको पाठ करे जो जीव, ते होवे शिव रमणी पीव ।। इत्यार्शीवाद

श्री विजय मेरु के उत्तर दिश ऐरावत क्षैत्र आर्य खण्ड में तीन चौबीसी पूजा नं. ३७

चाल जोगीरासा—विजय मेरु की उत्तर दिश में, क्षैत्र ऐरावत जानो ।
ताके मधि इक आर्य खण्ड में, तीन चौवीसी मानो ।।
तिनके पद युग पूजन कीजे, आह्वानन इहां करते ।
मन वच तन त्रय योग लगाके, अशुभ कर्म परिहरते ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु के उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत, भविष्यत, वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौवीसी जिन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम् सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीता छंद—शुचि नीर शीतल मधुर प्रासुक, हेम झारी भरि लई ।
कर तें उठाय, नमाय मस्तक, धार तुम पद ढिग दई ।।
मेरु विजय की उत्तर दिश में, क्षैत्र लखि एरावतो ।
तीनौं चौबीसी पूजके, में कर्म शत्रु हरावतो ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में तीन चौबीसी के ७२ जिन चरण कमलेभ्यों नमः । जलम् ।

अति ही पुनीत सुगन्ध, शीतल सरस चन्दन बावनूं ।
घसि कनक पात्र धराय करले, हरषि जिन गुण गावनूं ।।मेरु विजय···चन्दम्
शशि कान्ति दुग्ध समान, उज्वल मधुर कोमल पावने ।
तन्दुल अखंडित लिये तुम गुण, पूज यूं मन भानने ।। मेरु विजय···अक्षतम्
मन्मथ व्यथा को आप नाशे, हेत ऐसो जाणिके ।
निर्मल सुगन्धित फूल प्राशुक, लेत हूं जु पिछानिके ।। मेरु विजय···पुष्पम्
पावन अनेक प्रकार नेवज करूं, मन हुलसाय के ।
धरि थाल हाटक लेयकर, में भेंट तौ गुण गायके ।। मेरु विजय···नैवेद्यं
मिथ्यात दलन प्रकाश, शिवमग करण हारे तुम सही ।
तातें प्रदीप उजालि निर्मल, कनक भाजन कर गही ।। मेरु विजय···दीपं
खेवत हुताशन कुम्भ मांही, धूप परम सुगंध की ।
यातें न व्यापे बहुरि कबहू, पीड दुर्गति बंध की ।। मेरु विजय···धूपं
नाना पुनीत अनूप प्रासूक, लेत फल मन भावने ।
फल मुक्तिदाता देखि, तुमको भेंट चरण लखावने ।। मेरु विजय···फलं
ले नीर चंदन फूल प्रासुक, दीप अक्षत फल चरू ।
धरि धूप कंचन थाल करले, नाय सिर पायन परूं ।। मेरु-विजय···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

वसीकरण–अपना आतम हित करले जीवन सारा बीता जाता ।।टेक।।

मेरु विजय की उत्तर में, एरावत क्षेत्र कहाता ।
ताके छै खंड हैं, इक आर्य खंड है सुख का दाता ।
चौबीसी तीन होती, तिनको हर कोई है ध्याता ।।
बीती चौबीसी को में, मन वच तन से अर्घ चढ़ाता ।
अपना आतम हित करले, जीवन सारा बीता जाता ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर में ऐरावत क्षेत्र भूतकाल चौबीसी क्रम से—१. वृज स्वामी २. इन्द्रदत्त ३. सुर्य स्वामी ४. पुरुष ५. स्वामीनामा ६. अवरोध ७. विक्रम ८. निर्घाटित ९. हरेन्द्र १०. अमल ११. देवेन्द्र १२. निर्वाण १३. धर्म हेतु १४. चतुर्मुख १५. कृतेन्द्र १६. स्वयं बुद्धि १७. विमलदित्य १८. देवप्रभु १९. धरणेन्द्र २० सतीर्थ २१. उदयानन्द २२. शिवार्थ २३. धार्मिक २४. क्षेत्र स्वामी जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ॥ १ ॥

बीता फिर काल, विच में ठारा कोड़ा कोड़ी सागर ।
दूजी चौबीसी ने फिर, जन्म लीना यहाँ पे आकर ।
यहां जैसी रीति वहां पर, अब भी पंचम काल दिखाता ॥
मोजूदा चौवीसी को में, तन मन से अर्घ चढ़ाता ।
अपना आतम हित करले, जीवन सारा बीता जाता ॥

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर में एरावत क्षेत्र की वर्तमान चौबीसी क्रम से—१. हरिशचन्द्र २. अपश्चिम ३. पुष्पदंत ४. अर्हन् ५. सुचरित्र ६. सिद्धानन्द ७. नन्दक ८. पद्मरूप ९. उदय नाभि १०. रुकोन्द्र ११. कृपालु १२. प्रोटिल १३. सिद्धेसुर १४. अमृतेन्द्र १५. स्वामिनाथ १६. भुवनलिंग १७. सकल अर्थ १८. मेघानन्द १९. नन्द केस २०. हरनाम २१. अधिष्टात्रय २२. शांतिक २३. अनन्त स्वामो २४. कुन्द्रनाथ जिनेन्द्राय नमः । अर्घम् ॥ ४ ॥

तीजी चौबीसी होती, सहस चुरासी साल पिछारी ।
संग्या-उत सर्पिणी कहलाती, उसमें है वढ़वारी ।
इस ही विधि काल चक्कर, दस क्षेत्रों में आता जाता ॥
भावी चौवीसी को में, हाथ थोड़कर शीस नवाता ।
अपना आतम हित करले, जीवन सारा बीता जाता ॥

ॐ ह्रीं दिजय मेरु की उत्तर में एरावत क्षेत्र की भविष्यत चौबीसी क्रम से—१. विरोचन २. परार्थ ३. विजय प्रभ ४. सत्य प्रभ ५. महा मृहेन्द्र ६. चिन्तामणि ७. असोगिन ८. द्वि मृगेन्द्र ९. उपवासिक १०. पदमचन्द्र ११. बोधकेन्द्र १२. चिन्ताहिम १३. उन्नाहल १४. उपासिव १५. देवनीर १६. तारक १७. नरक १८. नागेन्द्र १९. नील पद्म २०. अप्रकम्प २१. पुरोहित २२. उभेन्द्र २३. पार्श्वनाथ २४. निर्वाची जिनेन्द्राय ☒. नमः । अर्घम् ॥ ३ ॥

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

चौपाई—विजय मेरु ऐरावत क्षेत्र, तीन चौवीसी भवि लखि लेत ।
तिनकी भाखूं सुणि जयमाल, पढत नशैं संचित अघ जाल ।।

गीता छन्द—दीव धात कि पूर्व दिश में, विजय मेरु ते सही ।
उत्तर दिशा में खंड, आरज क्षेत्र ऐरावत सही ।।१।।
श्री वज्र स्वामी प्रथम जिनवर, चरण युग बन्दू सदा ।
इन्द्रदत्त जिनेश सेवत पाप, व्यापै ना कदा ।।२।।
श्री सुर्य स्वामी जगत, तिहुं को पाप तम उहणो कियो ।
श्री पुरुष जिनवर, भव्य जिन ने मोक्ष मारग कह दियो ।।३।।
तिहुं जगत के प्रतिपाल कर्ता, स्वामी नामा देवजी ।
अवरोध जिनवर चरण, युग की इन्द्र करते सेवजी ।।४।।
विक्रम जिनेश्वर कर्म रिपु को, नाशिके केवल लयो ।
तिहुं जगत को जल देय, शिवपुर देव निर घाटिक गयो ।।५।।
सेवूं हरेन्द्र सु जिन चरण [redacted] को, भाव धरि बहु प्रीति सो ।
प्रीति रित जिन वन्दि के मैं, बचूं तिहुं जग भीति सों ।।६।।
निर्वाण जिन से नमन करता, कर्म बाधा सब नसैं ।
धर्म हेतु जिनेश सेवत, सहज शिवपुर पावतैं ।।७।।
वन्दू चतुर्मुख चरण युग को, ज्ञान केवल राजते ।
श्री कृतेन्द्र जिनेश के गुण, भवन तिहुं से छाजते ।।८।।
श्री जिन स्वयं बुद्धि ज्ञान, निजले मुक्तिपुर थिरता करी ।
जिनराज विमलादित्य तत्क्षिण, जगत जन पीड़ा हरी ।।९।।
देव प्रभु के चरण सेवत, इन्द्र सुर नर खगधरा ।
धरणेन्द्र जिन निज ज्ञान सेती, जाणते जु चराचरा ।।१०।।

जनम तीर्थ दयाल जग में, धरम मारग भाखियो।
जिनराज उदयानन्द के पद,नमत मदन विनाशियो ॥११॥

श्री जिन सिवार्थ दयाल नामी, जगत तिहुं में हे सही।
धार्मिक जिनेश्वर धर्म भाख्यौ, सुणत भवि आनन्द लही ॥१२॥

श्री क्षेत्र स्वामी मोक्ष दाता, दीन बन्धु दयाल है।
हरिचन्द्र के गुण गात, सुर नर नमत फिर निज भाल है ॥१३॥

श्री जिन अपश्चिम कर्म बैरी, मूल तै सब नाशिया।
श्री पुष्पदंत नमाय भविजन, मेटि दे जग त्रासिया ॥१४॥

अर्हन जिनेसुर कर्म हरता, मोक्ष करता मानियो।
सु चरित्र जिनेसुर जगत मैं, तरण तारण जानियो ॥१५॥

भवि जीव आनन्ददाय जग मे, देव सिद्धानन्द है।
बन्दू जिनेश्वर उदय नाभी, हरत अघ के फंद है ॥१६॥

रुकोन्द्र जिनके चरण सेवत, मोहमल आपहि नशे।
श्री जिन कृपालु दयाल के, गुणगात भवि शिव थल बसै ॥१७॥

प्रोटिल जिनेश्वर विघन हरता, जगत मंगल कार है।
जिनराज सिद्धेश्वर निवारत, कर्म संतति भार है ॥१८॥

अमृतेन्द्र जिनके चरण सेवत, सहज भवि आपद टले।
जिनराज स्वामी नाम लेता, कर्म बैरी थर हरै ॥१९॥

बन्दु जिनेश्वर भुवन लिंगजी, भवन तिहुं आनन्द दियो।
जिनराज स्वामी खिरत भवदधि, पार हुइ थिर थल लियो ॥२०॥

करि धर्म वृष्टि जिनेश मेघानन्द, भवि तौषै सही।
श्री नन्द केस जिनेश सेवत, रोग जग व्यापे नहीं ॥२१॥

हरनाम जिनवर जगत मांही, शुद्ध भारव्यो धर्मजी।
वन्दू अधिष्टात्रक जिनेश्वर, हरत संचित कर्मजी ॥२२॥

शान्तिक जिनेश्वर शान्ति करता, तीन जग में जानियो ।
वन्दू जिनेश्वर नन्त स्वामी, नन्त गुण जुत मानियो २३।।
कुन्ड पार्श्व जिनेश भव भव, दुख हरण हारे भला ।
श्री जिन विरोचन चरण युग को, नमत नाशै अध वला ।।२४।।
वन्दू परार्थ जिनेश जी को, परम पद प्राप्ति भये ।
श्री विजय प्रभ को दरस देखत, असुर भंडरि दुर गये ।।२५।।
जिनदेव सत्यः प्रभू मनावूं, बहुरि जग में ना रहूं ।
मेहा मृगेन्द्र जिनेश के पद, नमन करि शरणा गहूं ।।२६।।
भवि सेय चिन्तामणि जिनेश्वर, सकल चिन्ता परिहरे ।
वन्दू असोगिन चरण युग को, स्वर्ग शिव सम्पति करे ।।२७।।
द्वी मृगेन्द्र जिनेशजी ने, करम कंजर को हने ।
सिरनाथ उपवासिक, जिनेश्वर लेत भव शिव सुख तनै ।।२८।।
श्री पद्मचन्द्र जिनेश वन्दू, धरम दो विधि भासियो ।
श्री बोध केन्द्र जिनेश नामी, ज्ञान निज रस चाखियो ।।२९।।
जिनराज चिन्ता हिम निवारे, जगत की आताप को ।
भवि सेय अन्नाहक जिनेश्वर, मेटि दे सब पाप को ।।३०।।
वन्दू उपासक देव नामी, मुक्ति रजणी के पती ।
देव नीर जिनेश सेवत, अमर सुर नर खगपती ।।३१।।
तारक जिनेश्वर नाम लेता, होत भवि भव पार जी ।
नरक जिनवर तुरत चहुं गति, दुःख देवे टार जी ।।३२।।
नागेन्द्र नन्दू भाद सेती, सप्त तत्व प्रकाशने ।
नील पद्म जिनेश सेवूं, अष्ट कर्म विनाशने ।।३३।।
अप्रकंप दीन दयाल गुण निधि, तीन जग सिर ताज है ।
वन्दू पुरोहित काय मन वच, करत सब ही काज है ।।३४।।

उभेण्द्र जिनवर मुक्ति गामी, ज्ञान केवल लैय के।
श्री पार्श्वनाथ अनाथ के पति, सेय भवि चित्त देय के ।।३५।।
नमत निरवाची जिनेश्वर, मिलत शिव तिय आपतैं।
जग व्याधि नाशै भविक जनकी, जिन विरोचित जायतैं ।।३६।।
तुम दीन बन्धु दयाल जिनजी, "नेम" कर जोड्यां खड़ो।
सिर नाय सबसे कहत इतनी, नाशियो भव दुःख बड़ो ।।३७।।

दोहा—ऐरावत के क्षेत्र में, लखि चौवीसी तीन।
अर्घ चढ़ावौ भाव सों, पाप करो सब क्षीन ।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु की उत्तर दिश एरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत, भविष्यत, वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घम्।

चाल जोगीरासा—विजय मेरु की उत्तर तिश में, क्षेत्र ऐरावत सु नामी।
तिस थल तीन चौबीसी, वरतै भविजन को सुखदानी ।।
तिनको पाट पढ़ै नर कोई, मन वच तन लौ लाके।
ताके नित प्रति मंगल होवे, भेटे शिव तिय आके ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

अचल मेरु सम्बन्धी पूजा

अचल मेरु के भद्रशाल वन में ४ श्री जिन भवन पूजा नं. ३८

चौपाई—भद्रशाल वन अचल सु मेरु, चहुं दिश चार सघन तसु घेरु।
चहूं दिश चतु जिनवर को धाम, आह्वानन करूं पूजन काम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन के चहुं दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरम्।

अडिल्ल छन्द—गंग नदी को नीर, मधुर शीतल लियो।
कंचन झारी हाथ लेत, हरष्यौ हियो ।।

अचल मेरु वन भद्रशाल, चहुं दिश मही ।
श्री जिन मन्दिर चार, जजूं इस थल सही ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की चहुं दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् ।

बावन चन्दन घोलि सुगन्धित लेय कें ।
केशर घन पुट देय चित हरषेय कें ।। अचल मेरु···चन्दनं

तन्दुल सरस पुनीत अखंडित जोय कें ।
कनक थाल गुण पुंज धरूं शुचि होय कें ।। अचल मेरु···अक्षतं

फूल मनोहर थाल धरूं मन भावने ।
प्रासुक बहुत सुगंध भ्रमर गुंजावने ।। अचल मेरु···पुष्पं

विविध जाति पकवान किये विधि सूं भली ।
कनक थाल धरि लेत भूख बाधा टली ।। अचल मेरु···नैवेद्यं

जगमग ज्योति प्रकाश तिमिर क्षयकार जी ।
निहिसक शुभ दीप लियो जु विचार जी ।। अचल मेरु···दीपं

धूप सुगंधित लेय शिखा घट में दहूं ।
आठों दुष्ट जलाय देउ तुम से कहूं ।। अचल मेरु···धूपं

फल बहु लेत पुनीत कनक थाली धरूं ।
फल शुभ, अशुभ मिटाय अरज इतनी करूं ।। अचल मेरु···फलं

जल चंदन चरु फूल धूप तंदुल फला ।
निर्मलदीप धराय अरघ कीनौं भला ।।

अचल मेरु के भद्रशाल चहुं दिश मही ।
श्री जिन मंदिर चार जजूं इस थल सही ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्योनमः । अर्घम् ।।

प्रत्येक अर्घ

दोहा—भद्रशाल पूरब दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकैं, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की पूर्व दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। १ ।।

भद्रशाल दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकैं, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की दक्षिण दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। २ ।।

भद्रशाल पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकैं, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की पश्चिम दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।।३।।

भद्रशाल उत्तर दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायकैं, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

भद्रशाल चौगिरद ही, सुर व्यन्तर आवास ।
तिनमें भवन जिनेश के, पूजूं वसु विधि खास ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की चौगिरद व्यन्तरादि स्थान स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु कूं घेरि के, भद्रशाल वन पाय ।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला वरणाय ।।

छंद—जय द्वीप धात की अपर गाय, जय अचल मेरु मध भाग पाय ।
जय भद्रशाल वन गिरद देय, भू भाग मांहि शोभा धरेय ।।१।।

चहुं दिश ताके मधि चैत्य चार, जिनराज भवन लेवो निहार ।
जय शिखर मनोहर बहु उतंग, छवि देत महाप्रिय कनक रंग ।।२।।
त्रय कोट युक्त चउ द्वार पाय, बहु केतु लसे नभ जाय जाय ।
ते चपल पवन करि इम लखात, जिन सेव काज मनु ते बुलात ।।३।।
मंगल विभूति राजत अनेक, तिस थान मांहि जानूं विवेक ।
जिनराज बिम्ब शत एक आठ, जय रतन मई शोभादि ठाठ ।।४।।
वसु प्रातिहार्य सोहे महान, सब कथन करूं कबलौं बखान ।
तिह थान सुरासुर नर समान, जिनराज जजें वसु द्रव्य आन ।।५।।
हरि नृत्य करें गुण गाय गाय, पद ठुमकि धूमकि सिर नाय नाय ।
सुर बीन बजत मिरदंग ताल, धुनि मधुर सुरस लागत रसाल ।।६।।
जय देव जिनेश्वर जगत तात, तुम रूप लखत दृग ना अघात ।
तुम मुक्ति वधुपति हो जिनेश, तुम जाय लियो पंचम जु देश ।।७।।
तातें जु नेम तुम चरण शीश, कर जोड़ि नमे सुनियों जगीश ।
मुझि मुक्ति नगर देवो बसाय, गति चार तणों फिरवों मिटाय ।।८।।

दोहा—अचल मेरु कूं घेरि के, भद्रशाल वन पाय ।
चहुं दिश चतु जिन धाम कूं दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भद्रशाल वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घ्यम् ।

अडिल्ल छंद—भद्रशाल वन अचल मेरु घेरो दियो,
चहुं दिश चतु जिन धाम देखि हरषो हियो ।
तिनको करत जू पाठ भव्य नित रोज जी,
ते सुखदा सुख भोगि लेह शिव मोज जी ।। इत्यार्शीवाद

अचल मेरु के नंदन वन में चार श्री जिन भवन पूजा नं. ३६

दोहा—अपर धात की खंड में, अचल मेरु अभिराम ।
ताके नन्दन वन विषै, जिनपद करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं श्रीअचल मेरु सम्बन्धी नन्दन वन जिनालयस्थ सकल जिन बिम्ब समूह । अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल आष्टाह्निका—ले क्षीरो दधि को नीर, कंचन झारि भरूं ।
जर जनम मरण को पीर, नाशो अरज करूं ।।
जय अचल मेरु अभिराम, नन्दन वन सोहै ।
चहुं दिश में चतु जिनधाम, पूजत मन मोहै ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन में चहुं दिश चार श्रीं जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

घिसि केशर चन्दन लेय, कंचन थाल धरूं ।
भव आतप दुःख बहु देत, नासो अरज करूं ।। जय अचल मेरु···चन्दनं

शुभ तन्दुल उज्ज्वल लेय, कंचन थाल भरूं ।
अक्षय पदवी मुझि देष, तुमसों अरज करूं ।। जय अचल मेरु···अक्षतं

बहु प्रासुक फूल मंगाय, तुम पद भेंट धरूं ।
मम काम बाण मिट जाय, तुम से अरज करूं ।। जय अचल···मेरु पुष्पं

मृदु नाना विधि नैवेद्य, उत्तम थाल भरूं ।
मम हरो क्षुधादिक खेद, तुमसे अरज करूं ।। जय अचल मेरु···नैवेद्यं

वर दीप रसनमय जोय सुवरण थाल धरूं ।
मोहांध तिमिर दे खोय, तुमसे अरज करूं ।। जय अचल मेरु···दीपं

खुद निर्मल धूप बनाय, पावक कुम्भ करूं ।
अरि आठों देहु जलाय, तुमसे अरज करूं ।। जय अचल मेरु···धूपं

बहु प्रासुक फल भरि थाल, बहु विधि भेंट धरूं ।
मो शिव फल देहु दयाल, तुमसे अरज करूं ।। जय अचल मेरु···फलं

सब जल फल आदिक लेय, वसु विधि अर्घ करूं ।
पदवी अनर्घ मुझि देय, तुम पद शीष धरूं ।। जय अचल मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नन्दन वन पूरब दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की पूर्व दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। १ ।।

नन्दनवन दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की दक्षिण दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। २ ।।

नन्दन वन पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की पश्चिम दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

नन्दन वन उत्तर दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकरार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

दोहा—नन्दन वन चौगिरद ही, व्यन्तरादि के गेह ।
तिन में श्री जिन भवन कूं, पूजूं में धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की चौगिरद व्यन्तरादिक के स्थानक सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—द्वीप धात की अपर दिश, अचल मेरु शोभाय ।
नन्दन वन जिन भवन की, जयमाला वरणाय ।।

छन्द वेसरी—धात कि दीप अपर दिश भाई, अचल मेरु मधि भाग लखाई ।
योजन ऊंच पांच से जावे, नन्दनवन चहुं गिरद लसावे ।।१।।

योजन पांच शतक चौड़ाई, सब थल श्री जिन आगम गाई ।
ताके मध्य चहुं दिश पावे, चार भवन जिनराज कहावे ।।२।।
अद्भुत रचना है सुखकारी, हम सों कहत बणत नहीं सारी ।
शिखर उतंग लगै नभ जाके, सुरनर पूजत जिस थल आके ।।३।।
वसु विधी द्रव्य लाय धरि थाला, पूजत गावत जिनगुण माला ।
तुम ही नाथ तिहूं जग केरे, इन्द्रादिक सब तुमरे चेरे ।।४।।
तुम ही ज्ञाता तिहुं जग मांही, शिव सुखदाता तुम सम नांही ।
तुम ही भव्य तणे दुख नाशौ, तुम ही मोक्ष पंथ परकाशौ ।।५।।
तुम ही ज्ञान अनन्तो लीनो, तुम ही आतम उज्ज्वल कीनो ।
तुम ही निज रस चाखन हारा, तुम्ही नाश कियो संसारा ।।६।।
तुम ही चहुं गति दुःख निर्वारा, तुम ही चराचर जानन सारा ।
लखि करि "नेम" नमें प्रभु तोकूं, मुक्तिवास देवो अब मोकूं ।।७।।

दोहा—अचल मेरु नन्दन विपिन, चहुं दिश चतु जिन थान ।
अर्घ चढ़ावूं हेत सूं ले ले बहु विधि तान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के नन्दन वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घ्यम्

चौपाई—अचल मेरु वन नन्दन नाम, चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम ।
तिनको पाठ करें नर कोय, सो नर शिव तिय वल्लभ होय ।। इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु के सौमनस वन में चार श्री जिन भवन पूजा नं. ४०

स्थापना अडिल्ल छंद—भूतें योजन ऊंच सहस गिण छप्पना ।
अचल मेरु सौमनस विपिन मन भावना ।।
तामें चहुं दिश चार जिनेश्वर गेह जी ।
आह्वानन इस थान करूं धरि नेह जी ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु पै छप्पन हजार योजन उँचा सौमनस नामा वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्रमम स्थापनं । सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीता छंद–शुचि नीर निर्मल मधुर शीतल क्षीर सम अति ऊजलो ।
भरि कनक झारी धार दे करि जनम मरणां दुःख दलो ॥
सौमनस वन चहुं गिरद फिर्‌यौ, अचल मेरु को सही ।
तामें चहुं दिश चार जिनवर, भवन पूजूं इस मही ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ जलम् ॥

शीतल सुगंध पुनीत चन्दन, घसत केशर डारि के ।
धरि कनक प्याले, होय ठाड़ो ताप भव दे टारि के ॥ सौमनस वन···चंदनं

मोती समान अखंड सुन्दर, हेर तन्दुल लीजिये ।
भरि कनक थाल उठाय कर ते, पुंज गुण गिण दीजिये ॥ सौमनस वन···अक्षतं

बहु फूल प्रासुक कल्प तरु के, बहु सुगन्धित हेरिके ।
ले कनक थाल धरात तिनपै, भ्रमर गुंजत फेरिके ॥ सौमनस वन···पुष्पं

घृत खांड क्षीर मिलाय मेवा, करत नेवज पावनो ।
धरि कनक भाजन थाल लेता, क्षुधा रोग मिटावनो ॥ सौमनस वन···नैवेद्यं

मणिमयी दीपक लेय सुन्दर, कनक थाल धरायके ।
कर लेय जिनवर चरण पूजत, मोह तिमिर नशायके ॥ सौमनस वन···दीपं

बहु दुष्ट कर्म जलाय जिनजी, मुक्ति रमणी तुम वरी ।
तातें सुगन्धित अग्नि घट में, धूप लेके हम धरी ॥ सौमनस वन···धपं

श्रीफल सुपारी आदि शुभ फल लिये कंचन थाल जी ।
कर जोड़ शीष नवाय ठाड़ो, जपत तुम गुण माल जी ॥ सौमनस वन···फलं

नीरादि आठों कनक थाली, लेय विधि पूर्वक धरूं ।
वसु दुष्ट कर्म निवारि श्री जिन अरज इस विधि मैं करूं ॥ सौमनस वन···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पूरब दिश सोमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेयकैं, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन को पूर्व दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम्॥ १॥

दक्षिण दिश सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेयकैं, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम्॥ २॥

पश्चिम दिश सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेयकैं, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम्॥ ३॥

उत्तर दिश सोमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेयकैं, पूजूं शुचि मन होय॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन की उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः। अर्घम्॥ ४॥

चतु दिश में सौमनस वन, व्यन्तरादि के थान।
तिनमें भवन जिनेश के, जजूं जलादि लहान॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के सौमनस वन की चहुं दिश व्यन्तरादिक स्थानक विषें सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ५॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु सौमनस वन, चहुं दिश चतु जिन थान।
जयमाला तिनको कहूं, सुणो भव्य दे कान॥

चौपाई—अपर धात की द्वीप कहाय, मेरू अचल मध्य तक पाय।
कंचन मणिमय है प्रियकार, अद्भूत रचना बहु विस्तार॥१॥

भूतं योजन ऊंच प्रकार, श्री जिन भाषै छपन हजार ।
वन सौमनस तहां लखि लेई, चहुं दिश घेर्‌यो गिरदादेई ॥२॥
योजन पांच शतक परमान, सब थल चौड़ौ लेहु पिछान ।
ताकी चहुं दिश मांहि निहार, श्री जिन मन्दिर सोहे चार ॥३॥
तिनमें प्रतिमा श्री जिनराय, एक शतक अरु आठ गिणाय ।
एक भवन की भाषी एह, ऐसी ही चारों लखि लेय ॥४॥
धनुष पांच से ऊंच प्रमान, लक्षण व्यंजन सर्व लसान ।
सकल सुरासुर पूजन काल, तिस थल लावे द्रव्य सम्हाल ॥५॥
जजें जिनेश्वर गुण को गाय, करत नृत्य बहु बीण बजाय ।
इहि विधि मंगल नित प्रति होय, ताको महिमा गावे कोय ॥६॥
लखि करि 'नेम' नमें निज शीष, मुझ दुख दूर करो जगदीश ।
भव भिरमण को दुःख अपार, ताके तुम ही नाशनहार ॥७॥

दोहा—अचल मेरु सौमनस वन, चहुं दिश चतु जिन गेह ।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, मन वच तन धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु सौमनस वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—अचल मेरु सौमनस वनी लखि लीजियो ।
चहुं दिश श्री जिन धाम, चार चित दीजियो ॥
तिनको जे भवि जीव पाठ रुचि सौं करें ।
ते भवि सुर सुख भोग जाय शिवतिय वरें ॥ इत्याशींवाद

अचल मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी चार श्री जिन भवन पूजा नं. ४१

चौपाई—दीप धात की पश्चिम होय, अचल मेरु पांडुक वन जोय ।
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु सम्बन्धी पांडुक वन में चहूं दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अडिल्ल--क्षीर समद को नीर कनक भरि झारिका।
शीतल परम पुनीत देत तसु धारिका॥
अचल मेरु के शीष विपिन पांडुक लसै।
चहुं दिश चतु जिन धाम जजत अघ सब नसै॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन विषै चहुं दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जलम्।

मलयागिर करपूर बहुरि केसर घसूं।
हेम पियाले लेय ताप भव को नसूं॥ अचल मेरु···चन्दनम्

तन्दुल सरस पुनीत अखंडित लेय कै।
कंचन थाल धराय पुंज गुण देय कै॥ अचल मेरु···अक्षतम्

प्रासुक कुसुम सुगन्धित ले बहु जाति के।
लायो कंचन थाल भ्रमर लपटात है॥ अचल मेरु···पुष्पम्

षट्रस मय पकवान, भली विधि सो करे।
कंचन थाल मंझार, लेय कर में खरे॥ अचल मेरु···नैवेद्यम्

दीपक ज्योति प्रकाश दसौं दिश में करे।
तुम पद भेंट करंत मोह तम को हरे॥ अचल मेरु···दीपम्

अति हि सुगन्धित धूप अनूपम लेय कै।
पावक कुम्भ मंझार देत तसु खेय के॥ अचल मेरु···धूपम्

श्रीफल आदि अनूप विविध फल जोयके।
कंचन थाल धराय, शुद्ध मन होयके॥ अचल मेरु···फलम्

जल फलादि गिण आठ कनक थाली धरूं।
पद अनर्घ्य दे मोहि अरज इतनी करूं॥ अचल मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पांडुक वन पूरब दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की पूर्व दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ १ ॥

पांडुक वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु पांडुक वन की दक्षिण दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ २ ॥

पांडुक वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की पश्चिम दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ ३ ॥

पांडुक वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः । अर्घम् ॥ ४ ॥

पांडुक नामा वन विषै, कोण ईशान कहाय ।
पांडुक सिल पै जिन जजूं, वसु विधि द्रव्य चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की ईशान कोण पे पांडुक नामा शिला पै भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः । अघम् ॥ ५ ॥

पांडुक नामा वन विषै, अग्नि कोण सुखदाय ।
पांडु कम्बिला सिल जजू, वधु विधि द्रव्य चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की अग्नि कोण में पांडुक कम्बिला शिला पे पश्चिम विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः । अर्घम् ॥ ६ ॥

पांडुक नामा वन विषै, नैऋत्य कोण लहाय ।
रक्ता नामा सिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन की नैऋत्य कोण में रक्तानामा शिला पे एरावत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः । अर्घम् ॥ ७ ॥

पांडुक नामा वन विषे, वायु कोन मन लाय।
रक्त कंबिला सिल जजू, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पांडुक वन में वायु कोन में रक्त कंबिला सिला पर पूर्व विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः। अर्घम् ॥ ८ ॥

पांडुक वन की सब मही, लखि जिनवर के धाम।
अर्घ जजूं नीरादि ले, तिनको करूं प्रणाम ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पांडुक वन विषै व्यन्तरादि स्थानक सम्बन्धी सकल श्री भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ९ ॥

अचल मेरु के शीष पै, पांडुक वन गिरिदाय।
चहुं दिश चतु जिन धाम को, जल फलादि पूजाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के शीष पांडुक वन की चहुं दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ १० ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु के शीष पै, पांडुक वन छवि देय।
चहुं दिश चतु जिन धाम की, जयमाला सुणि लेय ॥

चौपाई—द्वीप धातकी पश्चिम, जोय अचल मेरु भविजन अवलोय।
सहस चौरासी योजन तुंग, कंचन मणिमय नाना रंग ॥१॥
पांडुक वन के व्यास विचार, योजन पांच शतक जह टारि।
चहुं दिश घेरि रह्यौ छवि देय, ताकी शोभा को बरणेय ॥२॥
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, पूजत इन्द्र सुरादिक ठाम।
सिला चार विदिशन में पाय, तिनपें तीन सिंहासन थाय ॥३॥
मध्य सिंहासन पै जिनराय, बैठावे हरि न्हावण काज।
क्षीरोदधि से ल्यावै नीर, असुर सुरादिक जुड़ बहु भीर ॥४॥
एक सहस वसु कुम्भ विचार, जिन सिर ढौरें एक हि बार।
धारा पड़त जू फूल प्रमाण, अतुल बली जिन बाल पिछान ॥५॥
अनन्त ज्ञान धारी जिनराय, नर सुर सेवें तुमरे पाय।
तुम ही तीन जगत सिरदार, तुम ही कर्म रिपु क्षय कार ॥६॥

तुम सम देव तिहुं जग मांहि, और कहूं जू दीखै नाहिं ।
शिव रमणी पति गुण भंडार, तुम्ही चराचर जानन हार ॥७॥
"नेम" नमें पद तुमरे नाथ, कर्म रिपु लग मेरे साथ ।
तिने छुड़ावो अब ही मोय, बेर बेर सिर नावूं तोय ॥८॥

दोहा--अचल मेरु पांडुक विपिन, चहुं दिश चतु जिन धाम ।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, भिन्न भिन्न ले नाम ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पांडुक वन की चहुं दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः ॥ पूर्णार्घम् ॥

अडिल्ल छन्द--अचल मेरु के शीष विपिन पांडुक लखों ।
तामें श्री जिन धाम चार चहुं दिश रखो ॥
तिनको भविजन पाठ करे मन लायकैं ।
ते होवे जग भूप मुक्तिपुर जाय कैं ॥ इत्याशींवाद

अचल मेरु के चारों कोण चार गजदन्त पूजा नं. ४२

स्थापना चौपाई--अचल मेरु की चारों कोण, गजदन्ता गिण चार ही होण ।
तिन चतु पै जिन मन्दिर चार, आह्वानन करतो धरि प्यार ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की चार कोण चार गजदन्त पै चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्र अत्र अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक--क्षीरोदधि को नीर मनोहर, कंचन झारी मांहि भर्यो ।
करतै ले त्रय धारा देता, जन्म मृत्यु दुःख दूर कर्यो ॥
अचल मेरु की चारों कोणा गजदन्ते गिण चार लसैं ।
शीष तिन्होंके चार जिनेश्वर, मन्दिर पूजत कर्म नसैं ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की चहुं दिश चार गजदतय पै चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् ।

चन्दन केशर घन घसि लेके, हेम कटोरी हाथ गही ।
मन वच तन की सुधता करते, भव तप सारी दूरि मही ॥ अचल मेरु···चंदनं

तन्तुल कोमल सरस अखंडित, उज्ज्वल जल सों धोय लिये।
कंचन थाल हाथ में गहिके, तुम गुण के फिर पुञ्ज दिये ।। अचल मेरु···अक्षतं

बहु विधि प्रासुक कुसुम मनोहर, पंचवरण मय थाल धरैं।
तुम पद पंकज भेट धरत ही, काम बाण दुःख दूर करैं ।। अचल मेरु···पुष्पं

घेवर मोदक आदिक नेवज, विधि पूर्वक बणवाय लिये।
धरि कंचन को थाल हाथ गहि, भूख व्याधि तें दूर भये ।। अचल मेरु···नैवेद्यं

योह तिमिर अंधियार हरण कूं, या जग में तुम दीप खरौं।
तातैं निर्मल रतन दीप ले, तुम चरणन की भेट करौं ।। अचल मेरु···दीपं

मलयागिरि की धूप मनोहर, खेय अग्नि घट मांहि सही।
कर्म पुंज को जालन काजे, मो उर में यह चाह भई ।। अचल मेरु···धूपं

श्रीफल लोंग सुपारी आदिक, फल कंचन के थाल भरैं।
शिव फल चाह भई मन मेरे, तातैं ले तुम भेट धरैं ।। अचल मेरु···फलं

जल चन्दन अरु अक्षत लेवूं, पुष्प चरुं फिर दीप धरूं।
धूप सुवासित फल बहु उत्तम, वसु विधि ले मैं अरज करूं ।। अचल मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

अचल मेरु की कौण ईशान, माल्यवन्त गजदंत पिछान।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की ईशान कोण में माल्यवन्त गजदन्ते शीष सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

अचल मेरु की अग्नि जु कोण, गजदंना सौमनस जु होण।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की अग्नि कोण में सौमनस नामा गजदन्त के शीष सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

अचल मेरु की नैऋत्य कोण, विद्युत्प्रभ गजदंत जु होण।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य कोण में विद्युतप्रभ गजदन्त की शीष विद्युतप्रभ कूट विषें स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

अचल मेरु की वायु कोण, गन्ध मदन गजदंता होण।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की वायु कोण में गन्ध मादन गजदन्त के शीष सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

अचल मेरु की चारों कोण, गजदंता लखि चारों होण।
सब थल लखि जिनवर को गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु को चहुँ दिश चार गजदन्त के शोष सकल श्री जिन भवन तथा चार गजदन्त सम्बन्धी व्यन्तर देवों के स्थानकों के आठ छः, आठ छः कुल अठ्ठाइस कूट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—गजदन्ता चारों विदिश, अचल मेरु के पाय।
तिन सिर जिनवर भवन की, जयमाला वरणाय ।।

अडिल्ल-द्वीप धातकी अपर दिशा मन भावनो, अचल मेरु मध्य भाग लसैं जु सुहावनो
ताकी चारों कोण चार गजदन्त है, हरित श्वेत द्वय हेम वरण दरसन्त है ।।१।।
तीन लाख छप्पन हजार शत दोय जी, योजन वीस रू सात लम्बाई जोय जी।
लवणो दधि की तरफ दोय गजदन्त की, जानि त्रिलोक जु सार विषैं सिद्धान्त की ।।२।।
कालो दधि की तरफ दोय गजदन्त है, पांच लाख हज्जार गुणहत्तर तंत है।
दोसे गुणसठ और धरो गिण योजना, यह लम्बाई जोड़ि लखो सब ही जनां ।।३।।

इन चारों के शीष चार सिद्धकूट हैं, अचल मेरु के निकट लखों नहिं झूंठ है।
तिस थल श्री जिन गेह विराजे सासते, सुर खगधर मिलि आय जजै अघ नाशते ।।४।।
तिनकी महिमा गात बनें नहीं सर्व जी, प्राति हार्य वसु धरे जू मंगल द्रव्य जी।
सोहे छत्र जु तीन शीस जिनराज के, "नेम" नमे निज सीष आपने काज कै ।।५।।
मोको या जग मांहि कर्म दुःख देत है, बीत्यो काल अनन्त मोह नहिं चेत है।
याते यो दुःख नाशि ज्ञान निज दीजिये, या धो शिव सुख राशि काजि मो कीजिये ।।६।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की चहुँ दिश चार गजदन्ता शीष चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्।

जोगीरासा—अचल मेरु के चारों कोणा, चार गिणौ गजदन्ते।
तिन चारों पर चार जिनेश्वर, मन्दिर खूब लसन्ते ।।
तिनको पाठ करे नर कोई, मन वच तन सुध करके।
सो शिवथान तणे सुख विलसे, चहुं गति के दुःख हरिके ।। इत्यार्शीवाद

श्री अचल मेरु सम्बन्धी धातकी वृक्ष शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा नं. ४३

दोहा—अचल मेरु दो विदिष में, नेरित्य अरु इशान।
प्रथम वृक्ष है धातकी, द्वितीय शाल्मलि जान ।।
तिनि के दो डालेनि पर, दो जिन भवन महान।
पूजन करे परोक्ष में, यहाँ करे आह्वान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य ईशान कोण धातकी शाल्मली नामा वृक्ष की डाल ऊपरि दोय श्री जिन भवनाभ्याम नमः। अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम अन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल छन्द—निर्मल मधुर पुनीत नीर गंगा तणो।
कंचन झारी हाथ लेप जिन गुण भणो ।।
नैरित्य कोण ईशान अचल मेरु तणी।
कुरू पादप जिन धाम जजूं भव थिति हणी ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य ईशान कोण विषैं दोय वृक्षन की डाल ऊपर दोय श्री जिन भवनाभ्याम् नमः ।। जलम् ।।

मलया गिर कर्पूर घसुं मन भावनो ।
केशर मांहि मिलाय नाथ गुण गावनो ।। नैरित्य कोण···चन्दनं
तन्दुल कंचन थाल लेत जल धोय के ।
स्याम जीर का मोद अखंडित जोय के ।। नैरित्य कोण···अक्षतं
चम्प चमेली आदि कुसुम प्रासुक लखूं ।
अती सुगन्धित लेय कनक थाली रखूं ।। नैरित्य शोण···पुष्पं
मोदकादि पकवान भली विधि सूं करूं ।
कंचन थाल धराय भूख बाधा हरूं ।। नैरित्य कोण···नैवेद्यं
मोह महातम नाश धरम परगट कियो ।
या कारण जिनराज दीप हमने लियो ।। नैरित्य कोण···पीपं
अति हि मनोहर द्रव्य सुगन्धित लेय कै ।
धूप पुनीत बणाय अग्नि घट खेय के ।। नैरित्य कोण···धूपं
श्रीफल दाख बिदाम आदि फल निर्मला ।
लायो तुम पद भेट मोक्षफल द्योभला ।। नैरित्य कोण···फलं
नीरादिक गिण आठ निसानी यूं धरूं ।
मेरे आठों कर्म हरो अरजी करूं ।। नैरित्य कोण···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई–अचल मेरु की कोण ईशान, तहाँ धात की वृक्ष पिछान ।
उत्तर डाल जिनेश्वर गेह, आठों विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की ईशान कोण धातकी वृक्ष पर उतर डाल पर श्री जिन भवनाम नमः अर्घम् ।।१।।

शेष डाल ता तरु की तीन, व्यन्तर वास करें सुखलीन ।
तिनके महलन पै जिन गेह, आठों विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की ईशान कोण धातकी वृक्ष की तीन डालों पर व्यन्तरवास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चहुं दिश धात कि तरु परिवार, एक लाख चालीस हजार ।
एक शतक उगणीस गिणाय, तिनपे भवन जजूं जिनराय ।।

ॐ ह्रीं धातकी वृक्ष की चहुँ दिश एक लाख, चालीस हजार एक सौ उगणीस परिवार वृक्ष तिनपै व्यन्तर वास स्थित श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

अचल मेरु की नैरित्य कोण, तहां शाल्मली वृक्ष जू होण ।
दक्षिण डाल जिनेश्वर गेह, आठों विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य काण शाल्मली नामा वृक्ष की डाल पै श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

शेष डालता तरु की तीन, व्यन्तर वास करे सुखलीन ।
तिनके महलन पै जिन गेह, आठों विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य कोण शाल्मली वृक्ष की शेष तीन डालों पर स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

चहुं दिश शाल्मलि परिवार, एक लाख चालीस हजार ।
एक शतक उगणीस गिणाय, तिनपे भवन जजूं जिनराय ।।

ॐ ह्रीं शाल्मली नामा वृक्ष की चहुँ दिश एक लाख चालीस हजार एक सौ उगणीस परिवार वृक्ष पै व्यन्तर वास स्थित श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम ।। ६ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की कोण द्वय, नेरित्य अरु ईशान ।
कुरु वृक्ष पै भवन जिन, जयमाला उर आन ।।

चौपाई—दीप धातकी पश्चिम दिशा, अचल मेरु मधि भाग जु बसा ।
ताकी लखि ले कोण ईशान, नीलाचल सूं दक्षिण जान ।।१।।
सीतोदा तट पूरब जोय, वृक्ष धातकी तिस थल होय ।
और कथन सब पूर्व निहार, या सम नैऋत्य कोण विचार ।।२।।

वृक्ष दोय की दोई कोण, तिनपै भवन जिनेश्वर होण ।
सदा सासतो भविजन जोय, मैं बहु हर्षि जोड़ कर दोय ।।३।।
तिस थल वन्दे सुरपति आय, तिस थल मुनि चारण वन्दाय ।
खगधर वन्दे तिस थल जाय, असुर सुरादिक वन्दे धाय ।।४।।
शक्ति बिना हम इहां वन्दाय, मन वच तन त्रय योग लगाय ।
तुमरो सुयश सुण्यौ मैं कांन, मोह महातम नाशन भान ।।५।।
इक इक तरु की शाखा चार, मुख्य एक है करो विचार ।
तामें सिद्धकूट अभिराम, बाकी त्रय में सुर विश्राम ।।६।।
इक इक तरु के जो परिवार, वृक्षो पै व्यन्तर परिवार ।
सभी वृक्ष है प्रथ्वीकाय, नादि नन्त गाये जिनराय ।।७।।
फल जानो आवलां समान, कोंपल पदम मणी सम जान ।
फूल अनेक रंग के होय, पत्ते मरकत मणि के सोय ।।८।।
सब वृक्षों पर है जिन धाम, बिम्ब एक सत वसु अभिराम ।
भाव सहित जो वंदन करे, सो सब अपने कलमल हरे ।।९।।
रचना समवशरण सम कही, कवि से वर्णन होवे नहीं ।
सिंहासन अनुपम है तीन, ऊपर छत्र फिरे है तीन ।।१०।।
मंगल द्रव्य तना परिमान, इक लख चौविस सहस प्रमान ।
चारि सतक सोलह सब होय, नव प्रकार की निधियाँ सोय ।।११।।
तिनकी संख्या का विस्तार, एक लाख उनताल हजार ।
नो से अरसटि नो विधी जान, सुनो धुजाओं का परिमान ।।१२।।
चार लाख सत्तरि हजार, आठ सतक अस्सी है सार ।
है प्रभु में संसार मंझार, भटका काल अनन्त न पार ।।१३।।

ताहि मिटावन धरि उर प्रेम, तुम पद शीश धरो में 'नेम'।
मो सूं कर्म कियो बहु जोर, अब ही नाशो कहूं बहोरि ।।१४।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की नेऋत्य कोण ईशान कोण विषे धातकी शालमली नामा कुरु वृक्षन पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्।

गीता छन्द--नैऋत्य कौण ईशान, निदिसा अचल मेरु की रखो।
कुरु वृक्ष दोय जु धातकी, पै भवन श्री जिन दोय लिखो ।।
तिन भवन को जे पाठ भविजन, करत मन वच काय जी।
ते लेय इन्द्र नरेश पदवी, फेर शिवपुर जायजी ।। इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु पूर्व दिस आठ वक्षार गिरी
आठ श्री जिन भवन पूजा नं. ४४

चौपय्या वृत्त छंद--अचल मेरु की पूरव दिश में, षोडश क्षेत्र विदेह बसाय।
तिनके बीच अश्वमुख सुन्दर, आठ अचल वक्षार गिणाय ।।
तिन आठन के सिर पर जिनवर, भवन आठ हैं सुख के दाय।
तिन भवनों की पूजा करणा, आह्वानन करते इस ठाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश सोलह विदेह क्षेत्रन में आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् स न्निधिकरणम्।

गीता छंद-सुर गंग-नीर भराय झारी, कनक की कर में लई।
सिर नाय गुण, उच्चार, तुमरे चरण ढिग धारा दई ।।
श्री अचल मेरु विदेह पूरव, देश सोलह मधि बसै।
वक्षार गिर सिरि आठ जिनवर, भवन पूजत अघ नसै ।।टेक।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु को पूरब विदेह के सोलह देशन बीच आठ वक्षार गिर शोष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः ।। जलम् ।।

शीतल पुनीत सुगन्ध चन्दन, घसत केसर डारि कै ।
धरि कनक भाजन लेत करतैं, देहु भव तप टारि कैं ।। श्री अचल मेरु···चन्दनम्

चन्द्र द्युति सम श्वेत सुंदर, लखि अखंडित लीजिये ।
जल धोय तंदुल कनक, थाली पुंज अति विधि दीजिये ।। श्री अचल मेरु···अक्षतम्

फूल जाति अनेक प्राशुक, लखि सुगंधित लाइये ।
तहां रजत कंचन के मनोहर, लेइ जिन गुण गाइये ।।
श्री अचल मेरु विदेह पूरव, देश सोलह मधि बसैं ।
वक्षार गिरि सिर आठ जिनवर, भवन पूजत अघ नसैं ।। श्री अचल मेरु···पुष्पम्

षट्रस प्रपूरित शुद्ध विधि करि लेत बहु नैवेद्य जी ।
धरि कनक थाली अरज तुमसे करहु क्षुधा नु छेद जी ।। श्री अचल मेरु···नैवेद्यं

मिथ्यात तम हर प्रगट शिव मग करण हारे आप जी ।
तातैं रतनमय दीप लेकैं शेत तुम गुण गाय जी ।। श्री अचल मेरु···दीपम्

जाकी पवन चाले सकल वन कूं करत चंचल तरु ।
ताकी अनूपम धूप लेकैं, अग्नि घट मांही धरूं ।। श्री अचल मेरु···धूपम्

मोक्ष फल के मिलन काजैं, अशुभ फल के मेटने ।
नारेल पिस्ता आदि शुभ फल लेत तुम पद मेटने ।। श्री अचल मेरु···फलम्

शुचि नीर चंदन फूल तन्दुल दीप नेवज लेयकैं ।
फल धूप थाल धराय कीनौं अरघ उर हरषेयकैं ।। श्री अचल मेरु···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

कच्छ देश को सीमाकार, चित्रकूट लखि ही वक्षार ।
सिद्धकूट लखि ताके शीष, भवन जजूं मैं श्री जगदीश ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु का पूरब दिश कच्छ देश का सीमाकार चित्रकूट नामा वक्षार गिरि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

तासूं पूरब दिश मन लाय, पद्मकूट वक्षार कहाय।
सिद्धकूट ताके सिर जान, श्री जिन भवन जजूं हित मान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूरब दिश पद्मकूट वक्षार गिरि सिर सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

तासूं पूरब लेहु निहार, नलिन कूट नामा वक्षार।
ता सिर सिद्धकूठ कहलाय, भवन जजूं सब धल जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूरब दिश नलिन नामा कूट वक्षार गिरि पै सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

तासूं आगे लेहु विचार, एक शैल नामा वक्षार।
सिद्धकूट सिर ताके पाय, जिनवर गेह जजूं मैं गाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूरब दिश एक शैल गिरि वक्षार गिरि के शीप सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

तासूं पश्चिम दिशा मंझार, त्रिकूटा नामा वक्षार।
ता पर सिद्धकूट जिन गेह, पूजूं वसु विधि मन धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूरब दिश त्रिकूटा नामा वक्षार गिरि के शीष सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

तासूं अपर दिशा में जान, गिर वक्षार वैश्रवण मान।
ताके सिद्धकूट पै जाय, भवन जजूं मैं श्री जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व विदेह मध्य वैश्रमण नामा वक्षार गिरि पै सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

पश्चिम दिशा देश की जाय, अंजन गिर वक्षार लहाय।
सिद्धकूट श्री जिनवर धाम, पूजत हूं मैं करि पदिणाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व विदेह क्षेत्र मध्य अंजन गिरि वक्षार पै सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

ताहि देश को सीमाकार, आत्मांजन नामा वक्षार ।
सिद्धकूट पै जिनगृह जोय, वसु विधि पूजूं सुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व विदेहन क्षेत्रन मध्य आत्मांजन नामा वक्षार गिर पै सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय तथा इन आठों वक्षारों पर वांकी तीन-तीन फुट व्यन्तर देवों के स्थानक सम्बन्धी है उन समस्त कूटों में आदि अनन्त जिन भवन बने हुए हैं समस्त जिन भवनों में एक सौ आठ-एक सौ आठ पांच सौ धनुप ऊंचाई वाली प्रतिमाएं पद्माशन में विराजमान हो उन सबों की वंदन पूजन विद्याधर और देव वगेरह करते हैं ये वृक्षार पर्वत तपे हुए सोने की कांति जैसे हैं तथा सारे पर्वत दीवार सरीके नीचे से ऊपर को पांच (सौ योजन की चौड़ाई में एवं अपने बरावर देशों की लम्बाई समान है इन आठों पर्वत सम्बन्धी समस्त जिन भवन सम्बन्धी श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

अचल मेरु पूरब दिशा, सीता सरिता पास ।
भद्रशाल वेदी निकट, व्यन्तर सुर आवास ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिसा में भद्रशाल वन की वेदी के पास व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

अचल मेरु पूरव दिसा, छै सरिता जु विभंग ।
उपकारक नदियों सहित, वन्दू जिन गृह संग ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूरव दिसा में छै विभंगा नदी तथा एक लाख अड़सठ हजार सहायक नदियों के दोनों तरफ सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १० ।।

सीता के दक्षिण तथा, उत्तर दोनों ओर ।
सब थल देवारण्य के भवन जजूं कर जोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिशा में देवारण्य बन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ११ ।।

अचल मेरु के पूर्व में सोरी प्रभु जिनराय ।
श्री विशाल जिन देव को, पूजूं अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिशा में सोरी प्रभ जिनेन्द्राय तथा विशाल कीर्ति जिनेन्द्राय तथा जो हो गये और होंवेंगे ते सब जिनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १२ ।।

अचल मेरु के पूर्व में, आठ गिरी वक्षार।
तिन पर सब जिन भवन को, अर्चूं बारम्बार ।।

ॐ ह्रीं अचल पूर्व दिसा में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १३ ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की पूर्व दिश, आठ अचल वक्षार।
शीस जिनेश्वर भवन की, जयमाला सुणि सार ।।

छन्द चाल—लखि अचल मेरु की भाई, दिश पूरब में सुखदाई।
षोडस जु क्षेत्र विदेहा, भवि जानो उर धरि नेहा ।।१।।
सब जम्बू द्वीप समाना, देशन के नाम पिछाना।
सरितादिक वसु वक्षारा, इन सबका भेद है न्यारा ।।२।।
अब और कथन सब भाई, गिर सरिताद्विक जु लम्बाई।
अरु व्यास ऊंचाई सारी, भवि उर में लेहु विचारी ।।३।।
पक्षिम जू धातकी नामा, मधि अचल मेरु अभिरामा।
ताकी जो पूर्व विदेहा, रचना सबही जु भलेहा ।।४।।
समझो इस थल के मांही, कछु जानो और जु नाहीं।
वक्षार गिरन के शीसा, सिद्धकूट भवन जगदीसा ।।५।।
उपमा इन काकी दीजे, जग मांही वस्तु सुणीजे।
तिन भवननि के मधि भाई, प्रतिमा है श्री जिनराई ।।६।।
एक शतक आठ अरु जानो, भवि एक भवन में मानो।
ऐसे सब भवनन मांहि, जिन बिम्ब लसैं शक नांही ।।७।।
तहां पूजन को निति आवे, सुर असुर खगादिक ध्यावे।
वसु द्रव्य लिये भरि थाली, भाषत मुख जिन गुण माली ।।८।।

तुम श्री जिन कर्म विडारे, तुम भविजन के दुःख हारे ।
तुम पंचम गति के दाता, तिहुं जग में हो विख्याता ।।९।।
तुमरो सुण नाम जु काना, उर हरख्यो "नेम" महाना ।
"नमि" शीष कहे प्रभु तोकूं, गति पंचम देवो मोकूं ।।१०।।

दोहा—आठ अचल वक्षार सिर, मन्दिर श्री जिनराय ।
तिस थल गाय वजाय के, दीजै अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।

चौपाई—अचल मेरु की पूर्व विदेह, वसु वक्षार जिनेश्वर गेह ।
तिनको पाठ करे नर कोय, इन्द्रादिक पद पावै सोय ।। इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु की पूर्व दिशा में सोलह रूपाचल श्री जिन भवन पूजा नं. ४५

स्थापना—अचल मेरु की पूर्व विदेह, षोडस रूपाचल जिन गेह ।
आह्वानन तिनकी जु करेय, पूजन काजे उर में ध्येय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व षोडष विदेह मध्य षोडश रूपाचल शीष षोडश श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ससिधिकरम् ।

चाल नन्दीश्वर द्वीप उत्तम गंगा का नीर भारी कनक भरूं ।
पूजा की—जर जनम मरण की पीर, नासौ अरज करूं ।।
गिरि अचल मेरु की पूर्व, षोडश रजत गिरा ।
षोडश जिनवर गृह सर्व, पूजत नमत सुरा ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश षोडश विदेह मध्य षोडश रूपाचल शीष षोडश श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम ।

चन्दन मलयागिर खास, कंचन थाल धरूं ।
नाशो भव भव का त्रास, इतनी अरज करूं ।। गिरि अचल···चन्दनं

वर तन्दुल उज्ज्वल लेय, तुम गुण पुंज धरूं ।
अक्षय पद मुझको देय, तुम से अरज करूं ।। गिरि अचल···अक्षतं

शुभ प्राशुक ले बहु फूल, तुम पद भेट धरूं ।
मम कामबाण के शूल, नाशो अरज करूं ।। गिरि अचल···पुष्पं

सद नेवज निर्मल लेय, कंचन थाल धरूं ।
मम क्षुधा रोग हरलेय, तुम से अरज करूं ।। गिरि अचल···नैवेद्यं

मणि नाना रतन लहाय, दीपक नाम धरूं ।
मम मोह तिमिर नशवाय, दीजे अरज करूं ।। गिरि अचल···दीपं

सद धूप अनूप बणाय, पावक कुम्भ धरूं ।
अरि आठों देहु जलाय, तुम से अरज करूं ।। गिरि अचल···धूपं

भरि शुभ फल कंचन थाल, तुम पद शीष धरूं ।
मोहि शिवफल देहु दयाल, इस विधि अरज करूं ।। गिरि अचल···फलं

ले जल फल आदिक आठ, सुवरण थाल धरूं ।
तुम गुण को करि के पाठ, शिव तिय जाय वरूं ।। गिरि अचल···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—कच्छ देश पहलो लखि लेय, रूपाचल नव कूट लसेय ।
तिस थल के श्री जिनवर धाम, अर्घ जजूं मैं सब ही ठाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश नीलाचल सूं दक्षिण दिश सीता नदी की उत्तर दिश प्रथम कच्छ नामा देश के मध्य भाग रूपाचल के शीष नव कूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

देश सुकच्छ नाम मधि भाग, रूपाचल की है तहां जाग ।
शीष कूट नव जिनवर जेह, सब थल पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन मध्य सुकच्छ नामा दूजा देश रूपाचल के शीष नव कूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

महाकच्छ लखि तीजो देश, ताके मधि रूपाचल वेस ।
शीष लसैं नव कूट महान, सब थल पूजूं श्री जिन थान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच तीजा महाकच्छ देश मध्ये रूपाचल शीष नवकूटन विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

चौथो लखि कछकावति देश, मध्य लसैं रूपाचल वेश ।
नव कूटन में जिनवर धाम, जजूं जलादिक कंचन ठाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच चौथा कच्छ कावती देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।।४।।

आवरता लखि पंचम देश, मध्य लसैं रूपाचल वेश ।
नव कूटन में श्री जिन धाम, ले नीरादि जजूं तिस ठाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच पांचवां आवरता देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

लांगलवर्त जु छठो देश, मध्य भाग रूपाचल वेश ।
सिर पर कूट लसैं नव जान, पूजूं सब थल भवन पिछानि ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बोच लांगलवर्त नामा छठा देश मध्य रूपाचल शीष नव कूटन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ६ ।।

पुष्कल देश सातवों सही, मध्य लसैं रूपाचल मही ।
ताके सिर नव कूट गिनेय, श्री जिन भवन जजूं हरषेय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच सांतवा पुष्कल देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

पुष्कलावती अष्टम देश, मध्य लसैं रूपाचत वेश ।
तामें कूट लसैं नव जोय, श्री जिन भवन जजूं सुचि होय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बोच अष्टमा पुष्कलावती देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

वत्सा देश नवम लखि लेय, मध्य भाग रूपाचल ठेय ।
नव कूटन पै जिनवर धाम, ले जलादि पूजूं सब ठाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच सीता नदी की दक्षिण दिश निषधाचल की उत्तर दिश देवारण्य वन सूं पश्चिम दिश नवमा कच्छ देश मध्य रूपाचल के शीष नव कूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

लखो सु वत्सा दशमो देश, मध्य भाग रूपाचल वेश ।
सिर पै कूट लसै नव भाय, भवन जजूं सब थल जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच दशमा सुवत्सा देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १० ।।

महावत्स लखि ग्यारम देश, मध्य भाग रूपाचल वेस ।
शीश कूट नव जिनवर धाम, ले जलादि पूंजू सब ठाम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन बीच ग्यारहवां महावत्सा देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ११ ।।

वत्सकावती बारम देश, मध्य भाग रूपाचल वेस ।
तिस थल भवन जिनेश्वर थान, वसु विधि पूंजूं उर धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं बारवां वत्सकावती देश मध्य रूपाचल शीष नवकूटन में सकल श्री भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १२ ।।

रम्य देश तेरहवों सही, मध्य लसै रूपाचल मही ।
शीष कूट नव जिनवर गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं तेरहवां रम्या देश मध्य रूपाचल शीष नव कूटन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १३ ।।

देश सुरम्यो चौदम सही, मध्य लसै रूपाचल मही ।
सिद्ध कूट नव जिनवर गेह, ले जलादि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं चौदहवां सुरम्य देश मध्य नव कूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १४ ।।

देश पन्द्रहवों है रमणीय, रूपाचल मध्य तामे ठोय ।
शीष कूट मन्दिर जगदीश, ले जलादि पूजूं अघ खीस ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश विदेह क्षेत्रन मध्य पन्द्रहवां रमणीय देश मध्य रूपाचल शीष न। कूटन में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १५ ।।

मंगलावती सोलम देस, मध्य लसै रूपाचल वेस ।
शीष कूट मन्दिर जगदीश, ले जलादि पूजूं अघ खीस ।।

ॐ ह्रीं विदेह क्षेत्रन मध्य सोलहवां मंगलावती देश मध्य रूपाचल शीष नव कूटन विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १६ ।।

सूचना

ये सोलह देश सीता नदी के दोनों तरफ आठ आठ हैं । इन आठों की चौड़ाई सत्तरह हजार सात सौ तीन योजन है । तो एक की चौड़ाई दो हजार दो सौ बाहर और ७/८ योजन है इन देशों की एक तरफ विभंगा नदी या दूसरी तरफ वक्षार पर्वत है । तथा उत्तर दक्षिण की गणना में एक तरफ शीता नदी तथा दूसरी तरफ निश्धाचल पर्वत है । इन हरेक देश में लाखों नगरियाँ होते हुये भी एक एक प्रसिद्ध नगरी है जिसमें तीर्थङ्करादिक हमेशा होते रहते हैं । तथा इन सब देशों में चौथे काल की शुरू वाद की रीत (कर्म भूमि) वर्तती रहती है । काल की फिरन नहीं होती है ।

भूते योजन ऊंच दस, दक्षिण उत्तर ओर ।
एक सतक दस खग नगर, जिन मंदिर चहुं ओर ।।

भूते योजन बीस पर, सुर व्यन्तर आवास ।
दक्षिण उत्तर दो तरफ, वन्दूं जिन गृह खास ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के विदेह क्षेत्र में १६ रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊंची दक्षिण उत्तर दोनों कटनीं पर एक सौ दस विद्याधर की नगरियों में तथा बीस योजन ऊंचो दोनों तरफ व्यन्तर देवथान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग गिरि नील से, निकसी सरिता दोय ।
रक्ता रक्तोदा लखो, सीता में अवलोय ।।

उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों ओर ।
जिन गृह पूजों भाव से, पावन शिव का ठोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पूर्व विदेह में पहले आठ देस सम्बन्धी रक्त-रक्तोदा सोलह नदियां नीलाचल के मूल भाग से निकल कर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिलीं। इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियां चौदह-चौदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग गिरि निषध से, निकली सरिता दोय।
गंगा सिन्धू नाम की, सीता में अवलोय ।।
उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों ओर।
पूजूं प्रीत लगाय के, बनि जाऊं सिर मोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पूर्व विदेह में दूसरे आठ देश सम्बन्धी गंगा सिन्धु सोलह नदियां निषधाचल के मूल भाग से निकल कर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिली। इन सोलह नदियों के तटों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियां चौदह-चौदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

म्लेक्ष खण्ड इक के मधि, वृषभाचल के पास।
आर्यखण्ड के नगर में, वन्दूं जिन गृह खास ।।
अचल मेरु के पूर्व में, मुनिवर तीन प्रकार।
करूं वन्दना भाव से, होने भवि दधि पार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पूर्व विदेह में सोलह देव सम्बन्धी पांच-पांच म्लेक्ष खण्ड हैं, बहत्तर के तीन के बीच में वृषभाचल पर्वतों सम्बन्धी तथा आर्य खण्डों में एक नगरी जिसमें तीर्थङ्करादि होते हैं, उन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की पूर्व दिश, सोलह क्षेत्र विदेह।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला सुणि लेहु ।।

बेसरी छन्द—अचल मेरु तें पूरब जाना, षोडश क्षेत्र विदेह लखाना।
तिन षोडश के मध्य जु भागा, रूपाचल लखि षोडश जागा ।।१।।

और कथन सब पूर्व निहारो, सिद्धकूट जिन भवन विचारो।
शेष कूट सुर व्यन्तर वासा, कटनी दोय तरफ बहु खासा ॥२॥
तिनमें खगधर सुर पुर सोहै, देखत शोभा मन को मोहै।
श्री जिन धाम विषै लखि भाई, मंगल द्रव्य धरे सुखदाई ॥३॥
प्रातिहार्य आठों तहां छाजै, चहुं दिश तोरण केतु विराजै।
माला लुम्बित बहु सुखकारी, मान स्तम्भ बने जु अगारी ॥४॥
भीतर प्रतिमा श्री जिनराजा, एक शतक अरु आठ समाजा।
एक भवन की इस विधि जानौ, इस विधि सोलह भवन बखानौ ॥५॥
दरस करत पातक सब नाशैं, ध्यान धरत केवल परकाशैं।
पूजत पुण्य बढ़ै जु अपारा, चिंतन दुःख नाशै संसारा ॥६॥
और कथन हम कबलौं गावे, तुच्छ बुद्धि नहिं पार लहावे।
श्री जिन गुण को अन्त न आवे, गणधर आदिक थकि-थकि जावे ॥७॥
लखि करि 'नेम' कियो जु विचारा, श्री जिन दुःख हरो जु हमारा।
तुम बिन जग दुःख नाही जावे, तातैं तुम पद शीष नमावैं ॥८॥

दोहा—अचल मेरु की पूर्व दिश, रूपाचल के शीष।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन, भवन देखि जगदीश ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पूर्व दिश षोडश विदेह क्षेत्र मध्य षोडश रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

अडिल्ल छन्द—अचल मेरु की पूर्व विदेहन में बसैं।
सोलह भवन जिनेश खगाचल पै लसैं ॥
तिनको पाठ पढ़ै रु सुणे रुचि सूं सदा।
ते पावे शिवथान तोड़ि चहुं गति दुखा ॥ इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा नं. ४६

चौपाई—अचल मेरु दिश दक्षिण जाय, तीन कुलाचल पै जिनराय।
भवन तणी हम करत आह्वान, पूजन को त्रय बार बखान॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक गीता छंद—पद्म द्रह को नीर लेके, कनक झारी में भरूं।
सिर नाय तुम गुण गाय, जिनजी हरषि उर धारा करूं॥
मेरु अचल की दखिन दिसि में तीन कुलागिर सिर लसैं।
जिनराज मन्दिर तीन पूजत तुर्त भव-भव अघ नसैं॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

शीतल सुगन्धित हेरि, चन्दन डारि केशर को घंसूं।
धरि कनक जाम उठाय कर, द्वय लेत ही भव तप नसूं॥
मेरु अचल की दखिन दिशि में, तिन कुलाचल सिर लसैं।
जिनराज मन्दिर तीन पूजत, तुरत भव भव अघ नसैं॥ मेरु अचल की···चंदनं

तन्दुल अखंडित बहुत उज्ज्वल, कांति विध की परिहरैं।
जल धोय ताके कनक भाजन, पुंज तुम गुण को धरैं॥ मेरु अचल की···अक्षतं

कल्प तरु के फूल सुन्दर, लेय तुम पद धरत हैं।
कामबाण निवार जिनवर, अरज या हम करत हैं॥ मेरु अचल की···पुष्पं

छुद निवारण नाम तुमरो, जगत में जाहिर खरो।
नैवेद्य निर्मल भेंट तुमरी, धरत वाधा परिहरो॥ मेरु अचल की···नैवेद्यं

मोह तम अति छाय हमको, ज्ञान धन दीसै नही।
ताके निवारण के जु कारण, दीप लें भेंटू सही॥ मेरु अलच की दीपं

कर्म पुंज जलाय दीने, लियो शिवपुर जायकैं।
इस हेतु धूप अनूप ले, घटि अग्नि देत खिपायकैं॥ मेरु अचल की···धपं
मुक्तिफल दातार तुम ही, तीन जग में एक जी।
या हेत तुम पद भेंट, शुभफल धरत लाय अनेक जी॥ मेरु अचल की···फलं
जल गंध आदि पुनीत आठों, कनक थाल धरायकैं।
जय शब्द करि द्वय हाथ सेती, लेत मांहि उठायकैं॥ मेरु अचल की अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चाल विजयानी सेठ की—गिरि अचल सुं जी दक्षिण दिशा विचारिये।
हिमवन पै जी ग्यारह कूट निहारिये॥
पहिले पै जी सिद्धकूट जिन धाम है।
फिरि दस में जी व्यन्तर देव मुकाम है॥
गिरि के बिच जी, पद्म द्रह मन भावना।
तामें सूं जी तीन नदी निकसावना॥
उपकारक जी सहस छप्पना आन है।
जिनवर गृह जी सब थल पूज महान है॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिशा में तीन कुलाचल में से हिमवन कुलाचल पर ग्यारह कूट जिनमें प्रथम में सिद्धकूट मन्दिर बाकी दस में व्यन्तर स्थान सम्बन्धी मन्दिरों तथा पद्म नाम के तालाब के बीच कमल पर श्री देवी का स्थान सम्बन्धी मन्दिरों तथा तालाब के तीन द्वारों से तीन नदियां निकली उनकी सहायक नदियां छप्पन हजार नदियों के दोनों तट पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम॥ १॥

दूजा गिरि जी नाम महा हिमवान है।
तसु ऊपर जी आठ सु कूट महान है॥
सिद्धकूट सू जी पूरब में अति सोभना।
जिनवर गृह जी सब ही के मन मोहना॥

तालाब सूं जी महा पदम बिच की थली।
तामें सूं जी निकसि दोय नदियां चली॥
सहकारी जी सरिता चौरासी सहस।
मैं सब थल जी जिनगृह पूजूं होई खुस॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिशा में महा हिमवान कुलाचल पर्वत पर आठ कूटों में से पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी सात में व्यन्तर देव स्थानक सम्बन्धी मन्दिर तथा तालाब के मध्य में महा पद्म के बीच कमल पर ह्री देवी का महल सम्बन्धी मन्दिरों तथा तालाब से दोय नदी निकली उनकी सहायक चौरासी हजार नदियों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ २ ॥

गिरि निषध पै जी नव कूटों में जिन भवन।
सिद्धकूट सुं जी प्रथम कूट में मन हरन॥
बाकी में जी व्यन्तर देवों के सदन।
बिच भाग में जी, दिरह तिगंछ जु है सघन॥
तसु निकसी जी सरिता दोनों द्वार से।
उपकारक जी नदियां लख विस्तार से॥
चालीस सु जी सहस मिली सब आन है।
मैं पूजूं जी जिन गृह सब स्थान है॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिशा में निषध कुलाचल पर्वत पर नौ कूटों में से पहले में सिद्धकूट मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर देवों के थानक सम्बन्धी मन्दिरों तथा गिर के बीच में तिगंछ तालाब पर कमल पर धृति देवी के महल सम्बन्धी मन्दिरों तथा तालाब से दोय नदियां निकली, तिनको एक लाख चालीस हजार सहायक नदियां सब नदियों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम् ॥ ३ ॥

दिसि दक्षिण जी तीन कुलाचल की तनी।
बिच बिच में जी भोग भूमि तीनों भनी॥
गिरि नाभि सु जी दो परवत के थान में।
नदियों के जी सागर के सु मिलान में॥

जिन भवन सूं जी सुर व्यन्तर के हो जहां।
तन मन मे जी मैं पूजूं वंदूं वहां॥
ता फल से जी शिव सुन्दरि के संग में।
अन अंता जी काल बिते निज रंग में॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिशा में तीन कुलाचलों के बीच-बीच में उत्तम, मध्यम, जघन्य तीनों भोग भूमि सम्बन्धी तथा दो नाभि गिरि सम्बन्धी तथा सातों नदियां समुद्र में मिली तथा जम्बू द्वीप की वेदी का सम्बन्धी तथा और जहाँ-जहाँ भी व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। अर्घम्॥ ४॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की दक्षिण दिश, तीन कुलाचल शीष।
जयमाला जिन भवन की, सुणो भव्य अघ खीस॥

बेसरी छंद—अचल मेरु सूं दक्षिण जाय, तीन कुलाचल लेहु लखाय।
प्रथम कुलाचल है हिमवान, दूज महा हिमवान बखान॥१॥
तीजो निषधाचल भवि होय, और कथन सब पूरब जोय।
विजय मेरु को कुल गिरि तीन, दक्षिण दिशवत लेवो चिन्ह॥२॥
सिद्धकूट में श्री जिन धाम, शेष कूट में व्यन्तर ठाम।
नदी द्रहादिक सब ही विचारि, जम्बु द्वीप वत लेहु निहारि॥३॥
व्यास लम्बाई में है फेर, "त्रिलोकसार" में समझो हेर।
जिस थल है श्री जिनवर गेह, सुर नर पूजें उर धरि नेह॥४॥
लावें द्रव्य मनोग्य जु आठ कर बाजन के बहु विधि ठाठ।
केई नाचें तान लहाय, केई सुमरें श्री जिनराय॥५॥
केई दर्शन करत जिनेश, केई भाषें धर्म जु वेस।
केई जय जय शब्द कराय, इहि विधि आनंद निशदिन पाय॥६॥

सब ही कथन कहत नहिं बणें, बुद्धि अल्प चित व्याकुल पणें।
तातैं "नेम" नमें जिनराय, दीज्यो निज तुम ज्ञान लखाय ॥७॥

दोहा--अचल मेरु की दक्षिण दिश, तीन कुलाचल पाय।
तिनपै श्री जिन भवन कूं, दीजै अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल, शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

अडिल्ल छन्द--अचल मेरु दिश दक्षिण, कुलगिरि तीन जी।
तिनके सिर जिन गेह, तीन गिण लीन जो॥
तिन भवनन को पाठ सुणे अरु जे पढ़े।
ते तसु बैरी जोति जाय शिव गढ़ चढ़ें॥ इत्याशींवाद

अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षैत्र मध्य एक रूपाचल शीष पूजा नं. ४७

गीता छन्द--अचल मेरु दक्षिण दिश में, भरत क्षेत्र निहारियो।
मधि भाग ताकै रजत गिर सिर भवन जिन इक धारियो॥
आह्वानन ताकी करत इस थल पूजने के कारणें।
वच काय मन सिर नाय चहुं गति भ्रमण रोग निवारणें॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल--गंगा नीर पुनीत कनक झारी भरूं, कर तें देय जु धार जनम मृत्यु हरूं।
अचल मेरु की दखिन खगाचल जोयकें, श्री जिन मंदिर एक जजूं शुचिहोयकें॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः जलम्।

परम सुगंधित जोय घसूं मलयागिरं,
भव तप नाशन काज लियो नमि निज सिरं।

अचल मेरु की दखिण खगाचल जोयकैं।
श्री जिन मन्दिर एक जजूं सुचि होयकैं ॥ अचल मेरु·· चंदनं

उज्ज्वल मधुर अखंड सरल शुभ अक्षतं।
करतैं कंचन थाल पुंज गुण रक्षतं ॥ अचल मेरु···अक्षतं

कल्प तरु के फूल मनोहर लायकैं।
कंचन थाल धराय लेत सिर नायकैं ॥ अचल मेरु···पुष्पं

क्षुधा वेदनी रोग महा दुःख देत है।
ता कारण नैवेद्य पुनीत जु लेत है ॥ अचल मेरु नैवेद्यं

निर्मल द्युति को दीप कनक के थाल में।
धरि लीनो फिर नांहि फंसू जग जाल में ॥ अचल मेरु · दीपं

परम सुगंधित धूप अनूपम लेय कैं।
मन वच तन हरषात शिखा घट खेय कैं ॥ अचल मेरु · धूपं

मोक्ष महा फल काज दयानिधि नाथ जी।
प्राशुक फल तुम भेट धरूं ले हाथ जी ॥ अचल मेरु··फलं

जल चंदन चरु फूल दीप फल अक्षतं।
धूप कनक धरि थाल अर्घ ले रक्षतं ॥ अचल मेरु···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

अचल मेरु दक्षिण दिश जाय, पहला भरत क्षेत्र कहलाय।
ताके बीच रूप गिरि एक, नव कूटन युत रचनानेक ॥
सिद्धकूट पूरब के मांहि, वसु में व्यंतर देव रहाहि।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, मैं यहां पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश में भरत क्षेत्र के बीच रूपाचल पर्वत पर नव कूटन में पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी आठों में व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्योनमः। अर्घम् ॥१॥

दश योजन ऊपर है सोय, दक्षिण दिश की कटनी होय ।
विद्याधर के नगर पचास, इन [illegible] में जैन भवन है खास ।।

दूजी तरफा कटनि जोय, उत्तर दिशि की जानो सोय ।
विद्याधर के नगर सु साठ, पूजन करूं बनाकर ठाठ ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के दक्षिण दिशा में भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल पर्वत पर दक्षिण उत्तर दोनों श्रेणियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

भू तैं योजन ऊपर बीस, उभय तरफ मन्दिर जगदीश ।
व्यन्तर थल में जिनवर गेह, पूज करूं धरि उर में वेह ।।

रूपाचल पर सब थल जाय, रत्नत्रय युत सब मुनिराय ।
तिनके चरणनि अर्घ चढ़ाय, बीन बजाऊं अति हर्षाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊपर दोनों श्रेणियों में व्यन्तर स्थानकों सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो तथा रत्नत्रय मुनिराज । अर्घम् ।। ३ ।।

अडिल्ल—अचल सु मेरु भरत खगाचल की मही ।
खगधर व्यन्तर वास, शीष जिनवर सही ।।

नीरादिक ले आठ, सकल थल को जजूं ।
भव वन कुंचो देय, जाय शिव सुख जजूं ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल सम्बन्धो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । पूर्णार्घम् ।। ४ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की दक्षिण दिश, रूपाचल जिन थान ।
जयमाला ता भवन की, सुणो भव्य दे कान ।।

पद्धड़ी छंद—जय अचल मेरु ते दक्षिण जाय, जय भरत क्षेत्र भवि मन हराय ।
जय भरत क्षेत्र के मध्य भाग, लखि लेहु खगाचल की जु जाग ।।१।।

सब कथन पूर्ववत लेहु चीन, सिद्धकूट भवन जिन लखि प्रवीन ।
त्रय द्वार युक्त त्रय कोट पाय, बहु केतु लगी नभ तें जु जाय ।।२।।
ते लहत पवन करि लखहु भाव, जिन सेव काज मनु ले बुलाय ।
सिर दुरत चंवर चौसठ सुजान, सिर पर जु छत्र त्रय लखि महान ।।३।।
सुर दुंदुभि सोरभ होत जोर, सुर पुष्प वृष्टि चहुं पड़त ओर ।
त्रय पाद पीठ शोभा अपार, भामंडल की छवि ले निहार ।।४।।
पादप असोक आगे लसान, ध्वनि दिष्य खिरे त्रय काल जान ।
ये प्रातिहार्य आठों लसाय, मंगल विभूति भवि कौ गिणाय ।।५।।
तिस थान मांहि तिहुं जगत ईश, तिष्ठे जु "नेम" लखि नमत शीष ।
तुम देहु जिनेश्वर मुक्ति थान, गति चार दुःख मेटो महान ।।६।।

दोहा—अचल मेरु की दक्षिण दिश, रूपाचल सिर जोय ।
अर्घ चढ़ावौ भवन जिन, मन वच तन शुचि होय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्ये रूपाचल पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला महा अर्घ्यम् ।

चौपाई—अचल मेरु दिश दक्षिण विचारि, रूपाचल जिन भवन निहार ।
ताको पाठ सुणे अरु पढ़ें, ते नर मुक्ति महल पर चढ़ें ।। इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षैत्र मध्य आर्यखण्ड में तीन चौबीसी पूजा नं. ४८

चौपाई—अचल मेरु ते दक्षिण जाय, भरत क्षैत्र मधि आरज पाय ।
चौबीसी जहाँ वरतैं तीन, आह्वानन तिनकी हम कीन ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री वृषभादि द्वा सप्तति जिनेभ्यो अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरम् ।

गीता छन्द--ले नीर गंगा कनक झारी, भरत उर हरषाय कै ।
द्वय हाथ गहि कै देत धारा, रोग तीन नशाय कै ।।
मेरु अचल की दक्षिण दिश में, भरत मधि आरज सही ।
तीनूं चौबीसी चरण जुग कूं, पूजतो इस ही मही ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य आर्यखण्ड में श्री वृषभादि द्वा सप्तति जिनेभ्यो नमः । जलम् ।

गीता–शीतल सुगन्धित मलयगिर को, घसत चंदन बावनो ।
छंद घनसार केसर कनक भाजन, लेय जिन गुण गावनो ।। मेरु अचल···चन्दनं

तन्दुल अखंडित मधुर उज्जवल, चंद की धुति को हरै ।
जल धोय कंचन थाल मांही, पुंज तुम गुण के धरै ।। मेरु अचल···अक्षतं

प्राशुक अनूपम फूल सुन्दर, लेत नाना वरण के ।
पद निकट तुमरे धरत जिनवर, काम बाण जु हरण के ।। मेरु अचल···पुष्पं

वहु भांति विधि सों करत नेवज, तुरत ताजे लैय के ।
रसछऊ पूरित कनक थाली, धरत उर हरषेय के ।। मेरु अचल···नैवेद्यं

दीपक अनूपम रतन को, ले धरत कंचन थाल में ।
धरि भेंट तुमरी नाहिं कबहूं, फंसु जग के जाल में ।। मेरु अचल···दीपं

निर्मल सुगन्धित धूप करि के, अग्नि घट में मैं दहूं ।
वसु कर्म मेरे जाल जिनवर, अरज तुम सो या कहूं ।। मेरु अचल···धूपं

फल विविध पावन कनक भाजन, लेय तुम पद ढिग धरूं ।
फल मुक्ति मोको देहु जिनजी नाय, सिर पायन परूं ।। मेरु अचल···फलं

ले द्रव्य आठों नीर आदिक, कनक भाजन में रचूं ।
कर ते उठाय बजाय बाजे, हरषि उर बहु विधि नचूं ।। मेरु अचल···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा--अचल मेरु दक्षिण दिसा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
भूतकाल के में जजूं, चौबीसी जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी भूतकाल की चौबीस क्रम से १. वृषभ २. प्रिय मित्र ३. शान्तीनाथ ४. सुमतिनाथ ५. अतीत ६. अव्यक्त ७. कलसेन ८. सर्वजिन ९. प्रबुध १०. आनन्द ११. सौधर्म १२. अर्घदीप १३. वज्रस १४. बुद्ध १५. अवंध १६. अतीत १७. प्रमुख १८. पल्पोपम १९. श्री अपोक २०. तिष्ठित २१. धृगनर्पभ २२. देवेन्द्र २३. प्रयछन २४. शिवनाथ जिनेन्द्राय नमः । अर्घम् ।। १ ।।

अचल मेरु दक्षिण दिसा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
वर्तमान के में जजूं, चौबीसी जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिसा भरत क्षेत्र सम्बन्धी वर्तमान चौबीसी क्रम से १. श्री विश्वचन्द्र २. कपिल ३. वृषभनाथ ४. प्रियेतेज ५. प्रथम ६. विषमांग ७. चारितनाथ ८. प्रभादित्य ९. मंजु केशी १०. पीतवास ११, सुराधिप १२. दयानाथ १३. सहस भूजा १४. जिनसिंह १५. रेवतीनाथ १६. बाहु १७. श्रीमाली १८. आयोग १९. योगोनाथ २० कामरिपु २१. अरण्य राहु २२, नेमिनाथ २३. गर्भज्ञान २४, एका जिनेन्द्राय नमः । अर्घम ।। २ ।।

अचल मेरु दक्षिण दिसा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
होनहार चौबीस जिन, बन्दू मन वच काय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी भविष्य की चौबीस क्रम से १. श्री—रत्नवेश २. चक्रहस्त ३, वृषभनाथ ४, परमेसुर ५. सुमूर्ति ६, भूहूर्तिक ७. निः केसी ८. प्रसासिक ९. निराहार १०. अमूर्तिक ११. द्विजनाथ १२. स्वेतागंद १३. अजसनाथ १४. देवनाथ १५ देवादिक १६. पुष्पनाथ १७. प्रतीच्युत १८, नागेन्द्र १९, नपोदिक २०. दनानन २१. आरण्यक २२. दसानीक २३. सात्विक २४. सुबोध जिनेन्द्रय नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ वार)

जयमाला

दोहा--अचल मेरु ते दक्षिण दिस, आरज भरत मंझार ।
चौबीसी तीनों तणी, जयमाला सुणि सार ।।

छन्द बेसरी–अपर धात की द्वीप कहावे, अचल मेरु मधि भाग लखावें।
तासौं दक्षिण दिश में जाना, भरत क्षेत्र मधि आरज थाना ॥१॥

चौबीसी तीनों तहां पावे, नाम लेत पातक मिट जावे।
प्रथम नमूं श्री वृषभ जिनेशा, नमि प्रिय मित्र जु हरत कलेशा ॥२॥

शांतिनाथ जिनके गुण गावूं, सुमति जिनेश्वर पद सिर नावूं।
दीन दयाल अतीत जिनेशा, जिन अव्यक्त हरे अधरेखा ॥३॥

श्री कलसेन जिनेश्वर सेवूं, सर्व जिनेश्वर नमि शिव लेवूं।
नमू प्रबुध जिनेश्वर स्वामी, तिहुं जग मांहि प्रवज्जित नामी ॥४॥

श्री सोधर्म जिनेश्वर बंदू, अर्घा दीप नशै जग फन्दू।
वज्रस जिन भविजन सुखदाता, बुद्ध जिनेश्वर तिहुं जग त्राता ॥५॥

नमू प्रबुद्ध बंध सब नाशा, जिन अतीत जिन धर्म प्रकाशा।
श्री जिन प्रमुख दयानिधि नामी, पल्योपम जिन अन्तरयामी ॥६॥

चन्द्र अकोपक कोप हरंता, तिष्ठित जिन शिव सुक्ख करंता।
श्री मृगनाभि चरण सिर नावूं जिन देवेन्द्र सेय सुख पावूं ॥७॥

वंदू प्रयछन श्री जिन देवा, श्री शिवनाथ करूं नित सेवा।
विश्वचन्द्र तिहुं जगत धुरारे, कपिल जिनेश्वर मुक्ति दुलारे ॥८॥

वंदू वृषभनाथ जिन स्वामी, श्री प्रिय तेज अचल पुरगामी।
प्रथम जिनेश्वर हरत असाता, श्री विषमांग भवोदधि त्राता ॥९॥

चारित नाथ हरै अघ मारा, प्रभादित्य जिन तेज अपारा।
चरण नमूं जिन मंजूकेसी, पीतवास गति पंचम देसी ॥१०॥

नमू सुराधिप जग सिरदारा, दयानाथ ज्ञायक जग सारा।
सहस भुज्ज सेवूं उर लाके, सिंहकेत नामी शिव जाके ॥११॥

रेवतीनाथ नमूं सुध भावा, बाहु जिनेश्वर धर्म बढ़ावा।
श्री माली जिन शिव सुखदाई, नमू अयोग जिनेश्वर भाई ॥१२॥

योगीनाथ चराचर जाने, कामरिपु जिन भव थिति हाने।
अरण्य राहु श्री जिन गुन पारा, नेमिनाथ दुःख नाशन हारा ॥१३॥

गर्भ ज्ञान केवल पद दाता, एक जिना बिन कारण भ्राता।
रत्नवेष जग दुःख मिटावे, चक्रहस्त शिव थान बसावे ॥१४॥

वृषभनाथ जिन धर्म प्रकाश्यो, परमेसुर भव के दुःख नाश्यो।
नमू सु मूर्ति महा सुखदाई, मुहुर्लिक जिन जग ताप भुजाई ॥१५॥

निःकेसी जिन दीन दयाला, नमू प्रसास्तिक ज्ञान विशाला।
निराहार पंचम गति देवे, श्री अमूर्तिक सुर सब सेवे ॥१६॥

श्री द्विजनाथ सत्व रखवाले, स्वेतांगद सब कर्म प्रजाले।
अजसनाथ सब रोग नशावे, देवनाथ अविचल पद पावे ॥१७॥

देवादिक जग बंधु कहावे, पुष्पनाथ भव पार करावे।
श्री नरनाथ जगत के राजा, कियो प्रतीच्युत आतम काजा ॥१८॥

श्री नागेन्द्रनाथ गुण गावूं, सेय तपोधिक ताप नशावूं।
नमू दसानन मोह विदार्‌यो, आरण्यक भवि काज सुधार्‌यो ॥१९॥

दसानीक वंदूं जग भ्राता, सात्विक बोध शास्वत दाता।
ये ही तीन चौबीसी नामा, मुनिजन सुमिरें आठूं जामा ॥२०॥

भव बंधन हनि शिव कूं जावे, आतम सुख ले अटल कहावे।
इनकी महिमा को नहिं पारा, "नेम" नमें पद बारम्बारा ॥२१॥

मेरो ज्ञान मोहि दे दीजे, करम संतती संग हरीजे।
ये ही अरज सुणो प्रभु मेरी, करुणा ल्यो अब कर मत देरी ॥२१॥

दोहा—अचल मेरु के भरत में, आरज खण्ड में पाय ।
बहत्तर जिनके चरण कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के भरत क्षेत्र सम्बन्धी आर्यखण्ड मध्य भूत भविष्यत वर्तमान सम्बन्धि ७२ जिनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् विर्व० स्वाहा ।

अडिल्ल—अचल मेरु के भरत मांहि आरज सही ।
बहतर श्री जिन होय जु तिस थल में सही ।।
तिनके गुण को पाठ भव्य जे करत है ।
ते वसु कर्म नसाय जगत दुःख हरत है ।। इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु की पश्चिम दिश आठ वक्षार गिरि शीष आठ श्री जिन भवन पूजा नं. ४६

चौपया—अचल मेरु की पश्चिम दिश में, सोलह देश विदेह बसै ।
तिनके सीमाकार कनक मय, आठ अचल वक्षार लसै ।।
तिनके ऊपर भवन आठ जिन, तिनकी हम आह्वान करे ।
इस थल पर हम पूजा करि के, शिवरमणी के चित हरे ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिश विदेह क्षेत्र के सीमाकार आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतारवतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अडिल्ल—नीर सितोदा लेय, कनक भरि झारिका ।
मन वच तन सुध होय, करूं तसु धारिका ।।
अचल मेरु की अपर, विदेहन में बसै ।
जजूं जिनालय आठ, वक्षारन पै लसै ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेह में आठ वक्षार गिर शीस आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।।

चन्दन लेय घसाय, रलाय कपूर जी ।
केशर मांहि मिलाय, ताप भव दूर जी ।। अचल मेरु···चन्दनं

तन्दुल उज्जवल हेरि, अखंडित लीजिये ।
कंचन थाल मंझार, पुंज गुण दीजिये ।। अचल मेरु···अक्षतं

भांति भांति के फूल सुगन्धित जोय के ।
लीने कंचन थाल, शुद्ध चित होय के ।। अचल मेरु···पुष्पं

विधि पूर्वक नैवेद्य, थाल कंचन धरूं ।
तुम पद भेटत नाथ, भूख बाधा हरूं । अचल मेरु···नैवेद्यं

रतन प्रदीपक थाल, भेट तुम पद धरूं ।
हरो मिथ्यतम आप, अरज इतनी करूं ।। अचल मेरु···दीपं

अष्ट करम क्षयकार, देव जिनराज जी ।
धूप शिखा घट मांहि, खेइ इस काज जी ।। अचल मेरु···धूपं

श्रीफल आदि अनेक, लिये शुभ भाव सों ।
शिव फल तुम से नाथ, जचूं इन दाव दों ।। अचल मेरु···फलं

नीरादिक ले आठ, ठाठ बहु विधि करूं ।
तुस गुण को करि पाठ, आठ दुःख परि हरूं ।। अचल मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

देशा पदमा सीमाकार, श्रद्धावान लखो वक्षार ।
सिद्धकूट ताके सिर जानि, पूजूं जिनवर भवन पिछानि ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु सम्बन्धी सीनोदा नदी दक्षिण तटे श्रद्धावान वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

ताहि देश सु पश्चिम सार, विजटा वान नाम वक्षार ।
ताके सिर सिद्धकूट बखान, जिनवर भवन जजूं पहचान ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा नदी दक्षिण तटे विजटवान वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। २ ।।

देश जु संख्या पश्चिम जाय, आसी बिष वक्षार कहाय ।
ताके सिर सिद्धकूट जिनेश, पूजूं भवन जू हानि क्लेश ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा नदी दक्षिण तटे आशीविष वृक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

तासूं अपर दिशा जु निहार, नाम सुखावह लखि वक्षार ।
सिद्धकूट सिर जिन गृह पाय, पूजूं आठों द्रव्य लहाय ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा नदी दक्षिण तटे सुखावह वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ४ ।।

वप्रा देश जु सीमाकार, चन्द्रमाल नामा वक्षार ।
सिद्धकूट सिर जिनगृह पाय, वसु विधि पूजूं शीष नवाय ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा नदी दक्षिण तटे चन्द्रमाल वक्षार पवत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

ताही दिश सूं पूर्व निहार, सुर्यमाल नामा वक्षार ।
सिद्धकूट सिर पूजूं सदा, भवन जिनेश्वर तजि के मदा ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा के उत्तर तटे सुर्यमाल वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ६ ।।

नागमाल वक्षार लखाय, सिद्धकूट सिर ताके गाय ।
श्री जिन भवन अकीर्तम जोय, वसु विधि पूजूं सुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा के उत्तर तटे नागमाल वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्य जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ७ ।।

तासूं पूरब लेहु निहार, देवमाल नामा वक्षार ।
सिद्धकूट गृह जिनवर पाय, पूजूं मैं नीरादि लहाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु सम्बन्धी सीतोदा के उत्तर तटे देवमाल वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ८ ।।

पद्धरी छंद–जय मेरु अचल सू अपर थान, सुर व्यन्तर के जहाँ हो विमान ।
तहाँ सकल जिनालय नादि नंत, में पूजि करूं संसार अन्त ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की अपर दिशा में व्यन्तर देवको के स्थान को में जहाँ-जहाँ भी जिनालय हो तहाँ तहाँ सकल जिन भवन सम्बन्धी जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ९ ।।

जय वज्र धार सास्वत जिनेश, जय चंदानन काटत कलेश ।
जे भूतकाल में भये और, भावी में होंगे अपर ठोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिशा में वज्रधार तथा चद्रानन दो तीर्थङ्कर तथा वह जो पहले हुए है, आगे होवेंगे । तिन सकल केवलियों को भाव पूर्वक नमस्कार हो । तथा विभंगादि छै नदी क्रम से १. क्षारोदा २. सीतोदा ३. श्रोतावाहिनी ४. गंध मालिनी ५. फेन मालिनी ६. उर्मि मालिनी सम्बन्धी व्यन्तर थानको सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १० ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

दोहा—अचल मेरु की अपर दिशि, सोलह देश विदेह ।
वसु वक्षारन भवन जिन, जयमाला सुणि लेय ।।

पद्धड़ी छन्द—जय अचल मेरु दिश अपर जाय, जय षोडश देश विदेह पाय ।
जय तिनके सीमाकार जानि, जय आठ अचल वक्षार मान ।।१।।
जय तिनके सिर जिन भवन आठ, जय पूर्व कथन भाष्यो जू पाठ ।
जय जम्बूद्वीप सम सर्व जानि, गिर नाम देश लेवो पिछानि ।।२।।
लखि व्यास ऊंचाई कुट आदि, गिण अचल मेरु दिश पूर्व सादि ।
सिद्ध कूटन पै जिनराज गेह, हरि आय जजें धरि बहुत नेह ।।३।।
सुर असुर तणी तहां जुड़त भीर, जय शब्द करत नहिं धरत धीर ।
इन्द्राणी हरि मिल नचत गाय, पग धरत ढुमक धीरज लहाय ।।४।।

नभ जाय क्षणिक भू मांहि आय, क्षण थुल लघु बहु भांति थाय ।
गुण रटत जिनेश्वर के लखाय, तुम धन्य जिनेश्वर जगत राय ॥५॥
तुम छयालीस गुण मूल सार, सो प्रगठ करूं पूर्वानुसार ।
सुन्दर व सुगंधित तुम शरीर, श्रमजल मल मूत्र न रक्त छीर ॥६॥
हित मित प्रिय वाणी बल अनंत, एक सहस आठ लक्षण लसंत ।
सब अंग सु वपु सम चतु स्थान, सहनन वृष वज्र नराच जान ॥७॥
सत योजन मांहि सु काल थाय, हो अन्तरीक्ष चतुमुख दिखाय ।
उपसर्ग रहित अदया अभाव, सब विद्या के ईश्वर महाव ॥८॥
कवला ग्रास वर्जित अहार, नख केस बढ़ न छाया निहार ।
नेतर नहीं टिमके कभी सोय, भाषा सु मागधी अर्ध होय ॥९॥
सब जीव सु मैत्री भाव धार, आकास सु दस दिशि निर्विकार ।
फल फूल सकल रितु फलें आय, इक योजन भू दर्पण बताय ॥१०॥
पग तलें कमल रचना सु होय, जय जय धुनि नभ में होय सोय ।
अति मन्द सुगंध पवन चलाय, बरसत सुगंध जल रिमझिमाय ॥११॥
भू कंटक रहित जु सुर कराय, आनन्द सकल जीवनि दिखाय ।
पुनि धर्म चक्र आगे चलंत, वसु मंगल द्रव्य सबे लसंत ॥१२॥
हो तरु अशोक तुम निकट सोय, सुन्दर सिंहासन तीन होय ।
सिर तीन छत्र शोभा दिखाय, भा मंडल सात सु भव बताय ॥१३॥
निर अक्षर धुनि तन से खिराय, सुर पुष्प वृष्टि नभ में कराय ।
जहं चौंसटि चमर अमर ढुरंत, दुन्दुभि बाजे बाजें अनन्त ॥१४॥
दर्शन अनन्त अन अन्त ज्ञान, वीरज अनन्त हो सुख महान ।
यह छयालीस गुण मूल सार, उतर गुण शोभे हैं अपार ॥१५॥
तुम गुण अनन्त नहिं बनत गात, लखि "नेम" धरे सिर पै जु हाथ ॥१६॥

दोहा—अचल मेरु की अपर दिश, गिरण वक्षार जु आठ ।
अर्घ चढ़ावे भवन जिन, भविजन कर बहु ठाठ ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिश विदेह त्रेव मध्य आठ वक्षार गिरी सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाण पूर्णार्घम् ।

चौपाई—अचल मेरु दिश अपर निहार, आठ जिनालय गिर वक्षार ।
तिनको पाठ सुणे अरु करे, ते नर चहुं गति दुःख परिहरे ।। इत्यार्शीवाद

अचल मेरु की पश्चिम विदैह क्षैत्र बीच सोलह रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा नं. ५०

गीता छन्द स्थापना—अचल मेरु विदेह पश्चिम, मध्य भाग विराजते ।
सोलह खगाचल पै जिनेश्वर, भवन सोलह छाजते ।।
तिन भवन की हम पूजने को, करत इहां आह्वानना ।
सिर नाय तिनके चरण युग को, चार गति को दुःख होना ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिश विदेह क्षेत्रन बींच सोलह रूपाचल पै सोलह श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल—निर्मल गंगा नीर भराय, कंचन झारी हाथ उठाय ।
अष्टक पंचमेरु जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।।
पूजा की अचल मेरु की अपर विदेह, षोडश रूपाचल जिन गेह ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिश विदेह क्षेत्रन बीच सोलह रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

मलयागिर कूं लेत घसाय, कंचन भाजन में धरवाय ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···चन्दनम्

तन्तुल उज्ज्वल जल तैं धोय, पूज धरूं तुम गुण को जोय ।
जजूं धरि नेह मन वच काय, जजूं धरि नेह । अचल मेरु···अक्षतम्

प्रासुक फूल सुगन्ध अपार, लेता काम व्यथा दे टार ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···पुष्पम्

नेवज निर्मल थाल धराय, तुम पद मैटत भूख नशाय ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···नैवेद्यं

मणिमय दीपक कंचन थाल, मोह नसाऊं नावूं भाल ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···दीपम्

धूप अनूप लई बनवाय, कर्म जले धट माहि खियाय ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···धूपम्

फल बहु लीने उत्तम जोय, तुम पद मैटत शिव सुख होय ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···फलम्

नीरादिक वसु थाल भराय, अर्घ कियो मन अति हर्षाय ।
जजूं धरि नेह, मन वच काय जजूं धरि नेह ।। अचल मेरु···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—अचल मेरु की अपर में, पदमा देस महान ।
रूपाचल के शीश पर, सिद्धकूट सुखदान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम दिशा में भद्रशाल वन वेदी के पास निषधाचल के उत्तर सीतोदा नदी के दक्षिण पदमादेश मध्ये रूपाचल पर नवकूट में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटमें व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

देस सु पदमा दूसरा, रूपाचल गिरि शीश ।
सिद्धकूट में जिन भवन, पूजत अघ होई खीस ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर सीतोदा

नदी के दक्षिण सुपदमा देश मध्ये रूपाचल पर नव कूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

देस महा पदमा लखो, इसी विदेह मंझार ।
रूपाचल पर जिन भवन, प्रणमू बारम्बार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर सीतोदा नदी के दक्षिण महापदमा देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों ने से पहले में सिद्धकुटों बाकी आठ कूट में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

पदम कावती देश है, चौथा इस ही ठौर ।
ताके रूपाचल विषे, जिन मन्दिर सिर मोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर सीतोदा नदी के दक्षिण पदम कावती देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

संखा देश सुहावना, मध्य रूप गिरि जान ।
जिन मन्दिर के पूजते, निश्चित हो कल्यान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर सीतोदा नदी के दक्षिण संखादेश मधे रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

नलिना देस विषै कहा, रूपाचल अभिराम ।
पूजूं आठों द्रव्य ले, छोड़ि और सब काम ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर सीतोदा नदी के दक्षिण में नलिना देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

सप्तम कुमुदा देस के, बीच रूपगिरि सोय ।
सिद्धकूट है शीश पर, पूजत शिव सुख होय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में निषधाचल के उत्तर में सीतोदा नदी के दक्षिण में कुमुदा देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले के सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

सरिता देश विषै लखो, रूपाचल सुख देन।
ताके सिर सिद्धकूट को, पूजत होवे चैन ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वेदी के पास निषधाचल के उत्तर में सीतोदा नदी के दक्षिण में सरिता देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

नोंवा वप्रा देश है, बीच रूपगिरि खास।
ऊपर श्री जिन भवन को, पूजूं धरि हुल्लास ।।

ॐह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदी के पास सीतोदा नदी के उत्तर व नीलाचल के दक्षिण में वप्रा देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटो में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

देस सु वप्रा जानिये, रूपाचल ता बीच।
ऊपर जिन मंदिर जजूं, मिटे जगत की कीच ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदी के पूरब में सीतोदा नदी के उत्तर व नीलाचल के दक्षिण में सुवप्रा देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

देस महा वप्रा सुभग, मध्य रूप गिरि सार।
ता पर जिन मन्दिर जजूं, नसे पंच संसार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन के पूरब में सीतोदा नदी के उत्तत व नीलाचल के दक्षिण में महावप्रा देश मध्ये रूताचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाको आठ कटों में देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो ननः अर्घम् ।। ११ ।।

वप्र कावती देस के, बीच रूप गिरि जान।
सिद्धकूट जिन भवन को, जजूं हेत कल्याण ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदो के पूरब में सोतोदा नदी के उत्तर व नोलाचल के दक्षिण में वप्रा कावतो देश मध्ये रूपाचल सर नवकुटों में से पहले में सिद्धकूट बाका आठ कूटो में व्यन्तर देव सम्बन्धो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

गंधा देस सुहावना, रूपाचल मनहार ।
ऊपर श्री जिनराज का भवन, जजूं सुखकार ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदी के पूरव में सीतोदा नदी के उत्तर व नीलाचल के दक्षिण में गन्धा देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

देस सू गंधा मध्य में, रूपाचल सिर मोर ।
पूजूं श्री जिन भवन को, मिले मोक्ष में ठोर ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदी के पूरब में सीतोदा नदी के उत्तर व नीलाचल के दक्षिण में सुगन्धा देश मध्ये रूपाचल पर नव कूटों में के पहले में सिद्धकूट वाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

देस गंधिला में बना, रूपाचल मनहार ।
ताके ऊपर भाव से, नमूं जिनालय सार ।।

ॐ ह्री अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भूतारण वन वेदी के पूरब में सीतोदा नदी में उत्तर व नीलाचवल के दक्षिण में देस गन्धिला मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

गंध मालिनी देश है, सोलम अति मन भान ।
रूपाचल पर जिन भवन, पूजूं छोड़ि गुमान ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में भद्रशाल वन वेदी के पास सीतादा नदी के उत्तर व नीलाचल के दक्षिण में गन्ध मालनि देश मध्ये रूपाचल पर नवकूटों में से पहले में सिद्धकूट बाकी आठ कूटों में व्यन्तर देव सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

भूतं योजन उर्ध दस, विद्याधर के पास ।
फिरि दस योजन ऊपरें, सुर व्यन्तर आवास ।।
सब थल जिनवर भवन है, सारी रचना साथ ।
मैं पूजूं मन लाय कर, होने त्रिभुवन नाथ ।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु के विदेह क्षेत्र में १६ रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊँची दक्षिण उत्तर दोनों कटनी पर एक सौ दस विद्याधरो की नगरियों में तथा बीस योजना ऊँची दोनों तरफ व्यन्तर देव थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग गिरि नील से, निकसी सरिता दोय।
रक्ता रक्तोदा लखो, सीतोदा अवलोय॥
उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों और।
जिन गृह पूजों भाव सों, पावन शिव का ठौर॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में पहले आठ देश सम्बन्धी रक्त रक्तोदा १६ नदियाँ नीलाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीतोदा में मिली। इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा हर एक की सहायक नदियाँ चौदह-२ हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवो के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १८ ॥

मूल भाग गिरि निषध से, निकसी सरिता दोय।
गंगा सिन्धु नाम की, सीतोदा अवलोय॥
उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों और।
पूजूं प्रीत लगाय के, बनि जाऊं सिर मौर॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में दूसरे आठ देश सम्बन्धी गंगा सिन्धु सोलह नदियाँ निषधाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचलों की गुफाओं में होकर सीतोदा में मिली। इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियाँ चोदह-चोदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १६ ॥

म्लेक्ष खण्ड के मध्य में, वृषभाचल के पास।
आर्य खण्ड के नगर में, वंदूं जिन गृह खास॥
अचल मेरु के अपर में, मुनिवर तीन प्रकार।
करूं वन्दना भाव से, होने भवदधि पार॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु के पश्चिम विदेह में सोलह म्लेछ खण्ड में वृषभा चलों पर्वत सम्बन्धी तथा सोलह आर्य खण्डों में सोलह परिसद नगरी सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घं ॥ २० ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की अपर दिस, सोलह क्षेत्र विदेह।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला सुन लेह॥

अडिल्ल—अचल मेरु की अपर दिशा लखि लीजियो।
षोडश क्षेत्र विदेह, मध्य चित दीजियो॥
सोलह ही वैताड्य लसैं मन भावना।
रूपा मय छवि देत भव्य उर लावना॥१॥
जैसो रचना पूर्व बिदेह की कही।
तैसो रचना सर्व इहां जानो सही॥
तैसे ही सिद्धकूट विषैं जिन थान है।
षोडश लीजो जानि कथन पर भान है॥२॥
श्री जिन भवन मंझार विषैं जिनवर लसैं।
लक्षण व्यञ्जन युक्त मनूं मुख से हंसे॥
श्याम केस सिर होठ लाल बहु सोहने।
नख की कान्ति अपार, भव्य मन मोहने॥३॥
सम चतुर संस्थान कनकमय कायजो।
उन्नत धनु शत पांच भव्य मन लायजो॥
सिर पर छत्र जु तीन लसैं लुम्बित सदा।
प्रातिहार्य भवि और लसत लखि सर्वदा॥४॥
ऐसो अद्भुत ठाठ लगे तिस थान में।
सुनी जिनागम मांहि "नेम" निज कान में॥
किस विध देखन होय, चित अकुलात है।
मोकूं द्यो निज शक्ति शीष हम नात हैं॥५॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की पश्चिम विदेहमें सोलह रूपाचल संबंधी सोलह श्रीजिन भवनेभ्योनमः अर्घम्॥

दोहा—अचल मेरु के रजत गिर, सोलह श्री जिन गेह।
सुख अनन्त भोगे सदा, जो पूजें धरि नेह॥ इत्याशीर्वाद

श्री अचल मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा नं. ५१

अडिल्ल छंद—अचल मेरु की उत्तर दिश चित दीजियो ।
तीन कुलाचल शीष भवन जिन कीजियो ॥
तिन भवनन की इहां करत आह्वानना ।
पूजन कर सिर नाय करम रिपु कूं हना ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश तीन कुलाचल शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चौपाया—सीता सरिता नीर मधुरता, बहु शीतलता गुण धारें ।
कंचन रंगा भरि ले भृंगा, मन करि चंगा दे ढारे ॥
अचल मेरु की उत्तर दिश में, तीन कुलाचल शीष लसें ।
तीन जिनेश्वर मन्दिर पूजन, तीन लोक थिति दूर नसें ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश में तीन कुलाचल शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

मलिया गिर केसर सूं मिलि वा घनपुट देके खूब घसूं ।
कनक कटोरी दो कर जोड़ी लेके भव आताप नसूं ॥ अचल मेरु···चंदनं

तन्दुल सरस अखंडित ले करि कंचन के मैं थाल भरूं ।
अक्षय पद दाता तुम दीसो तातैं तुम गुण पुंज धरूं ॥ अचल मेरु···अक्षतं

कमल केतकी आदि मनोहर ले, प्रासुक बहु फूल धरूं ।
कामबाण दुःख नाशन काजे, हाथ जोड़ि तुम पाय परूं ॥ अचल मेरु···पुष्पं

बहु विध नेवज विधि सूं करि के, ले कंचन के थाल खरौ ।
मोकूं भूख सतावै जिनजी, ताकूं तुम अब बेग हरौ ॥ अचल मेरु···नैवेद्यं

मोह तिमिर के नाशन करता, तिहुं जग में तुम एक सही ।
तातें निर्मल दीप लेयकें तुम पद भेटन चाह भई ॥ अचल मेरु···दीपं

अष्ट करम कूं जालि जिनेश्वर, तुमने शिव तिय जाय बरी ।
तातें निर्मल धूप बनाकर, पावक घट के मांहि धरी ॥ अचल मेरु···धूपं

मोक्ष महाफल दायक तुम ही, क्षायक तिहुं जग जानि परे ।
ताते उत्तम फल बहु लेके, थाल कनक तुम भेंट धरे ॥

अचल मेरु की उत्तर दिश में, तीन कुलाचल शीष लसें ।
तीन जिनेश्वर मन्दिर पूजत, तीन लोक थिति दूर नसें ॥ अचल मेरु···फलं

जल, चंदन, अक्षत, चरु फूला दीप, धूप फल थाल भरे ।
अर्घ बणावत तुम गुण गावत, शीष नवावत हर्ष भरे ॥ अचल मेरु···अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

विजयानो छंद–गिरि अचल सुं जी उत्तर दिसा निहारिये ।
गिरि नील पै जी नव है कूट निहारिये ॥
पहिले में जी सिद्धकूट जिनधाम है ।
फिरि वसु में जी व्यन्तर देव मुकाम है ॥
गिरि के बिच जी दिरह कैसरी जानना ।
तामें सूं जी दोय नदी निकसावना ॥
उपकारक जी नदियां लखि विस्तार से ।
चालीस सुं जी सहस मिली दो पार से ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा में तीन कुलाचल में से नील गिरी कुलाचल पर नव कूट जिनमें प्रथम सिद्धकूट मन्दिर तथा बाकी आठ में व्यन्तर स्थान सम्बन्धी तथा केसरी नाम के तालाब के बीच में कमल पर किर्ती देवी का स्थान सम्बन्धी तथा तालाब के दोनों द्वारों से दो नदियां निकलीं । उनकी सहायक नदियां एक लाख चालीस हजार नदियों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अर्घम ॥ १ ॥

दूजा गिरी जी रुक्मी नाम महान है।
तसु ऊपर जी आठ कूट अमलान है॥
सिद्धकूट सु जी पूरब में अति शोभना।
जिनवर गृह जी सब ही के मन मोहना॥
तालाब सूं जी महा पुंडरी की थली।
तामें सूं जी निकलि दोय नदियां चली॥
सहकारी जी नदियां चौरासी सहस।
मैं सब थल जी जिन गृह पूजूं होई खुस॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिसा में रुक्मी नाम कुलाचल पर्वत पर आठ कूटों में से पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी सात में व्यन्तर देव स्थानक सम्बन्धी तथा महापुंडरीक तालाब के मध्य में कमल पर बुद्धिदेवी का महल सम्बन्धी तथा तालाब से दोय नदि निकली उनकी सहायक चौरासी हजार नदियों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ २ ॥

सिखरी पेजी ग्यारह कूटनि में भवन।
सिद्धकूट सूं जी प्रथम कूट में मन हरन॥
बाकी में जी व्यन्तर देवों के सदन।
बिच भाग में जी पुंडरिक द्रह है सघन॥
तसु निकसी जी सरिता तीनों द्वार से।
सहकारी जी नदियां छप्पन हज्जार से॥
सब थल में जी जैन भवन सुखकार है।
में पूजूं जी मिले मोक्ष का द्वार है॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा में सिखरी पर्वत पर ग्यारह कुटों में से पहले में सिद्धकट मन्दिर बाकी दस में व्यन्तर देवो के थानक सम्बन्धी तथा गिर के बोच में पुंडरिक तालाब में कमल पर लक्ष्मी देवी के महल सम्बन्धी तथा तालाब के तीनों द्वार से तीन नदियाँ निकलो तिनकी छप्पन हजार सहायक नदियाँ सब नदियों के दोनों तट सम्बन्धो सफल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

गिरि उत्तर जी तीन कुलाचल की तनो।
बिच बिच में जी भोग भूमि तीनों भनो॥
गिरि नाभि सूं जी दो परबत के थान में।
नदियों के जी सागर के सु मिलान में॥
जिन भवन सु जी सुर व्यन्तर के हो जहां।
तन मन से जी में पूजूं वन्दू वहां॥
ता फल सेजो, शिव सुन्दरि के संग में।
अन अन्ताजी काल बिते निज रंग में॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा में तीन कुलाचलों के बीच-बीच में उत्तम-मध्यम-जघन्य तीनों भोग भूमि सम्बन्धी तथा दो नाभि गिरि सम्बन्धी तथा सातों नदियाँ समुद्र में मिली तथा द्वीप की वेदिका सम्बन्धी तथा और जहाँ-जहाँ भी व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय।
तिन पै भवन जिनेश की, जयमाला बरणाय॥

चौपाई—अचल मेरु तें उत्तर जाय, तीन कुलाचल भवि चित्त लाय।
लम्बे चौड़े लेहु निहार, नदी द्रहादिक सभी विचार॥१॥
शास्त्र त्रैलोक्य सार के मांहि, ग्रन्थ बढ़ै इहां भाव्यो नांहि।
सिद्धकूट पै जिनवर धाम, शेष कूट में व्यन्तर ठाम॥२॥
जिनवर भवन विषै हरि आय, और सकल सुर संग लहाय।
वसु विधि पूजै जिनवर पाय, हरषि हरषि चित्त चाहि धराय॥३॥
असुर खगादिक मुनि तिह थान, पूजै वन्दै करि गुण गान।
धन्य जिनेश्वर कर्म निकंद, धन्य धन्य तुम त्रिभुवन चन्द॥४॥

तुम ही मोह मल्ल कूं जीति, तुम ही मेटी जग की भीति।
तुम लीनो शिवपुर को राज, तुमने कीनो आतम काज ॥५॥
भविजन को तुम भाख्यो धर्म, प्रकट कियो निज पर को मर्म।
जग की रीति दई दिखलाय, भवदधि बूढत दिये तराय ॥६॥
तातैं तुम पद "नेम" नमन्त, मुझ दुःख दुरि करो अरिहन्त।
कर्म रिपु को संग निवार, दीजे शिवपुर अरज विचार ॥५॥

दोहा--अचल मेरु से उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय।
शीष जिनालय तीन लखि, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा, तीन कुलाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यम्।

बेसरी छंद—अचल मेरु दिश उत्तर जान, तीन कुलाचल पै जिन थान।
तिनको पाठ सुणे रु बखाने, ते नर निर्भय पद सुख ठाने ॥ इत्यार्शीवाद

श्री अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष जिन भवन पूजा नं. ५२

चौपाई—अचल मेरु तैं उत्तर जाय, ऐरावत को क्षेत्र लखाय।
रूपाचल पैं जिनवर थान, आह्वानन करतो हित मान ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वानन अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं अत्र मम सन्निटितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

अडिल्ल—क्षीर समुद्र को नीर हरष झारी भरूं।
मन वच तन शुद्ध होय धार ताकी करूं ॥
अचल मेरु दिश उत्तर में ऐरावता।
रूपाचल जिन गेह जजूं सिर नावता ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावता क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः जन्म जरा मृत्यु बिनाश नाय ।। जलं ॥

केसर भाजन हेम रहे अलि घेर जी।
मन वच तन सुध होय करूं नित सेव जी॥
अचल मेरु दिश उत्तर में ऐरावता।
रूपाचल जिन गेह जजूं सिर नावता॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु को उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः संसार ताप विनाशने चन्दनम्।

स्याम जीर के सरल हेरि तंदुल लिये।
कंचन भाजन मांहि पुञ्ज तुम गुण दिये॥ अचल मेरु···अक्षतं
विविध वरण के फूल लिये प्राशुक घने।
तुम पद भेट धरंत मदन दुःख को हने॥ अचल मेरु···पुष्पं
कर लेवूं नैवेद्य भली विधि सूं सही।
क्षुधा हरो जिनराज अरज इतनी कही॥ अचल मेरु···नैवेद्यं
कंचन भाजन मांहि, विमल दीपक धरूं।
मिथ्यातम द्यो नाशि, जिनद पायन परूं॥ अलच मेरु···दीपं
लेके निर्मल धूप करूं तुम सेवजी।
जालो आठों कर्म, जिनेश्वर देव जी॥ अचल मेरु···धूपं
प्राशुक फल धरि सार भेंट तुम री धरूं।
शिवफल काजै नाथ, शीष तुम पद धरूं॥ अचल मेरु···फलं
जल चंदन नैवेद्य फूल, अक्षत धरूं।
धूप दीप फल थाल लेय शिव तिय वरूं॥ अचल मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

विजयानी सेठ--दिसि उत्तर जी, अचल मेरु से जानियो।
ऐरावत जी क्षेत्र, बीच पहिचानियो॥
ताके मधि जी रूपगिरी पर्वत लसें।
तसु ऊपर जी, वसु कूटों में सुर बसें॥

पूरब में जी, सिद्धकूट जिन धाम है।
तसु देखत जी, विमल होई परिनाम है॥
सुर खगधर जी, पूज करे हरषाय के।
में पूजूं जी, आठों द्रव्य चढ़ाय के॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर नवकूटों में पहले में सिद्धकुट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर निवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

दस योजन जी, ऊपर कटनी है सही।
दो तरफा जी जानि, खगधरों की मही॥
दक्षिण में जी, नगर पचास कतार से।
उत्तर में जी, साठि इसी विस्तार से॥
सब पुर में जी, जिन मन्दिर ऊंचे बने।
विद्याधर जी पूज करे, मिलि के घने॥
तन मन से जी में पूजूं, सुचि होई के।
जल फल सबजी, कंचन थाल सजोई के॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल पर्वत पर दस योजना ऊँची उत्तर दक्षिण दोनों कटनीयों में विद्याधरों के एक सो दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ २ ॥

फिरि अपर जी, दस योजन चढ़ि सास्बतैं।
अमरनि के जी, थान अनोखे राजते॥
तिनि सबमें जी, जैन भवन मन भावने।
तसु महिमा जी, कवि से कहते ना बने॥
सत आठ सु जी, प्रतिमा श्री अरहंत की।
सब रचना जी बनी, आदि से अन्त की॥
जो पूजें जी जिन, प्रतिमा जी प्रीत से।
वह छूटे जी, जग की सारी रीत से॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊँचाई पर व्यन्तर थान क सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

इस गिरि पर जी, श्री मुनिराज विराजते ।
दुद्धर तप से, कर्म समूह जरावते ।।
चौ विधि से जी, धर्म ध्यान अपनावते ।
क्रम क्रम से जी, शिव सुन्दरी को पावते ।।
ऐसे मुनिजी में, ध्याऊं मन लाई के ।
इस थल से जी, पूजूं अर्घ चढ़ाई के ।।
तसु फल से जी, में भी कर्म नसाई के ।
सुख भोगूं जी, अपने घर में जाई के ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्ये रूपाचल पर समस्त अचार्य उपाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—अचल मेरु की उत्तर दिश, ऐरावत में पाय ।
रूपाचल जिन भवन की जयमाला उर लाय ।।

अहो जगत गुरु—अपर धातकी दीप, अचल मेरु मधि भागा ।
तासों उत्तर जाय, क्षेत्र ऐरावत जागा ।।१।।
ताके मधि भवि जोय, रूपाचलमन मोहै ।
ता सिर सिद्ध जु कूट जिन मन्दिर अति सोहे ।।२।।
और कथन सब जानि, देखि जिनागम भाई ।
इहाँ हम भाख्यौ नाँहि, ग्रंथ बढ़ै अधिकाई ।।३।।
श्री जिन मन्दिर मांहि, मंगल द्रव्य धरे हैं ।
धूप धूम घट जानि, मानस थम्भ खरे हैं ।।४।।

देखत मान पलाय, महिमा अद्भुत भारी ।
तिस थल बिम्ब जिनेश, तिन पद ढोक हमारी ।।५।।
चहुं दिश चारूं भाग, मध्य चैत्य तरु सोहै ।
तिस थल जिनवर बिंब, देखत सुर मन मोहै ।।६।।
रचना और अनेक, कहत बणै नहिं सारी ।
तिस थल आवत इन्द्र, संग ले भीर जु भारी ।।७।।
पूजन द्रव्य लहाय, पूजत जिनवर चरणां ।
"नेम" नमे जिनराज, मेरा भव दुःख हरणां ।।८।।

दोहा—अचल मेरु उत्तर दिसा, ऐरावत मधि पाय ।
रूपाचल जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल सम्बन्धि सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यम् ।

चौपाई—अचल मेरु ऐरावत नाम, रूपाचल पै श्री जिन धाम ।
ताको पाठ करे भवि जीव, ते होवे शिव रमणी पीव ।। इत्यार्शीवाद

श्री अचल मेरु की उत्तर दिस ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में तीन चौबीसी पूजा नं० ५३

स्थापना चौपाई–अचल मेरु तैं उत्तर जान, ऐरावत मधि आरज थान ।
चौबीसी तीनों तहं होय, आह्वानन करता यहां जोय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौवीसी के श्री जिनेन्द्र समूह अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट सन्निधिकरणं ।।

छंद बेसरी चाल—अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, ले शुचि नीर जजूं सुखदाई ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु तें उत्तर ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड मे भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी ७२ जिनेभ्यो नमः निर्वपामीति स्वाहा ।। जलम् ।।

अचल मेरु उत्तर दिश जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, चन्दन लेय जजूं सिर नाई ।। चन्दनं

अचल मेरु उत्तर दिश जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, अक्षत लेय जजूं सिर नाई ।। अक्षतं

अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, प्रासुक फूल जजूं सिर नाई ।। पुष्पं

अचल मेरु तैंउत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, ले नैवेद्य जजूं सिरनाई ।। नैवेद्यं

अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐराबत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, लेकर दीप जजूं सिर नाई ।। दीपं

अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, लेकर धूप जजूं सिर नाई ।। धूपं

अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, उत्तम फल पूजूं सिर नाई ।। फलं

अचल मेरु तैं उत्तर जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।
चौबीसी तीन्यूं सुखदाई, जल फल आठ जंजू सिर नाई ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

अचल मेरु उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय ।
भूतकाल के मैं जजूं, चौवीसों लिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु के उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र के भूतकाल की चौवीसी क्रम से १. सुमेर २. जिनव्रत ३. ऋषकेत ४. प्रशस्त ५. निरदम ६. कुलादि ७. वर्धमान् ८. अमृतेन्द्र ९. सर्वानन्द १०. कल्पाक्त ११. हरिनाद १२. बाहुस्वामी १३. भार्गव १४. सुमद्र १५. पविपाती १६. पविएपित १७. ब्रह्मचारी १८. असंखग १९. चारित्रेश २०. परिणाम २१. केवोज २२. निधिनाथ २३. कोसिख २४. धरमेश जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १ ।।

अचल मेरु उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय।
वर्तमान के मैं जजूं, चौवीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धि वर्तमान चोवीसी क्रम से १. उपाधिक २. जिनस्वामी ३. स्तिमितेन्द्र ४. अभिधान ५. पुष्पिक ६. मडिक ७. प्रहित ८. मदनसिंह ९. हस्ति १०. चन्द्रपार्श्व ११. पद्म बोध १२. जिनादि १३. विभूक १४. कुसूर १५. सुवर्ण १६. हरिवास १७. प्रियेमित्र १८. धर्म देव १९. प्रियारत २०. नन्दनाथ २१. अश्वानीक २२. पर्वनाथ २३. पार्श्वनाथ २४. चित्रस्वामी जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २ ।।

अचल मेरु उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय।
होनहार चौवीस जिन, वंदू मन वचकाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धि भविष्य की चोवीसी क्रम से १. अरविन्द २. सुकुमाली ३. पृथ्वीवास ४. कुलधर ५. धर्मनाथ ६. अपिसोम ७. वरुण ८. अभिनन्दन ९. सर्वनाथ १०. सुदृष्टि ११. मोष्टिक १२. सुपर्ण १३. सोमचन्द्र १४. क्षेत्रादि १५. जगन्नाथ १६. कामेषक १७. तमोरिपु १८. देव निमित्त १९. कृत पार्श्व २०. बहुपार्श्व २१. बहुनन्द २२. दृष्टि स्वामी २३. विवक २४. वक्षेश जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

चौपाई—अचल मेरु तैं उत्तर जाय, ऐरावत मधि आरज थाय ।
चौवीसी तीनों के पाय, वसु विधि पूजूं मन हरषाय ।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धि बहत्तर श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

छंद केसरी—पश्चिम धातकी द्वीप कहावे, अचल मेरु मधि भाग लखावे ।
तासूं उत्तर दिश में जाना, ऐरावत मधि आरज थाना ।।१।।
चौवीसी तीन्यू तहां हो वे, नाम लेत भवि पातक खोवे ।
तिनके नाम सकल सुन भाई, ते ही जग में है सुखदाई ।।२।।
प्रथम सुमेर जिनेश्वर वंदू, जिनक्रत पद नमि पाय निकंदू ।
श्री ऋषकेष देत सुख भारी, वंदू जिन प्रशस्त गुण भारी ।।३।।

श्री निरदम जिन चरणन बंदू, श्री कुलादि नाशे जग फंदू ।
वंदू वर्धमान जिन स्वामी, श्री अमृतेन्द्र अचल पुर गामी ।।४।।
सर्वानंद जगत सिरदारा, कल्पाकृत जिन गुण मंडारा ।
हरीनाद नासी जग पासी, बाहु स्वामि वंदू सुख रासी ।।५।।
भार्गव जिन उर मांहि बसाऊं, जिन सुमद्र पद शीस नवाऊं ।
पविपाती गुण सागर सोहे, पविपोषित देखत मन मोहे ।।६।।
सकल वस्तु ज्ञायक ब्रह्मचारी, नमू असंखग भव थितिहारी ।
चारित्रेश जिनेश नमाऊं, जिन परिणाम तणो गुण गाऊं ।।७।।
श्री कंबोज देत सुख साता, श्री निधिनाथ महा निधि दाता ।
को शिख जिनवर पाप निकंदा, श्री धरमेश धरम के चंदा ।।८।।
वंदू ऊषाधिक जिन राजा, श्री जिन स्वामि जगत सिर ताजा ।
जग में स्तमितेन्द्र विख्याता, श्री अभिधान मुक्तिपुर दाता ।।९।।
पुष्पिक जिन मन्मथ दुःख नाश्यो, मंडिक केवल भान प्रकाश्यो ।
प्रहित जिनेश्वर जग हितकारी, मदनसिंह राजत गुण भारी ।।१०।।
वंदू हस्ति जिनेश्वर स्वामी, चन्द्र पार्श्व सुर शिव सुख दामी ।
पद्म बोध बंदू दुःख हरता, श्री जिनादि पंचम गति करता ।।११।।
नमू विमूक मूक हरि लेवे, श्री कुसूर शाश्वत सुख देवे ।
श्री सुवर्ण नाशत संसारा, हरीवास बंदू अघ टारा ।।१२।।
श्री प्रिय मित्र जगत प्रति पाला, धरम देव गुण धरत विशाला ।
नमू प्रियारत शिव थल वासी, नंदनाथ पर परणति नासी ।।१३।।
अश्वानीक सकल दुःख टारे, पर्वनाथ शिव रमणि दुलारे ।
पार्श्वनाथ भविजन सुख कारे, चित्र स्वामि वंदू अघ टारे ।।१४।।
श्री अरविंद जिनेश्वर सेवूं, सु कमाली अविचल पुर देवूं ।
पृथ्वी वास त्रास जग नाशी, कुलधर आतम ज्योति प्रकाशी ।।१५।।

धर्मनाथ वंदू सुखदाई, श्री अपिसोम कीर्ति जग छाई।
वंदू वरण हरण संसारा, अभिनंदन गुण बहु विस्तारा ॥१६॥
सर्वनाथ तिहुं जग के ईशा, सुदृष्टि पद नाऊं शीसा।
मोष्टिक जिन भव पार करंता, श्री सुपर्ण पद नमत महंता ॥१७॥
सौमचन्द्र मिथ्यातम नाश्यौ, क्षेत्रादि जिन धर्म प्रकाश्यो।
जगन्नाथ वंन्दूं जग स्वामी, क्रमिषिक जिनवर अन्तरयामी ॥१८॥
तमोरिपु अघ तिमिर नशायो, देव निमित संसार यरायो।
श्री कृतपार्श्व जगत में सूरा, श्री बहु पार्श्व महा गुण पूरा ॥१९॥
श्री बहुनंद हरै जग फंदा, दृष्टि स्वामि जिन आनन्त कंदा।
बिबश नाशत कर्म कलंका, श्री वक्षेश नमूं जु निशंका ॥२०॥
चौवीसी तीनूं जिन राजा, "नैम" नमें अपने हित काजा।
मोकूं पंचम गति का वासा, द्यो जिनराज मेठि जग त्रासा ॥२१॥

दोहा—अचल मेरु की उत्तर दिश, ऐरावत मधि पाय।
चौवीसी तीनों चरण, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं अचल मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत, भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धि श्री सुमरे जिनेन्द्रादि बहत्तर जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यम् निः स्वाहा।

चौपया वृत—अचल मेरु की उत्तर दिश में, ऐरावत मधि आरज जोय।
श्री सुमेर जिन आदि दिवाकर, बहत्तर जिनवर तिस थल होय ॥
तिनको पाठ सुगैरू बखाने, भविजन मन वच काय लगाय।
स्वर्गादिक सुख भोग फेर ते, पंचम गति को सीधो जाय ॥

॥ इत्यार्शीवाद ॥

धातकी द्वीप सम्बन्धी दो इष्वाकर गिरि दो जिन भवन पूजा नं. ५४

दोहा—दीप धातकी कै विषै, द्वय गिरि इस्वाकार ।
आह्वानन दो भवन की इस थल करूं विचार ।।

ॐ ह्रीं धातकी खण्ड द्वीप दक्षिण उत्तर दिश दोय इस्वाकारगिर पे दोय श्री जिन भवनाभ्यम् नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र निष्ठ निष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

तुम्हारे पूजन से भगवान जानो दुसरे दीप मंझारा, दो पर्वत हैं इष्वाकारा ।
ऊपर दो मन्दिर मनहारा, पूजू धरि मन में श्रद्धान ।।
तुम्हारे पूजन से भगवान, हुआ मुझको आनन्द महान ।।टेक।।

प्रभू मैं आया शरणा तेरी, चरणनि धारा जल की गेरी ।
मेटो जनम मरण की फेरी, प्रभू तुम हो समरत्थ महान ।। तूम्हारे पूजन···

ॐ ह्रीं धातकी खण्ड द्वीप सम्बन्धी दो ईश्वाकार पर्वतों पर दो श्री जिन भवनाभ्याम् नमः जन्म जरा मृत्यु बिना शनाय जलंम् ।

प्रभू मैं चन्दन घिसि कर लाया, सुवरण कलशा मांहि भराया ।
तुम्हारे चरणों तले चढ़ाया, मेटन जग की खेंचा तान ।। तुम्हारे पूजन···चंदनं

प्रभू मैं काश्मीर में जाकर, बढ़िया साजे तन्दुल लाकर ।
तुम्हरे चरणनि मांही चढ़ाकर, चाहूं अक्षय पद अमलान ।। तुम्हारे पूजन···अक्षतं

प्रभू मैं सुमन सु मन से लीने, षट पद होइ रहे बुधि हीने ।
तुम चरणों में भेंट करीने, नाशन मकर ध्वज सेतान ।। तुम्हारे पूजन···पुष्पं

पेड़ा पापड़ पुड़ी पकौड़ी, लाया रसगुल्ला की जोड़ी ।
तुम्हरे चरणों आगे छोड़ी, भागे छुदा महा दुःख दान ।। तुम्हारे पूजन···नैवेद्यं

दीपक रतन मई मैं लाया, आरति करत बहुत हरषाया ।
तुम्हारे चरणनि मांहि चढ़ाया, हो जावे निज पद का भान ।। तुम्हारे पूजन···दीपं

लाया धूप प्रभू दस अंगी, लगि रही नेत्र ध्राण को चंगो ।
खेवत शुद्ध अग्नि के संगी, विधि का रहे न नाम निशान ।। तुम्हारे पूजन···धूपं
लाया सेव सन्तरा केला, मीठा खरबूजा करि भेला ।
तुम्हरे चरणों आगे मेला, बनने शिवपुर का महमान ।। तुम्हारे पूजन···फलं
आठों द्रव्य अनोखी लेकर, सभी मिलाकर अर्घ बनाकर ।
मांगू तुमसे हाथ बढ़ाकर, दीजे अनर्घ पद भगवान ।। तुम्हारे पूजन···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—दीप धातकी दक्षिण जान, पर्वत इस्वाकार महान ।
ता पर सिद्धकूट अभिराम, में पूजूं ले द्रव्य तमाम ।।

ॐ ह्रीं धातकी द्वीप सम्बन्धी दक्षिण दिशा में लवण्य समुद्र से लेकर कालो दधि समुद्र तक चार लाख योजन लम्बाई इस्वाकार पर्वत पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय् नमः अर्घम् ।। १ ।।

उत्तर दीप धात की जान, पर्वत इस्वाकार महान ।
मन्दिर सिद्धकूट मनहार, पूजूं भव दधि होने पार ।।

ॐ ह्रीं धातकी द्वीप सम्बन्धी उत्तर दिशा में लवण्य समुद्र से लेकर कालो दधि समुद्र तक चार लाख योजन लम्बाई इस्वाकार पर्वत पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय् नमः अर्घम् ।। २ ।।

इन दोनों पर्वत के पास, व्यन्तर देवों के आवास ।
जंह जंह हो जिन मन्दिर खास, पूजूं लेकर द्रव्य पचास ।।

ॐ ह्रीं धातको द्वीप सम्बन्धी दोय इस्वाकार पर्वतों पर व्यन्तर देवो के आवासो में तथा पर्वतों को तलहटीयों में जहाँ जहां भी जिनालय हो उन सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

अब गाऊं में जयमाल, आपकी लई शरना ।
दुःख हरो त्रिलोकी नाथ, पार मुझको करना ।।टेक।।

द्वीप धात की खंड का, चूड़ी सम आकार ।
दक्षिण उत्तर दो तरफ, दो गिरि इष्वाकन्र ।
भये दीप तने दो भाग, चित माही धरना ।।१।। अब गाऊं···

दो भागों में मेरु दो, विजय अचल पहिचान ।
रचना दोनों में लखो, जम्बू दीप समान ।
दोनों परवत का हाल सुनो, जो कुछ वरना ।।२।। अब गाऊं···

चारि लाख योजन लखो, लम्बे परवत दोय ।
पांच शतक योजन गिनो, चौड़े ऊंचे सोय ।
दोनों दीवाल समान, कनक मय रंग वरना ।।३।। अब गाऊं···

दोनों परवत पर कहै, चार चार है कूट ।
तीन तीन में सुर भवन, इक इक में सिद्धकूट ।
बहुते जनमों के पाप, दर्श करते हरना ।।४।। अब गाऊं···

धनुष पांच सौ उच्च है, बिम्ब एक सौ आठ ।
मान थंभ इत्यादि की, रचना के सब ठाठ ।
कवि से क्या वरणी जाय, हारि गये गण धरना ।।५।। अब गाऊं···

पर भक्ति वस तनक सी, गाय करूं संतोष ।
ज्यूं पिक ऋतू बसंत में, धारे मन में जोश ।
जो कछू कमी रहि जाय, शुधी शोधन करना ।।६।। अब गांऊं···

पर्बत के दोनों तरफ, दो वेदी मनहार ।
दोय कोस ऊंची सतक, पंच धनुष विस्तार ।
तिन के मधि में वन, खंड वनि रहे मन हरना ।।७।। अब गाऊं···

वापी बंगला बेठकें, तोरण धुजा कतार ।
सुर व्यन्तर के महल हैं, जिन मन्दिर मय सार ।
पर्वत उपर दो तरफ, अधिक जानो रचना ।।८।। अब गाऊं···
इन पर्वत की वंदना, करे धन्य है सोय ।
हीन शक्ति हम यहां से, नमे जोरि कर दोय ।
गर लगे वहां उपयोय तो, होवे भव तरना ।।९।। अब गाऊं···
ज्यादा अब कहता नहीं, अर्ज सुनो जिनराज ।
ज्यु अनेक तारे कुधी, मेरी वारी आज ।
श्रुत सागर करे पुकार, बनावो शिव वरना ।।१०।। अब गाऊं···
दोहा—दो गिरि ईक्ष्वाकार पै, जिन मंदिर गिण दोय ।
अर्घ चढ़ावो भव्य जन दीप धानकी जोय ।।

ॐ ह्रीं धातकी खण्ड द्वीप को दक्षिण उत्तर इस्वाकार पर्वत पर श्री जिन भवनेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यम् नमः ।

जोगीरासा—द्वीप धातकी दक्षिण उत्तर, द्वय गिरि ईक्ष्वाकार लखाय ।
तिनपे भवत जिनेश्वर व्दय है, जो पूजे सो शिवपुर जाय ।।इत्यार्शीवाद

अडिल्ल छंद—दीप धातकी गिरद कोट कंचन मई ।
योजन आठ उतंग सरस शोभा भई ।।
गोपुर तोरण आदि थलों में व्यन्तरा ।
तिनि के घर जिनधाम जजूं वसु विधि खरा ।।

ॐ ह्रीं धातकी द्वीप के गिरद कोट तिनि के द्वार तोरणारि स्थान में व्यन्तर स्थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

गीता छंद—द्वीप धातकि गिरद भविजन लखहु कालो दधि सही ।
वसु लाख योजन व्यास ताको चौ तरफ जिनवर कहीं ।।
चालीस आठ कुभोग भूमी दीप तट की गाय जी ।
सो गति निवारण देव जिनवर जजूं वसु विधि लायजी ।।

ॐ ह्रीं धातकी द्वीप की गिरद कालो दधि की दो तट अड़तालीस कु भोग भूमि वास निवारण श्री जिनेन्देभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

श्री मन्दर मेरु के भद्रशाल वन की चार जिन भवन पूजा नं. ५५

चौपाई स्थापना—मूल भाग लखि मन्दिर मेर, भद्रशाल वन चहुं दिश घेर ।
ताकी चहुं दिश चतु जिन धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुं दिश सकल श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र निष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जोगीरासा—क्षीरोदधि का उत्तम जल ले, भरि कलशा अभिरामा ।
भद्रशाल मंदर मेरु के, जजूं चार जिन धामा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के भद्रसाल वन की चहुँदिश चार जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यों नमः जलम् ।

मलियागिरि अरु केसरि घिसिकें, उर में धरि बहु नेहा ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, जजूं चार जिन गेहा ।। चन्दनम्
पन्ना हीरा लाल जवाहर, अरु मूंगा ले सुन्दर ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, जजूं चार जिन मन्दिर ।। अक्षतम्
ऐसे सुमन लिये जिन पर, अलि होइ रहे मतवाले ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, जजूं चारि चैत्याले ।। पुष्पम्
खुरमा खाजा त्यार कराये, ताजे घृत सक्कर मय ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, बंदूं चारि जिनालय ।। नैवेद्यं
रतनों का दीपक सजवाया, ज्योति धरे अधिकाना ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, जजूं चारि जिन थाना ।। दीपम्
अति ही सुगंधी धूप खेवते, कर्म रहे नही पासा ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, जजूं चारि गृह खासा ।। धूपम्
पिस्ता दाख बदाम सुफल लेकर मन में आनंदू ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, चारि जिनालय बन्दूं ।। फलम्
वसु विधि अर्घ चढ़ाय, अचल पद लेने हाथ बढ़ाऊं ।
भद्रसाल मंदर मेरु के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। अर्घ्यम्

प्रत्येक अर्घ

भद्रशाल पूरब दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की पूरब दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

भद्रशाल दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

भद्रशाल पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की पश्चिम दिश श्री भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

भद्रशाल उत्तर दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

भद्रशाल चौ गिरद ही, सुर व्यन्तर आवास ।
तिनमें भवन जिनेश के, पूजूं वसु विधि खास ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुँ दिश व्यन्तरादि आवास स्थितताय सकल श्री भवनेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ५ ।।

दोहा—भद्रशाल वन चहुं दिशा, श्री जिनवर के थान ।
तिनको पूजूं हर्ष सूं, शिवफल दाता जान ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—मन्दिर मेरु भूमि पर, भद्रशाल वन जोय ।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला कहुं सोय ।।

पद्धड़ी छंद—जय पुण्यकरार्ध पूरब कहाय, जय मन्दर मेरु मध्य पाय।
जय मूल भाग ताकी लसैय, वन भद्रशाल चहुं गिरद देय ।।१।।

जय ताकी चहुं दिश में निहार, जय मन्दिर जिनवर के जु चार।
जय और कथन त्रैलोक्य सार, लखि लेहु समझि अच्छो प्रकार ।।२।।

जय जिन मन्दिर रचना विशेष, तसु कथन करत को है न शेष।
जय देव जिनेश्वर को मकान, मंगल विभूति सौहे महान ।।३।।

जय प्रातिहार्य आठों लसाय, घट तूप धूप घट ले लखाय।
जय लूंबित तोरण आदि माल, जय केतु तणी शोभा विशाल ।।४।।

जय वृक्षशाल आदिक बखान, दिश चार मांहि वन चार जान।
तिस थान शची सुर आय आय, जिनराज जजै वसु द्रव्य लाय ।।५।।

उर हरषि इन्द्र गुण करत गान, ध्वनि मधुर-२ लेके जु तान।
पुनि नचत रूप अद्भूत बनाय, क्षण दीर्घ लघु निज करत काय ।।६।।

तिस शोभा को भवि नांहि पार, सुणि "नेम" कियो मन में विचार।
हम हीन शक्ति कैसे कराय, इस थान नमूं मन वचन काय ।।७।।

दोहा—मन्दर मेरु मूल में, भद्रशाल वन पाय।
चहुं दिश चतु जिन धाम कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमां जयमाला पूर्णार्घ्यम्।

चौपाई—मंदर मेरु मूल चहुं ओर, भद्रशाल वन की लखि ठौर।
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, पाठ करें सो ले शिव ठाम ।। इत्याशीर्वाद

श्री मन्दर मेरु के नन्दन वन की चार जिन भवन पूजा नं. ५६

स्थाना दोहा--पूरब पुष्कर अर्ध में, मन्दर मेरु महान ।
नन्दन वन के जिन भवन, पूजूं कर आह्वानन ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी नन्दनवन की चहुँ दिश चार श्री जिनालयस्थ जिनविम्ब समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जोगी रासा---सीता सरिता को जल, पावन विधी पूर्वक लाकर ।
स्वर्ण भृंग में धार, प्रभु पद पूजे हर्षित होकर ।।
मंदर मेरु नन्दन वन में, जिन गृह चारि प्रधाना ।
इन्द्र खगेन्द्र सभी मिलि पूजे, मैं पूजूं इस ठाना ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी नन्दन वन की चहुँ दिशा चार श्री जिनालयस्थ सर्व श्री जिन विम्बेभ्यो नमः जलम् ।

कुंकुम चंदन केसर घिसि के, कंचन भाजन भरिके ।
जिन पद पंकज पूजन करते, आतप भाजे डरिके ।। मंदर मेरु···चंदनं

साठी तंदुल चन्द्र किरण सम, दोनों अनी समाना ।
जिन पद सन्मुख पुञ्ज देत ही, होवे अचल ठिकाना ।। मंदर मेरु···अक्षतं

पाटक चंपक वकुल केतकी, ताजे सुमन चुनाके ।
भवशर नाशन हेतु, जजों गुण चरणनि फूल चढ़ाके ।। मंदर मेरु···पुष्पं

पूआ पूरी फैनी गुझीया, व्यंजन थाल सजाके ।
श्री जिनवर तुम पाद पूजने, क्षुधा हरे भय खाके ।। मंदर मेरु···नैवेद्यं

कनक दीप सब विधि, सजाय कर दोनों हाथ उठाके ।
जिन पद पंकज पूजन करते, अघ तम क्षय हो जावे ।। मंदर मेरु···दीपं

दस विधि अगर तगर वर मिश्रित धूप बनाकर लीजे ।
मन से श्री जिनपाद पूजते कर्म जलांजलि दीजे ।। मंदर मेरु···धूपं

सेव संतरा फल बहु भांती, सब ही लीने ताजे ।
सरस मधुर फल लाय, चढ़ाऊं, महा मोक्ष फल काजे ।। मंदर मेरु···फलं

सलिल गंध तंदुल सुमना चरु दीप धूप फल लेकर ।
श्री जिनवर पद अर्घ चढ़ाऊं, मन में अति खुश होकर ।। मंदर मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नन्दन वन पूरब दिशा, जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दनवन की पूर्व दिश सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

नन्दन वन दक्षिण दिशा, जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दनवन की दक्षिण दिश सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

नन्दन वन पश्चिम दिशा, जिनवर भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दनवन पश्चिम दिश सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

नन्दन वन उत्तर दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सूं, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दनवन की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

नन्दन वन चौगिरद ही, व्यन्तरादि के गेह ।
तिनमें श्री जिन भवन कूं, पूजूं मैं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दनवन की चहुँ दिश व्यन्तरादि स्थानक विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु मधि लसै, नन्दन वन सुखदाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन को, जयमाला उर लाय ॥

बेसरी छन्द—पुष्करार्द्ध पूरब दिश पावै, मन्दर मेरु मध्य लखावै।
योजन ऊंच पांच से जावे, नन्दन वन तिस थान लखावे ॥१॥

चारों गिरद फिर्‌यो लखि खासा, योजन पांच शतक तसु व्यासा।
नाना पादप सोहें तामें, चहुं दिश चार भवन जिन वामें ॥२॥

तिनकी शोभा है बहु भारी, शिखर उतंग लसै सुखकारी।
बहु विधि केतु लगो नभ जाके, सुर खग पूजत तिस थल आके ॥३॥

द्रव्य आठ पावन ले आवे, मुख से जय जय शब्द करावे।
बाजे बहु विधि के जु बजावे, हरषि हरषि श्री जिन गुण गावे ॥४॥

तुम जिनराज दयानिधि नामी, तुम ही जिनवर अन्तरयामी।
तुम ही भवदधि पार कराया, तुम भविजन की पीर हराया ॥५॥

तुमरी महिमा कब लौं गावें, बुधि थोरी किम छेह लखावें।
ताते लखि करि सुण प्रभू मेरे, "नेम" भये चरधे के चेरे ॥६॥

दोहा - मन्दर मेरु पै लसै, नन्दन वन सुखदाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन कूं दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नन्दन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला अर्घम्।

चौपाई—नन्दन वन लखि मन्दर मेर।
चहुं दिश चतु जिन मन्दिर हेर ॥
तिनको पाठ सुणे अरु करे।
सो निज ज्ञान लेय शिववरे ॥

इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु के सौमनस वन की चार जिन भवन पूजा नं. ५७

स्थापना चौपाई--मंदर मेरु तणों मधि भाग, वन सौमनस तणी लखि जाग ।
चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम, आह्वानन करो इस ठाम ।।

ॐ ह्री मन्दर मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गजल--नीर पंचम उदधि का ले, कनकमय कलश में भरि कर ।
गिरी मंदर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवन सम्बन्धी सर्व श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः जलम् ।

संग केसरि के मलयागिरि, सु अपने हाथ से घिस कर ।
गिरो मंदर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। चन्दनम्

बिना टूटे लिये तन्दुल सु, कंचन थाल में भरि कर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। अक्षतं

सुमन चम्पा चमेली केवड़ा, निज हाथ से चुनकर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। पुष्पं

अठारह थाल रसगुल्ला, चमाचम के सु विधि सजकर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। नैवेद्यं

दीप सुवरण का बनवाया, रतन पुखराज जड़वा कर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। दीपं

अगर अरु तगर दस अंगी, ततक्षण धूप बनवाकर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। धूपं

ढमोला भरि के फल लीमे, रूप रस स्वाद में सुन्दर ।
गिरी मन्दर विपिन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। फलं

द्रव्य आठों मिलाकर के, सु विधि से अर्घ बनवाकर ।
गिरी मन्दर बिपन सौमनस, बन्दूं चारि जिन मन्दिर ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—सुमनस वन पूरब दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की पूर्व दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

सुमनस वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

सुमनस वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्री मन्दर मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

सुमनस वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की उत्तर दिश श्री जि। भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

चहुं दिश ही सौमनस वन, व्यन्तरादि के थान ।
पूजूं आठों द्रव्य सूं, हरषि हरषि गुण गान ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सौमनस वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

मन्दिर मेरु मध्य में, वन सौमनस लखाय ।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला उर लाय ।।

छन्द बेसरी—पुष्करार्ध पूरब दिश जाना, मन्दर मेरु मध्य लखाना ।
भू तें योजन छपन हजारा, ऊंचो जाय लखो भवि प्यारा ।।१।।

वन सौमनस लसै तिह खासा, योजन पांच शतक लखि व्यासा।
चहुं दिश गिरद देयमन मोहे, नाना पादप तिस थल सोहे ॥२॥
ताकी चहुं दिश मांहि विराजै, मन्दिर चार जिनेश्वर छाजै।
और कथन जिन आगम मांही, समझो हम इहां भाख्यो नांही ॥३॥
मन्दर मेरु छवी बहु तेरी, कब लौं भाखूं कम मति मेरी।
श्री जिन प्रतिमा अद्भुत छाजे एक शतक अरु आठ विराजे ॥४॥
मन्दिर एक आठ लखि लेवो, इहि विधि चारूं चित्त में देवो।
सुर खग असुर मिलत तहां सारे, पूजत द्रव्य हाथ द्वय धारे ॥५॥
मंगल पाठ पढ़ें बहु तेरे, केई देत प्रदक्षिण फेरे।
केई पूजन जिन गुण गावे, केई देख हरषि उपजावें ॥६॥
इह विध ठाट लगे तिस थाना, हीन शक्ति नहीं तिस थल जाना।
तातें 'नेम" यहां सिर नावै, तुम प्रसाद भव भ्रमण नसावै ॥७॥

दोहा--मन्दर गिरि सौमनस वन, चहुं दिश चार गिणाय।
भवन देखि जिनराज के, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्

चौपाई--मन्दर मेरु मध्य निहार, वन सौमनस भवन जिन चार।
तिनको पाठ करत भवि जीव, तिनके मंगल होय सदीव ॥ इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु पांडुक वन की चार जिन भवन पूजा नं. ५८

चौपाई--पुष्करार्ध पूरब दिश हेर। पांडुक वन सिर मन्दिर मेर ॥
ताकी चहुं दिश चतु जिन धाम। आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध पूर्व मन्दर मेरु शीष पांडुक वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जोगीरासा—मुनि मन सम जल उत्तम लेकर, कंचन कलश भराऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की चारो दिश चार श्री भवनेभ्यो नमः जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

केसर और कपूर मिलाकर, मलिया गिरि घिसि लाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। चंदनम्

दोनों अनी सहित अक्षत के, अगनित थाल भराऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। अक्षतम्

बीस भांति के फूल बगिया से, सुमन चुनाकर लाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। पुष्पम्

गरम कचोड़ी और तिकोना, दाल सेव भी लाऊं ।
मन्दर मेरु बने पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। नैवेद्यम्

मुघड़ दीप से आरति करि के, फूला नहीं समाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। दीपम्

धूप सुगन्धी धूपायन में, खेवत कर्म भगाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। धूपम्

आम अनार अनोखे, बहुविधि वजने नरियल लाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चार जिनालय ध्याऊं ।। फलम्

आठ दरब मय अर्घ चढ़ावत, मटकूं नाचूं गाऊं ।
मन्दर मेरु बनी पांडुक में, चारि जिनालय ध्याऊं ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

पांडुक वन पूरब दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की पूरब दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

पांडुक वन दक्षिण यिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की दक्षिण दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

पांडुक वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की पश्चिम दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

पांडुक वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह ।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की उत्तर दिश श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

पांडुक नामा वन विषै, कोण ईशान लहाय ।
पांडुक सिल पें जिन जजूं, वसु विधि द्रव्य चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की ईशान कोण में पांडुक शिला पै भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

पांडुक नामा वन विषै, अग्नि कोण सुखदाय ।
पांडु कंबला शिल जजूं, वसु विधि द्रव्य चढ़ाय ।।

ॐ ह्री मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की अग्नि कोण में पांडुक कंबिला शिला पै पश्चिम विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

पांडुक नामा वन विषै, नेऋत्य कोण लहाय ।
रक्तानामा शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक नामा वन की नेऋत्य कोण में रक्तानामा शिला पै ऐरावत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

पांडुक नामा वन विषै, वायु कोण मन लाय ।
रक्त कंबला शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुकनामा वन को वायु कोण में रक्त कंवला नामा शिला पै पूर्व विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

पांडुक वन की सब महि, लखि जिनवर के धाम ।
अर्घ जजूं नीरादि ले, तिनकूं करि परणाम ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक नामा वन में व्यन्तरादि स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ९ ॥

मन्दर मेरु शीष पै, पांडुक वन गिरदाय ।
चहुं दिश, चतु जिन धाम कूं, जल फल आदि पुजाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के शीष पांडुक वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १० ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दिर मेरु के शीष पे, पांडुक वन में पाय ।
चहुं दिश चतु जिन धाम की, जयमाला मन लाय ॥

अडिल्ल—पुष्कर नामा दीप, तीसरो जानियो,
योजन सालह लाख, व्यास उर आनियो ।
मानुषोत्र मधि भाग गिरद सब ही मही, द्वीप तणे द्वय भेद किये समझो सही ॥१॥
पुष्करार्द्ध भविनाम लखहु तातैं कहैं, योजन आठ जु लाख व्यास भीतर लहे ।
दीप अढ़ाई की जिनन्द सूवी भणी, गिण पैंतालिस लाख जु योजन बहू तणो ॥२॥
पुष्करार्द्ध को दक्षिण उत्तर दिश लखो, पर्वत ईक्ष्वाकार दोय गुण के रखो ।
कालोदधि सूं जाय मानुषोत्तर लगै, पूरब पश्चिम भेद दोय ताते भये ॥३॥
पूरब पुष्कर द्वीप मांहि चित दीजियो, मन्दर मेरु नाम लसै लखि लीजियो ।
योजन ऊंचो सहस्र चौरासी जानियो, कंचन मणि बहु भांति छवी मन आनियो ॥४॥
ताके सिर चहुं गिरद विपिन पांदुक ठयौ, नाना पादप युक्त सरस शोभा दयो ।
ताकी चहुं दिश चार जिनेश्वर धाम है, सुर खग पूजत आय करे निज काम है ॥५॥
और कथन भवि जोव जिनागम ते लखो, श्री जिन पद नमि "नेम" निजानन्द रस चखो ।
इन बिन कोई नाहिं शरण तिहुं लोक में तातैं इनके चरण देत बहु ढोक मैं ॥६॥

दोहा--मन्दर मेरु शीष पै, पांडुक वन में पाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन कुं, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपाई--मन्दर मेरु शीष निहार, पांडुक वन जिन मन्दिर चार।
तिनको भविजन पाठ कराय, ते सुख भुजैं थिर पद पाय ॥ इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु की चारों कोण चार गजदंत पूजा नं. ५९

स्थापना चौपाई--मंदर मेरु तणो चतु कोण, गजदन्ते गिण चार जु होण।
तिन चारों पै चतु जिन धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की चारों कोण चार गजदंतन पै चार श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक--भरि गंग नदी जल शीतल सुन्दर कंचन मणि मय भरि झारो।
द्वय हाथ गहावूं शीश नमावूं तुम गुण गावूं दे धारो ॥
लखि मेरु मंदर की चतु कोणां गजदंते गिरण चार लसे।
तिनके सिर ऊपर भवन जिनेश्वर चारों पूजन कर्म नसें ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की चारों कोण चार गजदंतन पर चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः निर्वपामीति स्वाहा। जलम्

मलयागिरि लेवूं केसर देवूं, खूब घसेवूं घन डारूं।
धरि कंचन प्याला निज नय भाला, भव तप ज्वाला परिहारूं ॥ लखि मेरु ·· चंदनं

बारीक अनोखे तन्दुल चोखे, जल सों धोके शुद्ध किये।
धरि कंचन थाली जपि नय भाली, सुमरण तव गुण पुंज दिये ॥ लखि मेरु · अक्षतं

बहु फूल सुवासी प्रासुक खासी, लखि सुख राशी भेट धरूं।
दुःख मन्मथ भारी जो प्रभु, टारो सुणहुं हमारी अरज धरूं ॥ लखि मेरु···पुष्पं

अरि भूख सतावे हम दुःख पावें, तुम ढिग आवे अरज करूं ।
ले नेवज ताजा ताके काजा, वजि बहुं बाजा भेंट धरूं ।। लखि मेरु मंदर···नैवेद्यं

मिथ्यातम छायो हम दुःख पायो तुम ढिग आयो सिर नायो ।
धरि दीपक ल्यायो हरष बढ़ायो तूम गुण गायो सुख पायो ।। लखि मेरु मंदर···दीपं

ले चन्दन वावन, धूप बढ़ावन अति महकावन गंध चलै ।
घटि अग्नि धराता तुम गुण गाता शीष नवाता कर्म जलै ।। लखि मेरु मंदर···धूपं

नारेल छुहारा आदिक सारा फल शुभ कारा थाल धरूं ।
तुम शिव फल दायक तिहुं जग नायक तातें श्री जिन भेंट करूं ।। लखि मेरु मंदर···फलं

जल आदिक सारे अष्ट प्रकारे थाल सुधारे अर्घ कियो ।
लो तुम ढिग आयो शीष नवायो जिन गुण गायो हरष हियो ।। लखि मेरु मंदर···अर्घं

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मंदर मेरु कोण ईशान, माल्यवान गजबंत पिछान ।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की ईशान कोण माल्यवान गजदंत सिर सिद्धकूट स्थिति श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

मंदर मेरु अग्नि जु कोण, गजदंतो सौमनम जु होण ।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की अग्नि कोण में सौमनस गजदंत सिर सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

मंदर मेरु नैऋत्य कोण, विद्युतप्रभ गजदंत जु होण ।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की नैऋत्य कोण विद्युतप्रभ गजदंत सिर सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

नागदंत चौथा गिरि थाय, गंध मादना नाम कहाय।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु वायव्य कोण में गंधमादन गजदंत सिर सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

मंदर मेरु चारों कोण, गजदंता लखि चारों होण।
सब थल लखि जिनवर के गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के चारों कोणों पर चार गजदंत सम्बन्धी तथा बाकी ८—६—८—६ कुल २८ कूटों पर व्यन्तर देवों के निवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मंदर मेरु विदिश चतु, गजदंते चतु जान।
तिन सिर चतु जिन भवन की जयमाला उर आन ।।

चौपाई—पुष्कर द्वीप पूर्व कहलाय, मंदर मेरु मध्य लसाय।
ताकी चारों कोण धराय, गजदंते भवि चार गिणाय ।।१।।

एक हरित पुनि एक ही श्वेत, कंचन वरण दोय लखि देत।
मानुषोत्र की तरफ बखानि, गजदंते द्वय लम्बे जानि ।।२।।

बीस लाख ब्यालीस हजार, दो से इकुणी गिणहु विचार।
इतने योजन की लम्बाय, भविजन समझो चित में लाय ।।३।।

लघु गजदंते दोय विचार, कालोदधि की तरफ निहार।
तिन लम्बाई माखूं सही, जैसी जिन आगम में कही ।।४।।

सोलह लाख छवीस हजार, एक शतक सोलह निरधार।
योजन जोड़ लखो मन मांहि, साखि त्रिलोक सार शक नाहिं ।।५।।

तिन चारों के सिर भवि पाय, मन्दर मेरु तणों निकटाय।
सिद्धकूट चतु जिन पर थान, शेष कूट सुर व्यन्तर जान ।।६।।

जिन मन्दिर की रचना बहोत, कहने की मति नाहीं होत ।
तातैं "नेम" धरे सिर हाथ, भव दुःख दूर करो जगनाथ ।।७।।

दोहा---मन्दर मेरु कोण चतु, गजदंते चतु पाय ।
तिन सिर चतु जिन भवन कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की चतु कोण चार गजदंत तिनके शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

जोगीरासा---मन्दर मेरु तणी चतु, कोणा गजदंते अति सोहे ।
तिनके सिर चतु सिद्धकूट पै, चार भवन जिन मोहे ।।
तिनको मन वच काय लगाके, पाठ करे भवि कोई ।
इन्द्र खगेन्द्र तणें सुख पाके, ते फिर शिव पति होई ।। इत्याशीर्वाद

श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी पुष्कर शाल्मलि तरु जिनालय पूजा नं. ६०

स्थापना दोहा---मंदर मेरु कोण द्वय, नेऋत्य अरु ईशान ।
कुरु तरु पै द्वय भवन जिन, यहां करूं आह्वान ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के नैऋत्य और ईशान दोनों कोणों पर पुष्पकर और शालमली नाम दोनों वृक्षन पै दो जिन भवनेभ्यो नमः अत्रवतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल-तरकारी लेलो-त्रिभुवन के स्वामी, डूबत मोहि उबारियो ।
प्रभु अन्तर्यामी, डूबत मोहि उबारियो ।।टेक।।
उत्तम गंगा जल अति पावन, सुवरण कुम्भ भरावें ।
श्री जिनवर पद धार देत ही, जनम मरण मिट जावे ।।
पुष्कर शालमली दो, तरु पर दो जिन भवन सुहावे ।
द्रव्य भाव से जो कोई पूजे, कर्म कलंक नसायें ।। त्रिभुवन के···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पुष्कर शालमली पर दो जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

मलियागिरि चन्दन के संग, केसरि करपूर घिसावे ।
श्री जिनवर पद चर्चित करते, भव आताप न पावे ।। पु. त्रिभुवन के···चंदनं
साजे अक्षत बहु प्रकार के, सोधि बीनि के लावे ।
श्री जिनवर पद भेंट करत ही, अक्षय पद मिल जावे ।। पु. त्रिभुवन के···अक्षतं
सुमन कनक के अरु चांदी के, कल्पतरू के लावे ।
श्री जिनवर पद अग्र चढ़ावत, काम बाण नशि जावे ।। पु. त्रिभुवन के···पुष्पं
पेड़ा गुझिया अरु रसगुल्ला, ताजे खुदी बनावे ।
श्री जिनवर पद आगे क्षेपत, भूख मूल से जावे ।। पु. त्रिभुवन के···नैवेद्यं
अर्जुन का दीपक बनवाकर, गो घृत शुद्ध भरावें ।
श्री जिनवर की आरति करते, निज परखो हो जावें ।। पु. त्रिभुवन के···दीपं
धूप दसांगी तुरत बनाकर, जिन मन्दिर में लावें ।
खेवत कर्म न मुख दिखलावें, फेरि कमी न आवें ।। पु. त्रिभुवन के···धूपं
पिस्ता लोंग सुपारी खारक, दाख लाइची लावे ।
श्री जिनवर पद भेंट करत ही, मोक्ष सामने आवे ।। पु. त्रिभुवन के···फलं
जल से फल तक सब ही लेकर, थाल बड़ा भरवावे ।
श्री जिनवर पद अर्घ चढ़ाकर, शिव ठकुराई पावे ।। पु. त्रिभुवन ले···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

पद्धरी छंद–मन्दर मेरु विदिसा इशा, न तहां पुष्कर तरु सोवे महान ।
त्रय डाले पर व्यन्तर मकान, तिनमें जिन भवन जजूं प्रधान ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पुष्कर वृक्ष के डाले पर सिद्धकूट मन्दिर शेष तीन डालों पर व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। १ ।।

इस तरु के सब परिवार वृक्ष, चालीस सहस अरु एक लक्ष्य ।
एक शतक और ऊपर उन्नीस, जिन गेह जजूं निज नाय शीष ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पुष्कर वृक्ष के एक लाख चालीस हजार एक सौ उन्नीस परिवार वृक्षों पर सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। २ ।।

नेरित में सालमली पिचान, तरु के डाले सिधकूट थान ।
त्रय डाले पर व्यंतर मकान, तिनमें जिन भवन जजूं प्रधान ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सालमली वृक्ष पर सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन डालों पर व्यन्तर सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। ३ ।।

इस तरु के सब परिवार वृक्ष, चालीस सहस अरु एक लक्ष्य ।
एक सतक्र और ऊपर उन्नीस, जिन गेह जजूं निज नाय शीष ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी सालमली वृक्ष के एक लाख चालीस हजार एक सौ उन्नीस परिवार वृक्षों पर सकल जिन भवनेभ्यो नमः ।। ४ ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु कोण द्वय नेऋत्य अरु ईशान ।
कुरु तरु पै द्वय जिन भवन, जयमाला उर आन ।।

छन्द बेसरी—पुष्कर द्वीप पूर्व मन भावै, मन्दर मेरु मध्य कहावे ।
ताकी नैऋत्य कोण ईशाना, पुष्कर शालमली गिनवाना ।।१।।

तिन द्वय तरु की दोनों शाखा, श्री जिन भवन दोय गिणराखा ।
शेष डाल पै व्यन्तर वासा, कथन पूर्ववत और जु खासा ।।२।।

श्री जिन मंदिर बहुत अनोखा, चारों दिश जाली रु झरोखा ।
चौ गिरदे शोभा बहु देवे, देखि ध्वजा मन में सुख होवे ।।३।।

मान स्तम्भ द्वार के आगे, देखत मान तुरत नशि जावे ।
मंगल द्रव्य धरे बहु तेरे, प्रातिहार्य आठों चित्त देरे ।।४।।

श्री जिन मन्दिर मूरति मांही, दर्शन करत पाप रहै नाही ।
पूजत पुण्य बढ़े बहुतेरो, इन्द्र होय ताको लखि चेरो ।।५।।

महिमा और कहाँ लौं गावे, हीन बुद्धि नहीं पार लहावै ।
तातैं नेम विचार कियो जी, सिर नय तुम पद शरण लियो जी ।।६।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की नेरुत्य ईशान कोण में पुष्कर शालमली दोय वृक्ष सम्बन्धी दो सिद्धकूट श्री जिन मन्दिर तथा बाकी के तीन-तीन डालों पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी एवं परिवार वृक्ष सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम ।।

चौपाइ—मंदर मेरु गिरण द्वय कोरण, नैऋत्य अरु ईशान जु होरण ।
कुरु वृक्षन पै द्वय जिन धाम, पाठ करत मोहै शिव वाम ।। इत्यार्शीवाद

श्री मंदर मेरु सम्बन्धी पूर्व दिश आठ वक्षार गिरी आठ श्री जिन भवन पूजा नं. ६१

छन्द अडिल्ल–मंदर मेरु पूर्व विदेहन में बसैं, आठ अचल वक्षार शीष जिन गृह लसैं ।
तिन आठों की नत मस्तक आह्वाननां, पूजन काजैं काय वचन शुद्धकर मनां ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पूर्व विदेह क्षेत्र सम्बन्धी आठ वक्षार गिरि पै आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।।

चाल सरोता—चरण जिनराज के पूजो मेरे भइया ।। टेक ।।

क्षीरोदधि से पावन जल ले, कलशा कनक भरइया ।
मन वच तन से धार देत ही, तीनों रोग नशइया ।। चरण···

चरण जिनराज के पूजो मेरे भइया ।
मन्दर मेरु विदेह पूर्व में वसु वक्षार गिनइया ।।
तिन पर आठ जिनालय पूजत, भवसागर तिरजइया । चरण···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पूर्व विदेह क्षेत्र सम्बन्धी आठ वक्षार गिरि पै आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।।

प्रासुक जल से चंदन के संग, हर सिंगार घिसइया ।
श्री जिनवर के चरण चर्च ते, जग की ताप मिटइया ।। मंदर मेरु···चरण···चंदनं

तन्दुल चोखे ले निर्दोखे, मन में अति हर्षइया।
अक्षय पद मिलि जावे, तामें हरदम मोज उड़इया। मंदर मेरु···चरण···अक्षतं

सुमन सुगन्धित की सुगन्ध से, षट पद बीन बजइया।
जिनवर चरण चढ़ावत बैरी, मकरध्वज खिसकइया।। मंदर मेरु···चरण···पुष्पं

छत्तिस व्यंजन मधुर बनाकर, छत्तिस थाल सजइया।
छुदा नागिनी फिरि न सतावे, जड़ से भूख मिटइया।। मंदर मेरु···चरण···नैवेद्यं

कनक दीप सब विधि सजाय कर, युगल हाठ उठवइया।
सांवरिया की करत आरती, अन्तर पट खुल जइया।। मंदर मेरु···चरण···दीपं

चन्दन काला तुरत कूट कर, उत्तम धूप बनइया।
कर्म जले प्रभू आगे खेवत, करें सु दइया दइया।। मंदर मेरु···चरण···धूपं

अगणित थाल फलों के लीने, गिन पावे न गिनगइया।
श्री जिनवर की भेंट करत मैं, नाचूं ले फिरकइया।। मंदर मेरु···चरण···फलं

जल फल आदि सभी मिलाय कर, अर्घ अपार बनवइया।
प्रभु हि चढ़ाय पुजारी मांगे, शिवपुर बने मड़इया।। मंदर मेरु···चरण···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

कच्छ देश को सीमार, चित्रकूट नामा वक्षार।
सिद्धकूट लखि ताके शीष, भवन जजूं मैं श्री जगदीस।।
नीलाचल सीता विच जान, भद्रसाल वन निकट पिछान।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में नीलाचल के दक्षिण और सीता नदी के उत्तर भद्रशाल वन की वेदी के पास, चित्रकूट नामा वक्षार गिरी पर चार कूटों में पहले में सिद्धकूट शेष तीन में व्यन्तर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम।। १।।

तासूं पूर्व दिशा मन लाय, पद्म कूट वक्षार कहाय।
में यहां पूजूं अर्घ चढ़ाय, मन वच तन त्रय योग मिलाय।।
योजन पंच सतक विस्तार, ऊंचे चौड़े लेहु निहार।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में नीलाचल के दक्षिण और सीता नदी के उत्तर भद्रसाल वन की वेदी के पूर्व दिश पर कूट वक्षार पर चार कूटों में से पहले में सिद्धकूट शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

तासूं पूरब लेहु निहार, नलिन कूट नामा वक्षार ।
ता सिर सिद्धकूट कहलाय, भवन जजूं सब थल जिनराय ।।
कंचन मय है नादि अनंत, विचरें रिद्धी धारी संत ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में नीलाचल के दक्षिण और सीता नदी के उत्तर भद्रशाल वन की वेदी के पूर्व दिश नलिन कूट नाम वक्षार पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

तासूं आगे लेहु विचार, एक सैल नामा वक्षार ।
सिद्धकूट सिर ताके पाय, जिनवर गेह जजूं मैं गाय ।।
ऊपर चारि कूट मनहार, पहिला सिद्धकूट सुखकार ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में नीलाचल के दक्षिण और सीता नदी के उत्तर देवारण्य वेदी के निकट एक सैल नाम वृक्षार गिरि पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

हे त्रिकूट पंचम वक्षार, देखत उपजे सुक्ख अपार ।
तापर सिद्धकूट जिन गेह, पूजूं वसु विधि मन धरि नेह ।।
निषधाचल सीता विच जान, देवारण्य निकट पहिचान ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में निषधाचल के उत्तर सीता के दक्षिण देवारण्य वेदी के निकट त्रिकूट वक्षार पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

तासूं अपर दिशा में जान, गिरि वक्षार वैश्रमण मान ।
ताके सिद्धकूट पै जाय, जजूं भवन मैं श्री जिनराय ।।
खगधर सुर पूजें नित आय, नभचारी मुनि ध्यान लगाय ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में निषधाचल के उत्तर सीता के दक्षिण देवारण्य वेदी के पश्चिम, वैश्रमण वक्षार गिरि पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

पश्चिम दिशा के देश की जाय, अंजनगिरि वक्षार लखाय ।
सिद्धकूट श्री जिनवर धाम, पूजत हूं लेकर परिणाम ।।
सिद्धकूट सरिता के पास, तीन कूट में व्यन्त वास ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में निषधाचल के उत्तर में सीता के दक्षिण में देवारण्य के पश्चिम में अन्जन गिर वक्षार पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

ताही देश को सीमाकार, आत्मा जन नामा वक्षार ।
सिद्धकूट पै जिनगृह जोय, वसुविधि पूजूं शुचि मन होय ।।
रचना समव शरणमय सार, ज्ञानी कहत न पावे पार ।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में निषधाचल के उत्तर सीता के दक्षिण भद्रशाल वन की वेदी के पास आत्माजम वक्षार गिरो पर चार कूटों में से पहले सिद्धकूट में तथा शेष तीन में व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

दोहा- मन्दर गिरि पूरब दिसा, सीता सरिता पास ।
भद्रसाल वेदी निकट, व्यतन्तर सुर आवास ।।
बीच बीच में जानिये, छै सरिता जु विभंग ।
उपकारक नदियों सहित, वन्दु जिनगृह संग ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में सीता नदी के तथा छः विभंग नदियों से सम्बन्धित व्यन्तर आवासों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

सीता के दक्षिण तथा, उत्तर दोनों ओर ।
सब थल नेवारण्य के, भवन जजूं कर जोर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह में देवारण्य वन की वेदी सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

मन्दर मेरु पूर्व में, आठ गिरि वक्षार ।
तिनि पर सब जिन, भवन को अर्चूं बारम्बार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह क्षेत्र में आठ अचल वक्षार पर्वतों पर आठ जिन भवन सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः तथा व्यन्तर आवासों में जहाँ-जहाँ भी जिन भवन को उन सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ११ ।।

जय भद्र बाहु सास्वत जिनेश, जय श्री भुजंग काटत क्लेश ।
जे भूत काल में भये और, भावी में होंगे इसी ठौर ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी भद्रबाहु और श्री भुजंग जिनेन्द्राय तथा और भी जो हुए और होयेंगे ते सब जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु पूर्व दिश, आठ अचल वक्षार ।
तिन आठों के जिन भवन, जयमाला उर धार ।।

बेसरी छंद—पुष्कर द्वीप पूर्व मन लावो, मंदर मेरु मध्य लखावो ।
तासूं पूर्व दिशा फिर जाना, सोलह देश विदेह लखाना ।।१।।
तिनके सीमाकार कहावै, आठ अचल वक्षार लसावै ।
देश बराबर लख लम्बाई, अर्ध सहस योजन चौड़ाई ।।२।।
और कथन सारो लखि लेवो, पूर्व कह्यौ सोही चित देवो ।
सिद्धकूट वसु तिनके शीषा, तिस थल आठ भवन जगदीशा ।।३।।
एक अचल पै एक विचारो, ऐसे वसु पै आठ निहारो ।
मङ्गल द्रव्य आठ सब सोहै, देखत ही सुर नर मन मोहै ।।४।।
कब लौं कथन कहैं विस्तारा, अल्प बुद्धि नहिं बनत जु सारा ।
तिस थल त्रिभुवन ईश विराजे, पद्मासन छवि अद्भुत छाजे ।।५।।
केई पूजन को तहां भावे, केई पूजन कर घर जावे ।
ऐसे मङ्गल होत सदा ही, महिमा जात न तहां की गाई ।।६।।

तातें "नेम" लखै मन मांही, तुम सम देव जगत में नाहीं ।
चरण कमल तुमरे सिर नावूं तुम प्रसाद भव दुःख मिटावूं ।।७।।

दोहा—मंदर मेरु पूर्व दिश, वसु वक्षार गिणाय ।
शीष आठ जिन भवन कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु की पूर्व विदेह सम्बन्धी आठ वक्षार गिरी सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपया वृत छंद—मंदर मेरु तणी दिश पूरब, सोलह क्षेत्र विदेह बसैं ।
तिनके सीमाकार मनोहर, आठ अचल वक्षार लसैं ।।
तिन पै आठ जिनालय केरों, भविजन जे सुध पाठ करैं ।
स्वर्गादिक सुख भोग फेर ते, शिव रमणी कूं जाय वरैं ।। इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु की पूर्व दिशा में सोलह रूपाचल श्री जिन भवन पूजा नं. ६२

चौपया—मन्दर मेरु दिशा लखि पूरब, सोलह देश विदेह बसैं ।
तिनके मध्य रजत गिरि सोलह, तिनके सिर सिद्धकूट लसैं ।।
तिन पै भवन जिनेश्वर सोलह, तिनकी हम आह्वान करैं ।
शक्ति बिना तहां जाय न पावैं, तातैं इस थल भाव धरैं ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पूर्व विदेहन बीच सोलह रूपाचल पर सोलह श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जिन पूजो रे भाई यह उत्तम नर भव पाइकें, जिन पूजो रे भाई ।।टेक।।
छानि जुगति से प्रासुक करि के, नीर कलश भरवाई ।
जिन वर आगे धार देत ही, जनम मरण नशि जाई ।।
मन्दर मेरु विदेह पूर्व में, सोलह देस बसाई ।
सोलह रूपाचल गिरि ऊपर, सोलह घर जिनराई ।। जिन पूजो रे·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह बीच सोलह रूपाचल पर सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम ।

असली केसरि के संग चंदन, घिसि करपूर मिलाई।
प्रभु के चरण चढ़ावो, भविजन शीतलता मिलि जाई ।। मंदर···जिन पूजो···चंदनं

बड़े कीमती तन्दुल लीने, तीन पुंज करवाई।
अक्षय पद पावन हित, चरणनि दीने आन चटाई ।। मंदर···जिन पूजो···अक्षतं

सुमन लिये गेंदा गुलाब के, महक रही अति छाई।
भ्रमर परस्पर लड़े सकल, सुधि बुधि दीनी विसराई ।। मंदर···जिन पूजो···पुष्पं

पुड़ी पकोड़ी पापड़ पपड़ी, उसी वक्त बनवाई।
जिनवर चरण कमल तल, छेपत क्षुदा रोग नसि जाई ।। मंदर···जिन पूजो···नैवेद्यं

निरहिंसक दीपक रतनों, का लेकर मन हर्षाई।
नाचि गाइ के आरति कीनी, खुशी रही अति छाई ।। मंदर···जिन पूजो···दीपं

तीनि भांति के चन्दन को, बारीक नहीं कुटवाई।
शुद्ध हुतासन मांही खेवत, कर्म खतम हो जाई ।। मंदर···जिन पूजो···धूपं

खरबूजा परिपक्क मधुर, नरसिंहपुरा से लाई।
शीश नायकर भेट करत, शिव वरमाला ले आई ।। मंदर···जिन पूजो···फलं

जल चन्दन अक्षत चरु सुमना दीप धूप फल लाई।
अर्घ चढ़ाकर शिवपुर में, रहने की आस लगाई ।। मंदर···जिन पूजो···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चलो पूजें चरण चलो पूजें चरण।
सोलह रूपाचल जिनेश्वर भवन ।।टेक।।

प्रथम देस कच्छा के मधि में, रूपाचल अति सोहै।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, सुर नर खग मन मोहै ।।
आज मेरी वहीं की लगी है लगन। सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी प्रथम कच्छा देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों मे से प्रथम में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

दूजा देश सुकच्छ कहावे, रूपाचल मन हारी ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, भव्यों को सुखकारी ।।
आज देखेंगे चलकर वहां की पवन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी दूजा सुकच्छ देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

महा कच्छ है देस तीसरा, रूपाचल मधि मानो ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, मणिमय रचना जानो ।।
साधुओं के सुनेंगे वहां पर वचन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी तीजा महाकच्छ देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

कच्छ कावती देस सुहावन, बिच में रूपाचल है ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, हो रही चहल-पहल है ।।
करें पर भव सुधरने का हम भी यतन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी चौथा कच्छ कावती देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

आवर्ता है देस पंचमा, रूपाचल अभिरामा ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर पूजत सुधरें कामा ।।
दर्श करिके परस्पर में होंगे मगन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी पंचम आवर्ता देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

देश लांगला वर्ता जानो, छट्ठा है सुखदाई ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, पूज करो मनलाई ।।
फेरि माला जपें करें चर्चा मनन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी छट्ठा लांगला वर्ता देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर वाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

देस पुस्कला परम मनोहर, रूपाचल मन भाता ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, है सबको सुखदाता ।।
मोक्ष पाने का ये ही है उत्तम यतन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी सप्तम पुष्कला देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर वाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

देस पुस्कलावती आठवां, तामें रूपाचल है ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, वसु में देव महल है ।।
उनका होता ही रहता है आवागमन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी अष्टम् पुस्कलावती देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर वाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

वत्सा देस नवम नम्बर का तामें रूपाचल है ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, पूज करें सुर नर हैं ।।
एक सत आठ प्रतिमा है तारन तरन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धो नवम् वत्सा देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर वाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

देस सुवत्सा बहुत सुहावन रूपाचल मय मानो ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, समवशरण युत जानो ।।
रिद्धिधारी मुनीश्वर करे है भजन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह संबंधी दसमा सुवत्सा देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मंदिर बाकी आठ में व्यंतर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

देस महावत्सा पहिचानो, रूपाचल मन मोहन ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, मणिमय रचना सोहन ।।
देव देवी करें नित पूजन भजन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी ग्यारवाँ महावत्सा देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ११ ।।

वत्सकावती देस अनौखा रूपाचल बिच मांही ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, मय रचना अधिकाही ।।
देखते ही लुभाते हैं तन मन वचन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह सम्बन्धी बारहवां वत्सकावती देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

रम्या देश बसे तेरहवां, रूपाचल सुखकारी ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, पूजन करे पुजारी ।।
आज हम भी करेंगे वहाँ चिन्तवन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व में विदेह क्षेत्र सम्बन्धी तेरहवाँ रम्या देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

देस सुरम्या है चौदहवां, रूपाचल मन हरना ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, छवी अती जिन वरना ।।
आज हम भी गहेंगे उन्हीं की शरण । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व में विदेह क्षेत्र सम्बन्धी चौदहवां सुरम्या देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

देस रमणीया अती सुखारी, रूपाचल मय सोहै ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, भव्यों के मन मोहै ।।
आज हम तुम करें तत्व चर्चा गहन । सोलह रूपाचल·····

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व में विदेह क्षेत्र सम्बन्धी पन्दरहवा रमणोया देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

देश मंगलावती कहा है, रूपाचल मय भारी ।
नव कूटों में गेह जिनेश्वर, आवे सुर नर नारी ।।
हम करावें वहां आपना एडमीशन । सोलह रूपाचल···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व में विदेह क्षेत्र सम्बन्धी सोलहवाँ मंगलावती देश मध्य रूपाचल पर नवकूटों में से प्रथम सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी में व्यन्तर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

छूटे मूते योजन उर्ध दस, विद्याधर के वास ।
फिरि दस योजन ऊपरें, सुर व्यन्तर आवास ।।
सब थल जिनवर भवन है, सारी रचना साथ ।
मैं पूजूं मन लायकर, होने त्रिभुवन नाथ ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह क्षेत्र में १६ रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊंची दक्षिण उत्तर दोनों कटनो पर एक सो दस विद्याधर की नगरियों में तथा बीस योजन ऊँची दोनों तरफ व्यन्तर देवथान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग गिरि नील से, निकसी सरिता दोय ।
रक्ता रक्तोदा लखो, सीता में अवलोय ।।
उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों ओर ।
जिनगृह पूजों भाव से, पावन शिव का ठौर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह में पहले आठ देश सम्बन्धी रक्तारक्तोदा सोलह नदियों नीलाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिली। इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियाँ चौदह-चौदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग गिरि निषध से, निकसी सरिता दोय ।
गंगा सिन्धू नाम की, सीता में अवलोय ।।
उपकारक नदियों सहित, सबके दोनों ओर ।
पूजूं प्रीति लगाय के, बनिजाऊं सिर मोर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह में दूसरे आठ देश सम्बन्धी [गंगा सिंधु सोलह नदियाँ निषधाचल के मूल भाग से निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होकर सीता में मिली। इन सोलह नदियों के दोनों तट पर तथा इन हर एक की सहायक नदियाँ चौदह-चौदह हजार इन सबके भी दोनों तट पर व्यन्तर देवों के थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

म्लेक्ष खंड इक के मधि, वृषभाचल के पास ।
आर्य खंड के नगर में, वन्दू जिन गृह खास ।।
मन्दर मेरु पूर्व दिसि, मुनिवर तीन प्रकार ।
करूं वंदना भाव से, होने भवि दधि पार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पूर्व विदेह में सोलह देश सम्बन्धी पाँच-पाँच म्लेक्ष खण्ड हैं उत्तर के तीन के बीच में वृषभाचल पर्वतों सम्बन्धी तथा आर्य खण्डों में एक नगरी जिसमें तीर्थङ्करादि होते हैं उन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु पूर्व दिस, सोलह देस मंझार।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला सुनि सार ॥

बेसरी चाल—मन्दर मेरु पूर्व दिश जाना, सोलह क्षेत्र विदेह बखाना।
तिन सोलह में सोलह भाई, रूपाचल मधि भाग धराई ॥१॥
तिन सोलह की लखि लम्बाई, देश बराबर सम जिन गाई।
लम्बे पूरब पश्चिम जाना, दक्षिण उत्तर चौड़े माना ॥२॥
योजन ऊंच पच्चीस बखानो, कटनी पूर्व बराबर जानो।
दो सौ योजन चौड़ो मानो, खगधर व्यन्तर पुर उर आनो ॥३॥
सिद्धकूट सिर पै सुखदाई, सोलह गिण सोलह पै भाई।
तहां भवन जिनराज लसावें, सोलह पै सोलह मन भावें ॥४॥
तिनको उपमा किसकी देना, ऐसो वस्तु नहीं लख लेना।
तहां जगत के नाथ विराजे, आवत सुरपति सेवन काजे ॥५॥
अपना जनम सफल करि जावे, श्री जिनवर की भक्ति धरावें।
ऐसी भक्ति जिनेश्वर केरी, याते छूटे भव भव फेरी ॥६॥
याही तें उर "नेम" विचारी, तुम चरणन को ढोक हमारी।
तब लौं भक्ति तुम्हारी मांगू, जब लौं भववन नाहिं उलांघू ॥७॥

दोहा—मन्दर मालो मेरु को, पूरब दिश मन लाय।
सोलह श्री जिन भवन कूं, दीजे अघ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पूर्व दिश सोलह रूपाचल पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्।

अडिल्ल—पूरब क्षेत्र विदेह मेरु मन्दर तणो।
सोलह तिनके मध्य खगाचल भव भणों ॥
सोलह तिनके शीष जिनेश्वर गेह को।
पाठ करे जे भव्य हरे दुःख देह को ॥

इत्याशीर्वाद

श्री मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा में तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा नं. ६३

दोहा स्थापना—मन्दर मेरु दक्षिण दिश, है जु कुलाचल तीन ।
शीष तीन जिन भवन को, आह्वानन इहां कीन ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल शीष पै तीन श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चौपाई— मन्दर मेरु दक्षिण दिश जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, हर्षित गंगा नीर गहाय ।।

ॐ ह्रीं श्री मन्दिर मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल गिर के शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, बहुत सुगन्धित चन्दन लाय ।। चन्दनम्

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाल ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, हेरि अखण्डित तन्दुल लाय ।। अक्षतं

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, सुमन सु प्रासुक बहु विधि लाय ।। पुष्पं

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, विधि पूर्वक नेवज बनवाय ।। नैवेद्यं

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, दीप रतनमय थाल धराय ।। दीपम्

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, अग्नि कुंड में धूप खिपाय ।। धूपम्

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाम, नाना विधि फल पावन लाय ।। फलम्

मन्दर मेरु दक्षिण दिशि जाय, तीन कुलाचल पै जु लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय जल फल लेकर अर्घ बणाय ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चाल विजयानी–मन्दर गिरि सूं दक्षिण दिशा विचारिये ।
हिमवन पै जी ग्यारह कूट निहारिये ।।
पहले में जी सिद्धकूट जिन धाम है ।
फिर दस में जी, व्यन्तर देव मुकाम है ।।
गिरि के विच जी पदमः द्रह मन भावना ।
तामें सूं जी तीन नदी निकसावना ।।
उपकारक जी सहस छप्पना आन है ।
जिनवर गृह जी, सब थल पूज महान है ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा के तीन कुलाचल में से हिमवन कुलाचल पर ग्यारह कूट जिनमें प्रथम में सिद्धकूट मन्दिर बाकी दस में व्यन्तर थान संबंधी तथा पदम नाम के तालाब के बीच कमल पर श्री देवी का स्थान संबंधी तथा तालाब के तीन द्वारों से तीन नदियां निकली उनको सहायक नदियां छप्पन हजार नदियों के दोनों तट संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

दूजा गिरी जी नाम महा हिमवान है ।
तसु ऊपर जी आठ कूट सु महान है ।।
सिद्धकूट सूं जी पूरब में अति सोभना ।
जिनवर गृह जी सब ही के मन मोहना ।।
तालाब सूं जी, महा पदम विच की थली ।
तामें सूं जी निकसि, दोय नदियां चली ।।

सहकारी जो सरिता चौरासी सहस ।
मैं सब थल जी, जिन गृह पूजूं होई खुश ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा में महा हिमवान कुलाचल पर्वत पर आठ कूटों में से पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी सात में व्यन्तर देव स्थानक संबंधी तथा तालाब के मध्य में महा पदम के बीच कमल पर श्री देवी का महल संबंधी तथा तालाव से दोय नदियाँ निकली उनकी सहायक चौरासी हजार नदियों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ २ ॥

गिरी निषध पै जी, नव कूटों में जिन भवन ।
सिद्धकूट है जी प्रथम कूट में मन हरन ॥
बाकी में जी व्यन्तर देवों के सदन ।
बिच भाग में जी, दिरह तिगंछ जु है सधन ॥
तसु निकसी जी सरिता दोनों द्वार से ।
उपकारक जी नदियां, लख विस्तार से ॥
इक लाख सु जी ऊपर सहस प्रमान है ।
चालीस सूं जी जिन गृह सब स्थान है ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा में निषध कुलाचल पर्वत पर नों कूटों में से पहले में सिद्धकूट मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर देवों के थानक सम्बन्धी तथा गिर के बीच में तिगंछ तालाब पर कमल पर धति देवी के महल सम्बन्धी तथा तालाब से दोय नदियाँ निकली, तिनकी एक लाख चालीस हजार सहायक नदी सब नदियों के दोनों तट सम्बन्धो सकल श्री जिन नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

दिसि दक्षिण जी, तीन कुलाचल की तनी ।
विच विच में जी, भोग भूमि तीनों भनी ॥
गिरि नाभि सूं जी दो परवत के थान में ।
नदियों के जी सागर के सु मिलान में ॥
जिन भवन सूं जी, सुर व्यन्तर के हो जहां ।
तन मन से जी मैं पूजूं वन्दू वहां ॥
ता फल से जी शिव सुन्दरि के संग में ।
अन अन्ता जी काल विते निज रंग में ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा में तीन कुलाचलों के बीच में उत्तम-मध्यम जघन्य तीनों भोग भूमि संबंधी तथा दो नाभिगिरी संबंधी तथा सातों नदियाँ समुद्र में मिली तथा जम्बूद्वीप की वेदिका सम्बन्धी तथा और जहाँ-जहाँ भी व्यन्तर स्थान संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा--मन्दर मेरु दक्षिण दिश, तीन कुलाचल जोय।
शीष तीन जिन भवन की, जयमाला अवलोय ॥

बेसरी छन्द—मन्दर मेरु तणी दिश दक्षिण, तीन कुलाचल लखहु विचक्षण।
हिमवन दूज महा हिमवाना, तीजो निषध कह्यो भगवाना ॥१॥
हिमवन कंचन वरण लसावें, महा हिमवान सफेद कहावें।
निषध हेममय छवि लखि भाई, योजन चार सतक ऊंचाई ॥२॥
तीनों की इकसार बताई, भिन्न-भिन्न सबकी चौड़ाई।
और कथन जिन आगम जोवो, भविजन मन को संशय खोवो ॥३॥
इन तीनों के शीष विराजै, सिद्धकूट गिण तीन ही छाजै।
तिस थल भवन जिनेश्वर जानो, तीनों पै भवि तीन बखानो ॥४॥
शिखर उतंग महा सुखकारी, कंचन मणिमय छवि बहु भारी।
देखत चित्त हरे सब ही का, अद्भुत अतिशय है जिन जी का ॥५॥
कोटि आदि रचना लखि लेवो, भविजन सब ही चित्त में देवो।
श्री जिन मूरति छवि बहु भारी, नासा दृष्टि लगें प्रियकारी ॥६॥
वीतराग पद्मासन सोहे, देखत ही मन सबके मोहे।
सकल सुरासुर तिस थल आवे, पूजन करि गुणगान करावे ॥७॥
तुम जगदीश सकल सुखदाई, तुम होने भव पीर हराई।
तुम ही मुक्ति वधू के कंथा, तुम ही पंचम गति के पंथा ॥८॥

कब लौं तेरी महिमा गावूं, बुद्धी अल्प पार नहीं पावूं ।
पंचम ज्ञान मोहि दे दीजे, "नेम" नमे यह अरज सुणी जे ॥६॥

दोहा--मन्दर मेरु दक्षिण दिश, तीन कुलाचल पाय ।
शीष तीन जिन भवन कूं दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशी तीन कुलाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल--मन्दर मेरु ते जू दक्षिण दिश में लखो ।
तीन कुलाचल शीष भवन जिन त्रय रखो ॥
तिनको भविजन पाठ सुणें रुचि सौं करे ।
सहज ही तै वसु कर्म रिपु दुःख कूं हरे ॥ इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य एक रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा नं. ६४

छन्दगीत की चाल—मन्दर सुमेरु की दक्षिण, दिशि भरत क्षेत्र निहारियो ।
मधि भाग ताके रजत गिरि, सिर भवन जिन इक धारियो ॥
आह्वान ताकी करत, इस थल पूजने के कारणें ।
मन वचन तन सिर नाय चहुंगति, भ्रमण रोग निवारणें ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल के शीष श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् । अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् स्थापनम् ।

अडिल्ल छंद—गंगा नीर पुनीत, कनक झारी भरूं ।
कर तैं देत सुधार, जनम मृत्यु हरूं ॥
मन्दर गिरि दिस दक्षिण, खगाचल जोयके ।
श्री जिन मन्दिर एक जजूं, शुचि होय कै ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः जलम् ।

परम सुगन्धित जोय, घसूं मलयागिर।
भव तप नाशन काज लियो, नमि निज सिरा ॥ मन्दर गिरि···चंदनम्
उज्ज्वल मधुर अखंड, सरल शुभ अक्षतं।
भरिके कंचन थाल, पुंज गुण रक्षतं ॥ मन्दर गिरि···अक्षतम्
कल्पतरु के फूल, मनोहर लायके।
कंचन थाल धराय, लिये सिर नायके ॥ मन्दर गिरि···पुष्पम्
क्षुधा वेदनी रोग, महा दुःख देत है।
ता कारन नैवेद्य, पुनीत जु लेत है ॥ मन्दर गिरि···नैवेद्यम्
निर्मल द्युति को दीप, कनक के थाल में।
धरि लीनो फिर नाहिं, फसूं जग जाल में ॥ मन्दर गिरि···दीपम्
परम सुगन्धित धूप, अनूपम लेय कै।
मन वच तन हरषाय, शिखा घट खेय कै ॥ मन्दर गिरि धूपम्
मोक्ष महाफल काज, दयानिधि नाथ जी।
प्रासुक शुभ फल भेट, धरूं ले हाथ जी ॥ मन्दर गिरि···फलम्
जल चन्दन चरु फूल, दीप फल अक्षतं।
धूप कनक धरि थाल, अर्घ ले रक्षतं ॥ मन्दर गिरि अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—मन्दर मेरु दक्षिण दिश जाय, पहला भरत क्षेत्र कहलाय।
ताके बीच रूप गिरि एक, नवकूटन युत रचना नेक ॥
सिद्धकूट पूरब के मांहि, वसु में व्यन्तर देव रहाहि।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, मैं यहां पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिश में भरत क्षेत्र के बीच रूपाचल पर्वत पर नवकूट में पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी आठो में व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

लखि ले लम्बाई चित्त आन, गिरण लाख चार योजन प्रमान ।
गिर व्यास कूट कटनी जु आदि, लखि पूर्व कथन लीज्यो जु सादि ।।२।।
सिद्धकूट जिनेश्वर को मकान, नभ जाय शिखर लाग्यो महान
छवि कनक वरण अद्भुत धराय, चहुं दिश में शोभा कहि न जाय ।।३।।
जय कोट तीन चौगिरद फेर, जय केतु पंक्ति लागी जु घेर ।
जय मंगल द्रव्य अनेक पाय, जय प्रातिहार्य आठों लसाय ।।४।।
यहां प्रथम द्वितीय अख तृतीय काल, नहीं होय पांचवां छटम काल ।
चौथे ही काल की फिरनि होई, अति वृष्टि अना वृष्टि न होई ।।५।।
इक जैन धर्म ही रहे सार, नहीं अन्य धर्म दीषे लगार ।
सब सुख मय बीते काल जान, सब में सु परस्पर प्रीति मान ।।६।।
जिनराज बिंबशत एक आठ, तिस थान मांहि लागे जु ठाठ ।
जय चारण मुनि तिस थान आय, जिनराज चरण दे शिर नवाय ।।७।।
गुणगान करत उर हरषि धारि, मन काय बचन त्रय शल्य टारि ।
तुम देव जिनेश्वर हो दयाल, तुम दीनबन्धु तुम गुण विशाल ।।८।।
जय स्थित हो त्रय काल मांहि, गुण कहत पार कछु मिलत नांहि ।
नमि "नेम" धरे सिर हाथ दोय, तुम देत सबन के दुःख खोय ।।९।।
तातें जु अरज हम करत तोहि, शिव थान देत अब क्यों न मोहि ।

दोहा—मन्दर मेरु दक्षिण दिश, भरत क्षेत्र चित्त लाय ।
रूपाचल जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

छन्द बेसरी—मन्दर मेरु दक्षिण दिश जाना, भरत क्षेत्र रूपाचल पाना ।
शीष जिनालय को जे प्राणी, पाठ करे ते लें शिवराणी ।। इत्याशीर्वाद

श्री मंदर मेरु के भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी पूजा नं. ६५

चौपाई—मन्दर मेरु दक्षिण दिश जाय, भरत क्षेत्र मधि आरज पाय।
चौबीसी तीनों जिनराज, आह्वानन करतो निज काज ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी जिन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

गीता छंद—नीर निर्मल मधुर शीतल गंग सरिता को लियो।
भरि कनक झारी धार तुम ढिग देत ही हरिष्यो हियो ॥
मेरु मन्दर की दक्षिण दिशि, भरत क्षेत्र जु है भलो।
तीनों चौबीसी पूज तिस थल भव्य शिवपुर को चलो ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीनों चौबीसी की ७२ जिनेभ्यो नमः जलम्।

कश्मीर चंदन अति सुगंधित, घिसत दोऊ मिलायके।
धरि कनक भाजन, हाथ गहिके, धरत तुम ढिग आयके ॥ मेरु मन्दर···चंदनं

मोती समान अखण्ड अक्षत, मधुर कोमल जोयकें।
गुण पुञ्ज तुमरे धरत कंचन, थाल में शुचि होयकें ॥ मेरु मन्दर···अक्षतं

फूल प्रासुक अति सुगंधित, विविध भांति लहायकें।
धरि कनक भाजन हाथ गहिके, धरत तुम ढिग आयकें ॥ मेरु मन्दर···पुष्पं

बहु भांति के पकवान, सुन्दर तुरत ताजे कर लिये।
विधी पूर्वक हेम भाजन भेंट तुम ढिग धर दिये ॥ मेरु मन्दर···नैवेद्यं

निर्मल अनूपम दीप मणिमय थाल कंचन में धरूं।
करते उठाय बजाय बाजे हरषि तुम पायन परूं ॥ मेरु मन्दर···दीपं

ले अगर चन्दन तगर आदिक कूट शुद्ध बनायकें।
खेवूं हुताशन कुम्म मांही, निकट तुमरे आयकें ॥ मेरु मन्दर···धूपं

फल लेय नाना भांति के अरु, वहु पुनीत जु जानिकें ।
तुम चरण युग की भेंट धरतौ थाल कंचन आनिकें ।। मेरु मन्दर'''फलं
नीर अक्षत फूल चन्दन दीप फल धूप जु चरूं ।
धरि थाल कंचन अर्घ करिकें चरण तुमरे सिर धरूं ।। मेरु मन्दर'''अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा–मन्दर गिरि दक्षिण दिशा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
भूतकाल के मैं जजूं, चौबीसी जिनराय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र के भूतकाल की चौबीसी क्रम से १. श्री दमनन्दि २. श्री मूर्ति स्वामी ३. नीरांग ४. प्रलंदित ५. प्रथ्वोपति ६. चारित्र निधि ७. अपरजिन ८. सुबोछिक ९. बुद्देश १०. वैतालिक ११· त्रिमुद्धिनाथ १२. मुनि बोधक १३ तीर्थस्वामी १४. धर्मादि १५. धरणेंन्द्र १६. प्रभू १७. आदिनाथ १८. सर्वतीर्थ १९. निरूपम २०. कुमारिक २१. विहार गृह २२. २३. पिकासन २४. श्री जगन्नाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १ ।।

मन्दर गिरि दक्षिण दिशा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
वर्तमान के मैं जजूं, चौवीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र के वर्तमान की चौबीसी क्रम से १. प्रभासनाथ २. सरस्वामी ३. भरतेश ४· दीर्घानन ५. विक्ष्यात ६. अवसनीक ७. प्रबोध नाथ ८. तपोनाथ ९. पावक-नाथ १० त्रिपुर नाथ ११. सौगत १२. श्री वास १३. अधमन १४. सुकेश १५. क्रम तिष्टा १६. अमलेन्द्र १७. हवजासीक १८. प्रसादनाथ १९. विपरीत २०. मृगांक २१. कपाटीक गजेन्द्रनाथ २३. ध्यानक २४. श्री वसन्त ध्वज जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २ ।।

मन्दर गिरि दक्षिण दिशा, भरत क्षैत्र मन लाय ।
होनहार चौवीस जिन, वन्दू मन वच काय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र के भविष्य काल को चौवीसो क्रम से १. त्रिमातुल २. अधटिक ३. त्रिशंभू ४. अचलेश ५. प्रवादिक ६. त्रिनयन ७. विहवांस ८. विघ्वांस ९. प्रशम १०. भुमेन्द्र ११. गोस्वामी १२. प्रसंग १३. प्रसित १४. मण्डलीक महावसु १६. उदयंस १७. दुदनीक १८. प्रबोधेश १९. अभयङ्ग २०. प्रमट २१. दफारिग २२. वृषमादिक २३. त्रिकर्भ २३. भुमानन्द २४. वृतस्वामी जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

अल फलादि गिण आठ ले, कंचन थाल मंझार ।
चौवीसी तीनों जजूं, मन वच काय सम्हार ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल संबंधी तीन चौबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

दोहा—मन्दर मेरु दक्षिण दिश, भरत क्षैत्र मन लाय ।
तीनों चौबीसी कहूं, जयमाला सुखदाय ।।

पद्धड़ी—पुष्करार्ध पूरब कहलावे, मन्दर मेरु मध्य लसावै ।
तासूं दक्षिण दिश भवि जाना, भरत क्षैत्र मधि आरज थाना ।।१।।
चौबीसी तीनों लखवानी, भूत भविष्यत वरत जु मानी ।
तिनके नाम कहूं सुण भाई, तीन जगत में है सुखदाई ।।२।।
श्री दमनंदि जिनेश्वर वन्दू, मुति स्वामी नमि पाप निकंदू ।
श्री नीरांग तिहु जग स्वामी, नमूं प्रलंवित शिवपुर गामी ।।३।।
पृथ्वीपति जिन तिहुं जग चन्दा, चारित्र निधि नाशे जग फंदा ।
श्री अपराजित गुण भंडारा, नमू सुबोधिक भवदधि पारा ।।४।।
श्री बुद्धीश चराचर ज्ञाता, वैतालिक जिन जगत विख्याता ।
नमू त्रिमुष्टि नाथ सुख कंदा, मुनि बोधक नाशे दुःख दंदा ।।५।।
तीर्थ स्वामि वन्दूं कर जोड़े, श्री धर्मादि करम गिर फोड़े ।
श्री धरणेन्द्र वरी शिवनारी, प्रभु नामा वन्दूं अघहारी ।।६।।
वन्दूं आदिनाथ अघहरता, नमू अनादि मुक्ति सुख करता ।
सर्व तीर्थ वन्दूं जगनायक, वन्दूं निरूपम थिर पद दायक ।।७।।
नमूं कुमारिक तिहुं जग सूरा, नमू विहार ग्रह गुण पूरा ।
धरणेसुर को नमि सुखदाई, नमू पिकासन तिहु जग राई ।।८।।

श्री जगनाथ अनाथ उबारैं, नमू प्रभासनाथ अघ टारे।
सर स्वामी जिन तिहुं जग ईशा, श्री भरतेश नमूं निज शीसा ॥९॥
दीर्घानन भव भ्रमण मिटावे, श्री विख्यात नमत शिव पावे।
अवसनीक जिन केवल ज्ञानी, नमू प्रबोधनाथ शिव दानी ॥१०॥
तपोनाथ वसु कर्म विनासै, पावकनाथ चराचर भासै।
त्रिपुर नाथ त्रय रतन लहावे, सौगत शिवपुर नाथ कहावे ॥११॥
वन्दूं नित श्रीवास जिनेशा, वन्दूं अघमन नशत कलेशा।
शास्वत सुक्ख मुकेश करंता, क्रम तिष्ठा जिन पाप हरंता ॥१२॥
श्री अमलेन्द्र महा सुखदाता, नमू ध्वजासिक हरत असाता।
नमू प्रसादनाथ जिनराजा, श्री विपरीत नमूं सिर ताजा ॥१३॥
नमू मृगाङ्क सकल सुखदाई, नमू कपाटिक निजि निधि पाई।
नमि [illegible]ूं राजेन्द्रनाथ गुण नायक, ध्यानक निज वन्दूं सब ज्ञायक ॥१४॥
नमू वसंतध्वज गुण पूरा, त्रिभातुल आठों अघ चूरा।
अघटित भव वन पार करंता, त्रिशंभू जिन रोग हरंता ॥१५॥
जिन अचलेशं दीनदयाला, नमू प्रावदिक तिहुं जग आला।
नमि त्रिनयन मुक्ती सुख लेवूं, श्री विध्वांस जिनेश्वर सेवूं ॥१६॥
नमू प्रथम जिन धर्म प्रकाशन, श्री भूमेन्द्र मोह तम नाशन।
गोस्वामी जिन भव दधि पाथा, श्री प्रगंग दयानिधि नाथा ॥१७॥
वंदूं प्रवासीत अघ टारे, मंडालीक भवार्णव तारे।
महा वसु भव सिंधु तिरावे, उदयंसा गुण थोक धरावे ॥१८॥
दुर्दनीक नाशे भव फेरे, प्रबोधेंश पंथा शिव केरे।
श्री उभयंग ध्वंस अघ कीना, प्रमद जिनेश्वर भव हरदीना ॥१९॥
दम्फारिग अरि आठ विदारे, वृषभादिक जिन धर्म उदारे।
नमू त्रिकर्म करे सुख सारा, हुये भवार्णव जग से पारा ॥२०॥

वंदूं भूमानन्द जिनेशा, पूजत मिटते सर्व वलेशा।
वृत स्वामी जिन धर्म प्रकाशा, वन्दन करत कटे दुःख पासा ॥२१॥
ये तीनों चौबीसी नामा, "नेम" नमे नित निज हित कामा।
शिवपुर वास मोहि दे दीजे, अरज करूं जिनराज सुणीजे ॥२२॥

दोहा—मेरु मन्दर दक्षिण दिश, भरत क्षेत्र मधि पाय।
तीन चौवीसी के चरण, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड मध्य भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौवीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चाल जोगीरासा—मन्दर मेरु तणी दिश दक्षिण, भरत क्षैत्र मधि पावै।
आरजखंड मनोहर तामे, तीन चौवीसी थावै॥
तिनको भविजन पाठ करे, शुद्ध मन वच तन थिर लाके।
ते भव को जु देय जलांजली, सुख ले शिवपुर जाकै॥

❀ इत्यार्शीवाद ❀

मन्दिर मेरु के पश्चिम दिश आठ वक्षार गिरी शीष आठ श्री जिन भवन पूजा नं. ६६

जोगीरासा—मन्दर मेरु तनी दिश, पश्चिम सोलह क्षेत्र विदेहा।
तिन में वसु वक्षार गिरन पै, आठ जिनेश्वर गेहा॥
आह्वानन तिनकी इस थल, हम पूजन काजे करते।
मन वच तन त्रय योग लगा, करि अशुभ कर्म सब हरते॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्र बीच आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपाई—पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मन्दर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।

सीतोदा जल निर्मल लाय, रतनमई कलशा भरवाय ।
तिनको पूजूं मन वच काय, जन्म जरामरणामिटि जाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्र बीच आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मन्दर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।

चन्दन मय केसरि घिसवाय, रतन कटोरी में भरवाय ।
तिनको पूजूं मन वचकाय, भव संताप तुरत नशि जाय ।। ···चंदनं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।

रतन जवाहर लीये मंगाय, थाल अनेक लिये भरवाय ।
तिनको पूजूं मन वचकाय, अक्षय पद अब ही मिलि जाय ।। ···अक्षतं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।

फुल बगिया से फूल चुनाय, महक रही दस दिसि में छाय ।
तिनको पूजूं मन वचकाय, मदन बान फिर नहीं सताय ।। ···पुष्पं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।

बहु पकवान मधुर बनवाय, थाल जुगत से लिया सजाय ।
तिनको पूजूं मन वचकाय, नागिन क्षुधा भगे अकुलाय ।। ···नैवेद्यं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।
दीप रतनमय लिया सजाय, आरति करि मन अति हर्षाय ।
तिनिको पूजूं मन वच काय, मोह अंध-नारंच रहाय ।। ···दीपं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।।
धूप दसांग लई बनवाय, खेऊं धूप घड़े में आय ।
तिनको पूजूं मन वच काय, अष्ट करम मेरे जलि जाय ।। ···धूपं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिनगेह ।।
अक्ष लुभावन फल मँगवाय, श्री जिनवर पद भेंट कराय ।
तिनको पूजूं मन वचकाय, शिवपुर में मम घर बनि जाय ।। ···फलं

पुस्करार्ध वर दीप विचार, ताके पूरब भाग निहार ।
मंदर मेरु अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिनगेह ।।
आठों दरब अधिक मिलवाय, श्री जिन चरणनि अर्घ चढ़ाय ।
तिनको पूजूं मन वच काय, पद अनर्घ याते मिलि जाय ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

जिन पूजन है सार जगत में, जिन पूजन है सार ।।टेक।।
इसी से होवे बेड़ा पार । जगत में···

दोहा--मंदर मेरु अपर दिशा में, वसु परवत वक्षार ।
श्रद्धावान प्रथम के ऊपर, सिद्धकूट मनहार ।।
नमे नित देव चारि परकार । जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह सम्बन्धी निषधाचल के उत्तर सीतोदा के दक्षिण भद्रशाल वन वेदिका के पास श्रद्धावान वक्षार गिरी पर चार कूटों में से प्रथम में सिद्धकूट जिन मन्दिर शेष तीन में व्यंतर आवास सम्बंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

विजट वान है गिरी दूसरा, चार कूट मय सार ।
नदी निकट में सिद्धकूट है, बाकी सुर परिवार ।।
तासु की रचना अपरंपार । जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह सम्बन्धी निषधाचल के उत्तर में सीतोदा के दक्षिण में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में विजटा वान वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

आसी विस वक्षार, तीसरा कंचन मय उनहार ।
चार कूट है प्रथम विषै, श्री सिद्धकूट दुःखहार ।।
वन्दते छूटि जाय संसार । जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह सम्बंधी निषधाचल के उत्तर में सीतोदा के दक्षिण में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में आसी विस वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

नाम सुखावह है वक्षारा, चौथा अति अभिराम ।
सिद्धकूट के जिन मन्दिर की, रचना कही तमाम ।।
भनत सुर गुरु नहीं पावे पार । जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह संबंधी निषधाचल के उत्तर में सीतोदा के दक्षिण में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में सुखावह वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

चन्द्रमाल वक्षार अनोखा, पंचम है गुणखान ।
चारि कूट है तिनि में, श्री जिन भवन शाश्वते जान ।।
पूज करि बहु जन उतरे पार । जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह संबंधी नीलाचल से दक्षिण में सीतोदा के उत्तर में भूतारण वेदी के पास चद्रंमाल वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

सुर्यमाल मन हरन जानलो, छट्ठा गिरी वक्षार ।
ताके ऊपर गगन चरी, मुनि नित प्रति करे विहार ।।
ध्यान से कर्मनि देइं, पछार जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह संबंधी नीलाचल के दक्षिण में सीतोदा के उत्तर भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में सुर्यमाल वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

नागमाल सप्तम सुखदाई, है गिरवर वक्षार ।
सिद्धकूट में रतन मई, सत आठ बिम्ब गुण सार ।।
दर्शते सम्यक प्रगटे सार, जगत में जिन···

ॐ ह्री मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह सम्बन्धी नीलाचल के दक्षिण में सीतोदा के उत्तर में भद्रशाल वन वेदी के पश्चिम में नागमाल वृक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

देवमाल अन्तिम बक्षारा, अक्ष लुभावन हार ।
धन्य वही है जो पूजें, तीनों ही योग सम्हार ।
उन्हीं का धन्य जनम अवतार, जगत में जिन···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के पश्चिम विदेह सम्बन्धी नीलाचल के दक्षिण में सोतोदा के उत्तर में भद्रशाल वन वेदीका के पास देवमाल वक्षार पर सिद्धकूट जिन मंदिर तथा बाकी तीन में व्यंतर आवास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

वय गिरि मन्दर सू अपर थान, सुर व्यन्तर के जहां हो विमान ।
तहां सकल जिनालय नादि नन्त, में पूजि करूं संसार अन्त ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की अपर दिशा में व्यंतर देवों के स्थानों को मैं जहाँ-जहाँ भी जिनालय हो तहां-तहाँ सकल जिन भवन संबंधी श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

जय जय ईश्वर जिनवर दयाल, जय नेम प्रभू गुण रतन माल ।
जे भूतकाल में भये और, भावी में होंगे अपर ठोर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम दिशा में ईश्वर जिनेन्द्राय एवं नेम प्रभू जिनेन्द्राय तथा वह जो पहले हुए है एवं आगे होवेंगे तिन सकल जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु अपर दिश, आठ अचल वक्षार ।
शीष आठ जिन भवन की, जयमाला सुणि सार ।।

सोरठा—पुष्करार्ध मन लाय, पूरव भव्य सुहावनो ।
ताके मध्य लसाय, मन्दर मेरु कहावनो ।।१।।

तासों पश्चिम जाय, सोलह देश विदेह लखि ।
तामें आठ गिणाय, गिर वक्षार निहार के ।।२।।

कंचन वरण लसाय, और कथन जिन ग्रंथ ते ।
समझो भविजन लाय, भिन्न भिन्न तहां भाखियो ।।३।।

इन आठन के शीष, सिद्धकूट आठ ही लसैं ।
आठ भवन जगदीश, सिद्ध कूट में है सही ।।४।।

तिनमें अति छवि देत, श्री विम्व जिन मनोहरा ।
तिस थल पूजन हैत, सुर नर आवे सासते ।।५।।

आठों द्रव्य लहाय, गावे गुण जिनराज के ।
तुम प्रभू शरण सहाय, ज्ञायक सकल चराचरा ।।६।।

दीनदयाल जिनेश "नेम" शीष तुमको नमैं ।
दो मुझ पंचम देश, मेरी करुणा लेय के ।।७।।

दोहा—मन्दर मेरु अपर दिश, वसु वक्षार गिणाय ।
तिन सिर वसु जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम दिश आठ वक्षार सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—पश्चिम क्षेत्र विदेह मेरु मन्दर लणो ।
आठ अचल वक्षार भवन जिन वसु भणो ।।
तिनको भविजन पाठ करे उत्साह सों ।
ते लेवे निज ज्ञान बचे जगदाह सों ।। इत्यार्शीवाद

श्री मन्दर मेरु की पश्चिम दिशा मे सोलह रूपाचल शीष जिन पूजा नं. ६७

चौपया वृत्त–मन्दर मेरु तणी दिशि पश्चिम, सोलह क्षैत्र विदेह बसे ।
तिनके मध्य रजत गिरि सोलह, तिनके सिर सिद्धकूट लसै ।।
तिनपे भवन जिनेश्वर सोलह, तिनकी हम आह्वानन करैं ।
शक्ति बिना तहां जान न पावै, तातैं इस थल भाव धरैं ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम दिशी विदेह क्षेत्रन बीच सोलह रूपाचल शीष सोलह श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् संस्थापन ।

जीवन को सफल बनालो, श्री जिनवर की पूज रचाके ।।टेक।।
सोने की झारी में पंचम, सागर का जल भरवा के ।
त्रिलोकी नाथ के चरणो में, धारा तीन धराओ।
मन्दर मेरु के पश्चिम दिसि में, अपना मन पहुंचा के ।
सोलह रूपाचल पर, सोलह जिन मंदर पूजो जाके जीवन के···

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम दिशा में सोलह रूपाचल पर सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

चन्दन केसरि दोनों को, प्रासुक जल के संग घिसाके ।
रतनों से जड़ित कनक के पात्र में, लीजे भरवा के ।। मंदर मेरु···जी को···चंदनं

नीलम मणि पन्ना हीरा लाल, और पुखराज मंगा के ।
जिनवर की भेंट कीजे बार बार, तन को मटका के ।। मंदर मेरु···जी को···अक्षतं

गेंदा गुलाब मोगरा, वकुल मालती फूल चुनाके ।
जिनवर की भेंट करिके, मदन अरी को देहु भगाके ।। मंदर मेरु···जी को···पुष्पं

हलुआ पूड़ी लडुआ, पंचरंगी लीजे खीर बनाके ।
जिनवर की भेंट कीजे, थाल अठारह दुगुन सजाके ।। मंदर मेरु···जी को···नैवेद्यं

मणिमय दीपक बनवाओ, बढ़िया धातु सात मिलाके ।
भरि के घृत आरति कीजे, पेरों में घुंघरू बंधवा के ।। मंदर मेरु···जी को···दीपं

मलियागिरि चंदन के, छोटे छोटे टुकड़े करवा के ।
कंचन के धूप घड़े में, खेवो मन में अति उमगा के ।। मंदर मेरु···जी को···धूपं

दाड़िम अंगूर केला लंगड़ा, बम्बई आम मंगा के ।
जिनवर की भेंट कीजे, अंग आठ भू मांही लाके ।। मंदर मेरु···जी को···फलं

हैमाचल गंध अक्षत फूल, चरु दीपक सब लाके ।
लेकर के धूप फल सब बड़े, थाल में अर्घ बनाके ।। मंदर मेरु···जी को···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

रेखता—देस पदमा प्रथम जानो, बीच में रूपगिरि मानो ।
तासु ऊपर जैन मन्दिर, मैं पूजूं नेह धरि अन्दर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु को पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच प्रथम पदमा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मंदिर तथा व्यन्तर थान संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

सु पदमा देश के मांही, रजत गिरि बीच में ठांही ।
कूट नव में सु जिन गेहा, मैं पूजूं धारि उर नेहा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच सुपदमा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

महा पदमा सुखी देसा, बीच में सेल खग्गेसा ।
कूट नव जिन भवन पूजा, करूं मैं काम तजि दूजा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच महा पदमा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

पदम कावत्ति है देसा, तासु के बीच खग्गेसा ।
शीश पर सब जिनागारा, मैं पूजूं ले दरब सारा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच पदम कावत्ति देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान संबंधी श्री सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

देस संखा कहा जाता, बीच रूपाद्रि मन भाता ।
कूट नव हैं मनोहारी, करूं मैं वन्दना सारी ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच संखा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

देस नलिना है फिरि जानो, खगाचल बीच में मानो ।
जिनालय तासु के सीसा, मैं पूजूं भवन जगदीसा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच नलिना देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

देस कुमुदा महा मोहे, खगाचल बीच में मोहे ।
कूट नव है जु अभिरामा, मैं पूजूं छोड़ि सब कामा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच कुमुदा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

देस सरिता है सुखकारी, रूपगिरि बीच मनहारी ।
जिनालय सीस पर सब ही, मैं पूजूं जायकर अबही ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच सरिता देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

है वप्रा देस मन मोहन, बीच में रूपगिरि सोहन ।
कूट नव की सकल मूरति, मैं पूजूं करि भली सूरति ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में नीलाचल व सीतोदा के बीच वप्रा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर थान संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम ।। ९ ।।

सु वप्रा देश रमणीका, खगाचल बीच है ठीका ।
सकल जिन भवन गिरि ऊपर, मैं पूजूं माथ धरि भूपर ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में नीलाचल व सीतोदा के बीच सुवप्रा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

महावप्रा सुखी देसा, बीच में सेल रजतेसा ।
सकल जिन गेहंता गिरि के, मैं पूजूं नाचूं फिरिफिरिके ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में नीलाचल व सीतोदा के बीच महावप्रा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ११ ।।

वप्र कावत्ती है देसा, बीच में गिरि रजत जैसा ।
तासु के सर्व जिन धामा, मैं पूजूं नित सुबह शामा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में नीलाचल व सीतोदा के बीच देश वप्रकावति में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मंदिर तथा व्यंतर वास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

देस गंधा सुहावन है, खगाचल बीच भावन है ।
तासु के सर्व जै नन्दा, मैं पूजूं धारि आनन्दा ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में नीलाचल व सीतोदा के बीच गन्धा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

सुगंधा देस फिरि जानो, रूपाचल बीच पहिचानो ।
कूट इत्यादि की रचना, कही जावे नहीं वचना ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच सुगन्धा देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

गंधिला देश सुखकारी, बीच में रूपगिरि भारी ।
जिनालय सर्व मैं वन्दूं, दोउ कर जोरि अभिनन्दू ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदा के बीच गन्धिला देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास संबंधी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

गंध मालिन्नी है देसा, बिचोंबिच सेल रजतेसा ।
छूटने जग के बन्धन से, करूं मैं वन्दना मन से ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरुकी पश्चिम विदेह में निषधाचल व सीतोदाके बीच गंधमालिनी देश में रूपाचल पर श्री सिद्धकट जिन मन्दिर तथा व्यन्तर वास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

भूतें योजन उर्ध दस, विद्याधर के बास, फिरी दस योजन उपरे सुर व्यन्तर आवास ।
मूल भाग गिरी नील से निकसी सरिता दोय, रक्ता रक्तोदा लखो सीता में अवलोय ।।
मूल भाग गिरी निषध से निकसी सरिता दोय, गंगा सिन्धु नाम की सीता में अवलोय ।
म्लेक्ष खण्ड इक के मधि, वृषभाचल के पास, आर्यखंड के नगर में वन्दूं जिनगृह खास ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु सम्बन्धी पश्चिम दिशा में सोलह रूपाचलों की दस योजन ऊँचाई पर विद्याधरों के ११० नगर सम्बन्धी तथा बीस योजन ऊँचाई पर व्यन्तर देवो के निवास सम्बन्धी तथा निषधाचल व नीलाचल से हर एक देश में निकली हुई दो-दो नदियाँ तथा इनकी सहायक चौदह-चौदह हजार नदिया सब नदिया सम्बन्धी तथा नाभिगिरी और वृषभाचल सम्बन्धी व्यन्तर आवासो में और जहाँ-जहाँ भी जिन मन्दिर विराजमान हों: वे सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १७ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

चेत मन भाई रे—मन्दर मेरु अपर दिशा मन भाई रे।
सोलह क्षेत्र विदेह चेत मन भाई रे॥
और कथन सब पूर्व कह्यौ मन भाई रे।
सोई समझ उर ल्याय चेत मन भाई रे॥१॥

सिद्धकूट जिन धाम है मन भाई रे।
देखत मन हरषाय चेत मन भाई रे॥
तिस थल इन्द्र जु आवते मन भाई रे।
पूजन कारण पाय चेत मन भाई रे॥२॥

संग सकल परिवार ले सुन भाई रे।
पूजन द्रव्य लहाय चेत मन भाई रे॥
हरषित सकल सुरासुर हैं मन भाई रे।
पूजत श्री जिन पाय चेत मन भाई रे॥३॥

नाचत इन्द्र उछाह सूं मन भाई रे।
बहु विधि तान लहाय चेत मन भाई रे॥
गावत गुण जिनराज के मन भाई रे।
जय जय शब्द कराय चेत मन भाई रे॥४॥

बाजे बहु विधि बाजते मन भाई रे।
साढ़े बारह कोडि चेत मन भाई रे॥
एक ही संग जो बाजते मन भाई रे।
ताल ग्राम सुर जोड़ चेत मन भाई रे॥५॥

और कथन सबको कहें सुन भाई रे।
बुद्धि थोड़ी सी पाय चेत मन भाई रे॥
देखत श्री जिन देव को मन भाई रे।
पातक दूर पलाय चेत मन भाई रे॥६॥
तातें "नेम" जिनेश के मन भाई रे।
चरणनि धरि निज शीस चेत मन भाई रे॥
निज शक्ति को मांग तो मन भाई रे।
बखशो मुझि जगदीश चेत मन भाई॥७॥

दोहा—मन्दर मेरु अपर दिशि, रूपाचल म१ लाय।
सोलह भवन जिनेश को, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की पश्चिम दिशि विदेह क्षेत्रन मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपाई – मन्दर मेरु अपर विदेह, षोडस रूपाचल जिन गेह।
तिनको भविजन पाठ करंत, तेही आठों करय हरंत॥ इत्यार्शीवाद

मन्दर मेरु की उत्तर दिसि तीन कुलाचलों पर तीन जैन भवन पूजा नं. ६८

चौपाई—मन्दर मेरु उत्तार दिशि, लखहु कुलाचल तीन।
सोस तीन जिन भवन का, आह्वानन इहां कीन॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्॥

चौपाई—मन्दर मेरु उत्तर दिश जाय, तीन कुलाचल शीष लसाय।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, सीतोदा को नीर लहाय॥

ॐ ह्रीं मन्दिर मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

विधि से प्रासुक नीर कराय, चंदन केसर प्रासुक लाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, मनवांछित सुख पाय अघाय ।। चन्दनम्

उज्ज्वल चांवल नीर धुवाय, अक्षत तें पूजूं जिन पाय ।
मन्दर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुलाचल शीष लसाय ।। अक्षतं

प्रासुक फूल सुगन्धित लाय, तिनकी माला गूंथ बणाय ।
पूजूं श्री जिनवर के पाय, तीन कुलाचल शीष धराय ।। पुष्पं

मन्दर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुलाचल शीष लसाय ।
जजूं जिनालय तीन बणाय, नेवज नाना भांति चढ़ाय ।। नैवेद्यं

मन्दर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुलाचल शीष लसाय ।
पूजूं श्री जिनवर के पांय, दीप सु विधि लोना सजवाय ।। दीपम्

मन्दर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुलाचल शीष लसाय ।
जजूं जिनालय तीन गिणाय, मलयागिरि की धूप बणाय ।। धूपम्

मन्दर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुला चलशीष लसाय ।
जजूं [illegible]जूं जिनालय तीन गिणाय, श्रीफल आम अनूप लहाय ।। फलम्

मंदर गिरि उत्तर दिशि जाय, तीन कुलाचल सीष लसाय ।
जजूं जिनालय तीनि गिनाय, नीरादिक वसु द्रव्य चढ़ाय ।। अर्घम्

चौपाई—मन्दर मेरु उत्तर दिस, तीन कुलाचल सोय ।
तिनि को जल फल आदि से, पूजो भविजन लोय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि में तीन कुलाचलों पर तीन जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।

प्रत्येक अर्घ

दोहा —नील गिरी के शीष नव, कूटन में जिन धाम ।
तिन सबको नीरा दिले, अर्घ जजूं इस ठाम ।।

पूरब दिशि गिरि नील सिर, सिद्धकूट सुखदाय ।
तिस थल भवन जिनेश को, पूजूं मन वच काय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के उत्तर दिशी नीलाचल पर्वत स्थति सिद्धकूट श्री जिन भवनाय तथा आठ कूट व्यन्तर सम्बन्धी नमः अर्घम् ॥ १ ॥

रुकमी पर्वत शीष पै, कूट आठ सुखदाय ।
सब थल पूजूं अष्ट बिधि, मन्दिर श्री जिनराय॥
रुकमी पर्वत पूर्व दिशि, जिद्धकूट सिर जोय ।
ले जलादि जिन भवन को, पूजूं उर शुचि होय ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के उत्तर दिशि रूकमी हर्वत पर स्थति सिद्धकूट जिन भवनाय तथा सात कूट व्यन्तर सम्बन्धी नमः अर्घम् ॥ २ ॥

शिखरी गिर पर सोहने, ग्यारह कूट महान ।
तिस सब पे पूजूं सदा, श्री जिनवर के थान ॥
शिखरी गिरि पूरब दिशा, सिद्धकूट मन लाय ।
जजूं जिनालय सासते, जल फलादि गुण जाय ॥

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु सम्बन्धी शिखरी पर्वत पर स्थित सिद्धकूट श्री जिन भवनाय तथा दस कूट व्यन्तर सम्बन्धी नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

जोगीरासा—मन्दर मेरु की उत्तर दिशि, भोग भूमि त्रय जानो ।
तिस थल श्री जिन भवन जहां, हो में सबको उर ध्यानों ॥
नामिगिरि दो पर्वत पासे, जैन भवन सब वन्दो ।
नदियां सात तने दोनों तट, जिन मन्दिट अभिनन्दों ॥

ॐ ह्रीं श्री मन्दर मेरु की उत्तर दिशा में तीन कुलाचल सम्बन्धो व्यन्तर थान को में जहाँ-जहाँ भी जिन भवन विराजमान हो तिन सकल श्री जिन भवन सम्बन्धी सर्व श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—मन्दर मेरु उत्तर दिशि, तीन कुलाचल थाय।
शीष तीन जिन भवन की, जयमाला मन ल्याय ॥

छन्द बेसरी—पुष्करार्धं पूरब कहलाये, मन्दर मेरु मध्य लसावें।
ताको उत्तर दिशा निहारो, तीन कुलाचल भव्य विचारो ॥१॥

नील रुक्मी शिखरी, गिण लेवो, नील हरित रंग चित्त में देवो।
रुक्मी रंग सफेद धरावें, शिखरी हेम वरण दरशावे ॥२॥

और कथन सब पूर्व प्रमाना, लम्बौ चौड़ौ आदि बखाना।
सिद्धकूट इक शीश धरावे, तीनों गिरि पै तीन कहावे ॥३॥

नील गिरी की है ऊंचाई, चारि सतक योजन है गाई।
रुक्मी की ऊंचाई जानो, दोय सतक योजन परमानो ॥४॥

चौपाई—सिखरी की ऊंचाई सही, एक सतक योजन ही कही।
ऊपर तले समान लखाय, लम्बे सागर तक मन लाय ॥५॥

नील गिरी पर नौ है कूट, रुक्मी सिर पर बसु नहीं झूंठ।
सिखरी पर ग्यारह जिन कहे, इक इक तजि सबमें सुर रहे ॥६॥

बेसरी छंद—तीन अचल पै तीन जिनाला, शिखर उतंगजु कोट विशाला।
खाई वन फुलवादिक सारी, रचना सकल महा सुखकारी ॥७॥

जिन मूरति दृग तें जब जोवे, भविजन भव संचित अघ खोवे।
ये ही "नेम" सुणी जिन काना, मन में चाह भई वहां जाना ॥८॥

शक्ति बिना तो जान न पावे, ताते भवन इसी थल भावे।
आठों करम हरो दुखदाई, शीष नाय तुम चरण गहाई ॥९॥

दोहा—मन्दर गिरि की उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय।
शीष तीन जिन भवन कूं, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध दीप में मन्दिर मेरु सम्बन्धी उत्तर दिशा में तीन कुलाचलों पर तीन सिद्धकूट मन्दिर बाकी कूटों में व्यन्तर थानक जिन मन्दिर तथा इन तीन कुलाचलों के बीच-बीच में तीन प्रकार की भोगभूमि सम्बन्धी तथा नाभगिरी सम्बन्धी व्यन्तर थान को में जहाँ-जहाँ भी जिन मन्दिर हों सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥

अडिल्ल—मन्दर मेरु की उत्तर दिश में लखौं।
तीन कुलाचल शीष भवन जिन त्रय रखौं॥
तिनको भविजन पाठ करें चित लायकैं।
अविचल ते सुख पाय, मुक्तिपुर जायकैं॥ **इत्यार्शीवाद**

श्री मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षैत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा नं. ६९

चौपाई—मन्दर गिरि तें उत्तर जाय, एरावत को क्षेत्र लखाय।
रूपाचल पैं जिन गृह जान, आह्वानन् करतो इस थान॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सकल श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अडिल्ल—क्षीर समद सम नीर कनक झारी भरूं।
मन वच तन सुध होय धार ताकी करूं॥
मन्दर गिरि की उत्तर दिशि ऐरावता।
रूपाचल जिन गेह जजूं सिर नावता॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः जलम्।

चंदन घिसि घन सार, रलावूं फेर जी।
केशर भाजन हेम, रहे अलि घेर जी॥ मन्दर गिरि की···चंदनम्
शाम जीर के बहुत, हेर तन्दुल लिये।
कंचन भाजन मांहि, पुंज तुम गुण दिये॥ मन्दर गिरि की···अक्षतम्

विविध वरण के, फूल लिये प्रासुक धनें ।
तुम पद भेट धरंत, मदन दुःख को हनें ॥ मन्दर गिरि की···पुष्पम्
कर तेवूं नैवेद्य भली, विधि सौं सही ।
क्षुधा हरो जिनराज, अरज इतनी कही ॥ मन्दर गिरि की···नैवेद्यम्
कंचन भाजन मांहि, विमल दीपक धरूं ।
मिथ्यातम द्यो नाश, जिनंद पायन परूं ॥ मन्दर गिरि की···दीपम्
जालूं आठों कर्म, जिनेश्वर देव जी ।
लेके निर्मल धूप, करूं तुम सेव जी ॥ मन्दर गिरि की धूपम्
प्रासुक फल धरि थाल, भेट तुमरी करूं ।
शिव फल काजे नाथ, शीष पद मैं धरूं ॥ मन्दर गिरि की···फलम्
जल चन्दन अक्षत, जु पुहुप नैवेद्य जी ।
दीप धूप फल लेय, अर्घ संजोय जी ॥ मन्दर गिरि की अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चाल विजयानी सेठ--दिसि उत्तर जी, मंदर गिरि से जानियो ।
एरावत जी, क्षेत्र बीच पहिचानियो ॥
ताके मधि जी, रूपागिरि पर्वत लसै ।
तसु ऊपर जो, वसु कूटों में सुर वसे ॥
पूरब में जी, सिद्धकूट जिन धाम है ।
तसु देखत जी, विमल होई परिणाम है ॥
सुर खगधर जी, पूज करे हर्षाय के ।
मैं पूजूं जी, आठों द्रव्य चढ़ाय के ॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर नव कूटों में पहले में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर विनास सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

दस योजन जी, ऊपर कटनी है सही ।
दो तरफा जी जानि, खगधरों की मही ।।
दक्षिण में जी, नगर पचास कतार से ।
उत्तर में जी साठि, इसी विस्तार से ।।
सबपुर में जी, जिन मंदिर ऊंचे बने ।
विद्याधर जी, पूज करे मिलि के घने ।।
तन मन से जी, में पूजूं सुचि होई के ।
जल फल सब जी, कंचन थाल संजोई के ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर दस योजन ऊँची उत्तर दक्षिण दोनों कटनियों में विद्याधरों के एक सो दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः नर्घम् ।। २ ।।

फिरि ऊपर जी, दस योजन चढ़ि सास्वतै ।
अमरनि के जी थान, अनोखे राजते ।।
तिन सब में जी, जैन भवन मन भावने ।
तसु महिमा जी, कवि से कहते ना बनें ।।
सत आठ सु जी, प्रतिमा श्री अरहंत की ।
सब रचना जी बनी, आदि से अंत की ।।
जो पूजें जी जिन, प्रतिमा जी प्रीत से ।
वह छूटे जी, जग की सारी रीत से ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिस ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊँचाई पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

इस गिरी पे जी, श्री मुनिराज विराजते ।
दुद्धर तप से, तप समूह जरावते ।।
चौ विधि से जी, धर्म ध्यान अपनावते ।
क्रम क्रम से जी, सिव सुन्दरी को पावते ।।

ऐसे मुनि जी, में ध्याऊं मन लाई के।
इस थल से जी, पूजूं कर्घ चढ़ाई के ।।
तसु फल से जी, में भी कर्म नसाई के।
सुख भोगूं जी, अपने घर में जाई के ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु [उत्तर दिस ऐरावत क्षेत्र मध्ये समस्त आचार्य उपाध्याय एवं सर्व साधुभ्यों नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

छन्द चौपया—मन्दर गिरि उत्तर दिश पावे, ऐरावत को क्षेत्र कहावै।
ताके मध्य भाग चित्त देनो, रूपाचल खगधर को रहनो ।।१।।
योजन चार लाख लम्बाई, दस दस को जानो चौड़ाई।
योजन व्यास लखहुं जु पचासा, ऊंच पचीस जु योजन खासा ।।२।।
कटनी चार दुतरफा पावै, खगधर व्यन्तर नगर बसावै।
सिर पर नवही कूट धरावे, तिनमें सिद्धकूट इक पावे ।।३।।
तिस थल में श्री जिनवर धामा, शेष कूट व्यंतर सुर ठामा।
श्री जिन मन्दिर रचना सारी, पूरब कथनी लेहु विचारी ।।४।।
श्री जिन मूरत मध्य विराजे, तीन छत्र अद्भुत सिर छाजे।
तीन लोक के नाथ जनावे, दृग देखत पातक टर जावे ।।५।।
खगधर अमर जजे तहां जाके, 'नेम' नमे इहां भावन भाकें।
अरज करूं इक अपने काजा, मोको शिव थल द्यो जिनराजा ।।६।।

दोहा—मन्दर मेरु उत्तर दिश, ऐरावत मधि पाय।
रूपाचल जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपया—मन्दर मेरु तणी उत्तर दिश, क्षेत्र जु ऐरावत में पावे ।
रूपाचल पै श्री जिन मन्दिर, देखत ततक्षण मन हरषावें ।।
ताकी पाठ करै भवि कोई, मन वच ध्यान लगा के ।
ते भवि शिवपुर मांहि पधारैं, आठों कर्म भगा के ।। इत्याशींवाद

श्री मंदर मेरु के ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी पूजा नं. ७०

स्थापना चौपाई—मन्दर मेरु उत्तर दिशि जाय, ऐरावत के क्षेत्र लसाय ।
चौवीसी तीनों मन लाय, आह्वानन करतो सिर नाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीनों चोबीसी जिनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीता छंद—नीर निर्मल मधुर, शीतल भरत कंचन झारिका ।
तुम चरण आगे धार देवूं, रोग त्रय की टारिका ।।
मेरुसुमन्दर की उत्तर दिशि, क्षेत्र ऐरावत सही ।
तीनों चुबीसी पूजि भविजन, चलो शिवपुर की मही ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र के आर्य खण्ड मध्य भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चोबीसी जिनेभ्यो नमः जलम् ।। १ ।।

चन्दन सुगन्धित मलयगिर को, घसत केशर डारि के ।
कर्पूर मांहि रलाय लीनो, हेम भाजन धारि के ।। मेरु मन्दर···चंदनं

कोमल अखंडित मधुर, उज्ज्वल हैरि तन्दुल लीजिये ।
जल धोय कंचन थाल मांही, पुंज तुम गुण दीजिये ।। मेरु मन्दर···अक्षतं

प्रासुक अनूपम फूल सुन्दर, विविध भांति लहाय कै ।
धरि कनक भाजन, हाथ गहता भ्रमर गुंजत आय कै ।। मेरु मन्दर···पुष्पं

पेड़ा गिंदोड़ा सेव मोदक, अन्न रस घेवर धरूं ।
तुम चरण युग की भेंट, करता क्षुधा रोगा परि हरूं ।। मेरु मन्दर···नैवेद्यं

मिथ्यतम के नाशने को, दीप मणिमय कर लियो ।
चरणार्विन्द जिनेश के ढिग, धरत ही हुलस्यो हियो ।। मेरु मन्दर···दीपं

वसु दुष्ट कर्म जलावने को, धूप निर्मल कीजिये ।
जिन चरण आगे अग्नि घट में, हाथ गह खे दीजिये ।। मेरु मन्दर···धूपं

दातार जग में मुक्ति फल के, आप ही जिनराज जी ।
श्रीफल, सुपारी आदि पावन, लेहूं इत ही काज जी ।। मेरु मंदर···फलं

जल गंध फूल अनूप अक्षत, दीप नेवज लेय के ।
फल धूप कंचन थाल धरिके, अरघ चित हुलसेय के ।।मेरु मन्दर···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

मन्दर गिरि उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय ।
भूतकाल के मैं जजूं चौवीसी जिनराय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र के भूतकाल की चोबीसी क्रम से १. श्री कृतनाथ २, उपविष्ट ३. देवा दित्य ४. अष्टांह्निक ५. प्रचन्द्र ६. वेणुक ७. त्रिभानु ८. ब्रह्मादि ९. वज्राँग १०. विराधित ११. आपापक १२. लोकोत्तर १३. जलाद्वीप १४. विद्योतन १५. सुमेरू १६. सुभावित १७. वत्सल १८. जिनालय १९. तुषारिक २०. भवन स्वामी २१. सुकामिक २२. देवाधिदेव २३. अकारिम २४. बिम्बक जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। १ ।।

मन्दर गिरि उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय ।
वर्तमान के मैं जजूं, चौवीसी जिनराय ।।

ॐ ह्रीं मन्दिर मेरु के उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र के वर्तमान की चोबीसी क्रम से १. श्री निसाभित २. अक्षापास ३. नग्नादि ४. नग्नाधिप ५. पनवट ६. स्थाख्याधिप ७. तपोधन ८. पुष्पकेतु ९. धर्मादिक १०. चन्द्रकेतु ११. पाणारिपु १२. वीतराग १३. उद्योत १४. तपोपेक्ष १५. अतीत १६. मरु देव १७. दमियुक्ता १८. स्वतीत १९. शीलादि २०. विश्वनाथ २१. सहक्षाद्वीप २२. शतक २३. तमोतिक २४. ब्रह्मज जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। २ ।।

मन्दर गिरि उत्तर दिशा, ऐरावत मन लाय ।
होनहार चौवीस जिन, वन्दु मन वचकाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु के उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र के भविष्य की चोबीसी क्रम से १. यशोधर २. सुकृत ३. अभय ४. निर्वाणिक ५. व्रतवसु ६. अतिराज ७. अश्वभान ८. अर्जुन ९. तपश्चरण १०. सरीरक ११. महेसज्ज १२. सुग्रीव १३. दृढ़प्रहारी १४. अंवारिक १५. दवातीत १६. तुंवर १७. सर्वलोल १८. प्रतिराज १९. जिनेन्द्रीक २०. तपादित्य २१. रंभाकर २२. देवेश २३. लक्षण २४. प्रदेश जिनेन्द्राय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

चौपाई—मन्दर गिरि ते उत्तर जाय, ऐरावत मधि आरज थाय ।
चौवीसी तीनों के पाय, वसु विधि पूजूं मन हरषाय ।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्यत वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चोवीसी की ७२ जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—ऐरावत के क्षेत्र में, तीन चौविसी जान ।
तिनकी जयमाला कहूं, सुनो भव्य गुण खान ।।

कृतनाथ नमूं जिन स्वामी, उपविष्ट महा गुणधामी ।
देवादित ज्ञान प्र दाता, अष्टाद्धिक शिव के दाता ।।१।।
प्रचन्द्र देव के देवा, वेणुक भन अलख अभेवा ।
त्रिभानु जगतपति स्वामी, ब्रह्मादिक अन्तरयामी ।।२।।
वज्रांगधि मोक्ष सिधाये, वीराधित जग यश गाये ।
आपापक ज्ञान बतायो, लोकोत्तर लोक दिखायो ।।३।।
जालाधिप अन्तरयामी, विद्योतन त्रिभुवन नामी ।
सूमेरु मेरु निधाना, सूभावित जिन निरवाना ।।४।।

वत्सल भवि पार लगाये, जीनालय मुक्ति सिधाये।
तूषारिक कर्मन चूरे, भुवनेश ज्ञान के पूरे ॥५॥
सूकामिक को यश गायो, देवाधि देव पद पायो।
अकारिम जीव उद्धारे, बिम्बक जिन नाथ हमारे ॥६॥
निस्सामित पूजो भाई, अक्षपास जु ध्यान लगाई।
नग्नादि देव मन भावो, नग्नाधिप ने नित ध्यावो ॥७॥
पनपट जिन योग विख्याता, साख्याधिप जपहू भ्राता।
तंपोधन ❀ नागर ध्यावे, पुष्पेतू [illegible] नमावे ॥८॥
पूर्जो धर्मादिक ठीका, चन्द्रकेतु जो लीक अलीका।
पाणीरिपु दिव महाराजा, वितराग जगत सिर ताजा ॥९॥
उद्योत जगत यश भर्या, तपपेक्षा कारज सर्या।
नमहूं जिन देव अतीता, मरु देव लिखौ लोकीता ॥१०॥
दमि पुष्पक ध्यान लगावौ, स्वातीत जिनालय ध्यावो।
शीलादि जु पूज रचावो, विश्वनाथ हि शीष नवावो ॥११॥
सातक पंचम गति पाई, निर्वाण सहश्रधिप पाई।
तामोतिक कियो उजासा, बह्माज हु ज्ञान प्रकास ॥१२॥
भवि पुज्ज यशोधर देवा, सुकृत जपि निशदिन देवा।
अभया नन्द को यश गायो, निर्वाणक मोक्ष सिधायो ॥१३॥
व्रत वसुप गुणाकर राजै, अतिराज धरा कें साजै।
अश्वमान मोक्ष गति पाई, नमि अर्जुन देव जु भाई ॥१४॥
तपश्चरण घोर तप कीनो, सारीरक देह नचीनो।
देवन के देव महेशा, सुग्रीव तजे सब देशा ॥१५॥
सुख करता दृढ़ परहारी, अम्बारीक वरि शिवनारी।
जिन पूजौं दया अतीता, तुंवर जिन जग के मीता ॥१६॥

सब लीलस रोग मिटायो, प्रतिराज को यश मुनि गायो।
सब यती जिनेन्द्रीक ध्यावे, तप दित्य को ध्यान लगावे ॥१७॥
रंभाकर लोक जु देखैं, देवेश धरम अति पोखैं।
लक्षण जु बतायो धरमा, परदेश मिटा अब भरमा ॥१८॥
मन्दर मेरु शुभ जाना ऐरावत क्षेत्र महाना।
चौबीसी त्रय सुखदाई, अठ विधि ले पूंजूं पाई ॥१९॥

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड मध्य भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौवीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

अडिल्ल—भूत भविष्यत वर्तमान जिन देव कूं।
स्वामी आयो शरण छोड़ि संदेह कूं ॥
पूजूं पुष्प चड़ाय हरष मन लायके।
करो पूज जिन देव जिनालय आयकैं ॥ इत्यार्शीवाद

श्री विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन की चार श्री जिन भवन पूजा नं. ७१

चौपाई—मूल भाग लखि विद्युन्मेरु, भद्रशाल वन चहुं दिश घेर।
ताकी चहुं दिश चतु जिन धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशी विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन को चहुँ दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रवतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चाल जोगीरसा—सीतोदा को नीर मनोहर, शीतल मधुर लहायो।
भरि कंचन मय झारी मांही, सिर नय धार दुरायो ॥
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो।
पूजूं तिनको मन वच तन से, चाहुं शिवपुर थानो ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन में चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाथ जलम् निर्वपामती स्वाहा।

मलयागिरि सो केसर घसि के, अति ही निर्मल लेवूं ।
कनक कटोरी हाथ गहत ही, भवि भव ताप भुजेवूं ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सों, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···चंदनं

उज्ज्वल निर्मल देखि अखंडित, तन्दुल जल सों धोये ।
पुंज कनकमय थाल धरत ही, तुम गुण उर में ठोये ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···अक्षतं

चम्प चमेली आदि अनेकों, प्रासुक पुष्प मंगाये ।
धरि कंचनमय पात्र हाथ ले, काम बाण भगवाये ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···पुष्पं

करि उत्तम विधि सो शुभ नेवज, ताजे तुरत बनाये ।
धरि कंचन मय थाल हाथ ले, क्षुधा रोग नशवाये ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···नैवेद्यं

विमल मनोहर दीप रतनमय, धरि ले कंचन थाली ।
तुम पद पंकज भेंट धरत तम, मोह कियो पै माली ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···दीपं

आठ करम छय अष्ट गंध ले, कूट जु चुर्ण करायो ।
अग्नि कुंभ में तुम पद आगे, ताते देत जलायो ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···धूपं

फल शुभकारी दाख सुपारी, आदिक बहु विधि लीनो ।
तुम शिवफल के दाता, ताते भेंट तुम्हारी कीनों ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिश में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···फलं
निर्मल नीर गंध धरि तंदुल, फुल अरु नेवज लेवूं ।
दीप धूप फल थाल कनक के, तुम ढिग पद धरि देवूं ।।
भद्रशाल वन की चहुं दिस में, चार जिनालय जानो ।
पूजूं तिनको मन वच तन सो, चाहूं शिवपुर थानो ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—भद्रशाल पूरब दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विधुन्माली मेरु के भद्रसाल वन की पूर्व दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

भद्रशाल दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ायके, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विधुन्माली मेरु के भद्रशाल वन की दक्षिण दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

भद्रशाल पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विधुन्माली मेरु के भद्रशाल वन की पश्चिम दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

भद्रशाल उत्तर दिशा, श्री जिन भवन अनूप ।
पूजूं अर्घ चढ़ाय के, मन में धरि बहु चूप ।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन की उत्तर दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

भद्रशाल चौगिरद ही, सुर व्यन्तर आवास ।
तिनमें भवन जिनेश के, पूजूं वसु विधि खास ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन की चो गिरद ही व्यन्तरादि स्थानक स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

भद्रशाल वन चार दिश, श्री जिनवर के थान ।
तिनको पूजूं अर्घ सों, शिव फल दाता जान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन की चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली मूल में, भद्रशाल वन जोय ।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला कहुं सोय ।।

पद्धड़ी छन्द—जय पुष्करार्द्ध पश्चिम कहाय, जय विद्युन्मेरु मध्य पाय ।
जय मूल भाग ताकी लखेय, वन भद्रशाल चहुं गिरद देय ।।१।।
जय ताकी चहूं दिश में निहार, जय मंदिर जिनवर के जु सार ।
जय और कथन त्रैलोक्य सार, लखि लेहु समझि अच्छी प्रकार ।।२।।
जय जिन मन्दिर रचना विशेष, जय कथन करत को ले तपेस ।
जय देव जिनेश्वर को मकान, मंगल विभूति सोहे महान ।।३।।
जय प्रातिहार्य आठो लसाय, घट तूप धूप धरं ले लखाय ।
जय लुम्बित तोरण आदि माल, जय केतु तणी शोभा विशाल ।।४।।
जय नित्यशाल आदिक बखान, दिश चार मांहि वन चार जान ।
तिस थान शचीसुर आय आय, जिनराज जजैं वसु द्रव्य लाय ।।५।।

अतिहरषि इन्द्र गुण करत गान, ध्वनि मधुर-मधुर लेके जु तान ।
पुनि नचत रूप अद्भुत बनाय, क्षण दीर्घ लघु क्षण करत काय ।।६।।
तिस शोभा को भवि नांहि पार, सुनि "नेम" कियो उर में विचार ।
हम हीन भक्ति कैसें कराय, इस थान नमूं मन वचन काय ।।७।।

दोहा—मेरु जु विद्युन्मूल में, भद्रशाल वन पाय ।
चहुं दिशि चतु जिन धाम को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के भद्रशाल वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपई–विद्युन्मेरु मूल चहुं ओर, भद्रशाल वन लखि भवि ठौर ।
चहूं दिशि चार जिनेश्वर धाम, पाठ करौ लेवो शिव ठाम ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु के नंदन वन की चार जिनालय
श्री जिन भवन पूजा नं. ७२

गीता छंद—सुर गिरि पंचम में धरा से, उपरि योजन पांच सौ ।
नन्दन सुवन अतिरम्य तरुवर, पंक्तियां बहु भांति सों ।।
चारों दिशा में जैन मंदिर, चार उत्तम जानिये ।
जिन की करत हम थापना, पूजन यहीं पर ठानिये ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी नन्दनवन की चहुँ दिश चार श्री जिनालयस्थ जिन बिम्ब समूह । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

सोरठा—गंगा जल भरि लाय, कनक कलश में धारि के ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पक्षिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मन वच से पूजा करूं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु संबंधी नन्दनवन की चहुँ दिश चार श्री जिनालयस्थ सकल श्री जिन विम्वेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

चन्दन केसरि गार, प्रभु पद चर्चूं भाव से ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पक्षिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। ···चन्दनं

तन्दुल अनुपम सार, भेंट करत निज निधि मिले ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पश्चिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। ···अक्षतं

फूल अनेक प्रकार, महक पाय भौंरा लड़े ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पश्चिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मनवच से पूजा करूं ।। ···पुष्पं

नैवेज बहुत प्रकार, भूख व्याध जड़ से नसे ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पश्चिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। नैवेद्यं

दीप रतन मय धार, करूं आरती नाचि के ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पश्चिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नन्दन वन चहुं दिश छजे ।
चहुं दिश मन्दिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। ···दीपं

धूप सुगंध अपार, खेवत कर्म नहीं रहे ।
पुस्क्रर दीप मंझार, ताके पक्षिय भाग में ।।

विद्युन्मेरु निहार, नंदन वन चहुं दिश छजे ।।
चहुं दिस मंदिर चार, मन वच से पूजा करूं । ···धूपं
फल इन्द्रीय सुखकार, भेंट करूं अतिहरषि कर ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पक्षिम भाग में ।।
विद्युन्मेरु निहार, नंदन वन चहूं दिश छजे ।
चहुं दिस मंदिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। ···फलं
आठों दरब सम्हार, अर्घ धरूं जिन पाद में ।
पुस्कर दीप मंझार, ताके पक्षिम भाग में ।।
निद्युन्मेरु निहार, नंदन वव चहुं दिश छजे ।
चहुं दिस मंदिर चार, मन वच से पूजा करूं ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नन्दन वन पूरब दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सों, पूजूं अष्ठ प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली : नंदन वन पूर्व दिशा में सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

नंदन वन दक्षिण दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सों, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली : नंदन वन दक्षिण दिशा में सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

नंदन वन पश्चिम दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रय योग सों, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली : नंदन वन पश्चिम दिशा में सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

नंदन वन उत्तर दिशा, श्री जिन भवन निहार ।
मन वच तन त्रद योग सों, पूजूं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली : नंदन वन उत्तर दिशा में सिद्धकूटश्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

नंदन वन चौ गिरद ही, व्यन्तरादि के गेह ।
तिनमें श्री जिन भवन को, पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी नन्दनवन की चारों तरफ व्यन्तरादि स्थानक दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

नंदन वन में भवन जिन, बने अकृत्रिम जोय ।
तिनको ले नीरादि सों, पूजूं मैं शुचि होय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी नन्दनवन के सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्मेरु मधि लसैं, नन्दन वन सुखदाय ।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला उर लाय ।।

बेसरी छन्द—पुष्करार्ध पूरब दिश पावैं, विद्युन्माली मेरु लखावैं ।
योजन ऊंच पांच सैं जावैं, नन्दन वन तिस थान लखावैं ।।१।।
चारों गिरद फिर्‌यौ लखि खासा, योजन पांच शतक तसु व्यासा ।
नाना पादप सोहैं तामें, चहुं दिश चार भवन जिन वामें ।।२।।
तिनकी शोभा है बहु भारी, शिखर उतंग लसैं सुखकारी ।
बहु विधि केतु लगी नभ जाके, सुर खग पूजत तिस थल आकैं ।।३।।
द्रव्य आठ पावन ले आवैं, मुख से जय जय शब्द करावैं ।
बाजे बहु विधि के जु बजावैं, हरषि हरषि श्री जिन गुण गावैं ।।४।।
तुम जिनराज दयानिधि नामी, तुम ही जिनवर अन्तर्यामी ।
तुम ही भव दधि पार कराया, भविजन की तुम पीर हराया ।।५।।
तुमरी महिमा कब लौं गावैं, बुध थोरी किम थाह लहावैं ।
तातैं लखि करि सुगण प्रभु मेरे, "नेम" भये चरणों के चेरे ।।६।।

दोहा—विद्युन्माली मेरु पै, नन्दन वन सुखदाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन कूं, दीजै अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नन्दनवन की चहुँ दिश जिन भवन सम्बन्धी सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपई—नन्दन वन लखि पंचम मेर, चहुं दिश चतु जिन मंदिर हेर।
तिनको पाठ सुणै अरु करै, सो निज ज्ञान लेय शिव वरै ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन की चार दिसि श्री जिनालय पूजा नं. ७३

स्थापना नरेन्द्र छंद—विद्युन्मेरु तणो मधि भाग, वन सौमनस तणो लखि जाग।
चहुं दिशि चार जिनेश्वर धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जोगीरासा—कंचन कलश रतन मय लेकर, निर्मल नीर भराऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चार जिनालय ध्याऊं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम्।

चन्दन मलियागिरि केसरि घिसि फिरि गोसीर मिलाऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी, के चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···चंदनं

धवल अनोखे तंदुल लेकर, थाली बहुत भराऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चार जिनालय ध्याऊं ।। ···अक्षतं

कल्प तरु अथवा सोने के, सुमन तुरत बन वाऊं।
पंचम गिरि सोमनस वनी के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···पुष्पं

षट रस व्यंजन मन ललचावन, कंचन थाल धराऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चार जिनालय ध्याऊं ।। ···नैवेद्यं

रतन दीप से आरति करिके, फूला नहीं समाऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···दीपं

दस विधि की वर धूप बनाकर, पावक मांहि खिपाऊं।
पंचम गिरि सौमनस वनी के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···धूपं
फल अनियारे इन्दीय प्यारे, जिन पद अग्र चढ़ाऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···फलं
आठों द्रव्य मिलाय अर्घ से, जिनवर पूज रचाऊं।
पंचम गिरि सौमनस बनी के, चारि जिनालय ध्याऊं ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा--पूरब दिश सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में पूर्व दिश सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

दक्षिण दिश सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में दक्षिण दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

पश्चिम दिसि सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में पश्चिम दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

उत्तर दिश सौमनस वन, श्री जिन मन्दिर जोय।
नीरादिक वसु लेय के, पूजूं शुचि मन होय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

चहुं गिरदी सौमनस नन, व्यन्तरादि के थान।
तिनमें भवन जिनेश के, जजूं जलादि लहान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सौमनस वन में चहुँ दिशि सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो तथा व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली मेरु में, वन सौमनस लखाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन की, जयमाला उर लाय॥

छन्द बेसरी—पुष्करार्द्ध पश्चिम दिश जाना, विद्युन्माली मेरु लखाना।
भू तें योजन छप्पन हजारा, ऊंचो जाय लग्यो भवि प्यारा॥१॥
वन सौमनस लसैं तिह खासा, योजन पांच शतक लखि व्यासा।
चहुं दिश गिरद देय मन मोहैं, नाना पादप तिस थल सोहैं॥२॥
ताकी चहुं दिश मांहि विराजैं, मंदिर चार जिनेश्वर छाजैं।
और कथन जिन आगम मांहीं, समझो हम इहां भाख्यो नाहीं॥३॥
मंदर गिरि रचना बहु तेरी, कब लौं भाखूं अल मति मेरी।
श्री जिन प्रतिमा अद्भुत छाजैं, एक शतक अरु आठ विराजैं॥४॥
मंदिर एक माहि लखि लेवो, इहि विधि चारूं चित में देवो।
सुर खग असुर मिलत तहां सारे, पूजत द्रव्य हाथ द्वय धारे॥५॥
मंगल पाठ पढ़ैं बहुतेरे, केई देत प्रदक्षिण फेरे।
केई पूजत जिन गुण गावैं, केई देख हरषि उपजावैं॥६॥
इस विधि ठाट लगे तिस थाना, हीन शक्ति नहीं तिस थल जाना।
तातें नेम इहां सिर नावैं, तुम प्रसाद भव भ्रमण नसावैं॥७॥

दोहा—पंचम गिरि सौमनस वन, चहुं दिश चार गिणाय।
भवन देखि जिनराज के, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं विद्युन्याली मेरु के सौमनस वन की चहुँ दिश सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपई—पंचम मेरु मध्य निहार, वन सौमनस भवन जिन चार।
तिनको पाठ करत भवि जीव, तिनके मंगल होय सदीव॥ इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की चार श्री जिन भवन पूजा नं. ७४

स्थापना चौपई--पुष्कर गिरि पश्चिम दिश हेर, पांडुक बन सिर विद्युत मेरु ।
तामें चहुंदिश चतु जिन धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के शीष पांडुक वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल नंदीश्वर—गंगादिक निर्मल नीर, सुवरण कुम्भ भरूं ।
जिनवर चरणों के तोर, धारा तीन करूं ॥

पांडुक वन जिन गृह चार, अति ही सुखकारी ।
मैं पूजूं आठ प्रकार, नाचूं दे तारी ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन सम्बन्धी चहुँ दिशी चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु बिनाशनाय जलम् ।

गोसीर कपूर मिलाय, निजकर घिस लायो ।
जिनवर पद तले चढ़ाय, अति ही उमगायो ॥ पांडुक वन···चंदनम्

रतननि के थाल भराय, प्रभु सनमुख आयो ।
नय पुंज सु दिये चढ़ाय, पुनि पुनि सिर नायो ॥ पांडुक वन···अक्षतम्

वर सुमन सुमन से लाय, प्रभुं पद भेंट किये ।
अरि मदन वान नशि जाय, लायो भाव हिये ॥ पांडुक वन···पुष्पम्

घृत शक्कर मय पकवान ताजे बनवाकर ।
करि जिनवर के गुणगान बाजे बजवाकर ॥ पांडुक वन···नैवेद्यम्

दीपक की ज्योति जगाय, आरति करि नाचूं ।
मन में उमंग अति लाय, सम्यक गुण याचूं ॥ पांडुक वन···दीपम्

वर धूप दसांगी लाय, खेवत हर्षायो ।
धूपायन मांहि चढ़ाय, चरणन सिर नायो ॥ पांडुक वन ···धूपम्

ले किसमिस दाख बदाम, चरण चढ़ाय दिये।
बहु सेव संतरा आम उत्तम, भेट किये ॥ पांडुक वन···फलम्
जल फल सब सजि हिम थाल, अर्घ बनाय लिया।
बसु अंग जमी पै लाय, चरण चढ़ाय दिया ॥ पांडुक वन ··अर्घम्

दोहा—पंचम गिरि पांडुक बनी, श्री जिनवर आगार।
चहुं दिसि चतु जिन भवन के, बार बार गुण गाय ॥

परिपुष्पांजलि

प्रत्येक अर्घ

पांडुक वन पूरब दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिश विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की पूरब दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ १ ॥

पांडुक वन दक्षिण दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिश विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की दक्षिण दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ २ ॥

पांडुक वन पश्चिम दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिश विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की पश्चिम दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

पांडक वन उत्तर दिशा, लखि जिनवर को गेह।
आठों द्रव्य मिलाय के, पूजूं उर धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिश विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

पांडुक नामा वन विषैं, कोण ईशान लहाय।
पांडुक शिल पै जिन जजूं, वसु विधि द्रव्य चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की ईशान कोण में पांडुक नामा शिला पै भरत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

पांडुक नामा वन विषैं, अग्नि कोण सुखदाय।
पांडुकंवला शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की आग्नेय कोण में पान्डुक-कंविला शिला पै पश्चिम विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ॥ ६ ॥

पांडुक नामा वन विषैं, नैऋत्य कोण लहाय।
रक्ता नामा शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं पुस्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की नेऋत्य कोण विषैं रक्तानामा शिला पै ऐरावत क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ॥ ७ ॥

पांडुक नामा वन विषैं, वायु कोण भन लाय।
रक्त कंवला शिल जजूं, वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के पांडुक वन की वायु कोण विषै रक्ताकंवला शिला पै पूर्व विदेह क्षेत्रोत्पन्न तीर्थङ्कर जन्मोत्सव स्थानकाय नमः अर्घम् ॥ ८ ॥

पांडुक वन की सब मही, लखि जिनवर को धाम।
अर्घ जजूं नीरादि ले, तिनको करि परिणाम॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु की पांडुक वन की सर्व दिशि व्यन्तर देवन के स्थानक विषैं सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ९ ॥

नीरादिक अति हर्ष सों, धरि कंचन के ठाम।
पूजूं पांडुक वन विषैं, श्री जिनवर के धाम॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु की पांडुक वन विषैं सकल जिन भवन सम्बन्धी सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १० ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

दोहा—पांडुक वन में जिन भवन, चहुं दिश में गिण चार ।
तिनकी अब जयमालिका, सुणो भव्य रुचि धार ॥

अडिल्ल छन्द—पुष्कर नामा द्वीप तीसरो जानियो ।
योजन सोलह लाख व्यास उर आनियो ॥१॥
मानु क्षेत्र मधि भाग गिरद सब ही मही ।
दीप तणो द्वय भेद किये समझो सही ॥२॥
पुष्करार्ध भवि नाम लखहु तातै कहै ।
योजन आठ जु लाख व्यास भीतर कहै ॥३॥
द्वीप अढ़ाई की जु जिनन्द सूची भणी ।
गिण पैंतालीस लाख तहां योजन तणी ॥४॥
पुष्करार्द्ध की दक्षिण उत्तर दिस लखो ।
पर्वत ईक्ष्वाकार दोय गिण के रखो ॥५॥
कालो दधि सों जाय मानुषोत्तर लगै ।
पूरब पश्चिम भेद दोय तातैं पगै ॥६॥
पश्चिम पुष्कर द्वीप मांहि चित्त दीजियो ।
विद्युन्माली मेरु नाम लखि लीजियो ॥७॥
योजन ऊंचो सहस चौरासी जानियो ।
कंचन मणि बहु भांति छवि मन आनियो ॥८॥
ताके सिर चहुं गिरद विपुन पांडुक ठयौ ।
नाना पादप युक्त सरस शोभा दयौ ॥९॥
ताकी चहुं दिशि चार जिनेश्वर धाम है ।
सुर खग पूजत आय करें निज काम है ॥१०॥
और कथन भवि जोव जिनागम तें लखो ।
श्री जिन पद नमि 'नेम' निजानंद रस चखो ॥११॥

इन बिन कोई नाहिं शरण तिहुं लोक में।
तातें इनके चरण देत बहु ढोक मैं ॥१२॥

दोहा—विद्युतगिरि के शीष पै, पांडुक वन में पाय।
चहुं दिश चतु जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु के शीष पांडुक वन की चहुँ दिशि चार श्री जिन भवन सम्बन्धो सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः पूर्णार्घम्।

विद्युतगिरि के शीष निहार, पांडुक वन जिन मन्दिर चार।
तिनको भविजन पाठ कराय, ते सुख भुंजे थिर पद पाय ॥ इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की चारों कोण चार गजदंत जिन भवन पूजा नं. ७५

चौपाई—विद्युतन्मेरु तणी चतु कोण, गजदन्ते लखि चार जु होण।
तिन चारों पे चतु जिन धाम, आह्वानन करतो इस ठाम ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की चारों कोण चार गजदन्तन में श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

त्रिभंगी छंद—भरि गंग नदी जल शीतल सुन्दर, कंचन मणिमय भर झारी।
द्वय हाथ गहावूं शीष नमावूं, तुम गुण गावूं दे धारी ॥
लखि विद्युन्मेरु की चतु कोणे, गजदन्ते गिण चार लसें।
तिनके सिर ऊर भवन, जिनेश्वर चारों पूजत कर्म नसे ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की चारों कूट चार गजदन्त के सिर चार श्री जिन भवनेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम्।

मलया गिर लेवूं केशर देवूं, खूब घसेवूं घन डारूं।
धरि कनक पियाला, भव तप ज्वाला दे दे ताला परि हारूं ॥ लखि विद्युन्मेरु···चन्दनम्

वारीक अनोखे तन्दुल चोखे, जल सो धोके शुद्ध किये।
धरि कंचन थाली तुम गुण माली, जपि नय भाली पुंज दिये ॥ लखि विद्युन्मेरु···अक्षतं

बहु फूल सुवासी प्रासुक खासी, लखि सुखराशी भेंट धरूं ।
दु-ख मन्मथ भारी द्यो प्रभू टारी, सुणिहु हमारी अरज करूं ॥ लखि विद्युन्मेरु···पुष्पं
या भूख सतावे हम दुःख पावे, तुम ढिग आवे अरज करूं ।
ले नेवज ताजा निज हित काजा, बजहूं बाजा भेंट धरूं ॥ लखि विद्युन्मेरु···नैवेद्यं
मिथ्यातम छायो हम दुःख पायो, तुम ढिग आयो सिर नायो ।
धरि दीपक लायो हरष बढ़ायो, तुम गुण गायो सुख पायो ॥ लखि विद्युन्मेरु···दीपम्
ले चन्दन बावन धूप बनावन, अति महकावन गंध चलै ।
घट अग्नि धराता तुम गुण गाता, शीष नमाता कर्म जलै ॥ लखि विद्युन्मेरु···धूपम्
नारेल छुवारा आदिक सारा, फल शुभकारा थाल धरूं ।
तुम शिवफल दायक तिहुं जग नायक, तातें श्री जिन भेंट करूं ॥ लखि विद्युन्मेरु···फलम्
जल आदिक सारे अष्ट प्रकारे, तुम ढिग धारे अरघ कियो ।
ले तुम ढिग आयो शीष नमायो, जिन गुण गायो हरष हियो ॥ लखि विद्युन्मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चोपाई—विद्युन्मेरु कोण ईशान, माल्यवन्त गजदन्त पिछान ।
ता सिर सिद्धकूट जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ॥
आठ कूट में व्यन्तर थान, सब थल पूजूं जिन अमलान ।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की ईशान कोण माल्यवन्त गजदन्त पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

अग्निकोण मेरु को पाय, गजदन्तो सौमनस लखाय ।
ता सिर सिद्धकूट जिन धाम, वसु विधि पूजूं करि परिणाम ॥
छै कूटनि में सुर विश्राम, सब थल पूजूं जिनवर धाम ।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की अग्नि कोण में सौमनस गजदन्त पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी छः कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ २ ॥

मेरु विद्युत नैऋत्य कोण, विद्युत्प्रभ गजदन्द जु होण।
सिद्धकूट सिर जिनवर थान, वसु विधि पूजूं हरष धरान ॥
आठ कूट में देव रहाय, सब थल पूजूं जिन भवनाय।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य कोण में विद्युतप्रभ गजदन्त पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी आठ कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

मेरु वायु कोण कहंत, गंध मादना लखि गजदन्त।
तिस थल में श्री जिनवर गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ॥
छै कूटनि में जिन आगार, सब थल पूजूं आठ प्रकार।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की वायु कोण में गन्ध मादन गजदन्त पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा बाकी छः कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

मेरु विद्युत चारों कोंण, चारों ही गजदन्ता होण।
तिनपे भवन जिनेश विचार, सब थल पूजूं अष्ट प्रकार ॥
और जहां हो जिनवर धाम, सब थल पूजूं करि प्रणाम।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की चारों कोण चार गजदन्ता के शीष और जहाँ-जहाँ भी व्यन्तर थान को में जिन मन्दिर हो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्मेरु विदिश चतु, गजदन्ते चतु जानि।
तिन सिर चतु जिन भवन की, जयमाला उर आनि ॥

चौपाई—पुष्कर द्वीप अपर कहलाय, विद्युन्मेरु मध्य लसाय।
ताकी चारों कोण गिनाय, गजदन्ते चारों लखवाय ॥१॥
एक हरित पुनि एक ही श्वेत, सोने रंग सम दोय लसेत।
मानुषोत की तरफ बखान, गजदन्ते द्वय लम्बे जान ॥२॥

बीस लाख चालीस हजार, दो इकणिस गिन लेहु विचार ।
इतने योजन की लम्बाइ, भविजन समझो चित्त में लाइ ।।३।।

लघु गजदन्ते दोय विचार, कालोदधि की तरफ निहार ।
तिन लम्बाई भाखूं सही, जैसी जिन आगम में कही ।।४।।

सोलह लाख छब्बीस हजार, एक शतक सोलह निर्धार ।
योजन जोड़ लखो मन मांहि, साखि त्रिलोक सार शक नांहि ।।५।।

तिन चारों के शीष लसाय, सिद्धकूट भवि चार गिणाय ।
विद्युन्माली मेरु वासि कंचन वर्ण लसै सुख राशि ।।६।।

तिन चारन पै भवि मन लाय, चार भवन सोहै जिनराय ।
एक भवन प्रतिमा जिनराज, एक शतक अरु आठ समाज ।।७।।

इस विधि चारों भवन मंझार, श्री जिनराज लसैं सुखकार ।
तिनको 'नेम' नमें निज काज, भव दुःख दूर करो जिनराज ।।८।।

दोहा–विद्युन्माली कोण चतु, गजदन्ते चतु पाय ।
शीष चार जिन भवन को दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के चारो कोण चार गजदन्तन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल––विद्युन्माली मेरु कोण चतु में बसै ।
शीष चार जिनराज भवन अद्भुत लसै ।।

तिनको मन वच काय पाठ भवि जे करे ।
ते शिवपुर को जाय, सकल अघ परिहरे ।।

इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरुसम्बन्धी पुष्कर शाल्मलि वृक्ष दो जिनालय पूजा नं. ७६

चौपाई—विद्युन्माली मेरु कोण ईशान लहावे ।
अरु नैऋत्य जु कोण तरु द्वय कुरु लसावै ।।
तिन द्वय तरु के नाम जानो पुष्कर भाई ।
अरु शाल्मली सीस दोय, जिन भवन लसाई ।।
जिन मन्दिर दोनों तणी, आह्वानन इस थल करत ।
मन वच तन त्रय शुद्ध करि, भवि संचित पातक हरत ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य कोण ईशान कोण विषै दोय पुष्कर शाल्मली वृक्ष की डालन पै दोय श्री जिन भवनाभ्याम् नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

गीता छंद—जल क्षीर दधि को लाय, निर्मल कनक झारी में भरूं ।
सिर नाय तुमरे चरण युग, ढिग धार ताकी विस्तरूं ।।
विद्युन्नमाली मेरु की, नेऋत्य अरु ईशान जी ।
कुरु वृक्ष द्वय की डाल पूजूं, द्वय जिनालय मान जी ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य अरु ईशान कोण दोय पुष्कर शाल्मली वृक्षन की डालन पर दोय श्री जिन भवनाभ्याम् नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

चन्दन कपूर मिलाय केशर, बहु सुगन्धित जोय के ।
घसि कनक जाम धराय तुम, पद भेंटतो शुचि होय के ।। विद्युन्नमाली···चंदनं

तन्दुल अखंडित धवल सुन्दर, मधुर कोमल लीजिये ।
जल धोय कंचन थाल तुम, गुण पुंज भविजन दीजिये ।। विद्युन्नमाली···अक्षतं

चम्पा चमेली कमल कुंदा, सेवती रु गुलाव जी ।
इन आदि फूल अनेक, प्रासुक लेत हेम रकेब जी ।। विद्युन्नमाली···पुष्पं

मोदक पसासे सेव खाजा, तुरत ताजा कीजिये ।
इन आदि और अनेक नेवज, कनक थाल धरीजिये ।। विद्युन्नमाली·····नैवेद्यं

मिथ्यात्व मोह महान तम को, दूर तुमही करत जी।
ले दीप मणिमय कनक थाली, भेंट तुम पद धरत जी ।। विद्युन्माली···दीपं

वसु कर्म पुंज जलावने को, धूप निर्मल लीजिये।
जिनराज चरण सरोज आगे, अग्नि घट खे दीजिये ।। विद्युन्माली···धूपं

श्रीफल सुपारी लोंग आदिक, फल अनुपम लेय के।
धरि हेम थाल उठायकर, ते नाय सिर हरषेय के ।। विद्युन्माली···फलं

ले नीर चन्दन परम अक्षत, फूल प्रासुक धरि चरूं।
दीप निर्मल धूप फल ले, कनक थाली में धरूं ।। विद्युन्माली···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई—विद्युन्न गिरि की कोण ईशान, तहां पर पुष्कर वृक्ष पिछान।
उत्तर डाल जिनेश्वर गेह, आठों विधी पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की ईशान कोण उत्तर कुरु भोग भूमि की कोण में पुष्कर नामा वृक्ष की उत्तर डाल पर श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

शेष डाल ता तरु की तीन, व्यन्तर वास करें सुख लीन।
तिनके महलन पै जिन गेह, आठो विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की ईशान कोण उत्तर कुरु भोग भूमि में पुष्कर वृक्ष की तीनों दिशी तीन बड़ी डाल पै व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चहुं दिशि पुष्कर तरु परिवार, एक लाख चालीस हजार।
एक शतक उगणीस गिनाय, तिनपै भवन जजूं जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की ईशान कोण में पुष्कर वृक्ष की चहुँ दिशी एक लाख चालीस हजार एक से उन्नीस परिवार वृक्ष तिन पै व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

विद्युन्मेरु की नैऋत्य कोण, तिस थल शाल्मली तरु होय।
दक्षिण डाल जिनेश्वर गेह, वसु विधि पूजूं धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य कोण देव कुरु भोग भूमि पास शाल्मली नामा कुरू वृक्ष की दक्षिण डाल पै श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

शेष डाल ता तरु की तीन, व्यन्तर वास करे सुख लीन ।
तिनके महल पे जिन गेह, वसु विधि पूजूं उर धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य कोण शाल्माली वृक्ष की शेष तीन दिशा की तीन डाल पै व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

चहुं दिश शाल्मली तरु परिवार, एक लाख चालीस हजार ।
एक शतक उगनीस गिनाय, तिन पै भवन जजूं जिन राय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के सालमली नामा वृक्ष की चहँ दिश एक लाख चालीस हजार एक सो उन्नीस परिवार वृक्ष पै व्यन्तरादि स्थानक में सकल श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

नैऋत्य लखि अरु कोण ईशान, विद्युन्मेरु लेहु पिछान ।
कुरु वृक्षन पै श्री जिन धाम, वसु विधि पूजूं सब ही ठाम ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य कोण ईशान कोण विषै पुष्कर साल्माली नामा दोय कुरु वृक्षन की डाल पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । १०८ (बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्मालीं कोण द्वय, नैऋत्य अरु ईशान ।
कुरु तरु द्वय जिन भवन की, जयमाला उर आन ।।

बेसरी छन्द—पुष्करार्ध पश्चिम मन भावे, विद्युन्नमाली मेरु लखावे ।
ताकी नैऋत्य कोण ईशाना, पुष्कर शाल्मली द्वय थाना ।।१।।
तिन दोनों की तरु द्वय शाखा, दोय जिनालय श्री जिन भाखा ।
शेष डाल पै व्यंतर पाने, निज परिवार सहित बसवाने ।।२।।
पूरबवत् सब रचना जानो, परिकर वृक्ष चौतरफ मानो ।
जिन मंदिर की रचना सारी, देखत नयन लगे प्रियकारी ।।३।।
कथन करत नहीं पार लहावै, तुच्छ बुद्धि हम किस विधि गावे ।
गणधर चार ज्ञान के धारी, तिनसो गात वनत नहिं सारी ।।४।।

पूजन काज अमर पति आवे, इन्द्राणी मिल हरष बढ़ावे ।
और सकल सुर संग लहाके, पूजन द्रव्य वसु विधी लाके ।।५।।
पूजन चरण जिनेश्वर केरे, गावत गुण नाचत ले फेरे ।
वीन ताल मृदंग बजावै, मधुर ध्वनी जय शब्द करावे ।।६।।
इन तरु के स्थल में जानो, चारों और वेदिका मानो ।
ऊंची आधा योजन गाई, भाग आठवें है चौड़ाई ।।७।।
मध्य पीठिका तीन सुहावे, ऊंची योजन आठ कहावे ।
चौड़ी बारह आठ सु चारी, मूल मध्य ऊपर सु विचारी ।।८।।
इनके ऊपर तना सुहाता, दो योजन ऊंचा झलकाता ।
ऊपर चारि बनी है साखा, वसु योजन लम्बी जिन भाखा ।।९।।
सब रचना है पृथ्वी काया, पात पुष्पफल जिन बच गाया ।
तुम पद "नेम" नमे जिन देवा, मोकू भव भव दीजे सेवा ।।१०।।

दोहा—विद्युन्माली कोण द्वय, कुरु तरु द्वय मन लाय ।
डाल दोय जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की नेऋत्य ईशान कोण में पुष्कर सालमली नामा दोय कुरु वृक्षन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवन के सर्व बिम्बेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपई—विद्युन्माली कोण ईशान, अरु नैऋत्य तरु दय जान ।
तिनकी डाल दोय जिन धाम, पाठ करै सो ले शिव ठाम ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की पूर्व विदेहन में आठ वक्षार गिरि शीष आठ श्री जिन भवन पूजा नं. ७७

स्थापना चौपाई—विद्युन्माली पूर्व विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।
आह्वानन तिनकी इस थान, मन वच काय करूं हित जान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पूर्व विदेहन में वसु वृक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्

विद्युन्माली पूरब ओर, सीता दक्षिण उत्तर ठोर।
जजूं कर जोर, नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। टेक ।।
मुनि मन के सम निर्मल नीर, धार देत नाशे तिहु पीर।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पूर्व विदेह में आठ वक्षार गिरि पर आठ थी जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम्।

मलियागिरि केसरि के संग, प्रभु पद चर्चत धरुं उमंग।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···चन्दनं
लीने तन्दुल अनी समेत, छेपत पाऊं अक्षय खेत।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···अक्षतं
फूलनि पर भौंरा मंडराय, काम बान भागे डर खाय।
जजूं कर जोर, नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···पुष्पं
हलुआ खीरि पुआ पक्कवान, नागिन क्षुदा भगे मय मान।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···नैवेद्यं
करूं आरती दीप सजाय, मोह अंध तत्क्षण निसि जाय।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···दीपं
अगर तगर दस गंध कुटाय, खेवत धूप कर्म न दिखाय।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊ, भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···धूपं
लाइ चढ़ाऊं बम्बई आम, भेंट करत हो शिवपुर ठाम।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर भोर ।। विद्युन्माली ·· फलं
जल फल आठों द्रव्य अपार, अर्घ चढ़ावत बेड़ा पार।
जजूं कर जोर नित प्रति ध्याऊं भोर ही भोर ।। विद्युन्माली···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चलो चलो जी विदेह मंझार, प्रभू की पूज करें ।। टेक ।।

पुष्करार्ध वर दीप में, आठ अचल वक्षार ।
भद्रशाल वेदी निकट, चित्रकूट मनहार ।।
तह देवी देव अपार, शब्द जयकार करे ।
ले बाजे विविध प्रकार, बजावे नृत्य करे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालो मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्थ चित्रकूट वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्य सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

पदम कूट वक्षार है, फिर दूजा अभिराम ।
पूज करे मन वचन से, ले किसमिस बादाम ।।
है पूरब में सिद्धकूट, मूर्तियां मन हि हरे ।
अरु तीन कूट में देव, खूब गुनगान करे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधी पूर्व विदेहस्य पदमकूट वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्य सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

तीजे गिरि वक्षार का, नलिन कूट है नाम ।
ऊंचा चौड़ा पांच सौ, योजन है अभिराम ।।
सिर चारि कूट हैं, प्रथम मांहि जिनराज खरें ।
अरु शेष तीन में सुर व्यन्तर भजनादि करें ।। चलो···

ॐ ह्री श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्य नलिन कूट वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्य सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

एक सेल वक्षार है, चौथा करे प्रकाश ।
नीलाचल को छू रहा, देवारण्य के पास ।।
सिद्धकूट पूर्व में गेह देव खग बहु विचरे ।
हम मन वच काय सम्हार, पुण्य भण्डार भरे ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्शाली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्य एक शैल वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्य सर्व जिन बिम्वेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

सीता तक गिरि निषध से, देस बराबर जान ।
नाम त्रिकूट कहात है, कूट चारि अमलान ।।
तहां पर होइ रहो उत्साह, देखि मन हर्ष भरे ।
तजि के संसार असार, हमेशा मौज करे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्य त्रिकूट वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्य सर्व जिन बिम्वेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

नाम वैश्रवण सु भग है, छट्टा गिरि वक्षाद ।
नदी विभंगा दो तरफ, जानो सीमाकार ।।
ऊपर है श्री जिन धाम, तहां पर दर्श करे ।
सत आठ श्री जिन बिम्ब, नासा दृष्टि धरे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्य वे श्रवण पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्वेभ्यो के नमः अर्घम् ।। ६ ।।

अंजन गिरि है सातमा, सुवरण दीप्ति समान ।
तीन कूट में देव गण, पूजा करे महान ।।
पहिले में है विख्यात, जिनालय पूज करे ।
फिरि जिन गुण माला गाय, मनुष भव सफल करे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह अंजन वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्वेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

आत्मांजन आठवां है, वक्षार पुनीत ।
भद्रशाल वेदी निकट, भव्य जनों का मीत ।।
वसु विधि सामग्री लेय, अधिक मन मोद भरे ।
फिरि ले करि आसिर्वाद, परस्पर प्रीत धरे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्थ अत्मांजन वक्षार पर्वत पर सिद्धकूट जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्वेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

विद्युन्माली मेरु की, पूरब दिशा मंझार।
सुर व्यंतर सबके जहां हो, जिन गेह विचार ।।
तिन सबको दोउ कर जोर, यहीं से नमन करे।
वहां जाइ सके हम नांहि, इसलिये सवर करे ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहस्थ जहाँ-जहाँ भी जिन भवन हो सकल भवन सम्बन्धी श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

वीर सेन जिन पद नमूं, महा भद्र गुण गाय।
और भये फिरि होयगें, पूजूं पद मन लाय ।।
यह सब जिनवर भगवान, प्रथक में नित विचरें।
वहा के नर नारि महान, आत्म हित खूब करें ।। चलो···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में सीता नदी के दोनों तरफ वीर सेन जिनेन्द्राय तथा महा भद्र जिनेन्द्राय वर्तमान में समवशरण सहित विराजमान् तथा पहले जितने भये आगे जितने भी होयेंगे ते सकल जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली मेरु की, पूर्व आठ वक्षार।
शीस आठ जिन भवन की, जयमाला सुण सार ।।

पद्धड़ी छन्द चाल—जय पुष्करार्ध पश्चिम कहाय, जय विद्युन्माली मेरु पाय।
जय ताकी पूरब दिश बखान, जय सोलह क्षेत्र विदेह जान ।।१।।
जय तिनके सीमाकार जोय, जय आठ अचल वक्षार होय।
जय कनक वरण छवि से लखाय, जय देश बरावर हे लंबाय ।।२।।
जय अर्ध सहस्र योजन चौड़ाय, जय चार कूट सिर पै लसाय।
जय सरित निकट सीमा कहाय, जय सिद्धकूट तिस थान पाय ।।३।।

जय सिद्धकूट सिर पे बखान, जिनराज गेह सोहे महान ।
जय सर्व अचल गिर है जु आठ, तिस थान मांहि लागे जु ठाठ ।।४।।

मंगल विभुति राजत अनेक, वसु प्राति हार्य जानो विवेक ।
सब ओर कथन लेवो निहार, भवि देखि ग्रंथ त्रेलोक्य सार ।।५।।

जिनराज जजे तिस थान आय, सुर राज सुरन को संग लाय ।
जिनराज तणे गुण गाय, गाय, उर हरषि धार सिर नाय नाय ।।६।।

इस थान मांहि उर धारि प्रेम, तुम चरण कमल सिर नमत "नेम" ।
इक अर्ज करे सुणियो जिनेश, वसु कर्म तणो मेटो क्लेश ।।७।।

दोहा--विद्युन्माली मेरु के, वसु वक्षार लसाय ।
शीष आठ जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पूर्व दिशी आठ वक्षार गिरी शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपाई--विद्युःमाली वसु विदेह, गिरि वक्षार आठ जिन गेह ।
भवि जे तिनको पाठ करंत, ते भवदधि को पावे अन्त ।। इत्यार्शीवाद

श्री विद्युन्माली मेरु की पूर्व दिशा विदेह क्षेत्रन के बीच सोलह रूपाचल शीष सौलह जिन भवन पूजा नं. ७८

चौपाई--विद्युन्माली पूर्व विदेह, रूपाचल षोडश जिन गेह ।
आह्वानन इस थानक मांहि, करतो तिनकी उर धरि चाह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पूर्व दिशि विदेह क्षेत्रन बीच षोडश रूपाचल शीष सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

सोलह पर्वत वैताड़ जिनालय पूज करूं ।। टेक ।।
जल से पूज करूं जिनवर की, क्षीरोदधि से लाय रतनमय कुम्भ भरूं ।

धारा तीन ढराय जन्म मरना बिसरूं, सोलह पर्वत वैताड़ जिनालय पूंज करूं ।
विद्युन्माली पूरब दिसि में, सोलह देस मंझार रजत गिरि चित्त धरूं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु को पूर्व दिशी विदेह क्षेत्रन बीच षोडश रूपाचल शीप सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

पूज करूं प्रभु की चन्दन से, संग कपूर मिलाय कटोरी मांहि भरूं ।
चरणनि के अग्र चढ़ाय जगत की ताप हरूं, विद्युन्माली·····सोलह·····चंदनं
अक्षत से पूजूं जिन चरणा, सुवरण थाल मंझार जवाहर लाल भरूं ।
तसु तीन पुञ्ज करवाय, अमिट पद प्राप्त करूं, विद्युन्माली·····सोलह·····अक्षतं
फूलनि से पूजूं जिन प्रतिमा, वर मचकुन्द चुनाय छवरिया मांहि धरूं ।
जिनवर के चरण चढ़ाय मदन से विजय करूं विद्युन्माली·····सोलह·····पुष्पं
नैवेज से पूजूं जिनवर जी, नाना भांति बनाय हेम के थाल भरूं ।
मैं चरणनि मांहि चढ़ाय छुदा नागिन बिसरूं, विद्युन्माली·····सोलह·····नैवेद्यं
करूं दीप से पूज प्रभू की दोनों हाथ घुमाय आरती खूब करूं ।
प्रभू जी पद अग्र चढ़ाय, ज्ञान सत प्रगट करूं, विद्युन्माली·····सोलह·····दीपं
पूज करूं जिनको सु धूप से, दस विधि की बनवाय हुतासन मांहि धरूं ।
तसु खेवत सीस नवाय कर्म के साथ लरूं, विद्युन्माली·····सोलह·····धूपं
फल से पूजूं जिनवर चरना, बीदाना अंगूर आम से थाल भरूं ।
फिरि भेंट करूं हर्षाय शिवालय में विचरूं, विद्युन्माली·····सोलह·····फलं
करूं अर्घ से पूज प्रभू की, आठों द्रव्य संभार लबालब थाल भरूं ।
तव पद अनरध मिलि जाय हमेशा मौज करूं, विद्युन्माली·····सोलह·····अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

सोरठा—रूपाचल मनहार, कच्छ देस के मध्य में ।
पूजूं योग सम्हार, सिद्धकूट जिन गेह को ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में कच्छ देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय अर्घम् ।। १ ।।

रूपाचल अभिराम, देससु कच्छा बीच में।
पूजूं जिन आगार, सिद्धकूट पूरब दिशा ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में सु कच्छा देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

रूपाचल सुखकार, देस महाकच्छा विषै ।
पूजूं जिन गृह सार, सिद्धकूट मन मोहना ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में महा कच्छ देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

रूपाचल सो भंत, कच्छ कावती देश में ।
पूज करूं अरहंत, सिद्धकूट मंदिर तनी ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में कच्छ कावती देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

रूपाचल सुखदाय, आवर्ता के मध्य में ।
पूजूं श्री जिनराय, सिद्धकूट मन लायकर ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में आवर्ता देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय अर्घम् ।। ५ ।।

रूपाचल अमलान, देस लांगलावर्त में ।
पूंज करूं रुचि ठान, प्रथम सिद्धवर कूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में लांगला वर्त देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

रूपाचल गुणखान, देस पुष्कला में कहा ।
पूंजू करि गुणगान, मन से पहिले कूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में पुष्कला देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

रूपाचल गुण मंड, पुष्कलावती देस में।
पूजूं छोड़ि घमंड, सिद्धकूट जिन बिम्ब को ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालो मेरु के पूर्व विदेह में पुष्कलावती देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् । ८ ।।

रूपाचल मन भाय, वत्सा देश विषै लखो।
पूजूं नृत्य कराय, जिन मन्दिर सिद्धकूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालो मेरु के पूर्व विदेह में वत्सा देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ९ ।।

रूपाचल है सोय, देस सु वत्सा बीच में।
पूज करूं खुस होय, प्रथम जिनालय जाय के ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में सु वत्सा देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १० ।।

रूपाचल चमकाय, देस महावत्सा मधी।
पूजूं मन वच काय, सिद्धकूट में जिन भवन ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में महा वत्सा देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ११ ।।

रूपाचल दुःखहार, वत्स कावती देश में।
पूजूं आठ प्रकार, तन मन वचन लगाय के ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में वत्स कावती देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १२ ।।

रूपाचल गिरिराज, रम्या देश विषै सही।
पूजूं श्री जिनराय, इक सो आठ सिद्धकूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में रम्या देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १३ ।।

रूपाचल सुखकंद, देस सुरम्या की मही।
पूजूं धरि आनन्द, सिद्धकूट की मुर्तियां ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में सुरम्या देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १४ ।।

रूपाचल स्वयंमेव, तिष्ठ रमणीया देश में।
पूजूं श्री जिनदेव, वसु विधि से सिद्धकूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में रमणीया देशी रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १५ ।।

रूपाचल सिर मोर, देस मंगलावती में।
पूजूं दोऊ कर जोर, जैन विम्ब सिद्धकूट में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में मंगलावती देश के रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १६ ।।

भूते योजन ऊंच दस, विद्याधर का वास।
फिर दस योजन ऊपरे, सुर व्यन्तर आवास ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में सोलह देश मध्य सोलह रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊँचाई पर दक्षिण-उत्तर दोनों तरफ विद्याधरों के एक सौ दस नगर तथा बीस योजन की ऊँचाई पर व्यन्तर देवों के दक्षिण उत्तर दोनों तरफ आवासों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम ।। १७ ।।

मूल भाग गिरि नील से, निकसी सरिता दोय।
उपकारक मय दोउ तट, जिनगृह बन्दू सोय ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में नीलाचल के मूल भाग से आठ देश सम्बन्धी सोलह नदियाँ रक्तारक्तोदा निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होती हुई सीता नदी में आकार मिली तथा तिनकी सहायक नदियाँ दो लाख चौवीस हजार इन सब नदियों के दोनों तरफ व्यन्तर देवो के आवासों में स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग गिरि निषध से, निकसी सरिता दोय।
उपकारक मय दोउ तट, जिन गृह बन्दू सोय ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में मूल भाग निषधाचल से आठ देश सम्बन्धी सोलह नदियां गंगा सिन्धु निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होती हुई सीता नदी में मिली तथा तिनकी सहायक नदियाँ दो लाख चौबीस हज़ार इन सब नदियों के दोनों तरफ व्यन्तर देवो के आवासों में स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

म्लेच्छ खंड के मध्य में, वृषभाचल के पास ।
आर्य खंड एक नगर में, बन्दू जिनगृह खास ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पूर्व विदेह में एक म्लेच्छ खण्ड के मध्य में वृषभाचल पर्वत सम्बन्धी तथा आर्य खण्ड की एक प्रसिद्ध नगरी जिसमें महापुरुष पैदा होते हैं ऐसे इन सोलह देश सम्बन्धी व्यन्तर आवासों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

चौपाई—विद्युन्माली पूर्व कहाय, सोल खगाचल शीष लसाय ।
सोलह श्री जिन भवन विशाल, अब तिनकी भवि सुणि जयमाल ।।

छंद—पुष्कर दिसि पश्चिम हेरु, मधि विद्युन्माली मेरु ।
ताकी दिसि पूर्व लसावे, मधि क्षेत्र विदेह बसावे ।।१।।

तट सीता सरिता दोई, गिरण षोडश देश जु होई ।
मधि भागा तिनके जानो, भवि सोल खगाचल मानो ।।२।।

दिश पूर्वा पर लम्बाई, लखि देश बरावर भाई ।
गिर रजत मई छवि देवे, दृग देखत चित हरेवे ।।३।।

लखि लेहु चुड़ाई खासा, भवि योजन मांडि पचासा ।
योजन है ऊंच पचीसा, नवकूट लसैं तसु शीषा ।।४।।

दस योजन ऊंच जु होई, कटनी द्वय तरफा दोई ।
दस योजन चौड़ी जानो, दिश एक तनी मन आनो ।।५।।

द्वय तरफा नगर बसावे, शत एक अधिक दस पावे ।
तहां खगधर वास करावे, जिन धर्म प्रतीत धरावे ।।६।।
तिस थल से ऊंच लखावो, दस योजन गिरण के जावो ।
फिर कटनी दोय जनावे, द्वय तरफा तट्ट जू पावे ।।७।।

द्वय तरफा नगरी मानो, सुर व्यन्तर वसते जानो ।
फिर योजन पांच ऊंचाई, तिस थल ते जानो भाई ।।८।।

तहां कूट तणी भवि जागा, दिश पूर्व लखो बड़ भागा ।
सिद्धकूट महा सुख दाई, तहां भवन एक जिनराई ।।९।।

वसु कूटन में लखि वासा, भवि मानो व्यंतर खासा ।
इस विध की रचना सारी, गिर सोलह लेहु विचारी ।।१०।।

रचना जिन भवन तणीजो, जिन आगम माहि भणीजो ।
सो सब ही तिस थल पावे, हम तुच्छ बुद्धि किम गावे ।।११।।

नमि नैम जिनेश्वर चरणां, इक अरज इसी विधि करणां ।
तुम दीन दयाल कहावो, जग दुःख ते मोहि छुड़ावो ।।१२।।

दोहा—विद्युन्माली पूर्व दिश, रजचातल समुदाय ।
सोलह भवन जिनेश को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पूर्व दिशी सोलह रूपाचल पर सोलह श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।

चौपाई—विद्युन्माली पूर्व विदेह, सोलह खग चल श्री जिन गेह ।
तिनको भविजन पाठ करंत, ते भवसागर सहज तिरंत ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिश तीन कुलाचल पर तीन जिन भवन पूजा नं. ७६

कव्वाली—श्री विद्युन्माली की दक्षिण में कुलगिरि तीन कहाते हैं।
हिमवान महा हिमवान निषध ये सार्थक नाम धराते हैं॥
इन शीश तीन हैं चैत्यालय श्री सिद्धकूट कहलाते हैं।
हम इनकी पूजा करने को यहां नकली फूल चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पूजन करो छोड़ि के सारे काम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम ॥टेक॥

करि विधि से प्रासुक सु ले गंग नीरा, शुचि होकर आये हो श्री के तीरा।
त्रय रोग मेटन चढ़ावो त्रय ठाम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

चंदन के संग लेके केसर कपूरा, घिसते में बनि जाओ तन मन से सूरा।
प्रभु पद चढ़ा करके बनि जावो राम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···चंदनं

तंदुल भले लाओ कस्मीर जाकर, भरि थाल कंचन प्रभु ढिग चढ़ाकर।
फिरि सुक्ख भोगो हमेशा ललाम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···अक्षतं

ताजे सुमन अनेकों भांति लाकर, श्री जिन कमल पदम आगे चढ़ाकर।
बैरी मदन का करो मुखड़ा स्याम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···पुष्पम्

पकवान मीठे रसीले बनाकर, सुवरण की थाली भली विधि सजाकर।
छुधा छुदा भागि जावे हराम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···नैवेद्यम्

करो आरती रतन दीपक सजाकर, निज पर प्रकाशक जगे ज्ञान आकर।
मोहान्ध भागे न लेवे विराम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम॥ पूजन···दीपम्

धूप सुगंधी तुरत बनवा कर, कर्म नि जलाना निशाना लगाकर।
खेवत न विखलावें मुख सुवह स्याम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम ॥ पूजन···धूपम्

खरभुजा मीठा व खट्टा मंगाकर, फल मोक्ष पाने का उपयोग लाकर।
संग में चढ़ावो सुपारी बादाम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम ॥ पूजन···फलम्

वसु द्रव्य विधि से सवों को मिलाकर, सोने की थाली लबालब भराकर।
अर्घ चढ़ाकर बनो शिव के स्वाम, नर भव ये तुमको मिला है अभिराम ॥ पूजन ··अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चाल विजयानो—पंचम गिर सूं, दणिथ दिशा विचारिये।
हिमवन पे जी, ग्यारह कूट निहारिये ॥
पहले में जी, सिद्धकूट जिन धाम है।
फिरि दस में जी, व्यन्तर देव मुकाम है ॥
गिरि के विच जी, पदम द्रह मन भावना।
तामे सूं जी, तोन नदी निकसावना ॥
उपकारक जी, सहस छप्पना आन है।
जिनवर गृह जी, सब थल पूज महान है ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा में से तीन कुलाचल में से हिमवन कुलाचल पर ग्यारह कूट, जिनमें प्रथम में सिद्धकूट मन्दिर बाकी दस में व्यन्तर धान सम्बन्धी तथा पदम नाम के तालाव के बीच कमल पर भी देवी का स्थान सम्बन्धी तथा तालाब के तीन द्वारों से तीन नदियाँ निकली उनकी सहायक नदियों छप्पन हजार नदियों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

दूजा गिरि जो, नाम महा हिमवान है।
तसु अपर जो, आठ सु कूट महान है ॥
सिद्धकूट सूं जी, पूरव में अति सोमना।
जिनवर गृह जी, सबही के मन मोहना ॥

तालाब सूं जी, महापदम विच की थली।
तामे सूं जी, निकसि दोय नदियां चली॥
सहकारी जी, सरिता चौरासी सहस।
मैं सब थल जी, जिन गृह पूजूं होई खुश॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा में महा हिमवान कुलाचल पर्वत पर आठ कूटों में से पूर्व में सिद्धकूट मन्दिर बाकी सात में व्यन्तर देव थानक सम्बन्धी तथा महा पदम तालाब के बीच कमल ह्री देवी का महल तथा दो नदियां निकली उनकी सहायक चौरासी हजार नदियों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्॥ २॥

गिरि निषध पे जी, नवकूटों में जिन भवन।
सिद्धकूट में जी, प्रथम भवन है मन हरन॥
बाकी में जी, व्यन्तर देवों के सदन।
बिच भाग में जी, दिरह तिगंछ जु है सघन॥
तसु निकसी जी सरिता, दोनों द्वार से।
उपकारक जी, नदियों लख विस्तार से॥
इक लाख सु जी ऊपर सहस प्रमान है।
चालीस सूं जी, जिनगृह सब स्थान है॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा में निषध कुलाचल पर्वत पर नो कूटों में से पहले में सिद्ध कूट मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर देवों के थानक सम्बन्धी। तथा गिर के बीच में तिगंछ तालाब के कमल पर धृति देवी के महल सम्बन्धी तथा तालाब से दोय नदियां निकली, तिनकी एक लाख चालीस हजार सहायक नदी सब नदियों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्॥ ३॥

दिसि दक्षिण जी, तीन कुलाचल कीतनी।
विच विच में जी, भोग भूमि तीनों मनी॥
गिरि नाभि सूं सी, दो परबत के थान में।
नदियों के जी सागर के, सु मिलान में॥

जिन भवन सु जी, सुर व्यन्तर के हो जहां ।
तन मन से जी, में पूजूं वन्दू वहां ।।
ता फल से जी, शिव सुन्दरी के संग में ।
अन अंताजी काल, बिते निज रंग में ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा में तीन कुलाचल के बीच-बीच में उत्तम-मध्यम जघन्य तीनों भोग भूमि सम्बन्धी तथा दो नाभि गिरि सम्बन्धी तथा सातों नदियाँ समुद्र में मिली तथा जम्बू द्वीप को वेदीका सम्बन्धी तथा और जहाँ-जहां भी व्यन्तर स्थान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन विम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

सोरठा—जय जय श्री जिन धाम, जय जय जग चूड़ामणी ।
जय जय जिनवर नाम, सुमिरन से हो सुख मिले ।।

दोहा—विद्युन्माली दक्षिण दिश, तीन कुलाचल जोय ।
शीष तीन जिन भवन की, जयमाला अवलोय ।।

ढाल–ते गुरु मेरे––पुष्करार्ध दिश पश्चिमी, द्वीप महा सुखदाय ।
उर बसो रचना सरस सुहावनी, देखत मन हरषाय ।।१।। ते गुरु मेरे···
ताके मध्य विराजतो, विद्युन्माली मेरु ।
ताकी दक्षिण दिश विषै, तीन कुलाचल हेर ।।२।। ते गुरु मेरे···
पहला गिरि हिमवान है, कंचन वर्ण लसाय ।
कूट एकादश सिर लसैं, उपमा कही न जाय ।।३।। ते गुरु मेरे···
महा हिमवान जु दूसरो, रजत वरण मन लाय ।
कूट आठ सिर सोहना, देखत उर हरषाय ।।४।। ते गुरु मेरे···
निषधाचल गिरि तीसरो, हैमवरण छवि देय ।
शीष कूट नव राजते, भविजन चित्त हरेय ।।५।। ते गुरु मेरे···

तीन कुलाचल ये लखो, लम्बे सब इक सार।
आठ लाख योजन भने, भविजन लेहु विचार ॥६॥ ते गुरु मेरे···

ऊंच चौड़ाई आदि दे, रचना सब दरशाय।
शास्त्र त्रैलोक्य जु सार ते, समझो भवि मन लाय ॥७॥ ते गुरु मेरे···

प्राची दिश गिरि तीन पे, सिद्धकूट त्रय जानि।
तिस थल श्री जिन देव के, मन्दिर तीन बखानि ॥८॥ ते गुरु मेरे···

सुरपति खगधर आदि ही, आवत पूजन हेत।
अष्ट द्रव्य ले थाल में, मय पर वार समेत ॥९॥ ते गुरु मेरे···

हरषि हरषि जिनराज को, पूजे मन वच काय।
निरखि चरण जिनराज के, बहु विधि गुण को गाय ॥१०॥ ते गुरु मेरे···

'नेम' नमे कर जोड़ के, इस थल भावन भाय।
जनम मरण दुःख संतति, मेटो श्री जिनराय ॥११॥ ते गुरु मेरे···

दोहा--विद्युन्माली दक्षिण दिश, तीन कुलाचल पाय।
शीष तीन जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि तीन कुलाचल पर्वत के शीष सकल भी जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

अडिल्ल--विद्युन्माली मेरु दक्षिण दिश चीन जी।
तीन कुलाचल शीस जिनालय तीन जी॥
भविजन उर हरषाय पाठ तिनको करें।
ते जग दुःख नशाय मुक्ति रमणी वरें॥ इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिश भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा नं. ८०

दोहा--विद्युन्माली दक्षिण दिश, भरत क्षेत्र मधि जान ।
रूपाचल जिन भवन की, आह्वानन इस थान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ॥

नंदीश्वर पूजा की-क्षरोदधि उज्ज्वल नीर, सुवरण कलश भरा ।
जिनवर पद पद्म चढ़ाय, मेंटो जन्म जरा ॥
गिरि पंचम भरत कहान, रजताचल राजे ।
तापर सिद्धकूट महान, पूजत शिव साजे ॥टेक॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष स्थित श्री जिन भदनाय नमः जलम् ।

चन्दन केशर घिस लाय, दाह हरे सारी ।
पूजो श्री जिनवर पाय, आनन्द हो भारी ॥ गिर पंचम···चन्दनम्

शशि किरणों सम अवदात, अक्षत लाता हूं ।
प्रभु सन्निध पुंज चढ़ाय, जिन गुण गाता हूं ॥ गिर पंचम···अक्षतं

वर चंपक कंज कदंब, सुमन सुमन प्यारे ।
फैले दश दिश सौगन्ध, पूजूं पद थारे ॥ गिर पंचम···पुष्पं

पेड़ा बरफी पकवान, हलुआ थाल भरे ।
निज क्षुधा नाशने हेतु, चरु से पूज करें ॥ गिर पंचम···नैवेद्यं

मणिमय दीपक उद्योत, जगमग ज्योति जले ।
आरति करते निज मोह-मय सब ध्वांत टले ॥ गिर पंचम···दीपम्

कृष्णागरु धूप सुगंध, अग्नी संग जरे।
कर कर्म पुञ्ज को भस्म, दश दिश धूम भरे ॥ गिर पंचम···धूपम्

बादाम चिरोंजी दाख, नींबू आम लिये।
जिन पद के निकट चढ़ाय, मन आनन्द किये ॥ गिर पंचम···फलम्

जल गंध प्रभृति सब लेय, अर्घ बनाया है।
जिन चरणों देत चढ़ाय, पुण्य बढ़ाया है ॥ गिर पंचम · अर्घम्

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल के स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्।

प्रत्येक अर्घ

पचम गिरि दक्षिण दिश जाय, पहला भरत क्षेत्र कहलाय।
ताके बीच रूपगिरि एक, नव कूटन युत रचनानेक ॥
सिद्धकूट पूरब के मांहि, वसु में व्यन्तर देव रहाहि।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, मैं यहाँ पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिश में भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल शी नवकूटन में से पूरब में सिद्धकूट मन्दिर शेश आठों में व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

दश योजन है ऊपर सोय, दक्षिण दिशि की कटनी होय।
विद्याधर के नगर पचास, सब में जैन भवन है खास ॥
दूजी तरफा कटनी सोय, उत्तर दिशि की जानो सोय।
विद्याधर के नगर सु साठ, पूजन करूं बनाकर ठाठ ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के दक्षिण दिशि में भरत क्षेत्र के मध्य रूपाचल पर्वत पर दक्षिण उत्तर दोनों श्रेणियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ २ ॥

भू तें योजन ऊपर बीस, उभय तरफ मन्दिर जगदीश।
व्यन्तर थल में जिनवर गेह, पूज करूं धरि उर में नेह ॥

रूपाचल पर सब थल जाय, रत्नत्रय युत सब मुनिराय।
तिनके चरणनि अर्घ चढ़ाय, बीन बजाऊं अति हर्षाय॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के दक्षिण दिशि में भरत क्षेत्र के मध्य में रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊपर दोनों श्रेणियों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी श्री जिन भवनेभ्यो नमः तथा रत्नत्रय युक्त सर्व मुनिराजेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

अडिल्ल—पंचम गिरि के भरत खगाचल की मही।
खगधर व्यन्तर वास शीष जिनवर सही॥
नीरादिक ले आठ सकल थल को जजूं।
भव वन कूंचों देय, जाय शिव सुख सजूं॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल पर्वत सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः पूर्णार्घम् ॥४॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली के भरत, दक्षिण दिशि में क्षेत्र।
रूपाचल जिन भवन की, जयमाला कह देत॥

छन्द पद्धड़ी—जय पुष्करार्ध दिश अपर जोय, जय तामें रचना सर्व होय।
जय मध्य भाग तामें जुहेर, जय विद्युन्माली है जु मेर॥१॥
जय ताकी फिर दिश दक्षिण जाय, जय भरत क्षेत्र जानो भलाय।
जय मध्य भाग ताके लसाय, जय एक खगाचल थान पाय॥२॥
जय आठ लाख योजन लम्बाय, जय और कथन सब पूर्व धाय।
जय ताके सिर दिश पूर्व जोय, सिद्धकूट एक जिन भवन होय॥३॥
तिस भवन मांहि रचना अनेक, जिन ग्रन्थ देख जानो विवेक।
जिन बिंब अकीर्तम शोभनीक, शत एक आठ भवि जान ठीक॥४॥

सुरराज सुरासुर संग लाय, उर हरषि धार तिस थान आय ।
जिनराज चरण सिर देत नाय, वसु भांति जजे गुण गाय गाय ।।५।।
तुम कर्म रिपु जीते जिनेश, शिव पंथ सरल कीनो सुवेश ।
जग बंधु दयानिधि गुण विशाल, जयवन्त रहो तुम तीन काल ।।६।।
दक्षिण उत्तर दोय ओर जान, जय नगर एक सोदस प्रमान ।
जय तिनि में विद्याधर रहाहि, वे सभी धन्य भागी कहाहि ।।७।।
अय काल चतुर्थ सदा रहाहि, पंचम छट्ठम कबहू न आहि ।
एक जैन धर्म ही सदा होय, अन्यत्र धर्म दीखे न कोय ।।८।।
विद्या बल से आवे रु जाय, गिरि सिखर आदि वन्दन कराय ।
इक अर्ज करत उर धारि नेम, सिब थान मोहि दीजे सप्रेम ।।९।।
मम अवगुण पर दीजे न चित्त, तुम जग हितकारीं परम मित्त ।
पद भक्ति मिले मोहि बार बार, धन सम्पति नहीं चाहुं अपार ।।१०।।
एक गांव पति जो कोई होय, सो भी दुखिया दुःख देत खोय ।
ज्यूं और अनेकों दिये तार, त्यूं "नेम" खड़ो आकर दुवार ।।११।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—विद्युन्माली मेरु दक्षिण दिशि सोहनो ।
भरत क्षेत्र वैताड़ सकल जन मोहनो ।।
ताके सिर जिन गेह तणो करि पाठ जी ।
जावै भवि जन मोक्ष कर्म नशि आठ जी ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीं जिन भवन पूजा नं. ८१

छन्द चौपया वृत–विद्युन्माली मेरु दक्षिण दिशि भरत कहावै ।
तामें आरज खण्ड तीन चौबीसी पावै ।।
तिनकी हम आह्वान करैं इस थानक मांहीं ।
तिस थल हमरी शक्ति कछू जाने की नांहीं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड मांहि भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चोबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जोगीरासा—सलिल लिया नंदा वापी से, झारी हेम भराई ।
मन वच तन को स्थिर करके, धारा तीन ढराई ।।
पंचम गिरि के भरत क्षेत्र में तीन चौबीसी ध्याऊं ।
तिनि के चरन कमल को पूजूं नाचि गाइ सिर नाऊं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड मांहि भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीनों चोबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः जलम् ।

कुमकुम केसरि दोऊ चन्दन, जल के संग घिसाई ।
छेपि चरन शीतलता पाने को, मैं आस लगाई ।। पंचम गिरि···चंदनं
तंदुल चोखे अमित अनोखे, अर्जुन थाल भराई ।
अक्षय पद पावन हित, प्रभु पद आगे दिये चढ़ाई ।। पंचम गिरि···अक्षतं
पच रंग सुमना लेकर के, डाली खूब सजाई ।
अति उमंग से जिनवर चरणा, छेपि दिये सिरनाई ।। पंचम गिरि···पुष्पं
सत छिद्रा, रसगुल्ला चमचम, बरफी नई बनाई ।
थाल सजाकर भली भांति से, जिनपद दई चढ़ाई ।। पंचम गिरि···नैवेद्यं

दीप रतनमय त्यार कराके, जगमग ज्योति जगाई ।
दोऊ हाथ से आरती करके, चरणनि दिया चढ़ाई ।। पंचम गिरि···दीपं

बहुत सुगंधित चंदन आदिक दस वस्तु मंगवाई ।
कूटि जुगति से धूप बनाकर, अग्नि माहि खिपाई ।। पंचम गिरि···धूपं

षट रितु केरे फल बहुतेरे, छांटि छांटि के लाई ।
मटकि मटकि कें श्री जिन आगे भेंट किये हर्षाई ।। पंचम गिरि···फलं

सलि लादिक वसु द्रव्य मनोहर, एकम एक कराई ।
अर्घ बनाकर, थाल उठाकर जिन पद मांहि चढ़ाई ।। पंचम गिरि···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पंचम गिरि दक्षिण दिसा, भरत क्षेत्र मन लाय ।
भूत काल के मैं जजूं, चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा, भरत क्षेत्र के मध्य आर्य खण्ड मांहि भूत काल के चोबीस जिनेन्द्राय क्रम से १. श्री पद्म चन्द्र २. श्री रत्नांग ३. श्री आयोगिक ४. श्री सर्वार्थ ५. श्री ऋषीनाथ ६. श्री हरिचन्द्र ७. श्री गणधिप ८. श्री पारत्री ९. श्री ब्रह्मनाथ १०. श्री मुनीन्द्र ११. श्री दीपक १२. श्री राज ऋषी १३. श्री विसाख १४. श्री आनन्दित १५. श्री रविस्वामी १६. श्री सोमदत्त १७. श्री जयस्वामी १८. श्री मोक्षनाथ १९. श्री अग्नभानि २०. श्री धनुषांग २१. श्री रोमांचिक २२. श्री मुक्तिनाथ २३. श्री प्रसिद्ध नाथ २४· श्री जिनेश सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

पंचम गिरि दक्षिण दिसा, भरत क्षेत्र मन लाय ।
वर्तमान के मैं जजूं, चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा, भरत क्षेत्र के मध्य आर्य खण्ड मांहि वर्तमान के चोबीस जिनेन्द्राय क्रम से १. श्री पद्म प्रभ २. श्री प्रभांकर ३. श्री बलनाथ ४. श्री योगेश्वर ५. श्री शूक्ष्मांग ६. श्री चलातीत ७. श्री मृगांक ८. श्री बालचन्द्र ९. श्री परभांग १०. श्री निषेधिक ११. श्री पाप ग्रह १२. श्री सुस्वामी १३. श्री मुक्तिचन्द्र १४. श्री अप्रासिक १५. श्री नन्दि तट १६. श्री मालाधारी १७. श्री सुसंजात १८. श्री मलयसिंह १९. श्री अक्षोहर २०. श्री देवधर २१ श्री प्रयच्छत २२. श्री आगामिक २३. श्री विनीक २४. श्री रत्ननन्द सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

पंचम गिरि दक्षिण दिसा, भरत क्षेत्र मन लाय ।
होनहार के मैं जजूं, चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा, भरत क्षेत्र के मध्य आर्य खण्ड मांहि भविष्य काल के चोबीसी जिनेन्द्राय क्रम से १. श्री प्रभावक २. श्री विनिन्द्र ३. श्री स्वभाव ४. श्री अगस्त्य ५. श्री धनदत्त ६. श्री पौरव ७. श्री जिनदत्त ८. श्री पार्श्वनाथ ९. श्री मुनि सिधु १०. श्री आस्तिक ११. श्री भवानिक १२. श्री नृपनाथ १३. श्री नारायण १४. श्री प्रसमाक १५. श्री भूपती १६. श्री दृष्टान्त १७. श्री भवभीरु १८. श्री नन्दन १९, श्री भार्गव २०. श्री परावस २१. श्री किल्विषाद २२. श्री नववासी २३. श्री भरतेश २४. श्री दिनकर सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली सों दक्षिण, आरज भरत मंझार ।
तीन चौबीसी की गुणों, जयमाला सुखकार ।।

छंद बेसरी—पुष्करार्द्ध पश्चिम चित देना, मध्य भाग ताके लखि लेना ।
विद्युन्माली मेरु पिछानो, तासों दक्षिण दिशि फिर जानौं ।।१।।
क्षेत्र सु भरत बसं मधि भाई, तामें आरज खण्ड कहाई ।
चौबीसी तीनों तिस थाना, भूत भविष्यत वरत जु माना ।।२।।
पद्मचन्द्र जिन प्रथम कहावै, श्री रत्नांग लिये मन भावै ।
नमू अयोगिक नाथ जिनेशा, श्री सर्वारथ नमत सुरेशा ।।३।।
ब्रह्मनाथ पद शीष नमावूं, नंदि सुनीन्द्र मुक्तिपुर जावूं ।
दीपक जिन केवल पद स्वामी, राज ऋषी जिन अन्तर्यामी ।।४।।
नमू विसाख तिहूं जगराई, आनन्दित जग ताप बुझाई ।
रवि स्वामी मिथ्यात्व निवारयो, सोमदत्त थिरता पद धारयो ।।५।।
जय स्वामी आठों रिपु जीते, मोक्षनाथ भव भ्रमण वितीते ।
अग्रमानि गुण अगम धरावै, श्री धनुषांग अनंग नशावै ।।६।।

रोमांचिक जिन तिहुं जग त्राता, मुक्तिनाथ वन्दू शिवदाता ।
नमू प्रसिद्ध सिद्धि के करता, नमू जिनेश सकल दुःख हरता ।।७।।
पद्म प्रभु बन्दू सुख राशी, नमू प्रभांकर भव स्थिति नाशी ।
श्री बल नाथ अनन्त बली जी, योगेश्वर जिन कुमति दली जी ।।८।।
श्री सूक्ष्मांग सकल सुखदाई, चलातीत निज सम्पति पाई ।
नमू मृगांक तिहूं जग चंदा, बालचन्द्र नाशत जग फन्दा ।।९।।
परत्रांग भव भ्रमण निवारण, नमू निषेधिक कर्म विद्रारण ।
पाप ग्रहण सब पाप निवारैं, सु स्नामी भवि काज सुधारैं ।।१०।।
मुक्ति चन्द्र जिन केवल ज्ञानी, अप्रासिक वन्दू शिव थानी
नन्दी तट भव सिंधु तिरावै, मालाधारी कर्म नशावै ।।११।।
सु संजात नमू जग भूपा, मलयसिंह पद देत अरूपा ।
अक्षोहर आठों भट चूरे, वन्दू देवंधर जी सूरे ।।१२।।
नमू प्रयच्छत इच्छत दाता, आगामिक जिन हरत असाता ।
श्री विनीक वन्दू जग भाई, रत्नानन्द मुक्ति पद दाई ।।१३।।
नमू प्रभावक तिहूं जग ईशा, श्री विनेन्द्र नमूं निज शीषा ।
नमू स्वभाव भाव सुध करि कैं, दिनकर नमू शल्य त्रय हरि कैं ।।१४।।
नमू अगस्य भवोदधि शोषण, श्री धनदत्त भव्य जन पोषण ।
पोरव मोह महातम हारी, श्री जिनदत्त वरी शिव नारी ।।१५।।
पार्श्वनाथ जिन जग विख्याता, श्री मुनि सिंधु नमूं सुख दाता ।
आस्तिक जिनवर धर्म प्रकाश्यौ, भवानीक तम मोह विनाश्यौ ।।१६।।
श्री नृपनाथ जगत सिरदारा, नारायण नाशत संसारा ।
श्री प्रसमांक चरण सिर नावूं, भूपति जिन उर मांहि बसावूं ।।१७।।
श्री दृष्टांग चरण चित देवूं, भव भीरू नमि शिवपुर लेवूं ।
नंदन तिहुं जग आनन्द दाई, भार्गव बन्दू मन वच काई ।।१८।।

पारावल जग त्रास मिटावै, किल्विषाद सब दुःख नशावै ।
गववासी पंचम गति दाता, श्री भरतेश तिहुं जग त्राता ।।१९।।
तिस थल तीन चौवीसी ये ही, 'नेम' नमें उर चाहि धरे ही ।
निज गुण की मोहि संपति दीजै, दुःखदायक वसु कर्म हरीजै ।।२०।।

दोहा—विद्युन्माली दक्षिण दिशि, भरत क्षेत्र में जाय ।
चौबीसी तीनों चरण, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की दक्षिण भरत क्षेत्र में भूत भविष्यत वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

चौपाया—विद्युन्माली मेरु दक्षिण दिशि, भरत कहावै ।
तामें आरज खण्ड, चौबीसी तीनों पावै ।।
तिनको भवि जन पाठ करै, उर हरषि धरा कै ।
ते जावे शिव थान, जगत दुःख दूर करा कै ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्मालो मेरु की पश्चिम विदेह में आठ वक्षार गिरि शीष आठ जिन भवन पूजा नं. ८२

दोहा—विद्युन्मालो अपर दिसि, वसु वक्षार विदेह ।
आठ जिनालय की करूं, आह्वानन धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह में आठ वक्षार गिर शीष आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रवतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द अडिल्ल—क्षीरो दधि को नीर मधुर शीतल भरूं ।
कंचन झारी लेय हरषि धारा करूं ।।
विद्युन्माली मेरु अपर दिश आठ जी ।
पूजूं जिन वक्षार, आठ जिन ठाठ जी ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहन में आठ वक्षार गिरि शीष आठ श्री भवनेभ्यो नमः जलम् ।

चन्दन केशर लेय कपूर मिलाय के ।
घसि कंचन के जाम धरूं हरषाय के ।। विद्युन्माली मेरु···चंदनं
शशि सम तन्दुल श्वेत अखंडित लीजिये ।
थाल कनक जल धोय पुंज गुण दीजिये ।। विद्युन्माली मेरु···अक्षतं
बहु तिधि प्रासुक फूल सुगंधित लाइये ।
श्री जिन भेंट धराय मदन मिटवाइये ।। विद्युन्माली मेरु···पुष्पं
षट रस मय पकवान तुरत बनवाय के ।
चामी करके थाल धरे हरषाय के ।। विद्युन्माली मेरु···नैवेद्यं
मणिमय दीपक हेम रकाबी में धरूं ।
मेटि मिथ्यातम नाथ अरज तुमसे करूं ।। विद्युन्माली मेरु···दीपं
कर अगरादिक धूप अग्नि घट में दहूं ।
आठों देहुं जलाय नाथ इतनी चहुं ।। विद्युन्माली···धूपं
विविध प्रकार पुनीत धरूं फल भेंट जी ।
कर्म शुभाशुभ दोय तणों फल मेट जी ।। विद्युन्माली···फलं
जल फल सब गिण आठ हेम थाली धरूं ।
आठों नाशन काज अरघ इस विधि करूं ।। विद्युन्माली मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

करूं वन्दना रे मैं, वसु वक्षार महान की ।
यही डगर है रे अपने, अनुपम शिवथान की ।।टेक।।
निषधाचल सीतोदा के विच, है पहला वक्षार महा ।
सिद्धकूट अरु तीन कूट से, कंचन मय है शोभ रहा ।।
छटा निराली है, इस गिरिवर श्रद्धावानकी···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ श्रद्धावान वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालय स्थित श्री भवनाय नमःअर्घम् ।। १ ।।

दो विभंग सरिताओं के मधि, दूजा गिरि वक्षार लसे ।
प्रथम कूट है प्रमुख जिनालय, शेष तीन में देव बसे ।।
मणिमय रचना रे, इस दूजे विजटावान की···करूं वन्दना···रे

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ विजटावान वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालय स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

आसी विष है नाम तीसरा, सिर पर चार कूट सुन्दर ।
पहिले में सिद्धकूट मनोहर, तीन मांहि भी जिन मंदिर ।।
बिम्ब विराजे रे सत एक, आठ भगवान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ आशीविष वृक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालय स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

नाम सुखावह चौथे गिरि का, भूतारण्य निकट राजे ।
समव शरण सारी रचनायुत, सिद्धकूट सुखमय छाजे ।।
धुनी छाइ रही है, सुर ललनाओं के गान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं विन्द्युमाली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ सुखावह वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालय स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

नीलाचल की तरफ पंचमा, चन्द्रमाल वक्षार है ।
बीस लाख है मील ऊंचाई, सिद्धकूट मनहार है ।।
सभी सुलभता है निज, आतम के कल्यान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ चन्द्रमाल वक्षार पर्वत स्थित सिद्धकूट जिनालयस्थ श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

सूर्यमाल वक्षार अनोखा, सूरज दीप्ति लजाता है ।
जो वन्दे तन मन से उसका, सब कल मल नशि जाता है ।।
कवि क्या वरणे रे, शक्ती नाही बतलान की···करूं बन्दना रे···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालो मेरु सम्बन्धो पश्चिम विदेहस्थ सूर्यमाल वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालयस्थ श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

नागमाल वक्षार सातमा, ऊपर सिद्धकूट भारी ।
देव देवियां पूजे ध्यावे, तथा मुनी रिद्धी धारी ।।
धन्य धन्य है, रे वह अनुपम घड़ी मिलान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ नागमाल वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालयस्थ श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

अन्तिम है वक्षार अपर में, देवमाल जानो भाई ।
चार कूट की सारी रचना, राजि रहे श्री जिनराई ।।
लगन लगाकर के, जय बोलो श्री जिन थानकी···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ देवमाल वक्षार पर्वत सिद्धकूट जिनालयस्थ श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

विद्युन्माली मेरु अपर में, जहां जहां सुर वासों में ।
मैं वन्दू पूजूं सब ही थल, श्री जिन मंदिर खासों में ।।
भक्ती पाऊं रे, नहीं चाह और सामान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी अपर दिशा में जहां-जहां भी सूर वास है उन सब ही स्थलों में सर्व श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

नमूं यशोधर तीर्थङ्कर जी, अजित वीर्य को सिर नाऊं ।
और भये आगे होवेंगे, सबके चरणों बलि जाऊं ।।
सब जय बोलो रे, इन विद्यमान भगवान की···करूं वन्दना रे···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की अपर दिश में सीतोदा के दोनों तरफ आठ आठ देशों सम्बन्धी श्री यशोधर और श्री अजित वीर्य तथा जो होचु के हैं और भविष्य में होवेंगे उन सब जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली मेरु की, अपर आठ वक्षार।
शीष आठ जिन भवन की, जयमाला उर धार ॥

अहो जगत गुरु—पश्चिम दिश सुखराज, तीजो द्वीप कहावै।
विद्युन्माली मेरु, ताके मध्य लसावै ॥१॥
तासों पश्चिम जाय, क्षेत्र विदेह लखीजे।
आठ अचल वक्षार, भविजन चित में दीजे ॥२॥
योजन दोय हजार, चौड़ाई चित देवो।
देश बराबर भव्य, लम्बाई लखि लेवो ॥३॥
हय मुख सम आकार, कंचन वर्ण धरावै।
सिर पै कूट जु चार, देखत मन हरषावै ॥४॥
सीतोदा के पासि सिद्धकूट इक जानौं।
आठन के सिर आठ, इस विधि भवि मन आनौं ॥५॥
शेष कूट त्रय मांहि, व्यन्तर सुर का वासा।
निज परिवार समेत नगर बसै तहां खासा ॥६॥
सिद्धकूट सिर जानि, मन्दिर श्री जिनजी का।
कंचन मणिमय मानि, सोहत है अति नीका ॥७॥
रचना बहु विधि पाय, श्री जिन मन्दिर मांही।
मोसूं सारी बात, कहत बणै कछु नाहीं ॥८॥
सब सुणने की चाहि, जो उर माहि धरावो।
ग्रंथ त्रैलोक्य जु सार, आगम तुरत बचावो ॥९॥
तिस थल आवत इन्द्र, सुर शची संग मिलाकै।
अरु चारण मुनिराज, खगधर हरष बढ़ाकै ॥१०॥

पूजन काजै द्रव्य, वसु विधि उत्तम लावै ।
हरषि हरषि गुण गाय, श्री जिन चरण चढ़ावै ।।११।।
इस थल भाव धराय, 'नेम' नमें निज शीषा ।
मोकों शिव थल वास, दीजै तिहुं जग ईसा ।।१२।।

दोहा—विद्युन्माली अपर दिश, वसु वक्षार कहाय ।
तिन पै वसु जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

चौपाई—विद्युन्माली अपर विदेह, वसु वक्षार आठ जिन गेह ।
पाठ करें तिनको उर धारि, तासों प्रीति करे शिव नारि ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह क्षैत्र मध्य षोडस रूपाचल शीष षोडस श्री जिन भवन पूजा नं. ८३

छन्द अडिल्ल—विद्युन्माली मेरु अपर दिश की मही ।
सोल खगाचल गेह जिनेश्वर के सही ।।
तिन सोलह की ह्यां जु करं आह्वानना ।
पूजन काजै काय वचन कर शुद्ध मना ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह क्षेत्र षोडस रूपाचल शीष षोडश श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जोगीरासा—निर्मल जल सीतोदा केरी भरि कंचन की झारी ।
जन्म जरादिक नाशन काजै तुम पद ढोक हमारी ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिश पश्चिम क्षैत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडस जिनवर गेहा ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम दिशि विदेह क्षेत्रन बीच षोडश रूपाचल सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्

केशर घोलि कर्पूर मिलाकर चन्दन बहुरि घसावें ।
भव आताप मिटावन कारण कंचन ढाम धरावै ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडस जिनवर गेहा ।। ···चंदनं

तंदुल उज्ज्वल जल तैं धोकर तुम गुण पुंज दिखाता ।
अक्षय पद की प्राप्ती हमको देहु दयानिधि दाता ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडस जिनवर गेहा ।। ···अक्षतं

दसधा कल्प तरु के प्रासुक फूल सुगन्धित लाऊं ।
काम वान दुःख दूरि करीजे श्री जिन तुम गुण गावूं ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडस जिनवर गेहा ।। ···पुष्पं

नाना भांति कियो शुभ नेवज षटरस मय भरि थाली ।
तुम चरणाबुज भेट धरा करि भूख व्यथा हम टाली ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडस जिनवर गेहा ।। ···नैवेद्यं

दीप रतनमय कनक रकाबी लेकरि तुम ढिग आयो ।
मोह महातम बेग मिटावौ हम दुःख बहुविधि पायो ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडश जिनवर गेहा ।। ···दीपं

कष्ट करम दुःख देत घनेरौ मोको कायर कीनौ ।
तातैं तुम ढिग धूप सुगन्धी पावक घट धर दीनौ ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडश जिनवर गेहा ।। ···धूपं

मुक्ति महाफल दायक जग में तुमको जिनवर जानै ।
ता कारण हम लोंग सुपारी श्रीफल आदिक आनै ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडश जिनवर गेहा ।। ···फलं
कंचन थाल भरे जल आदिक फल लौं लेय पुनीता ।
अर्घ बनाकर तुम ढिग धरता ततक्षण भव दुःख बीता ।।
विद्युन्माली मेरु तणी दिशि पश्चिम क्षेत्र विदेहा ।
सोल खगाचल के सिर पूजूं षोडश जिनवर गेहा ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पदमा देस सुहावना, रूपाचल मधि जान ।
सिद्धकूट जिन भवन की, पूज करूं धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी पदमादेस मध्य रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

देस सु पदमा के विषै, रूपाचल सो भंत ।
सिद्धकूट में, मैं करूं, पूजा श्री अरिहंत ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी सु पदमा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

देस महा पदमा विषै, रूपाचल तिष्ठाय ।
शीष श्री सिद्धकूट में, पूजूं श्री जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी महा पदमा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

पद्म कावती देश में, रूपाचल मनहार ।
सिद्धकूट में जायकर, पूजूं जिन आगार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी पद्म कावती देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

संखा देश मनोहरा, रूपाचल मधि जान।
सिद्धकूट में जायकर, पूजूं श्री भगवान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी संखा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

नलिना देस विषै, महा रूपाचल अभिराम।
ता ऊपर सिद्धकूट में, प्रतिमा जजूं ललाम ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी नलिन देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

कुमुदा देस प्रसिद्ध है, रूपाचल ता बीच।
सिद्धकूट के पूजते, मिटे जगत की कीच ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी कुमुदा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

सरिता देस महान है, रूपाचल सुखकार।
ता पर श्री सिद्धकूट को, पूजूं बारम्बार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी सरिता देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

वप्रा देस पिछानिये, रूपाचल हितकार।
ऊपर पूजूं जिन भवन, सिद्धकूट आगार ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी वप्रा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ९ ।।

देस सु वप्रा मध्य में, रूपाचल सुखकार।
ता ऊपर सिद्धकूट में, पूजूं श्री जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह सम्बन्धी सुवप्रा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १० ।।

देस महा वप्रा बसा, रूपाचल सिर नाम ।
सिद्धकूट पूजा करूं, छोड़ि और सब काम ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहस्थ महा वप्रादेश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ११ ।।

वप्र कावती देश में, रूपाचल सु लसंत ।
सिद्धकूट के मैं जजूं, सतक आठ भगवंत ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहस्थ वप्र कावती देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १२ ।।

गंधा देस विषै, बना रूपाचल विख्यात ।
ताके ऊपर मैं जजूं, सिद्धकूट अवदात ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहस्थ गंधा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १३ ।।

देस सुगंधा है सही, वीच रूपगिरी जान ।
ता ऊपर सिद्धकूट में, पूजूं जिन भगवान ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहस्थ सुगन्धा देश मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १४ ।।

देश गंधिला वीच में, रूपाचल शोभाय ।
ताके सिर सिद्धकूट में, पूजूं श्री जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेहस्थ देश गन्धीला मध्ये रूपाचल पर सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १५ ।।

गंध मालिनी देस, बिच रूपाचल मन हरण ।
सिद्धकूट में पूजहूं, श्री जिन तारन तरण ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेहस्थ गन्धमालिनी देश मध्य विजयार्ध पर्वत सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १६ ।।

भुते योजन ऊंच दस, विद्याधर का वास ।
फिर दस योजन ऊपरे, सुर व्यन्तर आवास ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पश्चिम विदेह में सोलह देश मध्य सोलह रूपाचल पर्वतों की दस योजन ऊँचाई पर दक्षिण उत्तर दोनों तरफ विद्याधरों के एक सौ दस नगर तथा बीस योजन की ऊँचाई पर व्यन्तर देवों के दक्षिण उत्तर दोनों तरफ आवासों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १७ ।।

मूल भाग गिरि नील से, निकसी सरिता दोय ।
उपकारक मय दोऊ तट, जिनगृह बन्दू सोय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पश्चिम विदेह में नीलाचल के मूल भाग से आठ देश सम्बन्धी सोलह नदियां रक्तरक्तोदा निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होती हुई सीतोदा नदी में आकर मिली तथा तिनकी सहायक नदियाँ दो लाख चोबीस हजार इस सब नदियों के दोनों तरफ व्यन्तर देवो के आवास में स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

मूल भाग गिरि निषध से, निकसी सरिता दोय ।
उपकारक मय दोऊ तट, जिन गृह बन्दू सोय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के पश्चिम विदेह में मूल भाग निषिधाचल से आठ देश सम्बन्धी सोलह नदियाँ गंगा सिन्धू निकलकर रूपाचल की गुफाओं में होती हुई सीतोदा नदी में मिली तथा तिनकी सहायक नदियाँ दो लाख चौबीस हजार इन सब नदियों के दोनों तरफ व्यन्तर देवों के आवासों में स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १९ ।।

म्लेच्छ खंड के मध्य में, वृषभाचल के पास ।
आर्य खंड एक नगर में, बन्दू जिनगृह खास ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु के पश्चिम विदेह म्लेच्छ खण्ड के मध्य में वृषभाचल पर्वत सम्बन्धी तथा आर्य खण्ड की एक प्रसिद्ध नगरी जिसमें महा पुरुष पैदा होते हैं। ऐसे इन सोलह देश सम्बन्धी व्यन्तर आवासों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । १०८ (बार)

जयमाला

दोहा—दर्श ज्ञान सुख वीर्य ये, चार अनन्त प्रमाण ।
मेरे भी गुण पूरिये, चहुंगति से कर त्राण ।।

आलोचना चाल—पुष्करवर अपर कहावे, विद्युंन्माली गिरि थावे।
ता गिरि की अपर दिशा में, सोलह विजयारध तामें ॥१॥
सब में आरज खंड इक है, तीर्थङ्कर जनम सतत है।
वे शाश्वत तीर्थ करंता, निज विहर माण भगवंता ॥२॥
भविजन को निज सुख देते, भव मय संकट हर लेते।
यह सुनमें शरणा आयो, भव भव दुःख से अकुलायो ॥३॥
हे नाथ ! अरज इक मेरी, सुनिये नहि करिये देरी।
इस जग में भ्रमण करायो, प्रभू काल अनंत गमायो ॥४॥
चिरकाल निगोद निवासा, मुश्किल से हुआ निकासा।
पृथ्वी जल अग्नि पवन में, तनु धर धर कियो मरण मैं ॥५॥
जब वनस्पति तनु पायो, नाना विधि स्वांग धरायो।
कहिं फूल फलों को ढेरी, कहिं कोंपल पत्र घनेरी ॥६॥
कोई काटे रोंदें खाये, कोई भाजी साग पकाये।
कहिं दमड़ी मूल्य बिकाये, कहिं करवत चोर दुखाये ॥७॥
जो दुःख सहे अनजाने, नहिं मुख से जायें बखाने।
अति कठिन कठिन त्रस हुवो, लट शंख तनू धर मूवो ॥८॥
चिंवटी खटमल तन धारे, बिच्छु आदि धरे अवतारे।
मधु मक्खी भ्रमर जुहूवो, तन धर धर पुनि पुनि मूवो ॥९॥
पंचेन्द्रिय पशु तन धार्‌यो, कहिं क्रूर पशू हन मार्‌यो।
संक्लेश भाव से मर्‌यो, तब नरक गती में पर्‌यो ॥१०॥
दुःख भोगे तहां अनंता, तुम जानत हो भगवंता।
नर योनि लई जब मैंने, तहं भोगे भोग सु मैंने ॥११॥
फिर भी नहिं साता पायो, नाना विधि कष्ट उठायो।
कहिं इष्ट वियोग सह्यो है, अनिष्ट संयोग भयो है ॥१२॥

कहिं धन जन नष्ट हुये हैं, कहिं परिजन दुष्ट हुये हैं।
कहिं तन में व्याधि व्यथा है, समरथ अन्याय रचा है ॥१३॥
सुर योनि लिया भी दुःखी, समकित बिन कभी न सुखी।
भवनत्रिक में मन व्याधी, कर्मनि की आधि उपाधी ॥१४॥
इस विध चहुं गति दुख पायो, सुख लेश निमित भरमायो।
जिनराज कृपा तुम पाई, समकित निधि कर में आई ॥१५॥
जब तक प्रभू मुक्ति न होवे, यह सम्यक रतन न खोवे।
बस ये ही अरज सुनीजे, अन्तिम सु समाधी कीजे ॥१६॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की पश्चिम विदेह में सोलह विजयार्ध पर्वत स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो जयमाला अर्घं म्।

चौपई—विद्युन्माली अपर विदेह, रूपाचल षोडश जिन गेह।
पाठ करै भविजन जो कोय, अविचल सम्पत्ति विलसे सोय ॥ इत्यार्शीवाद

श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवन पूजा नं. ८४

छन्द बेसरी—विद्युन्माली उत्तर जाना, तीन कुलाचल त्रय जिन थाना।
तिनको हम आह्वान करावैं, इस थल जिन पद शीष नमावैं ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपया—अति ही निर्मल नीर मधुर ले कंचन झारी।
तुम ढिग धारा देत रोग त्रय दुःख निवारी ॥
विद्युन्माली मेरु उत्तर दिशि तीन कुलाचल।
तिनके सिर जिनराज भवन त्रय पूजूं इस थल ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष तीन श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

केसर चन्दन धोल कनक के प्याले लेवूं ।
तुम पद भेट धराय भव तप दूर नशेवूं ॥ विद्युन्माली मेरु···चंदनं

तन्दुल कोमल हेर अखण्डित उज्ज्वल लेवूं ।
तुम गुण पुंज धराय अक्षय थल जाय बसेवूं ॥ विद्युन्माली रुमे···अक्षतं

कल्पतरु के फूल सुगन्धित प्रासुक लीजै ।
धरि तुम पद की भेंट मदन दुःख दूर करीजै ॥ विद्युन्माल मेरु···पुष्पं

नेवज नाना भांति तुरत बनवाय लिये जी ।
क्षुधा नाशने काज भेट तुम आय किये जी ॥ विद्युन्माली मेरु···नैवैद्यं

मोह महातम छाय मुक्ति मग रोक दियो जी ।
ताके नाशन काज नाथ हम दीप लियो जी ॥ विद्युन्माली मेरु···दीपं

अष्ट कर्म दुःख देत चार गति मांहि फिरावे ।
तातें निर्मल धूप लेय हम आनि खिपावें ॥ विद्युन्माली मेरु···धूपं

श्रीफल आदिक भेट धरूं प्रभु तुमरे चरणां ।
शिव फल की मम चाहि भई सो पूरी करणां ॥ विद्युन्माली मेरु···फलं

कर्म लुटेरे जीत आप शिव पंथ जतायौ ।
याते ले नीरादि आठ हम अर्घ बनायो ॥ विद्युन्माली मेरु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हे कृपा सिन्धु तेरी छवि मनहरी ।
हम यहां अर्घ ले चरण पूजा करी ॥ टेक

द्वीप पुष्कर अर्घ में गिरि नील पर जिन धाम है ।
कूट नव में से प्रथम में सिद्धकूट ललाम है ॥

केसरी तालाब मधि कीर्ती सुरीका ठाम है।
दोय सरिता उभय तट व्यंतर अमर विश्राम है॥
करे पूजन सुरासुर खचर खेचरी हे कृपा सिन्धु तेरी···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु उत्तर दिशा में तीन कुलाचल में से नील गिरि कुलाचल पर नवकूट जिनमें प्रथम में सिद्धकूट मन्दिर तथा बाकी आठ में व्यन्तर स्थान सम्बन्धी तथा केसरी नाम के तालाब के बीच में कमल पर कीर्ती देवी का स्थान सम्बन्धी तथा तालाब के दोनों द्वारों से दो नदियाँ निकली उनकी सहायक नदियाँ एक लाख चालीस हजार नदीयों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

नाम रुक्मी दूसरा कुल गिरि महा रमणीक है।
मध्य में तालाब सुन्दर जो महा पुंडरीक है॥
बुद्धि देवी के कमल पर घर बने रमणीक है।
दोय नदियों के उभय तट जिन भवन बंदीक है॥
तहां साधू विचरते गगन गोचरी हे कृपा सिन्धु तेरी···

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशा में रुकमी नाम कुलाचल पर्वत पर आठ कूटों में से पूरब में सिद्धकूट मन्दिर बाकी सात में व्यन्तर देव स्थानक सम्बन्धी तथा महा पुंडरीक तालाब के मध्य में कमल पर बुद्धि देवी का महल सम्बन्धी तथा तालाब से दो नदी निकली उनकी सहायक चोरासी हजार नदीयों के दोनों तटों पर सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

हे कुलाचल तोसरा सिखरी महा सुखकार है।
बीच में पुंडरीक द्रह पर लक्ष्मी परिवार है॥
तीन नदियों के निकसने के सु तीनों द्वार है।
कूट ग्यारह है प्रथम में सिद्धकूट सुखार है॥
हेगी रचना अधिक जाइ ना उच्चरी। हे कृपा सिन्धु तेरी···

ॐ ह्रीं विद्युन्मालो मेरु की उत्तर दिशा में सिखरी पर्वत पर ग्यारह कूटों में से पहले में सिद्धकूट मन्दिर बाकी दस में व्यन्तर देवों के थानक सम्बन्धी तथा गिर के बीच में पुंडरीक तालाब में कमल पर लक्ष्मी देवी के महल सम्बन्धी तथा तालाब के तीनों द्वार से तीन नदियाँ निकली तिनकी छप्पन हजार सहायक नदियाँ सब नदियों के दोनों तट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

भोग भूमी तीन जो इन तीन गिरि के बीच में।
नाभि गिरि दो पर्वतों के जिन भवन नजदीक में॥
सात नदियों के उभय तट व्यंतरों के थान में।
और भी जहां हो जिनालय रहे मेरे ध्यान में॥
पार हो जाय नैया भमर में परी हे कृपा सिन्धु तेरी···

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशा में तीन कुलाचलों के बीच बीच में उत्तम-मध्यम-जघन्य तीनों भोग भूमी सम्बन्धी तथा दो नाभि गिरि सम्बन्धी तथा सातो नदियो समुद्र में मिली तथा द्वीप की वेदीका सम्बन्धी तथा और जहां-जहाँ भी व्यन्तर स्थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—तुम गुण गण अति अगम है, भनत न पावे पार।
कवी अल्प मति क्या कहै, नमू त्रयोग सम्हार॥

चाल छंद—जग पूज परम गुरु नामी, भवतारक अन्तरयामी।
कोई ना जग में अस संता, तुम गुण कहि पावे अंता॥१॥
वसु सहस नाम के धारी, चरनों में धोक हमारी।
चतुरानन छवि जगदीसा, सो इन्द्र नमावें सीसा॥२॥
सुर भवन पती चालीसा, व्यन्तर जानो बत्तीसा।
स्वर्गन के चौविस इन्दा, ज्योतिसो सुर्य अस चंदा॥३॥
एक नृप एक सिंह सुजानो, एम सो इन्दर पहिचानो।
भये नयन सफल छवि, देखत रसना भई गुण गण वरणत॥४॥
सफला मन ध्यान धरंते, दोऊ कर चरणनि पर संते।
वसु कर्म किये तुम नासा, कीना प्रभु अविचल वासा॥५॥
चौंतिस अतिषय के धारी, वसु प्रातिहार्य मन हारी।
तुम समव शरण के मांही, दिन राति भेद है नांही॥६॥

नर देव जिते भी आवे, उस ही में सभी समावे ।
भय मोह विषय अभिलाषा, रति द्वेष न भूख पियासा ॥७॥
नहीं खांसी, छींक डकारी, निन्द्रा न क्लेश बीमारी ।
तुम अजर अमर पद दाता, त्रिभुवन दुःख हर विख्याता ॥८॥
दूजी तरकीब न कोई, कटि जाय कर्म मम द्रोही ।
पूजन पद कमल तुम्हारे, शत्रु होई मित्र हमारे ॥९॥
चक्री खग इन्दर पदवी, खुद आन मिले ये सब ही ।
क्रमDसे शिव पद मिल जावे, कछु शंसय नाही लखावे ॥१०॥
विन नीर बिकल जिमि मीना, तिमि में दुखिया बहु दीना ।
मम नाव भंवर मंझधारा, तुम खेई लगाओ पारा ॥११॥
मेरे अवगुण न चितारो, प्रभु अपना विरद सम्हारो ।
तुम मूल सु गुण छया लीसा, सो भिन्न भिन्न वरणीसा ॥१२॥
दस अतिशय जनमत आये, दस केवल ज्ञान कहाये ।
देवनि कृत चौदह जानो, इमि सब चौतीस बखानो ॥१३॥
वसु प्रतिहार्य तुम सोहे, छवि समवशरण मन मोहे ।
है तरु अशोक तुम पासा, त्रय सिंहासन मणि खासा ॥१४॥
ऊपर त्रय छत्र फिरंता, सुर चौंसठि चमर ढुरंता ।
सुर फूल विविध वर्षावें, अरु दुंदभि शब्द करावें ॥१५॥
सब जीवन को सुखकारी, धुनि दिव्य खिरि रही प्यारी ।
भामंडल है पिछवारी, सुर बोलि रहे जयकारी ॥१६॥
अन अंत चतुष्टय चारी, रचना अद्भुत मनहारी ।
बारह कोठों में ज्ञानी, धुनि समझि रहे निज बानी ॥१७॥
पहिले कोठे के मांही, मुनि गण धरादि तिष्ठांहि ।

दूजे कोठे में छाजें, स्वर्गों की देवि विराजें ॥१८॥
तीजे कोठे में जानो, आर्या श्रावकनी मानों।
चौथे में ज्योतिषी देवी, पंचम में व्यन्तर देवी ॥१९॥
छट्ठें में बैठक किनिकी, देवियां भवन वासि निकी।
सुर भवन पति सप्तम में, व्यन्तर जानो अष्टम में।
सुर ज्योतिस है नव मांही, दस में सुर कल्प रहा ही ॥२०॥
ग्यारम में मानुष जानो, द्वादश में पशु पिछानो।
इमि बारह सभा मझारी, सब बैठत हैं सुखकारी ॥२१॥
यह बारह कोठे जानो, चऊ विदिशा में पहिचानो।
बिच तीनि पीठ के ऊपर, है गंध कुटी में जिनवर ॥२२॥
है धन्य वही भवि प्रानी, जो सुनि रहे हैं जिनवानी।
हम यहां से चित्त लगावें, तो भव सागर तरि जावें ॥२३॥
यह जयमाला जिनराई, मुनि श्रुतसागर लिखि गाई।
इस पर जो श्रद्धा लावे, वो ही शिव सुन्दरी पावै ॥२४॥

दोहा—विद्युन्माली उत्तर दिश, तीन कुलाचल पाय।
शीष तीन जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि तीन कुलाचल शीष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपई—विद्युन्माली उत्तर जाय, कुल गिर तीन भवन जिनराय।
भविजन करत तिन्हों के पाठ, सो ही नाशं करम जु आठ ॥ इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवन पूजा नं. ८५

चौपई—विद्युन्माली सों उत्तराय, ऐरावत रजताचल पाय।
शीष जिनेश्वर एक मकान, आह्वानन करतो इस थान ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल शीष श्री जिन भवनाय नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

विद्युन्माली उत्तर दिशि में ऐरावत में जाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।।टेक।।

पहली पूज करूं जल सेती, क्षीर समुद्र का लाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।।
विद्युन्माली उत्तर दिसि में, ऐरावत में जाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु के उत्तर दिसि ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल स्थित श्री जिन भवनाय नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

दूजो पूज करूं चन्दन से, मलियागिर घिसवाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···चन्दनम्
तिसरी पूज करूं तन्दुल से, हीरा भोती लाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···अक्षतं
चौथी पूज करूं फूलों से, चांदी के बनवाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···पुष्पं
पूज करूं पंचम नेवज से, षटरस थाल सजाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···नैवेद्यं
करूं पूज छट्ठी दीपक से, आरति करि हर्षाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···दीपम्
सप्तम पूज धूप से करहुं, कर्म भगे अकुलाय ।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पुज करूं ।। वि० उत्तर···धूपम्

फल से करूं आठमी पूजा, नाचूं तन मटकाय।
तुम्हारी पूज करूं, रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर···फलम्
अन्तिम पूज अर्घ से करिके, बसूं मोक्ष में जाय।
तुम्हारी पूज करूं रूपाचल के जिनराय तुम्हारी पूज करूं ।। वि० उत्तर अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चाल विजयानी सेठ—दिसि उत्तर जी, पंचम गिरि से जानियो।
ऐरावत जी क्षेत्र बीच पहिचानियो ।।
जाके मधि जी, रूपगिरी पर्वत लसै।
तसु ऊपर जी वसु कूटों में सुर बसे ।।
पूरब में जी सिद्धकूट जिन धाम है।
तसु देखत जी, विमल होई परिणाम है ।।
सुर खगधर जी पूज करे हरषाय के।
मैं पूजूं जी आठों द्रव्य चढ़ाय के ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर नवकूटों में पहले में सिद्धकूट जिन मन्दिर बाकी आठ में व्यन्तर निवास सम्बन्धो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

दस योजन जी, ऊपर कटनी है सही।
दो तरफा जी जानि, खगधरों की मही ।।
दक्षिण में जी नगर पचास कतार से।
उत्तर में जी साठि इसी विस्तार से ।।
सब पुर में जी जिन मन्दिर ऊंचे बने।
विद्याधर जी पूज करें मिलि के घने ।।
तन मन से जी मैं पूजूं शुचि होई के।
जल फल सब जी कंचन थाल संजोई के ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिस ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर दस योजन ऊँची उत्तर दक्षिण दोनों कटनियों में विद्याधरों के एक सौ दस नगर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

फिरि ऊपर जी दस योजन चढ़ि सास्वतें ।
अमरनि के जी थान अनोखे राजते ।।
तिन सब में जी जैन भवन मन भावने ।
तसु महिमा जी कवि से कहते ना बने ।।
सत आठ सु जी प्रतिमा श्री अरहंत की ।
सब रचना जी बनी, आदि से अन्त की ।।
जो पूजें जी जिन प्रतिमा जी प्रीत से ।
वह छूटे जी जग की सारी रीत से ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिस ऐरावत क्षेत्र में रूपाचल पर्वत पर बीस योजन ऊँचाई पर व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

इस गिरी पै जी, श्री मुनिराज विराजते ।
दुद्धर तप से कर्म समूह जरावते ।।
चौ विधि से जी धर्म ध्यान अपनावते ।
क्रम क्रम से जी, सिव सुन्दरी को पावते ।।
ऐसे मुनि जी मैं ध्याऊं मन लाइके ।
इस थल से जी पूजूं अर्घ चढ़ाइ के ।।
तसु फल से जी मैं भी कर्म नसाइ के ।
सुख भोगूं जी अपने घर में जाइ के ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिसि ऐरावत क्षेत्र मध्य समस्त आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधू को नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—रूपाचल जिन धाम को, बंदूं प्रणमूं आज ।
अकृत्रिम निज रूप को, लहूं पूर्ण कर काज ।।

चाल—अब तू धर्म सम्हाल रे भाई जिन चरणा चित्त लाय ।।टेक।।

पुष्करार्ध पश्चिम दिशा जी, द्वीप महा सुखदाय ।
रचना सबही पाईये जी, ताके मध्य लसाय ।। रे भाई···।।१।।
विद्युन्माली नाम को जी, मेरु कनक छवि देत ।
ताकी उत्तर दिश विषै जी, ऐरावत को क्षेत्र ।। रे भाई···।।२।।
ताके मध्य विराजतो जी, रूपाचल लखि लेय ।
रचनापुर आगम कही जी, सो भविजन चित देय ।। रे भाई···।।३।।
सिद्धकूट पूरब दिशा जी, तिस थल जिनवर गेह ।
ताकी रचना देखता जी, उपजे उर में नेह ।। रे भाई···।।४।।
आवत सुरपति हरषते जी, जिनवर पूजन काज ।
तिस थानक वसु द्रव्य ले जी, खगधर असुर समाज ।। रे भाई···।।५।।
गावत गुण जिनराज के जी, सब मिल एक ही बार ।
जय जय शब्द सुहावना जी, बाजे बजत निहार ।। रे भाई···।।६।।
तिस थल उत्सव सासते जी, होत भली विधि जानि ।
इस थल भाव लगाय के जी, 'नेम' नमे उर आनि ।। रे भाई···।।७।।

दोहा—विद्युन्माली उत्तर दिशि, ऐरावत मधि पाय ।
रूपाचल जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर ऐरावत क्षेत्र मध्य रूपाचल पै श्री जिन भवन सम्बन्धी, सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

छन्द बेसरी—विद्युगिरि उत्तर दिशि जावे, ऐरावत रूपाचल पावै ।
तापै भवन एक जिनजी का, पाठ करत ले शिव सुख नीका ।। इत्याशीर्वाद

श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिश ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी जिन पूजा नं. ८६

चौपाई—विद्युन्माली दिश उत्तराय, ऐरावत आरज मन लाय ।
चौबीसी तीनों जिन देव, आह्वानन इस थान करेव ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीनों चौबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्नहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

वसीकरण—गंगा नदी सलिल शीतल कुम्भ में है ।
धारा करूं मुझ मनोगत मल हरे हैं ।।
पंचम सुमेरु एरावत क्षेत्र जाके ।
चौबीसि तीन पूजूं तन मन लगा के ।।टेक।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड में भूत भविष्य वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चौबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः जलम्

कर्पूर वासित सुगंधित गंध लाके ।
पूजूं तुम्हें हृदय ताप व्यथा मिटा के ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···चंदनं

कामोद बासमति तंदुल शुभ्र लाया ।
अक्षय अखंड पद हेतु तुम्हें चढ़ाया ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···अक्षतं

जाती कदंद अरविंद प्रसून लाया ।
शृङ्गार हार मदनारि तुम्हें चढ़ाया ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···पुष्पं

मैसूर पाक बरफी पकवान लाऊं ।
पीयूष पिंड सम स्वातम स्वाद पाऊं ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···नैवेद्यं

कर्पूर वर्तिक शिखामय दीप लाऊं ।
पूजूं तुम्हें हृदय मोह सभी मिटाऊं ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···दीपं

कृष्णा गरु सुरभि धूप जलाय करके ।
आत्मा विशुद्ध मुझ होत जु कर्म जलके ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···धूपं

अंगूर आम अमरूद अनार लाया ।
सर्वार्थ सिद्धि फल हेतु तुम्हें चढ़ाया ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···फलं

नीरादि द्रव्य कर अर्घ्य सुवर्ण थाली ।
पूजूं तुम्हें नहिं मनोरथ जाय खाली ।। पंचम सुमेरु ऐरावत···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

पंचम गिरि उत्तर दिशा ऐरावत मन लाय ।
भूतकाल के मैं जजूं चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड माहि भूत काल के चौबीसी जिनेन्द्राय क्रम से १. उसोत २. श्री फलु ३. श्री पूर्वास ४. श्री सौन्दर्य ५. श्री गोरिक ६. श्री त्रिवि क्रम ७. श्री नृसिह ८. श्री मृग वसु ९. श्री सोमेश्वर १०. श्री सुधासुर ११. श्री अपाय मल १२. श्री विवाद १३. संधिग १४. श्री मोघाता १५, श्री अश्वतेज १६. श्री विद्याधर १७. श्री सुलोचन १८. श्री मौन विधि १९. श्री पुंडरीक २० श्री चित्रगण २१. श्री मणितेन्द्र २२. श्री सर्वकल २३. श्री भूरिश्रव २४. श्री पुष्पांग सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

पंचम गिरि उत्तर दिशा ऐरावत मन लाय ।
वर्तमान मैं जजूं चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड मोहि वर्तमान काल के चोबीसी जिनेन्द्राय क्रम से १. श्री गोगेय २. श्री नलवास ३. श्री भीम ४. श्री ध्वजादिक ५. श्री समुद्र ६. श्री स्वामी मामा ७. श्री हनिक ८. श्री नंदिघोष ९. श्री रूप वीर्य १० श्री वज्रनाभि ११ श्री संतोष १२. श्री सुधर्म १३. श्री पणादि १४. श्री वोर चन्द्र १५. श्री मेघानीन १६. श्री स्वस्थ १७. श्री कोपक्षय १८. श्री अकाभ १९. श्री संतोषक २०. श्री सत्यसेन २१. श्री क्षेमक २२. श्री दयानाथ २३. श्री कीर्तिय २४. श्री सुभनाथ सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

पंचम गिरि उत्तर दिशा ऐरावत मन लाय ।
होनहार के मैं जजूं चौबीसों जिनराय ।।

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड मोहि भविष्य काल के चोवीसी जिनेन्द्राय क्रम से १. श्री अदोषिक २. श्री वृष स्वामी ३. श्री विनयानन्द ४. श्री मुनि भारत ५. श्री ईदुक ६. श्री चन्द्रकेतु ७. श्री ध्वजादित्य ८. श्री वसुबोध ९. श्री मूर्तिक १०. श्री धर्म बोध ११. श्री देवोग १२. श्री मारिचक १३. श्री सुजीवन १४. श्री यशोधर १५. श्री गोतम १६. श्री मुनि सुद्ध १७. श्री सदानीक १८. श्री प्रबोधक १९. श्री चारित्रनाथ २०. श्री सतानन्द २१. श्री वेदार्थ २२. श्री सुद्धोदमिक २३. श्री ज्योति शुचि २४. श्री सूर्योदित्य सहित सर्व जिनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—विद्युन्माली उत्तर दिश, ऐरावत मधि जोय ।
चौबीसी तीनों तणी, जयमाला अवलोय ॥

छंद बेसरी—पुष्करार्ध पश्चिम दिशा जगसार हो ।
विद्युन्माली मेरु तासूं उत्तर दिश विषैं जगसार हो ॥ ऐरावत भवि हेर ॥

क्षेत्र ऐरावत जु मांहीं, खण्ड आरज लीजियो ।
ता मांहि तींनों जिन चुबीसी काल, त्रय चित्त दीजियो ॥१॥
पहिले उसांत जिनेश नमू, शुद्ध मन वच काय जी ।
श्री फल्गु जिनके चरण सेवत, कर्म आठ नशाय जी ॥२॥
श्री पूर्वास नमो सदा जग सार हों, जिन सौन्दर्य मनाय ।
गौरिक जिनवर सेयस्यां जग सार हो, त्रिविक्रम गुण गाय ॥३॥
गुण गाय नमू नृसिंह जिनजी, कर्म अरि दुःख नाशने ।
मिथ्यध्वांत मिटाय मृगवसु, धर्म पंथ प्रकाशने ॥४॥
जिन देव सौमेश्वर रहायो, थान थिरता जाय के ।
वन्दू सुधासुर चरण युग को, काल त्रय सिर नाय के ॥५॥

श्री उपाय गुण गाइये जग सार हो, वन्दू विवाद जिनेश ।
संधिग शिव करता भजो जगसार हो, मांधाता जगतेश ।।६।।
जगतेश जिन अश्वतेज के मैं, चरण जुग हृदय धरूं ।
सव कर्म मेरे तुरत नाशे, भावना ये ही करूं ।।७।।
श्री जिन विधाधर मोक्ष गामी, जोड़िकर वन्दन करूं ।
भव जाल के जंजाल को मैं, काट शिवरमणी वरूं ।।८।।
नमू सुलोचन देव को जगसार हो, मौन निधि जिनराय ।
पुंडरीक शिवपति नमू जगसार हो, चित्रगण उर ध्याय ।।९।।
उर ध्याय जिन मणितेन्द्र सेवूं, अटल संपति के धनी ।
श्री सर्व कल जिनराज जग में, जानि भव चितामनी ।।१०।।
सुण सिन्धु भूरी अव जिनेश्वर, जगत तिहुं में जानियौ ।
पुण्यांग जिनवर मुक्ति दाता, भव्य उर मैं आनियो ।।११।।
श्री गांगेय जिनवर नमू जगसार हो, सेय सदा नलवास ।
भीम जिनेश्वर वन्दता जगसार हो, मिटत तिहुं जग त्रास ।।१२।।
जगत्रास मेटन को ध्वजादिक, देव भविजन उर लखो ।
श्री जिन सुभद्र निहारि, तिनके चरण पंकज सिर रखो ।।१३।।
स्वामीनमाजी सेय भविजन, हनिक जिन गुण गाइये ।
श्री नंदिघोष मिटाय आठों, कर्म दुःख नशाइये ।।१४।।
रूप वीर्य जिन वंदस्या जगसार हो, वज्रनाभि जिनराय ।
जिन संतोसहि सिर नमूं जगसार हो, श्री सुधर्म सुखदाय ।।१५।।
सुखदाय नमूं फणादि जिनजी, धर्म कर्ता मानि कै ।
श्री वीर चन्द्र जिनेश सेवूं, तरण तारण जानि कै ।।१६।।
जिनराज में घावीक बन्दू, रत्नत्रय के ईश जी ।
संतोष शिवपुर जाय तिष्ठे, कर्म रिपु वसु पीस जी ।।१७।।

कोपक्षय पद सिर नमूं जगसार हो, अकाम जिनेश्वर सेय ।
संतोषक गुण गायस्यां जगसार हो, सत्म सेम उर धेय ॥१८॥
उर धेय श्री क्षेमक जिनेश्वर क्षेम, करता जानिये ।
श्री दयानन्द मनाय भविजन सत्व रक्षक मानिये ॥१९॥
कीर्तिय जिनेश्वर की जु कीर्ति, लोक तिहुं में छा रही ।
शुभ नाम जिन पद नमन करता, जगत दुःख व्यापे नहीं ॥२०॥
श्री अदोषिक दोष नशि के, जग सार हो, भये जगत के राय ।
वृषभ स्वामि जिन धर्म को, जगसार हो, दीनों मग दरशाय ॥२१॥
दरशाय सातों तत्व विनियानन्द जिनजी देत हैं ।
सिर नात सुनि भारत जिनेश्वर, सकल दुःख हर लेत हैं ॥२२॥
ईदूक जिनवर मोहतम के हरण हारे हैं सही ।
श्री चन्द्रकेतु विनाश जग दुःख देत शिवपुर की मही ॥२३॥
ध्वजादित्य जिनराज को जगसार हो, सेवूं मन वचकाय ।
वन्दूं निर्मल भाव तैं जगसार हो, तासु बोध गुण गाय ॥२४॥
गुण गाय मूर्तिक जी जिनेश्वर थल अमूर्तिक लीजिये ।
श्री धर्म बोध जिनेश के युग चरण चित भवि दीजिये ॥२५॥
देवांग जिनके चरण सेवत, असुर सुर नर खगधरा ।
वन्दूं मरीचक देव जिनवर, सकल भवि जन सुखकरा ॥२६॥
नमू सुजावन भावते जगसार हो, नमू यशोधर देव ।
गौतम सुखदाता भजूं जगसार हो, मुनि युद्ध की करि सेव ॥२७॥
करि सेव मन वच काय सेती जिन सदानिक की सदा ।
प्रबोधके नित चरण वन्दूं, गती ना व्यापै कदा ॥२८॥
चारित्र नाथ दयाल जग में, मोह तिमिर विनाशने ।
श्री सतानन्द जिनेश स्वामी मुक्ति पंथ प्रकाशने ॥२९॥

श्री वेदारथ गुण नमूं जगसार हो, सुद्धोवमिक मनाय।
ज्योति सुची जिनदेव को जगसार हो, सेवूं मन वचकाय ॥३०॥

काय मन वच सेय पूर्योदित्य जिनवर को करो।
गुण गाय तीन चौबीस जिनकी 'नेम' दृढ़ भक्ति धरो ॥३१॥

यातें सकल दुःख दूर होवें, चार गति फिरबो नसै।
निज ज्ञान केवल पाय ततक्षिण जाय शिवपुर को बसै ॥३२॥

दोहा—विद्युन्माली उत्तर दिश, ऐरावत कहलाय।
तिस थल तिन चौबीसी जिन, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र मध्य आर्य खण्ड बीच भूत भविष्य और वर्तमान काल सम्बन्धी तीन चोबीसी के ७२ जिनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

अडिल्ल—विद्युन्माली मेरु तणी उत्तर रखो।
ऐरावत के मांहि चौविसी त्रय लखो ॥
तिनको करत जु पाठ भव्य हरषाय के।
ते भव भ्रमण नशाय लेत शिव जाय के ॥ इत्याशीर्वाद

श्री पुष्करार्ध द्वीप सम्बन्धी दक्षिण उत्तर दो इष्वाकार जिनालय पूजा नं. ८७

दोहा—पुष्करार्ध वर के विषै, दो गिर इष्वाकार।
आह्वानन इस थान की, इस थल केरो विचार ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की दक्षिण उत्तर भरत ऐरावत क्षेत्रों के बीच इष्वाकार पर्वतों पै होये श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पूजा कर लो श्री जिनवर की, सारा जीवन बीतो जाय ॥टेक॥
उत्तम गंगा जल भरि लाओ, प्रासुक लेहु कराय।
कंचन झारी भरि के ताकी, धारा तीन कराय ॥ पूजा...

पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ।। पूजा···

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की दक्षिण उत्तर दोय दिशा में दो इष्वाकार पर्वतों पर दोय श्री जिन भवनाभ्याम् नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

असली केसरि चन्दन के संग, लीजे खूब घिसाय ।
कनक पात्र में भरि के दीजे, जिनवर चरण चढ़ाय ।।
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ।। पूजा···चन्दनं

अमल अखण्डित चोखे तन्दुल सुवरण थाल भराय ।
श्री जिनवर को भेंट करत ही, अक्षय पद मिल जाय ।।
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ।। पूजा···अक्षतं

फूल सुगंधित इन्द्रीय रंजित, देखि भालि चुनवाय ।
चरण चढ़ावो श्री जिनवर के, मदन केतु छिपि जाय ।।
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ।। पूजा···पुष्पं

माल पुआ रस खीर कलाकंद, गुझिया लेहु बनाय ।
श्री जिनवर की भेंट करत ही, भूख व्याधि मिटि जाय ।।
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ।। पूजा···नैवेद्यं

चामी कर का दीप सजाकर, लीजे हाथ उठाय ।
नाचि नाचि के करो आरती, मोह अंध नशि जाय ।।
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार ।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर, बनो शिवा भरतार ।। पूजा···दीपं

चन्दनादि दस वस्तु सुगंधित कूट धूप बनवाय।
स्वर्ण धुपायन में खेवत ही कर्म पीठि दिखलाय ॥
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ॥ पूजा···धूप

केला ककड़ी लीची चीकू सेव सन्तरा लाय।
थाल अनेक लबालब भरिके श्री जिन चरण चढ़ाय ॥
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ॥ पूजा···फलं

नीर सुगंध पुंज फूला नेवज, दीपक बनवाय।
धूप फला वलि सभी मिला कर दीजे अर्घ चढ़ाय ॥
पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर दो गिरि इष्वाकार।
तिनि पर दो जिन भवन पूज कर बनो शिवा भरतार ॥ पूजा···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—पुष्करार्ध दक्षिण दिशा, पर्वत ईष्वाकार।
तापे श्री जिन भवन को, पूजूं अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की दक्षिण दिशा में ईष्वाकार पर्वत पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा शेष कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ १ ॥

पुष्करार्ध उत्तर दिशा, पर्वत ईष्वाकार।
तापे श्री जिन भवन को, पूजूं अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्ध द्वीप की उत्तर दिशा में ईष्वाकार पर्वत पर सिद्धकूट जिन मन्दिर तथा शेष कूटों में व्यन्तर थानक सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम ॥ २ ॥

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः। १०८ (बार)

जयमाला

दोहा—द्वीप पुष्करारध विषै, द्वय गिरि ईष्वाकार।
तिनपें भवन जिनेश की, जयमाला सुखकार ॥

चौपाई—पुष्करार्ध की द्वि दिसि विचार, दक्षिण उत्तर ईक्ष्वाकार।
लम्बे योजन आठ जु लाख, चौड़े एक सहस जिन साख ॥१॥

ऊंचे योजन सत गिण चार, गिरि पें कूट चार सुखकार।
कालो दधि सो लेहु निहार, मनुषोतर तक दण्डाकार ॥२॥

पुष्करार्ध की द्वय विधि कीन, पूरब पश्चिम भविजन चीन।
तिन पर है श्री जिनवर धाम, हरि सुर पूजे आठ जु याम ॥३॥

इन्द्राणी सुर पोषित आय, मंगल गावे भाव लगाय।
गावे किन्नर वीन बजाग, धन्य धन्य जिन त्रिभुवन राय ॥४॥

तुमने तोड़ी करमनि फांसि, तुम ही हो प्रभु सुख की राशि।
तुमरी महिमा कबलों गाय, बुधि थोरी किम पार लहाय ॥५॥

तुमने कामबाण ल्यो जीति, मुक्ति वधू सु ल्याई प्रीति।
जग की रीति अथिर तुम जानि, भविज़न को भाषी सुख खान ॥६॥

बाणी तुमरी दीनदयाल, सुनकर भविजन होय निहाल।
तुमने मेट्यो जग संताप, तुम ही नाशो संचित पाप ॥७॥

शिव थल देवो तुमही नाथ, तुमही हो भवदधि के पाथ।
इह लखि नमे नेम जिन देव, भव भव पाऊं तुमरी सेव ॥८॥

दोहा—ईश्वाकारन पै लखो, जिन मंदिर गिण दोय।
अर्घ चढ़ावो भव्यजव, तुष्करार्ध की जोय ॥

ॐ ह्रीं पुस्करार्ध द्वीप की दक्षिण उत्तर दोय दिश दोय इष्वाकार पर्वत पर दोय श्री जिन भवनाभ्याम् नमः अर्घम्।

जोगीरासा—पुष्करार्ध की दक्षिण उत्तर, द्वय गिरि ईश्वाकारा।
तिनपे भवन जिनेश्वर द्वय है, कंचन मणिमय सारा ।।
तिनको भविजन पाठ करें, सुख मन वच तन कर भाई।
उनके शिव सुख सहज ही प्रकटे, अशुभ करम मिट जाई ।। इत्याशीर्वाद

श्री मानुषोत्तर पर्वत चतुर्दिक चार जिनालय पूजा नं. ८८

स्थापना दोहा—मानुषोत्र के शीष पै, चहुं दिश चतु जिन धाम।
आह्वानन तिनकी करूं इस थल करि परणाम ।।

ॐ ह्रीं मानु षोत्र गिर के शीष चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्या नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

त्रिभुवन के तारन हार, जिनेश्वर चरण कमल पूजूं तेरे।
मुझको भी कीजे पार जिनेश्वर, सकल कर्म काटो मेरे ।।टेक।।

हां हां मेरे स्वामी जी, प्रथम पूज जल से करूं।
पंचम सागर से लाय मेरे स्वामी जी, तुम पद धार कराय के।
जर जनम मरण मिटि जाय मेरे स्वामीजी और कछू चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मन हार मेरे स्वामीजी, ढाई द्वीप की गिरद है।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार मेरे स्वामीजी करूं बंदना भाव से ।।

ॐ ह्रीं मानुषोतर गिर के शीष चहुँ दिश चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम्।

हां हां मेरे स्वामीजी, दूजी पूजा गंध से।
गोसीर कपूर घिसाय मेरे स्वामीजी, तुम पद अग्र चढ़ाय के।
संसार ताप नशि जाय, मेरे स्वामीजी और कछू चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मन हार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार मेरे स्वामीजी, करूं वंदना भाव से ।। त्रिभु०...चंदनं

हां हां मेरे स्वामीजी, तीजी पूजा पूंज से ।
कश्मीरी चांवल लाय मेरे स्वामीजी, तुम पद भेंट कराय के ।
अक्षयं पदवी मिलि जाय मेरे स्वामीजी, और कछू चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मन हार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है ।
चहुं दिसि जिनि मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वंदना भाव से ।। त्रिभु···अक्षतं

हां हां मेरे स्वामीजी, चौथी पूजा फूल से ।
षट् पद धर चक्कर खाय मेरे स्वामीजी, तुम पद भेंट कराय के ।
[illegible] सतावे आय मेरे स्वामीजी, और कछू चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मन हार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है ।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार मेरे स्वामीजी, करूं वंदना भाव से ।। त्रिभु०···पुष्पं

हां हां मेरे स्वामीजी, चरू से पूजा पंचमी ।
घेवर खाजे बनवाय मेरे स्वामीजी, तुम पद मांहि चढ़ाय के ।
मोहि भूख लगे फिरि नांहि, मेरे स्वामीजी और कछु चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मनहार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है ।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वन्दना से ।। त्रिभु०···नैवेद्यं

हां हां मेरे स्वामीजी, छट्ठी पूजा दीप से ।
उत्तम विधि से सजवाय मेरे स्वामीजी, करूं आरती भाव से ।
निज पर को लू पहिचान, मेरे स्वामीजी और कछु चाहूं नहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मनहार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है ।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वन्दना भाव से ।। त्रिभु०···दीपं

हां हां मेरे स्वामीजी, सप्तम पूजा धूप से ।
सब अगर तगर कुटवाय, मेरे स्वामीजी धूप दान में खेयके ।
कर्मनि को देऊं भगाय, मेरे स्वामीजी और कछु चाहूं नहीं ।।

गिरि मनुषोत्तर मनहार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वन्दना भाव से ।। त्रिभु०···धूपं

हां हां मेरे स्वामीजी, फल से पूजा आठवीं।
षट् रितु के बहुत मंगाय, मेरे स्वामीजी भेट करूं हर्षाय के।
शिव सुन्दरी बनिजाय, बाम मेरे स्वामीजी और कछू चाहूं नहीं ।।
गिरी मनुषोत्तर मनहार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वंदना भाव से ।। त्रिभु०···फलं

हां हां मेरे स्वामीजी, अंतिम पूजा अर्घ से।
आठों ही वस्तु मिलाय मेरे स्वामीजी, तुम पद भेंट कराय के।
मोहि अनरघ पद मिलि जाय, मेरे स्वामीजी और कछु चाहूं नाहीं ।।
गिरि मनुषोत्तर मनहार, मेरे स्वामीजी ढाई द्वीप की गिरद है।
चहुं दिसि जिन मन्दिर चार, मेरे स्वामीजी करूं वंदना भाव ।। त्रिभु०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—मानुषोत्र गिरि शीष पै, पूरब दिश मन लाय।
पूजूं भवन जिनेश को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिरि की पूर्व दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

मानुषोत्र गिरि शीष पै, दक्षिण दिशि मन लाय।
पूजूं भवन जिनेश को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिर की दक्षिण दिशि श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

मानुषोत्र गिरि शीष पै, पश्चिम दिशि मन लाय।
पूजूं भवन जिनेश को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिर को पश्चिम दिशि सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

मानुषोत्र गिरि शीष पै, उत्तर दिशि मन लाय ।
पूजूं भवन जिनेश को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिर की उत्तर दिशा सम्बन्धी श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

मानुषोत्र गिर शीष पै, कूट अठारह और ।
व्यन्तर महलन भवन जिन, पूजूं करि जय सोर ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिर पै अठारह कूट पै व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

मानुषोत्र गिर शीष पै, चहुं दिश चतु जिन गेह ।
सब थल पूजूं आठ विधि, मन में धरि बहु नेह ।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिर सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्य :—ॐ ह्रीं शाश्वत् जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—मानुषोत्र पै चार दिश, चार जिनेश्वर थान ।
तिनकी जयमाला कहूं, सुणों भव्य धरि कान ।।
जय जय श्री अरहन्त जी, तुम पद करूं प्रणाम ।
गुणमाला तुम्हरी भनूं, पावन अविचल धाम ।।
अतरंग गुण के धनी, हो असीम भंडार ।
समोशरण लक्ष्मी बहिर, कहूं अणू अनुसार ।।

जय बोलो प्रभू के समोशरण की, तेरी मिटि जाइ फेरी जनम मरण की ।।टेक।।

पांच हजार धनुष ऊंची पीडिका गोल एक नील मनी ।
हाथ हाथ ऊंची चौतरफा सिढ़ियां बीस हजार बनी ।।
बारह योजन की सूची परिधी कुछ अधिक कही तिगुनी ।
आतम अंगुल से सब रचना सबकी एक समान बनी ।।
देव आकर रचें—अनेकों वरण की, जय बोलो प्रभु के समोशरण की ।।१।।

चारि कोट अरु पांच वेदिका, वलया कृति सब ही जानो।
इन नोऊ के बीच बीच में आठ भूमियां पहिचानो॥
चौ तरफा से चारि मार्ग हैं, ऊपर चढ़ने को जानो।
क्षण में बिना खेद चढ़ि जाते सब ही यह अतिशय मानो॥
दोऊ बाजू बनी वेदिका रतन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥२॥

तीनि हजार हाथ चौड़ी है, ऊपर कोट बना सुन्दर।
ताके ऊपर बनी बैठकें तिनमें नाचि रही अपसर॥
आठ-आठ दरवाजे बनि रहे, इक-इक बैठक के मनहर।
तीनि-तीनि गुमटी हैं, सब पर ग्यारह कलश चढ़े ऊपर॥
सुनो आगे की रचना--मनोहरण की, जय बोलो प्रभु के शमोशरण की ॥३॥

पंच रंग का धूलि साल है, कोट बनी शोभा मारी।
चारि द्वार ऊपर कंगूरा, बैठक गुरज मनोहारी॥
तिनि में बैठी देव देवियां, नाचें गावें नर नारी।
जिन शरीर से उच्च चौगुना शमोशरण घेराकारी॥
अब कथा ऊपरी गौर से सुनन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥४॥

भीतर जाने को चारों दिसि चौड़ी एक कोस गलियां।
दोऊ बाजुओं में वेदी है, फिरि दो हैं अन्तर गलियां॥
फटिक मणी की बनी हुई है होई रही बहु झिलमिलियां।
भांति-भांति चित्राय बने कहुं फूलनि फूलि रही कलियां॥
बड़ी भारी है महिमा सु इस कथन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥५॥

चारि कोट पांचों वेदी के चहुं दिसि छतिस द्वार बने।
दो-दो द्वारपाल ठाड़े हैं, छड़ी हाथ में लिये तने॥

विनय हीन जो कोई आवे ताकू फौरन करे मनें।
रंग-बिरंगे लगे किवाड़ सु महिमा कहते नहीं बने॥
नग जवाहर जड़े झलक है मणिन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥६॥

छतिस द्वारनि की चौ बाजू सोरू चवालिस है बगली।
इक सो आठ-आठ इक विधि की अष्ट सुमंगल द्रव्य रली॥
एक लाख अरु सहस जु चौबीस चारि सौ सोलह लगे भली।
अब नोऊ निधियां ही चर्चा सुन लो दिल की खोलि कली॥
वसन भाजन व दाता है आभरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण कीं॥७'।

एक द्वार की इक बाजु में एक सौ आठ एक विधि की।
एक सौ चवालीस बाजू में गिनती कही एक निधि की॥
पन्द्रह सहस रु पांच सो बाबन सीमा जानि एक निधि की।
एक लाख उनताल सहस नो सो अरसटि है नो विधि की॥
कम न होती है सीमा कभी सबनि की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥८॥

पहिली चौथी छटी गली में चौसठि बनो निरत शाला।
इक इक में बतीस अखाड़े खाड़े बतीस सुरबाला॥
नाचि रहीं बहु हाव भाव से पहिने कंठ रतन माला।
पैंसटि सहस पांच सो छत्तीस देखत होवे मन आला॥
आ रही धुनि छमाछम सब्द सुनन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥९॥

प्रथम दिखत है तीन कोट युत मान स्तम्भ दिसा चारी।
तीनि पीठ चौंकोर मणि मई ता ऊपर गोलाकारी॥
चारि चारि चारों दिसि प्रतिमा देव करे पूजा भारी।
मानो मान तजे देखत ही छै हछार धनु ऊंचारी॥
छयानवे मील से दिठि परे सबनि की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥१०॥

चैत्य भूमि आठों दिसि माँही पांच पांच भन्दिर सोहे।
छत्र चमर भा मंडल इत्यादिक रचना अति मन मोहे॥
ठौर ठौर मुनिराज ध्यान धरि कर्म कालिमा को धोवें।
श्रद्धा धरि उपयोग लगावे तो हम भी निर्भय होवे॥
यही उत्तम विधि है जु भव तरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥११॥

भूमि खातिका निर्मल जल की बहतो है हर्दम धारा।
दोय तरफ वेदी ऊपर पुल छोटे बड़े बने द्वारा॥
बने अखाड़े पुल ऊपर सुर खग नाचे बहु विस्तारा।
धन्य भाग जिन देखा ऐसा अद्भुत ठाठ बाट सारा॥
भूलि जावें खबरि सभी निज घरन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥१२॥

पुष्प वाटिका भूमि विषै बहु फूल अनेक प्रकार कहे।
जुही और मचकुन्द मोगरा दोना मरुआ महकि रहे॥
बेला और गुलाब केवड़ा गेंद चमेली चमकि रहे।
साधु विराज रहे बहूतेरे शान्ति छवि में दमकि रहे॥
मचि रही धूम है, भ्रमर के भ्रमण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की॥१३॥

उपवन भूमि चारि विदिसा में चारि महावन राजे हैं।
भूप वृक्ष है चउ कंचन मय रतन जड़ित छवि छाजे हैं॥
चारि चारि जिन भवन तिन्हों में श्री जिन बिंब विराजे हैं।
सुर नर खग सब पूजन करते तिनिके सब दुःख भाजे हैं॥
है अनोखी छटा उन्हों को लगन की, जय बोलो प्रभु के शमोशरण की॥१४॥

धुजा भूमि में आठ एक सौ छोटी के संग एक धवल।
हंस नाग वृष मोर वसन गरुड़ रू माला हरिचक कमल॥

ये दस चिन्हमई सत आठ जु चारों दिसि हलि रही चपल ।
चारि लाख सत्तरि हजार आठ सो असी मिलि भई सकल ॥
दंड मणि खंभ कंचन मई वरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥१५॥

कल्प भूमि चारों विदिसा में चारि सु भूप वृक्ष जानो ।
मेरु तथा मंदार और संतान रूपारि जात मानो ॥
चारि चारि चारों दिसि मांही, सोलह मन्दिर पहचानो ।
दस विधि कल्प वृक्ष बहु तेरे, सभी तरह के सुख दानो ॥
मिलि के पूजन करे सभी जिन चरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥१६॥

मंदिर भूमि विषै चारों दिसि, छत्तीस मंदिर बहु विस्तार ।
तिनिकी रचना के कहिवे को, कवि है शक्ति से लाचार ॥
गंध कूटी युत केवल ज्ञानी, निज निज थान खिरे धुनिसार ।
मंडप में बहु श्रुत केवली प्रवचन, करि रहे श्रुति आधार ॥
छा रही घटा है अचल सुख करण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥१७॥

समा भूमि चारों विदिसा में, बारह कोठा साजे है ।
पहले में गणधर मुनि, दुई में कल्प बासिनी राजे हैं ॥
तिसरे में नारी चौथे में, ज्योतिस तिया विराजे हैं ।
पंचम में व्यन्तरनी, षट में भवन वासिनी छाजे हैं ॥
सातमी संमा है देवता भवन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥१८॥

अष्टम व्यन्तर देव नवम में, ज्योतिस देव विराजे हैं ।
कल्प निवासी देव दसम में, नर ग्यारम में साजे हैं ॥

वैर भाव तजिकर सब ही, पशु बारवें में छाज रहे।
भूख प्यास भय नींद रोग, क्लेशादि सभी के भाजि रहे ॥
लगि रही लगन है जिन वचन सुनन की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥१६॥

कंचनमय त्रय पीठ नग जड़ित, ता पर तीन सिंहासन हैं।
कमल के ऊपर अधर विराजे, जिनवर धरि पद्मासन है ॥
परमो दारिक देह इसी से, दीखत है चतुरानन है।
चौसटि चमर ढुरे त्रय छतर, तीन लोक प्रति भाषन है ॥
सभी विधि बनि गई शिवतिया वरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥२०॥

श्री जिनकी वाहिज लक्ष्मी, कहने को समरथ इन्द्र नहीं।
तो फिरि अन्तरंग की, महिमा कवि से किस विधि जाय कही ॥
परि भक्ति के बस होकर के, कुछ आगम अनुसार कही।
भूल कही हो गई होय तो, तुम सब मिलकर करो सही ॥
दास की आस अरहंत के शरण की, जय बोलो प्रभू के शमोशरण की ॥२१॥

दोहा—मानुषोत्र पै चार दिश, भवन चार जिनराय।
मन वच तन त्रय शुद्ध करि, दीजे अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं मानुषोत्तर गिरि के चारों दिशाओं में चाद श्री जिन भवनेभ्यो और आठरह कूट सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घम्।

अडिल्ल—मानुषोत्र गिर शीष चहुं दिश जोईयो।
मन्दिर श्री जिनराज चार उर ठोईयो ॥
तिनको मन वच काय पाठ शुद्ध जो पढ़े।
ते नर कर्म नशाय मुक्ति गढ़ पै चढ़े ॥ इत्याशीर्वाद

नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशि तेरह श्री जिन भवन पूजा नं० ८६

स्थापना अडिल्ल—नंदीश्वर लखि द्वीप आठवों लीजिये।
पूरब दिश जिन राय भवन चित्त दीजिये॥
अंजन गिरि दे आदि त्रयोदस जोय कैं।
आह्वानन इस थान करूं शुचि होय कैं॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व दिशि एक अजन गिर चार दधि मुख आठ रतिकर त्रयोदश पर्वत शीष त्रयोदश श्री जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

छन्द गीता—ले नीर निर्मल मुनो मन सम कनक कलशा में भरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिशि पूर्व इक अन्जन गिरा॥
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ ले तेरह खरा।
तिन तेर के सिर भवन जिनवर जजूंमेमन शुचि करा॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व दिशि एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर त्रयोदश पर्वत के शीष त्रयोदश श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

केसर कपूर घिसाय विधि से संग मे मलियागिरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···चंदनं

बहु भांति के तंदुल अनोखे लिये सम दोनों सिरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि सुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···अक्षतं

ताजे सुमन का टोकना मधुकर समूहों से घिरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···पुष्पं

नेवज अनेक बनाय तामें नमक सुद्ध लिया गिरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···नैवैद्यं

आरती करते दीप से मोहांध मम तिरते फिरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···दीपं

खेवत सुगंधित धूप आठों कर्म भागे गिर गिरा।
दीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···धूपं

अंगूर आम अनार केला सेब लेकर सन्तरा।
द्वीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···फलं

बसु द्रव्य भरि कर थाल में युग हाथ में लेकर फिरा।
दीप नन्दीश्वर तणी दिश पूर्व इक अंजन गिरा।
चार दधि मुख आठ रतिकर जोड़ले तेरह खरा॥ तिन तेर के०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नंदीश्वर में पूर्व दिश, अंजन गिरि इक पाय।
तापै भवन जिनेश को, पूजूं अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप में पूर्व दिश एक अंजन गिर शीष एक श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्॥ १॥

अंजन गिरि तैं पूर्व दिश, दधि मुख गिरि इक पाय।
तापै भवन जिनेश को, बसु बिधि पूजूं ताहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व अंजन गिर की पूर्व दिशा में नन्दी नामा घावड़ी मांही दधि मुख पर्वत के शीष एक श्री जिन भवनाय नमः अर्घम॥ २॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ॥

ॐ ह्रीं नन्दीनामा वापी की बाहरी कोण विषैं रतिकर पर्वत के शीष एक श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

ता वापी की बाहरी कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ॥

ॐ ह्रीं नन्दो नामा वापी की दूजी बाहरी कोण विषैं रतिकर पर्वत के शीष जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

अंजन गिरि की दक्षिण दिशि, दधि मुख वापी मांहि।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व अंजन गिरि की दक्षिण दिशि नन्दवती वापी के मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन, जिन पूजूं वसु विधि लेय ॥

ॐ ह्रीं नन्दवती वापी की बाहरी कोण में रतिकर पर्वत पर जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ६ ॥

ता वापी की बाहरी, कौंण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै जिन, पूजूं वसु विधि लेय ॥

ॐ ह्रीं नन्दवती वापी की दूजी बाहरी कोण में दूजा रतिकर पर्वत पर जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ७ ॥

अंजन गिरि सों अपर दिशि, दधिमुख वापी मांहि।
ताके सिर पै भवन जिन, वसु विधि पूजूं ताहि ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व अंजन गिर की पश्चिम दिशि नन्दोतरा वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ८ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषें चित देय ।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दोतरा वापी की बाहरी कोण रतिकर पर्वत पर जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषें चित्त देय ।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दोतरा वापी की दूजी बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत पर जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

अंजन गिरि सों उत्तर दिशि, दधिमुख वापी मांहि ।
ता पै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व अंजन गिर की उत्तर दिशि नन्दिषेण वापी की मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ११ ।।

ता वापी की बाहरी, कोंण विषें चित देय ।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व अंजन गिर की उत्तर दिशि नन्दिषेण वापी की बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

ता वापी की बाहरी, कोंण विषें चित देय ।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप पूर्व अंजन गिर उत्तर दिशि नन्दिषेण वापी की दूजी बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनायो नमः अर्घम् ।। १३ ।।

छन्द—नंदीश्वर पूरब दिसि मंझार, अंजन गिरि की चऊ दिसि विचार ।
वापिका चारि के नाम जान, नंदा अरु नंदवती पिछान ।।
तीजी का नंदोत्तरा नाम, चौथी सुनंद षेणा बखान ।
चारों की चारों दिसि लसंत, सोलह वन जानो नादिनंत ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पूरब दिशा में अंजन गिरी, ताकी पूरब नन्दावापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण चंपक आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के दक्षिण में नन्दवती वापी के

चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक, आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के पश्चिम दिशा में नन्दोतरा वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक सप्तपर्ण, चंपक और आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के उत्तर दिशा में नन्दीषेण वापी ताकी चारों दिश में क्रम से अशोक सप्तपर्ण, चंपक और आम्र चार वन इन सोलह वन सम्बन्धी व्यन्तर थान को में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।

अडिल्ल—नंदीश्वर दिशि पूर्व एक अंजन गिरा ।
दधिमुख गिर चतु और आठ रतिकर खरा ।।
इन तेरह के शीष भवन जिनवर सही ।
पूजूं तेरह आठ द्रव्य ले इस मही ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर दीप की पूर्व दिशि सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ वार)

जयमाला

दोहा—नंदीश्वर की पूर्व दिशि, तेरह गिर पै जानि ।
जयमाला जिन भवन की, भाखूं भवि उर आनि ।।

चौपाई—द्वीप आठवों भवि मन लाय, नंदीश्वर नामा सुखदाय ।
ताकी सूची भाखूं सही, जैसी श्री जिन आगम कही ।।१।।
एक अरब के ऊपर राख, त्रेसठि क्रोड़ि चौरासी लाख ।
योजन जोड़ि करो सरधान, आगें और सुनों जु बखान ।।२।।
ताकैं पूरब दिश के मांहि, अंजन गिर इक संशय नांहि ।
नील वरण छवि अद्भुत देत, गोल ढोल समचित्त हरेत ।।३।।
योजन सहस चौरासी जानि, चौड़ाई अरु ऊंच प्रमानि ।
इक लख योजन गिर तें जाय, चहुं दिशि चार वापिका पाय ।।४।।
इक लख योजन तिनकों व्यास, चौकोणी सोहे अति खास ।
ओंड़ी योजन एक हजार, रत्नमई पैड़ी सुखकार ।।५।।

निर्जन्तु जल ते तें भरी, दृग देखत मन ततछिन हरी।
नंदा नंदवती लखि नाम, नंदोतर तीजी अभिराम ॥६॥
नंदिषेण चौथी जु पिछानि, पूर्व दिशादि अनुक्रम जानि।
तिन अंतरजु परस्पर जोय, मूल भाग को भाखूं सोय ॥७॥
पैंसठ सो योजन पैंताल, भविजन जोड़ लखो जु सम्हाल।
मध्य भाग अन्तर मन लाय, इक लख चार हजार धराय ॥८॥
योजन छैसौ ऊपर दोय, इतनो अन्तर भवि जन जोय।
बाह्य भाग को सुणि निरधार, लाख दोय तेतीस हजार ॥९॥
छै सौ इकसठ जोड़ि दिवाय, योजन अन्तर बाह्य कहाय।
तिन चारों के मधि लखि भाग, दधि सुख चार तणी है जाग ॥१०॥
वर्ण श्वेत लखि ढोल अकार, ऊंचे चौड़े दस जु हजार।
योजन एक सहस उड़ाय, तिनपैं भवन बने जिनराय ॥११॥
तसु वापिन की बाहिर कोंण, दो दो रतिकर पर्वत होण।
चौड़े ऊंचे एक हजार, बड़ योजन भवि लेहु विचार ॥१२॥
योजन दोय शतक पचांस, तिन ओंड़ाई समझो खास।
गोल ढोल सम भविजन जोय, कंचन वर्ण लसें अवलोय ॥१३॥
तिनके सिर पै जिनवर गेह, मन वच तन वंदू धरि नेह।
चहुं दिश वापिन की लखि चार, विपन सु चार महा सुखकार ॥१४॥
पूर्व दिशा में बाग अशोक, सप्तपर्ण दक्षिण दिश थोक।
पश्चिम दिश में चम्पक नाम, उत्तर आम्र लखो अभिराम ॥१५॥
इन चारों की लखि लम्बाइ, योजन एक लाख मन लाइ।
चौड़े योजन सहस पचास, तिनके मध्य बाग लखि खास ॥१६॥
चैत्य वृक्ष इक वन में एक, चहुं वन चार लखो जु विशेष।
तिनके मूल भाग निरधार, चहुं दिश प्रतिमा जिनवर चार ॥१७॥

तिनको वन्दूं शीष नमाय, नित प्रति उर में ध्यान धराय।
इक इक वन में इक इक पाय, व्यन्तर महल महा सुखदाय ।।१८।।
ऊंचे लम्बे लेहु लखाय, योजन बासठि ठीक गिणाय।
तासों आधे चौड़े जानि, योजन एक महल मन आनि ।।१९।।
इह विधि सोलह वन लखि लेय, पूर्व दिशा में भवि चित देय।
आवत इन्द्रादिक सब देव, इस ही द्वीप विषें स्वयमेव ।।२०।।
कार्तिक फाल्गुण और अषाढ़, अष्टानिक व्रत को धरि गाढ़।
पूजन श्री जिनवर को पाय, उत्तम आठों द्रव्य लहाय ।।२१।।
इस थल "नेम" नमे सिरनाय, थिर ता थल के कारण पाय।

दौहा—नंदीश्वर की पूर्व दिश, तेरह अचल लसाय।
सिर तेरह जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशि एक अंजन गिर चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष तेरह श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

छन्द अडिल्ल—नंदीश्वर की पूर्व दिशा भवि जन लखो।
अंजन गिर दे आदि अचल तेरह लखो ।।
सिर तेरह जिन भवन पाठ भवि जे करें।
ते जग दुःख नशाय जाय शिव तिय वरें ।। इत्याशीर्वाद

श्री नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि तेरह जिनालय पूजा नं. ९०

स्थापना चौपाई—नंदीश्वर दक्षिण दिशि जाय अंजन गिरि आदिक मन लाय।
तेरह गिरि तेरह जिन गेह, आह्वानन करतो धरि नेह ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह गिर के शीष तेरह श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

गीतिका छन्द—द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि मध्य इक अंजन गिरा।
पुनि चार दधि मुख आठ रतिकर भवन तेरह जिनवरा ॥
तिन भवन को इस थान निर्मल नीर लेके मैं जजूं।
जगवास की सब त्रास हरिके जाय शिव के सुख भजूं ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि मध्य अंजन गिरि आदि तेरह पर्वत पर तेरह श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम्।

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, भवन तेरह जिनवरा ॥
तिन भवन को इस थान, बावन लेय चन्दन में जजूं।
जगवास की सब त्रास हरिके, जाय शिव के सुख भजूं ॥ ...चंदनं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, भवन तेरह जिनवरा ॥
तिन भवन को इस थान, अक्षत लेय सुन्दर मैं जजूं।
जगवास की सब त्रास हरिके, जाय शिव के सुख भजूं ॥ ...अक्षतं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिसि, मध्य इक अंजन गिरा।
पुनि चार दधिमुख आठ, रतिकर भवन तेरह जिनवरा ॥
तिन भवन को इस थान, प्रासुक फूल लेके में जजूं।
जगवास की सब त्रास हरिकै, जाय शिव के सुख भजूं ॥ ...पुष्पं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंलन गिरा।
पुचि चार दधिमुख आठ, रतिकर भवन तेरह जिनवरा ॥
तिन भवन को इस थान, ताजे लेय नेवज में जजूं।
जगवास की सब त्रास हरिकै, जाय शिव के सुख भजूं ॥ ...नैवेद्यं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा।
पुनि चार दधिमुख आठ, रतिकर भवन तेरह जिनवरा ॥

तिन भवन को इस थान, निर्मल दीप लेके में जजूं ।
जगवास की सब त्रास हरिकै, जाय शिव के सुख भजूं ।। ···दीपं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा ।
पुनि चार दधिमुख आठ, रतिकर भवन तेरह जिनवरा ।
तिन भवन को इस थान, सुन्दर धूप लेके मैं जजूं ।।
जगवास की सब त्रास हरिकै, जाय शिव के सुख भजूं ।। ···धूपं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा ।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, भवन तेरह जिनवरा ।।
तिन भवन को इस थान उत्तम, लेय फल तें मैं जजूं ।
जगवास की सब त्रास हरिकै, जाय शिव के सुख मजूं ।। ···फलं

द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि, मध्य इक अंजन गिरा ।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, भवन तेरह जिनवरा ।।
तिन भवन को इस थान वसु, विधि अर्घ लेके मैं जजूं ।
जगवास की सब त्रास हरिके, जाय शिव के सुख भजूं ।। ···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नंदीश्वर की दक्षिण दिशि, भंजन गिरि के पाय ।
तापै भवन जिनेश को, पूजूं अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि में अंजन गिर के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

अंजन गिरि तें पूर्व दिशि, दधिमुख गिरि एक पाय ।
तापैं भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिर ते पूर्व दिशि अरजा वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

ता वापी के बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिरि पे भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिर की पूर्व दिशि अरजा वापी मध्य कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

ता वापी के बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिरि पैं भवन जिन, पूजूं वसुविधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि अंजन गिरि की पूर्व दिशि अरजा वापी के मध्य कोण विष दूजा रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

अंजन गिरि की दक्षिण दिशि, दधि मुख वापी मांहि ।
ता पैं भवन जिनेश को, गसु विधि पूजूं तांहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिर की दक्षिण दिशि विरजा वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

ता वपी के बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिरि पैं भवन, जिन पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि अंजन गिर की दक्षिण दिशि विरजा वापी के बाहरी कोण में रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

ता वापी को बाहरी, कोण विषै चित देय ।
रतिकर गिरि पैं भवन, जिन पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि विरजा वापी की दूजी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

अंजन गिरि सों अपर दिशि, दधिमुख वापी मांही ।
ताके सिर पै भवन जिन, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिर की पश्चिम दिशि अशोका वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

ता वापी के बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिरि पैं भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि अशोका वापी की बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ९ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिश अशोका वापी की दूजी बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १० ।।

अंजन गिरि सों उत्तर दिशि, दधिमुख वापी मांहि।
ता पै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिर के उत्तर दिशि वीत शोका वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष पै श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ११ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, वसु विधि पूजूं लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिरि की उत्तर दिशि वीत शोका वापी की बाहर कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १२ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं लसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि का अंजन गिरि की उत्तर वीत शोका वापी की दुजी बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १३ ।।

नंदीश्वर दक्षिण दिशि मंझार, अंजन गिरि की चहुं दिसि विचार।
वापिका चारि क्रम से सु नाम, इक अरजा दो विरजा ललाम ।।
है नाम अशोका तृतीय जान, चौथी सु वीत सोका पिछान।
चारों की चारों दिस मंझार, सोलह वन जानो मनोहार ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशा में अंजन गिरि के पूरब में अरजा वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोका सप्तपर्ण, चंपक आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के दक्षिण में विरजा वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक, आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के पश्चिम दिशा में अशोका वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक आम्र चार वन तथा अंजन गिरि के उत्तर दिशा में वीत सोका वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक आम्र-चार वन, इन सोलहो वन सम्बन्धी व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

अडिल्ल—नंदीश्वर दक्षिण दिशि इक अंजन गिरा।
दधिमुख गिरि चतु और आठ गिरि रति करा ।।
इन तेरह के शीष भवन जिनवर सही ।।
पूजूं तेरह आठ द्रव्य ले इस मही ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशि सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् निर्मामि पति स्वाहा।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—नंदीश्वर दिश दक्षिण ही, तेरह गिर मन लाय।
जयमाला जिन भवन की, सुणो भव्य सुखदाय ।।

पद्धड़ी छंद—जय नंदीश्वर दिश दक्षिण जाय, जय अंजन गिर आदिक लखाय।
जय तेरह पर्वत के जु शीष, जय तेरह मन्दिर हैं जगीश ।।१।।

जय पूर्व कथन तें लेउ निहार, वन आदि सकल वापी विचार।
तिस थान मांहि जिनराज धाम, कर जोड़ि करूं सब थल प्रणाम ।।२।।

चमरेन्द्र प्रथम तिस थान आय, जिनराज जजैं वसु द्रव्य लाय।
जय एक वर्ष में तीन बार, जय अष्टाह्निक विधि करत सार ।।३।।

जय कार्तिक फागुण अरु अषाढ़, दिन आठ अन्त को धरम गाढ़।
द्वय पहर एक दिश करत ठाठ, इह भांति बितावै दिवस आठ ।।४।।

दिश चार मांहि गिण पहर आठ, इस भांति आठ दिन करत ठाठ।
जिनराज स्तवन कुछ करत पाठ, सब संघ करत पूजा सु ठाठ ।।५।।

जयवन्त जिनेश्वर हो त्रिकाल, तुम गुण अनंत महिमा विशाल।
तुम कर्म आठ जीते जिनेश, तुम दूर कियो तिहुं जग क्लेश ।।६।।

तुम मोक्ष वधू मन हरण हार, तुम सकल भव्य आनन्द कार।
तुम दीनबन्धु करुणा निधान, तुम मोह महातम हरण भान ।।७।।
तुम कुमति निवारण एक नाथ, भव सिंधु तणो तुम होउ पाथ।
तुम चरणन में नित नमें शीष, इक अरज करें सुनल्यो जगीस ।।८।।
शिव थान वास मोको दिवाय, तिहुं लोक तणें दुःख तें छुड़ाय।
तुम शरण गही मम तार तार, करुणा सागर भव सिन्धु पार ।।९।।

दोहा--नंदीश्वर दक्षिण दिशा, तेरह गिर पै जाय।
तेरह श्री जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर दीप दक्षिण दिशि सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।

गीता छन्द--द्वीप अष्टम की दक्षिण दिशि अचल तेरह पर लखो।
तिहुं जगत पति के थान सुन्दर लसैं तेरह गुण रखो ।।
तिन भवन को भवि पाठ सुध मन करत जे हरषाय कें।
ते लेत शिव सुख सासते जग दुःख देत नशाय कें ।। इत्याशीर्वाद

श्री नन्दीश्वर द्वीप पश्चिम दिशि तेरह जिनालय पूजा नं. ९१

स्थापना छंद अडिल्ल—नंदीश्वर दिश अपर एक अंजन गिरा।
दधि मुख पर्वत चार आठ पुनि रतिकरा ।।
इन तेरह के शीष जिनालय है सही।
तिन सबका आह्वान करूं मैं इस मही ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि एक अंजन गिर चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष तेरह श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

गीता छंद--द्वीप अष्टम को अपर दिश एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह नीर निर्मल लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीर्ष त्रयोदश श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह मलय घसि के लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को दूर करि आठों मदा ।। चंदनम् चन्दनम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह धोय तन्दुल लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।। अक्षतम् अक्षतम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधि मुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह फूल प्रासुक लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।। पुष्पम् पुष्पम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधि मुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह शुद्ध नैवज लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।। नैवेद्यम् नैवेद्यम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।

यह भवन तेरह दीप निर्मल लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।। दीपम् दीपम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।
यह भवन तेरह धूप निर्मल लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को दूर करि आठों मदा ।। धूपम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर शीष जिन मंदिर लसैं ।।
यह भवन तेरह फल अनूपम लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को दूर करि आठों मदा ।। फलम्

द्वीप अष्टम की अपर दिशि, एक अंजन गिर बसैं।
पुनि चार दधिमुख आठ रतिकर, शीष जिन मंदिर लसैं ।।
यह भवन तेरह अर्घ वसु विधि लेय मैं पूजूं सदा।
सिर नाय तिनके चरण युग को, दूर करि आठों मदा ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नंदीश्वर की अपर दिशि, अंजन गिर जिन धाम।
ले जलादि पूजूं सदा, तिनको करि परणाम ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि अंजन गिरि शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

अंजन गिरि तें पूर्व दिशि, दधि मुख गिरि इक पाय।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि का अंजन गिर की पूर्व दिश विजया बावड़ी माहि दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि का अंजन गिर को विजया नामा बावड़ी की कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

ता वापी की बाहरी, कौण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि का अंजन गिर की विरजा नामा वापी की बाहरी दूजी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

अंजन गिरि की दक्षिण दिशि, दधि मुख वापी मांहि।
तापैं भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि का अंजन गिर की दक्षिण दिश वैजयन्ति बावड़ी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ५ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि वैजयन्ति बावड़ी की बाहरी कोण में रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन वभनाय नमः अर्घम् ।। ६ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि वैजयन्ति वापी की दूजी बाहरी कोण में दूजा रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ७ ।।

अंजन गिरि सों अपर दिशि, दधिमुख वापी मांहि।
ताके सिर पै भवन जिन, गसु विधि पूजूं ताहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि अंजन गिर की अपर दिश जयंता वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ८ ।।

ता वापी के बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि जयंता वापी की बाहरी कोण में रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ९ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि जयन्ता वापी की दूजी बाहरी क्षेत्र विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १० ।।

अंजन गिर सों उत्तर दिशि, दधि मुख वापी मांहि ।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं तांहि ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि का अंजन गिर की उत्तर दिश अपराजिता वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष पै श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ११ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेम ।।

ॐ ह्री नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि अपराजिता वापी की बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १२ ।।

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय ।
रतिकर गिर पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि अपराजिता वापी की बाहरी दूजी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १३ ।।

चौपाई—नंदीश्वर पछिम दिसि मंझार, अंजन गिरि की चतु दिसि विचार ।
वापी विजया पहिली जु सार, विजयंत जयंता नाम धार ।।
अपराजित है चौथी पिछान, चारों के चउ दिसि वन महान ।
सब थल व्यन्तर देवां निवास, मैं पूजूं जिनवर भवन खास ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशा मे अंजन गिरि के पूर्व में विजया वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक आम्र वन हैं तथा अंजन गिरि की दक्षिण दिशा में विजयेत वापी के चार दिशाओं में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक और आम्र वन हैं तथा पश्चिम दिशा में जयता वापी के चार दिशा में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक और आम्र वन है तथा उत्तर दिशा में अपराजिता वापी के चारों दिशाओं में क्रम से अशोक सप्तपर्ण चंपक आम्र वन है इन सब वन सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १४ ।।

चौपई—नंदीश्वर पश्चिम दिशि जाय, अंजन गिर आदिक मन लाय ।
तेरह मंदिर जिनवर जोय, ले जलादि पूजूं शुचि होय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशि एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष सकल श्री जिन जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १५ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । १०८ (बार)

जयमाला

दोहा—नंदीश्वर की अपर दिशि, तेरह अचल लखाय ।
शीस जिनेश्वर भवन की, जयमाला चित लाय ।।

चौपई—नंदीश्वर पश्चिम दिशि जाय, अंजन पर्वत आदि दिवाय ।
तेरह पर्वत लेहु निहार, कथनी पूर्व दिशावत् धार ।।१।।

तिनके शीष जिनेश्वर गेह, तेरह वन्दू उर धरि नेह ।
रचना उत्कृष्टी लखि लेय, जिन वर भवन तणी चित देय ।।२।।

और कथन भवि सकल विचार, देखि ग्रंथ त्रैलोक्य जु सार ।
अष्टाह्निक व्रत अवसर पाय, आवत सुर हरि सब हर्षाय ।।३।।

वसु विधि द्रव्य पुनीत लहाय, ईशानेन्द्र जजें जिनराय ।
दिवस एक में चहुं दिश मांहि, दो दो पहर फिरैं शक नाहिं ।।४।।

इस विधि आठों दिवस मंझार, ठाठ करैं अति ही सुखकार ।
मुख तें जिनवर के गुण गात, हरषि हरषि मन नांहि अघात ।।५।।

तुम जिनवर तिहुं लोक मंझार, भविजन को हो आनन्दकार ।
रत्नत्रय पति तुम ही ताथ, तुम दरशायो शिवपुर पांथ ।।६।।

तुम हो मोह महातम नाशि, केवल ज्ञान लियो सुखराशि ।
सकल पदारथ जाननहार, धन्य धन्य तुम त्रिभुवन सार ।।७।।

कुगति निवारण शिवथल दाय, 'नैम' नमें इक अरज कराय ।
जन्म जरादिक खोटी वाणि, दूर करौ निज किंकर जाणि ।।८।।

दोहा—नन्दीश्वर की अपर दिशि, तेरह अचल गिणाय ।
तिन सिर सब जिन भवन को, दीजै अर्घ चढ़ाय ।।९।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिश एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

बेसरी छंद—नन्दीश्वर दिशि पच्छिम पावै, अंजनादि तेरह मन भावै ।
तिनके सिर जिन मंदिर तेरा, पाठ करत नाशै जग फेरा ।। इत्याशीर्वाद

श्री नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि तेरह जिनालय पूजा नं. ९२

स्थापना चौपया वृत—नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि मधि भाग बसे ।
दधिमुख चार बापिका मांही रतिकर कौणा आठ लसै ।।
इन तेरह के शीष मनोहर तेरह भवन जिनेश रखो ।
तिनकी हम आह्वानन करते इस थल पूजन काज लखो ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि एक अंजन गिरि चार दधिमुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द चौपया वृत—नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय ।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिन राय ।।
तिनको उत्तम मधुर मनोहर शीतल गंगा जल भरि लाय ।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय ।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि एक अंजन गिरि चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि की आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मंदिर श्री जिनराय॥
तिनको मलयागिर अरु केसर घसि कै कंचन थाल धराय।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥ ...चंदनं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मंदिर श्री जिनराय॥
तिनको उज्ज्वल सरल अखंडित तन्दुल ले गुण पुंश दिवाय।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥ ...अक्षतं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनिराय॥
तिनको प्रासुक फूल सुगन्धित विविध वरण के ले हरषाय।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥ ...पुष्पं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजनि गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनराय॥
तिनको विविध तरह के नेवज विधि पूर्वक सों लेत बनाय।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥ ...नैवैद्यं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनराय॥
तिनको निर्मल द्युति को दीपक ले कंचन के थाल धराय।
पूजूं मन वच काय लगाके तिनही के पद शीष नमाय॥ ...दीपं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनराय॥
तिनको धूप अनूपम लेकै पावक घट के मांहि खिपाय।
पूजूं मन वच काय लगाके तिनही के पद शीष नमाय॥ ...धूपं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि को आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनराय॥
तिनिको श्री फल लोंग सुपारी आदिक फल बहु भांति गहाय।
पूजूं मन मन काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥ ···फलं

नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में अंजन गिरि की आदि दिवाय।
तेरह पर्वत के सिर सुन्दर तेरह मन्दिर श्री जिनराय।
तिनिको ले नीरादिक आठों वीन ताल मिरदंग वजाय।
पूजूं मन वच काय लगाकै तिनही के पद शीष नमाय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर की उत्तर दिशि एक अंजन गिर चार दधि मुख आठ रतिकर तेरह पर्वत के शीष तेरह श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—नन्दीश्वर की उत्तर दिशि, अंजन गिरि इक होय।
वसु विधि पूजूं भवन जिन, ताकै सिर पर जोय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि अंजन गिर की शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्॥ १॥

अंजन गिरि तें पूर्व दिशि, दधिमुख गिरि इक पाय।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि में अअंन गिर की पूर्व दिशि रमणी नामा बावड़ी मांहि दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्॥ २॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि में अंजन गिर की पूर्व दिशि रमणी नामा बावड़ी को बाहरी कोण में रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्॥ ३॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि रमणी नामा बावड़ी की बाहरी दूजो कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम्॥ ४॥

अंजन गिरि की दक्षिण दिशि, दधि मुख वापी मांहि।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप उत्तर दिशि का अंजन गिर की दक्षिण दिशि रमणिया वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

ता वापी की बाहरी कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्री नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि रमणिया वापी बाहरी कोण में रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ६ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि रमणिया वापी की बाहरी कोण विषै दूजा रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ७ ॥

अंजन गिरि सों अपर दिशि, दधिमुख वापी मांहि।
ताके सिर पै भवन जिन, वसु विधि पूजूं ताहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिश अंजन गिर को पश्चिम दिश सुप्रभा वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ८ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै जिन, भवन पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि सुप्रभा वापी की बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ९ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषैं चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन, जिन पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि सुप्रभा वापी की बाहरी दूजी कोण विषै दूजा रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ १० ॥

अंजन गिरि सों उत्तर दिशि, दधिमुख वापी मांहि।
तापै भवन जिनेश को, वसु विधि पूजूं ताहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि का अंजन गिर की उत्तर दिशि सर्वतोभद्रा वापी मध्य दधि मुख पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ११ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण विषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवन जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप उत्तर दिशि सर्वतोभद्रा वापी की बाहरी कोण विषै रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ १२ ॥

ता वापी की बाहरी, कोण मिषै चित देय।
रतिकर गिरि पै भवत जिन, पूजूं वसु विधि लेय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि सर्वतोभद्रा वापी की बाहरी दूजी कोण विषै दूजा रतिकर पर्वत के शीष श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ १३ ॥

नंदीश्वर उत्तर दिश, मंझार अंजन गिरि को चतु दिसि विचार।
वापिका चारि जानो महान रमणी रमणीया नाम जान॥
तीजी का है सुप्रभा नाम सर्वतोभद्र चौथी ललाम।
चारों की चारों दिशा मांहि जिन मदिर वन्दू विपिन मांहि॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशा में अंजन गिरि के पूर्व दिशा रमणी वापी की चारों दिशा में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण चंपक आम्र वन है तथा नन्दीश्वर द्वीप को दक्षिण दिशा में रमणी या वापी की चारों दिशा क्रम से अशोक सप्तपर्ण, चंपक आम्र वन हैं अंजन गिरि की पश्चिम दिशा की सुप्रभा वापी की चारों दिशि क्रम से अशोक सप्तपर्ण, चंपक आम्र वन है तथा अंजन के उत्तर दिशा में सर्वतोभद्रा वापो की चारों दिशा में क्रम से अशोक, सप्तपर्ण, चंपक आम्र वन ही इन सब वन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥

नन्दीश्वर द्वीप महान बावन जिन मन्दिर।
वन्दूं पूजूं रुचि ठान सामग्री लेकर॥
चौंसटि उपवन के मांहि थानक सुर व्यन्तर।
जिन भवन बने अधिकाहि पूजूं शुचि होकर॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की चारों दिशाओं में चार अंजन गिरी सोलह दधि मुख बत्तीस रतिकर सम्बन्धी बावन जिनालय तथा चोसठ वनो सम्बन्धी व्यन्तर थानकों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

चौपाई——नन्दीश्वर दिशि उत्तर जाय, तेरह पर्वत पै जिनराय ।
तेरह भवन तणी जयमाल, भाषूं अक्षर मात्र संभाल ॥

अडिल्ल——नन्दीश्वर की उत्तर दिशि में जायकें ।
अंअन गिर मधि भाग लखौ मन लायकें ॥
अंजन गिर तें फेर चहुं दिशि में लखो ।
दधिमुख पर्वत चार वापिका मधि रखो ॥१॥
लखि वापिन की कोण बाहरी द्वय सही ।
रतिकर पर्वत आठ गिणों तिसही मही ॥
इन तेरह के शीष धाम जिनदेव के ।
तेरह ही मन लाय नमूं सिर सेव के ॥२॥
तिनि वापिन की चार दिशा चित दीजियो ।
सोलह वन मधि भाग भव्य लखि लीजियो ॥
चैत्य वृक्ष के मूल भाग मन लायकें ।
चहुं दिशि प्रतिमा चार नमूं सिर नायकें ॥३॥
और कथन सब पूर्व दिशावत भवि लखो ।
साखि त्रिलोक जु सार तणी उर में रखो ॥
कातिक फागुण मास अषाढ़ लहाय कें ।
एक वरष में बार तीन सुर आय कें ॥४॥

दिना आठ वसु जाय चहुं दिशि ही फिरै।
वैरोचन लखि नाम प्रथम पूजन करें॥

एक दिशा के मांहि पहर द्वय जानियो।
गिण चहुं दिशि में आठ पहर उर आनियो॥५॥

यहि विधि वसु दिन ठाठ होय तिस थान में।
गावें गुण जिनराज इन्द्र ले तान में॥

इस थल उर हरषाय "नेम" तिनको नमें।
इस ही के प्रसाद दुःख चहुंगति दमें॥६॥

दोहा--नन्दीश्वर की उत्तर दिशि, तेरह पर्वत पाय।
तेरह श्री जिन भवन को, दीजे अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशि एक अंजन गिर चार दधि मुख आठरतिकर तेरह पर्वत के शाष सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम्।

चौपाई--नंदीश्वर दिशि उत्तर जान, तेरह पर्वत के जिन थान।
जो नर तिनकौ करत जु पाठ, तिनके होवें शिव सुख ठाठ। इत्यार्शीवाद

श्री ग्यारहवां कुण्डल द्वीप सम्बन्धी चार जिन भवन पूजा नं० ९३

स्थापना छन्द अडिल्ल--द्वीप ग्यारहवां कुण्डल नाम प्रमानिये।
ताके मधि में कुण्डल पर्वत जानिये॥

वलयाकृति गिरि पै चउ दिश जिन धाम हैं।
चउ दिश जिनवर गेह जजूं इस ठाम हैं॥

ॐ ह्रीं कुंडल पर्वत स्थित चहुँ दिश चार जिनालयस्थ जिन बिम्बे समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चाल पंचमेरु की–शीतल नीर पुनीत लहाय, कंचन झारी मन हरषाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥
कुण्डल गिरि सिरि चतुदिश जाय, पूजूं मंदिर चतु जिनराय।
महासुख होय, पूजे नाथ, परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं कुण्डल गिर की चहुँ दिशि, चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् निर्वपामिति स्वाहा।

चन्दन बावन लेत घिसाय, हेम पियाले मन हरषाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···चंदनं

तन्दुल सुन्दर नीर धुवाय, कंचन थाली ले हरषाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···अक्षतं

पुष्प सुगन्धित प्रासुक लाय, हेम रकाबी शीष नमाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···पुष्पं

नेवज नाना भांति बनाय, ताजे कंचन थाल धराय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···नैवेद्यं

मोह तिमिर क्षय दीप लहाय, तुम पद पंकज शीष नमाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···दीपं

दस विधि धूप सुगन्ध बनाय, पावक कुम्भ धरूं हरषाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर...धूपं

श्रीफल आदि अनूप लहाय, तुम पद भेटत शिव फल दाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···फलं

जल आदिक वसु द्रव्य लहाय, हेम रकाबी अर्घ बनाय।
महा सुख होय, पूजे नाथ परम सुख होय॥ कुंडल गिरि सिर···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा---कुण्डल गिरि सिर पूर्व दिशि, सिद्धकूट मन लाय।
भवन जजूं जिनदेव को वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारमा द्वीप मध्य कुण्डल गिर शीष पूर्व दिशि सिद्धकूट श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ १ ॥

कुण्डल गिरि दक्षिण दिशा, सिद्धकूट मन लाय।
भवन जजूं जिनदेव को, पूजूं अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्याराहवां द्वीप मध्य कुण्डल गिर को दक्षिण दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ २ ॥

कुण्डल गिरि सिर अपर दिशि, सिद्धकूट मन लाय।
भवन जजूं जिनदेव को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारमा द्वीप मध्य कुण्डल गिर की पश्चिम दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ३ ॥

कुण्डल गिरि उत्तर दिशा, सिद्धकूट मन लाय।
भवन जजू जिनदेव को, वसु विधि अर्घ चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारमा द्वीप मध्य कुण्डल गिर की उत्तर दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ॥ ४ ॥

कुण्डल गिरि सिर चार दिशि- चार कूट पुनि और।
अर्घ चढ़ावूं भवन जिन- लखि व्यन्तर सुर ठौर॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारमा द्वीप मध्य कुण्डल गिर पै चहुँ दिशि चार कूट नाग देव व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ५ ॥

कुण्डल गिरि पै कूट पुनि, चतु विदिशन में चार।
व्यन्तर थानक में जजूं, श्री जिन गेह निहार॥

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारहवां द्वीप मध्य कुण्डल गिर शीष चार विदिशान में चार कूट नाग देव व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ॥ ६ ॥

दोहा—कुण्डल गिर सिर कूट वसु, दिश विदिशा अंतराल ।
पूजूं व्यन्तर महल पै, श्री जिन भवन विशाल ।।

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारहवां द्वीप मध्य कुण्डल गिर पै चार दिशा चार विदिशान में बीच आठ कूट पै नाग देव व्यन्तर वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

चौपई—कुंडल गिर सिर चहुं दिशि जानि, मन्दिर चार जिनेश्वर मान ।
ले नीरादि कनक के थाल, वसु विधि पूजूं निज नय भाल ।।

ॐ ह्रीं कुण्डल नामा ग्यारमा द्वीप मध्य कुण्डल गिर की चार दिशा में व्यन्तर देवन के महलन पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—कुण्डल गिर सिर चार दिसि, चार जिनेश्नर थान ।
जयमाला तिनकी कहूं, सुणो भव्य दे कान ।।

छन्द पद्धड़ी—जय द्वीप ग्यारहवों जानि लेय, जय कुंडल नामा चित्त देय ।
ता द्वीप मध्य वलयाजुकार जय कुंडल गिरि सौहे अपार ।।१।।
जय भूमि मांहि गिर कंद पाय, जय एक सहस योजन लखाय ।
जय पौण लाख योजन उतंग, जय हेम वर्ण छवि देत चंग ।।२।।
जय मूल भाग लखि व्यास लेय, जय योजन भाषूं चित्त देय ।
दस सहस दोय सत जोड़ बीस, जिन ग्रंथ मांहि वरणो जगीश ।।३।।
गिरि मध्य व्यास योजन बखानि, गिण वहत्तर से अरु तीस मानि ।
गिरि शीष व्यास योजन धराय, बियालीस सतक चालीस गाय ।।४।।
गिरि शीष चहुं दिशि कूट चार, पुनि कूट चार विदिशन निहार ।
इन आठों के अन्तराल माहि, वसुकूट और छाजै भलाहि ।।५।।
इन सोलह के शिर महल जोय, जय रत्नमई सुन्दर जु होय ।
जय नागदेव तिस थान वास, जिन भवन नमूं तिस थान खास ।।६।।

जय भीतर तिनसों ले निहार, दिस चार मांहि सिद्धकूट चार ।
जिन भवन चार चतु में लखाय, कर जोड़ नमूं निज शीष नाय ।।७।।
सब कूट ऊंच योजन प्रमाण, शत पांच लखो भवि चित्त आन ।
जय मूल भाग लखि लेहु व्यास, शत पांच भव्य योजन जु खास ।।८।।
जय कूट शीष पै व्यास गाय, योजना अढ़ाई सौ लखाय ।
अब और कथन भवि चित्त धार, जिन ग्रन्थ देखि त्रिलोक सार ।।९।।
सिर "नेम" जिनेश्वर चरण नाय, कर जोड़ अरज इतनी कराय ।
तुम देहु दयानिधि मुक्तिवास, हनि कर्म आठ पुनि जगत त्रास ।।१०।।

दोहा—कुण्डल गिरि पै चार दिशि, चार भवन जिनराय ।
तिनको अति आनंद सों, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं ग्यारहवां कुण्डल द्वीप मध्य कुण्डल गिर पै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—कुण्डल गिरि के शीष चार दिशि में लखो ।
अद्‌भुत मन्दिर चार, जिनेश्वर के रखो ।।
तिन भवनन को पाठ करं नर कोय जी ।
सो जग दुःख निवारि मुक्ति पति होय जी ।। इत्याशीर्वाद

श्री तेरहवां रुचिक गिरि चहुं दिशि चार श्री जिन भवन पूजा नं. ९४

स्थापना छन्द अडिल्ल–रुचिक नाम को द्वीप तेरबों भवि लखो ।
ता मधि वलयाकार रुचिक गिर सिर रखो ।।
चहुं दिश चतु जिन धाम महासुख दाय जी ।
आह्वानन विधि यहां करूं सिर नाय जी ।।

ॐ ह्रीं रुचिक नामा तेरहवां द्वीप मध्य रुचिक गिर शीष चार दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक—ढाल होली धमाल तथा उजाफ

निर्मल नीर कनक भरि झारी जपतो जिन गुणमाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिश मांही पूजूं चार जिनाला ।।
भला मैं नाचत दे दे ताला, जिन चरणन को नय भाला ।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष चहुँ दिशि चार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

बावन चन्दन केसर घसि कें धरि ले कनक पियाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···चंदनं

तन्दुल उज्ज्वल विमल अखंडित पुंज धरूं गुण आला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···अक्षतं

प्रासुक फूल सुगंधित भारी धरि ले कंचन थाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···पुष्पं

नेवज भेंट धरी हम यातें भूख व्यथा हम टाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···नैवेद्यं

दीप अमोलिक निर्मल लेवूं जगमग ज्योति विशाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···दीपं

धूप अनूप सुगंधित लेके पावक घट में जाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···धूपं

श्रीफल दाख सुपारी केला, आदिक फल ले आला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···फलं

पावन आठ जलादिक लेके, अर्घ कियो धरि थाला ।
रुचिक अचल पै चहुं दिशि मांही पूजूं चार जिनाला ।। भला मैं···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

दोहा—रुचिक अचल सिर पूर्व दिशि, सिद्धकूट जिन गेह ।
पूजूं ले नीरादिक वसु, इस थल धरि उर नेह ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष पूर्व दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

रुचिक अचल सिर दक्षिण दिश, सिद्ध कूट जिन गेह ।
पूजूं ले नीरादि वसु, इस थल धरि उर नेह ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष दक्षिण दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। २ ।।

रुचिक अचल सिर अपर दिशि, सिद्धकूट जिन गेह ।
पूजूं ले नीरादि वसु, इस थल धरि उर नेह ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष पश्चिम दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ३ ।।

रुचिक अचल सिर उत्तर दिशि, सिद्धकूट जिन गेह ।
पूजूं ले नीरादि वसु, इस थल धरि उर नेह ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष उत्तर दिशि सिद्धकूट स्थित श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। ४ ।।

अडिल्ल—रुचिक अचल के शीष पूर्व दिशि जाय जी ।
लखि बाहर ले भाग कूट वसु पाय जी ।।
जिन माता शृङ्गार कुमारी वास जी ।
महलन पे जिन गेह जजूं जिन खास जी ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष पूर्व दिशि बाहरले भाग आठ कूटन पै जिनदेव की माता का शृङ्गार करावने वाली दिक कन्यावास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

रुचिक अचल के शीष दक्षिण दिशि जाय जी ।
लखि बाहर ले भाग कूट वसु पाय जी ।।
दर्पण जिनवर मात धरण देवी बसे ।
महलन पै जिनराज जजूं सब अघ नसै ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष दक्षिण दिशि बाहरले भाग आठ कूटन विषै जिन माता के निकट दर्पण धारण करने वाली दिक् कुमारी कन्या वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो अर्घम् ।। २ ।।

रुचिक अचल के शीष अपर दिशि जाय जी ।
लखि बाहर ले भाग कूट वसु पाय जी ।।
जिन माता सिर छत्र धरण देवी बसैं ।
महलन पैं जिन देव जजूं सब अघ नसैं ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष पश्चिम दिशि बाहरले भाग आठ कूटन पैं जिन माता के सिर छत्र धरने वाली दिक्क्रमा देवी वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

रुचिक अचल के शीष उत्तर दिशि जायजी ।
लखि बाहर ले भाग कूट वसु पाय जी ।।
जिन माता सिर चंवर दुरावण हार जी ।
देवी थल जिनराज जजूं जू विचार जी ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष उत्तर दिशि बाहर ले भाग आठ कूटन पैं जिन देव की माता पैं चंवर करने वाली दिक कुमारी देवी वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

रुचिक अचल के शीष चहुं दिशि फिर लखो ।
वसु कूटन सो कूट अभ्यन्तर चतु रखो ।।
जिन माता के निकट करंती सेव जी ।
तिनके थानक मांहि जजूं जिन देव जी ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष चहुँ दिश आठ कूटन के भीतर ले भाग चार कूटन में जिन माता के निकट सेवा करने वाली दिक कुमारी देशी वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

रुचिक अचल के शीष चहुं दिशि फिर लखो ।
चतु कूटन सों कूट अभ्यन्तर चतु रखो ।।
जाति करम जिनराज तणों देवी करैं ।
थानक में जिन देव जजूं चहुं गति हरैं ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष चहुँ दिशी चार कूटन सो ओली तरफ चार कूट विषै जाति कर्म करने वाली देवी वास स्थित श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

रुचिक अचल के शीष चहुं दिशि फिर लखो ।
चतु कूटन सो कूट अभ्यन्तर चतु रखो ।।
श्री जिन मात प्रसूति करावण हार जी ।
देवी घर जिन देव जजूं हितकार जी ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष चहुँ दिशि चार कूटन सो अभ्यान्तर भाग चार कूटन पै माता को प्रसूति कर्म करावने वाली देवी वास स्थित सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

दोहा--रुचिक अचल सिर चार दिशि, जोय जिनालय चार ।
अर्घ जजूं नीरादि ले उर में धरि बहु प्यार ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिरि शीष चहुँ दिशि सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—चार भवन जिन रुचिक गिर, चहुं दिशि में गिण लेय ।
जयमाला तिनकी कहूं, सुनो भव्य चित देय ।।

छन्द बेसरी–रुचिक तेरहवों द्वीप कहावें, ताके भवि मधि भाग लखावें ।
चहुं दिश गिरद रुचिक गिरि मानों, कंचन वर्ण भव्य उर आनो ।।१।।
योजन एक हजार विचारों, पृथ्वी तल में कंद निहारों ।
मूल भाग को भवि लखि व्यासा, योजन सहस चौरासी खासा ।।२।।
योजन ऊंच सहस चौरासी, सिर पै व्यास मूल सम पासी ।
चहुं दिश भाग समान बखानो, वसु वसु कूटनि ते उर आनो ।।३।।
सबकी जोड़ बतीस दिवावो, योजन ऊंच पांच से गावो ।
योजन पांच शतक का व्यासा, मूल भाग कूटन का खासा ।।४।।
सिर पर योजन शतक अढ़ाई, सब कूटक का समझो भाई ।
और कथन भवि सुनि चित देवो, पूर्व दिशा वसु कूट लखेवो ।।५।।

जिन माता शृङ्गार करावें, दिक कन्या तिस थान बसावें।
तिनके महलन पै जिन गेहा, ते सब बन्दूं उर धरि नेहा ॥६॥
दक्षिण दिश वसु कूट निहारों, जिन माता के निकट विचारों।
दर्पण धारक देवी वासा, तिस थल भवन नमूं जिन खासा ॥७॥
पश्चिम दिस वसु कूट कहावें, जिन माता सिर छत्र धरावें।
तिन देवीन के थानक मांही, श्री जिन भवन जजूं शक मांही ॥८॥
आठ कूट उत्तर दिश पावें, जिन माता पै चंवर ढुरावें।
तिन देविन के तिस थल थाना, तिन पै भवन नमूं भगवाना ॥९॥
इन कूटन सों भीतर सोहें, चहुं दिश चार कूट मन मोहें।
जिनवर मात करें ते सेवा, देवी वास नमूं जिन देवा ॥१०॥
इनसे पुनि भीतर ले भागा, चहुं दिश चार कूट लखि जागा।
जिन माता प्रसूति करावें, तिस थल जिन पद शीष नमावें ॥११॥
चार कूट पुनि चहुं दिशि मांहि, उनसो भीतर है शक नांहि।
जात करम जिन कारक वासा, देवी भवन नमूं जिन खासा ॥१२॥
इन कूटन सों फेर निहारो, चहुं दिश भीतर भाग विचारो।
सिद्धकूट भवि चार कहावें, तिनके सिर जिन मंदिर पावें ॥१३॥
चारों पै गिरा चार विराजें, नाना मणि अद्भुत छवि छाजें।
लम्बे योजन जान पचासा, पच्चिस योजन लखि भवि व्यासा ॥१४॥
जिन मन्दिर को ऊंच बखानो, साढ़े सैंतीस योजन मानो।
तीन द्वार तिहुं दिश में पावे, पूर्व दखिण उत्तर मन भावे ॥१५॥
पूरब द्वार उतंग पिछानौ, योजन षोडस भवि उर आनौ।
द्वार तणी लखि लेहु चुड़ाई, योजन आठ जिनागम गाई ॥१६॥
दखिन उत्तर दिशि द्वय द्वारा, यातें आधे लेहु विचारा।
और कथन जिन ग्रंथ निहारो, रचना सकल भव्य मन धारो ॥१७॥

श्री जिन धाम महा सुखदाई, उपमा कीने दीजे भाई।
तिस थल सुरपति अरु सचि आई, और सकल सुर संग लहाई ॥१८॥

निर्मल द्रव्य आठ ले आवे, पूजत जिनवर के गुण गावे।
नाचत तान लेत बहु भारी, ठुमक ठुमक पग धरत अगारी ॥१९॥

झनन झनन पद नूपुर बाजे, बीन मृदंग बंसरी गाजे।
बाजत ताल सरस सारंगी, झांझ मंजीरन की ध्वनि चंगी ॥२०॥

ढफ जु हजार तम्बुरे जानो, भिरि शहनाय झालरी मानौ।
तबले ढोलक बजे नगारा, मोहन बाजा मुरचंग प्यारा ॥२१॥

शहनायची जु आरुण संगा, घण्टा तंवर तणो खु चंगा।
तासे मरफी तुंतुनि बाजे, जल तरंग ध्वनि अद्भुत छाजे ॥२२॥

इन आदिक बाजे लखि लेवो, साढ़े बारह क्रोडि गिणेवो।
सबकी ध्वनि इकसार मिलावें, ग्राम तालुकी भेद लखावें ॥२३॥

जय जय शब्द करत बहु तेरे, नाचत सुरपति भवि चित्त हेरे।
मुखतें जिन गुण गावत भाई, मन वच तन बहु हरष धराई ॥२४॥

तुम जिनवर तिहुं जग के स्वामी, तुमही दीसत अन्तयांमी।
तुम ही दीन दयाल कहावौ, दुखियन के दुःख तुम्हीं मिटावो ॥२५॥

तुम ही हो शिवपुर के नायक, तुम ही सप्त तत्व गुण दायक।
तुम ही नाशो अब भव फेरा, तुमही धो शिव थानक सेरा ॥२६॥

तातैं "नेम" चरण सिर नावै, बार बार यह अरज करावें।
मोको कर्म देत दुःख भारी, सो तुम जानत हो प्रभू सारी ॥२७॥

काल अनंत वितीत गयो जी, अजहुं नाहीं अन्त भयो जी।
अब करुणा लीजो प्रभू मेरी, वेगि हरो चहुं गति को फेरी ॥२८॥

दोहा—रुचिक अचल पे चार दिशि, चार भवन जिनराय ।
तिनको शीस नवाय कैं दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं रुचिक गिर शीष चहुँ दिशि सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाल पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—रुचिक अचल के शीष लखो दिशि चार जी ।
श्री जिन मंदिर चार लसें सुख कारजी ।।
तिनको मन वच काय शुद्ध करि जे नरा ।
पाठ पढ़ें तें थान लेय अजरा मरा ।। इत्यार्शीवाद

ज्योतिष

सवैया—जम्बू द्वीप रु लवण समुद्र सु दुगुण दुगुण आगे विस्तारा ।
स्वयंभू रमण समुद्र परयन्त असंख्यति व्यन्तर परिवारा ।।
सब थल श्री जिन धाम तनी जिन बिम्ब नमूं मैं बारम्बारा ।
ता फल में शिव थान बसूं अरु छूट जावे पण विधि संसारा ।।

ॐ ह्रीं असंख्याति दीप समुद्र सम्बन्धो व्यन्तर थानकां सम्बन्धो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

मध्यहि लोक में ज्योतिष थानक देव सु पाँच प्रकार बताये ।
चाँद रु सूर्य नक्षत्र तथा ग्रह तारा नाम जिनागम गाये ।।
एक सु चाँद के साथ सूर्य इक आठ रु बीस नक्षत्र कहाये ।
गिरह रहें अस्सी अरु आठ सु तारेनि की संख्या बतलावें ।।
सरसठि सहष में पच्चिस घाटि सु इतनी क्रोड़ा कौड़ी जानो ।
इक परिवार कहा इतना अब दीप सु ढाई में पहिचानो ।।
दोय अरु चारि सु बारह व्यालिस और बहत्तरि चाँद पिछानो ।
इन सब मध्य जिनालय की मैं पूजन करिके धन्य कहानो ।।

ॐ ह्रीं चित्रा पृथ्वी के समतल भूभाग से सात सो नब्बे से लेकर नो सो योजन तक एक सो दस योजन में ढाई द्वीप सम्बन्धी पाँच प्रकार के ज्योतिषि देव के विमान सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

पच्चिस कोड़ा कोड़ि तना उद्धार, पल्य परिमाण विचारो ।
द्वीप समुद्र जु है इतने, इन सबके मांहि असंख्य चितारो ।।
इक इक जिन मंदिर सब के, मधि रचना सर्व सहित उर धारो ।
सब जिन भवन तनी प्रतिमा, करि पूजन शिवपुर मांहि पधारो ।।

ॐ ह्रीं मध्य लोक सम्बन्धी असंख्यात् द्वीप तथा समुद्र में पाँच प्रकार के ज्योतिषी देवो के विभानन् में सकल जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

सूचना

जम्बू द्वीप में २ सूर्य हैं। उमका गमन क्षेत्र एक हो है यह गमन क्षेत्र जम्बू द्वीप के भीतर तो १८० योजन और लवण समुद्र में ३३० ४८/६१ योजन है। कुल ५१० ४८/६१ क्षेत्र की चौड़ाई में १८४ गलियां सूर्य के गमन करने की हैं। जिनमें क्रम से १, २, ३ आदि से १८४ तक गमन इसे दक्षिणायन कहते हैं इसमें दिन छोटा और रात्रि बड़ी होती जाती है अन्त का दिन ९ घण्टे और ३६ मिनिट तथा रात्रि १४ घण्टा २४ मिनिट हो जाती है फिर वापिस भीतर भीतर की गलियों में जैसे १८३, १८२ से घटते पहिली गली तक आता है उसे उत्तरायण कहते हैं इसमें दिन बड़ा और रात्रि छोटी होती जाती है। अन्त का दिन १४ घण्टे २४ मिनिट और रात्रि ९ घण्टे ३६ मिनिट की हो जाती है। इस हर एक में एक चक्कर पूरा करने में एक सूर्य को ४८ घण्टे लगते हैं। चूंकि जम्बू द्वीप में २ सूर्य हैं अतः हर २४ घण्टे में सूर्य दिखाई दे जाता है। इस प्रकार एक बार जाने और आने में पहिलो और अन्त की एक एक और बीच वाली १८२ गलियों की दो दो १+१+१८२+१८२=३६६ दिन का समय लगता है इसे एक साल कहते हैं।

तथा चांद का भी गमन क्षेत्र इतना ही है। ५१० ५६/६१ परन्तु इसको ऊंचाई, सूर्य की ऊंचाई से ८० योजन अधिक है अथवा ३ लाख २० हजार मील सूर्य से ऊपर है। इस गमन क्षेत्र में चन्द्र की १५ गलियां हैं जिनमें क्रम से आता जाता रहता है। जम्बू द्वीप में दो चांद हैं एक चांद को हर एक गली का पूर्ण चक्कर लगाने में ४९ घण्टे और ३६ मिनिट लगते हैं इसी कारण से शुक्ल और कृष्ण पक्ष बन जाता है गमन तो सूर्य और चांद का प्रति समय होता रहता है। सूर्य के विजान के नीचे केतू का विमान और चांद के विमान के नीचे राहु का विमान एक एक योजन के अन्तर से भ्रमण करते हैं चाल में अन्तर होने से केतु का विमान सूर्य को और राहु का विमान चांद को ढक देता है इसे ग्रहण कहते हैं। विशेष जानकारी त्रिलोकसार या लोक विभाग से प्राप्त करें।

उर्ध्वलोक पूजा

श्री उर्ध्वलोक में सोधर्म ईषान प्रथम युगल सम्बन्धी साठ लाख श्री जिन भवन पूजा नं. ६५

छन्द गीता स्थापना--सौधर्म अरु ईशान नामा, जुगल पहला की मही ।
गिण साठ लाख विमान में, जिन भवन सवमें हैं सही ।।
उर हरष धरि जिन भवन, सबकी करत हम आह्वानना ।
इस थान तिनके पूजने को, बार त्रय मुख सों भना ।।

ॐ ह्रीं सौधर्म ईशान स्वर्ग सम्बन्धी साठ लाख विमानन विषै साठ लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्नहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक जोगीरासा–अति ही उज्जवल मधुर, मनोहर शीतल जल भरि झारी ।
हरषि हरषि उर कर गहि लायो जन्मादिक दुःख टारी ।।
प्रथम जुगल इक दोय ल्वर्ग में पटल सकल इकतीसा ।
साठ लाख जिन मंदिर पूजत होय करम सब खीसा ।।

ॐ ह्रीं सोधर्म ईशान स्वंग सम्बन्धी साठ लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

मलियागिर घन केसरि घसिके कनक कटोरी लेवूं ।
भव तप दुद्धर मेट हमारो याते तुम पद सेवूं ।। प्रथम जुगल···चन्दनं

तन्दुल उज्जवल सरल अखंडित इंदुतनी द्युति हारे ।
होय अक्षय पद याते लायो उपजी चाह हमारे ।। प्रथम जुगल···अक्षतं

प्रासुक नाना भांति सुवासित फूल मनोहर आनें ।
काम बाण को मेटन हारे जग में तुमको जाने ।। प्रथम जुगल···पुष्पं

रोग क्षुधा है अति दुःख दाई जग जिय जैर करें है ।
सो तुम नाश्यौ याते निर्मल नेवज भेंट धरे हैं ।। प्रथम जुगल···नैवेद्यं

मोह तिमिर शिव मग में छायो मोको जान न देवे ।
यातैं मणिमय दीपक लेके तुम पद पंकज सेवे ।। प्रथम जुगल···दीपं
धूप दशंगी कर ले चंगी बन्ही घर में डारूं ।
तुमपदपंकज आगे आठों कर्म रिपु को जारूं ।। प्रथम जुगल···धूपं
कल्प तरु के अति मन भावन देखत नयन लुभावे ।
ऐसे फल तुम भेंट करत ही तत् क्षण शिव फल पावे ।। प्रथम जुगल···फलं
निर्मल नीर सुगंधी चन्दन तन्दुल फूल सुवासी ।
नेवज दीपक धूप धरूं फल अर्घ कियो सुखरासी ।। प्रथम जुगल···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

होमें करूं वन्दना उर्ध्व लोक जिन थान की ।।टेक।।

दोहा—प्रथम द्वितिय दो स्वर्ग का, पहिला युगल कहाय ।
पटल तासु इकतीस है, ऊपर ऊपर जाय जी ।।
इन सब में इक इक इन्द्रक नाम विमान । हो मैं करूं···

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में सौ धर्म तथा ईशान दो स्वर्गों प्रथम युगल सम्बन्धी इकतीस पटल क्रम से :— रितू, चन्द्र, विमल, वल्गु, वीर, अरुण, नलिन, कांचन, रोहित, चंच, मरुत, रिद्धीश, वैडूर्य, रुचक, रुचिर, अङ्क, स्फटिक, तपनीय, मेघ, अभ्र, हारिद्र, पदम, लोहित, वज्र, नन्द्यावर्त, प्रभाकर, पृष्टक, गज, मित्र, प्रभा, सम्बन्धी इन्द्रक विमानों के श्री जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक इक इन्द्रक चउ दिशा, श्रेणिबद्ध मन लाय ।
उनसठ सौ बावन भवन, में जिनगृह सुखदाय जी ।।
इन सब में पूजूं जैन बिम्ब अमलान । हो मैं करूं···

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में प्रथम युगल के ३१ पटलो की चारों तरफ चारों दिशाओं में ५६५२ श्रेणी बद्ध विमानों के समस्त जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चरु विदिशा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण भवनाय ।
सब में जिनवर गेह की पूज करूं मन लाय जी ।।
तासूं बन जावे शिवपुर मांहि मकान । हो मैं करूं····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में प्रथम युगल के चार विदिशाओं में ५६६४०१७ प्रकीर्णक विमानों के जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

प्रथम युगल में तीन विधि, साठ लाख सु विमान ।
बिम्ब शतक अरु आठ हैं सब में श्री भगवान जी ।।
देखत ही होवे अनुपम सुख महान । हो मैं करूं····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के प्रथम युगल सम्बन्धी साठ लाख विमानों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—प्रथम युगल में जानियो, साठ लाख जिन गेह ।
तिनकी सुणि जयमालिका, भाषूं उर धरि नेह ।।

गीता छन्द—मेरु सुदर्शन ते जु ऊंचौ, डेढ़ राजू लौ सही ।
सौ धर्म अरु ईशान मिलके, जुगल पहला की मही ।।
ता क्षेत्र में इकतीस गिरण ले, पटल भवि मन लायकें ।
मधि माग इन्द्र विमान ताके, पटल प्रति धरवायकें ।।१।।
मेरु सुदर्शन चूलिका तें बाल इक अन्तर रखौ ।
धरि ऋजुक नाम विमान इन्द्रक पटल पहला में लखौ ।।
योजन असंख्याते तहां तें ऊंच फिर लखि लीजियो ।
है पटल दूजो विमल इन्द्रक नाम भवि चित दीजियो ।।२।।
इस भांति सब ही पटल मांही एक इन्द्रक जानियौ ।
योजन असंख्याते जु उर अन्तर पटल उर आनियौ ।।

इकतीस में इकतीस इन्द्रक जानि इस विधि रीति सों ।
अब सुनहुं भविजन चित्त देके कथन आगे प्रीति सों ।।३।।

ऋजुक नाम विमान को भवि व्यास उर में लाइयो ।
गिण द्वीप ढाई की बराबर आप्त आगम आइयो ।।
गिण पटल प्रति फिर हानि आगे व्यास इन्द्रक की सही ।
हजार सत्तर पै जु नवसै जोड़ि सड़सठ लेत ही ।।४।।

तेईस का इकतीसवां धरि भाग जोड़ गिणीजिये ।
लखि हानि इन्द्र विमान व्यासा समझि सब थल लीजिये ।।
बाहुल्यता गिण लेहु सब थल जुगल पहला की मही ।
ग्यारा जु सें इक्कीस योजन जोड़ि भवि समझो सही ।।५।।

लखि साठि लाख विमान इन्द्रक आदि श्रेणीबद्ध जी ।
प्रकीर्ण साथ मिलाय गिण ले प्रभक भूमी खंध जी ।।
लखि ऋजुक इन्द्रक आदि छै कै पुत्रक इन्द्रक लौं लसें ।
यों श्रेणीबद्ध विमान चहुंदिश सकल इन्द्रक तैं बसें ।।
गिण पटल पहला मांहि त्रेसठि पूर्व दिश में है सही ।
दिशि दक्षिण पश्चिम कुम्भ उत्तर जानि ले इस रीत ही ।।६।।

इक इक दिशा प्रति ऊन करियो चार दिश के चार ही ।
इस भांति इकतिस पटल मांही समझ लेहु निहार जी ।।
गिण लेउ उनसठ सतक बावन सकल श्रेणीबद्ध जी ।
योजन असंख्य प्रमाण इनको व्यास समझो श्रद्ध जी ।।७।।

संभू जु रमण समुद्र ऊपर बसत आधो जानियो ।
पुनि शेष के करि अर्द्ध संभु रमण द्वीप बखानियो ।।
इस भांति आधो आध कर ते उद्धि द्वीप लगो लगा ।
त्रय दीप तीन समूद्र ऊपर सेष आधे इस जगा ।।८।।

सबही पटल में कोण चतु मांही बसत सु प्रकीरणा।
जैसे बिखेरे फूल मानो देत शोभा अति घणां ।।
गिण उनसटी हैं सतक चालीस ऊन साठ हि लाख जी।
योजन असंख्य जु संख्य इनको व्यास भवि उर राख जी ।।९।।

आधार जल के सकल तिष्ठत पंच वर्ण सुहावने।
रचना जु और अनेक तिनमें कथन कब लौं गावने ।।
इस भांति पहला जुगल मांहीं स्वर्ग दोय कहात है।
तिनको पिछाणन को भविक जन कथन कछु दर्शात है ।।१०।।

बत्तीस लाख विमान इस विधि स्वर्ग है सोधर्म जी।
तिस मांहि श्री जिन भवन तितने नमत हूं तजि मर्म जी ।।
अब शेष स्वर्ग ईशान मांही लाख अष्टा बीस जी।
बीमान मांही भवन जिनवर नमत हूं निज शीष जी ।।११।।

इस भवन में सुरराय आदिक जनम लेवत ही भला।
तत्काल आप जिनेश जी को जजत ले वसु निरमला ।।
उत्कृष्ट रचना भवन जिन की कही आगम में जिसी।
इस थान में ते सकल पावैं समझि भवि मन में तिसी ।।१२।।

संक्षेप ते हम कथन ईसो काल पाय बखानियो।
त्रैलोक्य सार विचार उर में सकल रचना जानियो ।।
त्रैलोक्य के तुम ईश जिनबर गुण अनन्त धरात हो।
बूड़त भवार्णव भव्य जन को काढ़ि पार करात हो ।।१४।।

तुम धर्म का उपदेश देके स्वपर भेद बतात हो।
बिन काज जग में जगत जन के बाप माता भ्रात हो ।।

तुम बिन जिनेश्वर मोह को अंधियार कैसे जाय जी ।
शिव भामिनी को नाथ तुम बिन भव्य कैसे पाय जी ।।१४।।
तातैं सदा जयवंत बरतो एक विनती मो तणी ।
सुण लेहु तुम बिन और नांही जगत में मेरो घणी ।।
अब विरद अपनो याद करिकें बांह गहि के "नेम" की ।
डूबत भवार्णव तैं उबारो दृष्टि धरिके प्रेम की ।।१५।।

मत्तगयन्द छन्द—सौधर्म जु मांहि बत्तीस जु लाख ईशान अठाविस लाख धरावै ।
साठि हि लाख भये सब जोड़ जिनेश्वर मन्दिर ता सब पावें ।।
पूजत इन्द्र शची सुर आदिक हर्षित श्री जिन के गुण गावें ।
आठ पुनीत जलादिक लेकरि इस थल तिनको अर्घ चढ़ावें ।।

ॐ ह्रीं सौधर्म ईशान स्वर्ग सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

छप्पय—साठि लाख जिन गेह जुगल पहला में सोहे ।
देखत दृग तत्काल इन्द्र सुर आदिक मोहे ।।
तिन भवनन के पाठ करें भवि भाव लगाकें ।
अरु अनुमोदें कोय देखि उर चाहि धराकें ।।
घर मधि तिनके होत महा सम्पति सुख कीरे ।
फिर पद अचला पाय रहैं अनुक्रम भवतीरे ।। इत्याशीर्वाद

श्री सनत्कुमार माहेन्द्र द्वितीय युगल विषैं बीस लाख विमानस्थ सकल श्री जिन भवन पूजा नं. ९६

स्थापना अडिल्ल—सनत्कुमार महेन्द्र जुगल दूजो रखो ।
बीस लाख विमान भवन जिनवर लखो ।।
तिनकी पूजन की चाहि हमारे उर मेंही ।
तातैं ही आह्वानन करें इस स्थल सही ।।

ॐ ह्रीं सनत्कुमार माहेन्द्र नामा दोय स्वर्गन विषैं बीस लाख विमानस्थ सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाल त्रिभंगी छन्द—सुर सरिता को जल प्रासुक निर्मल मधुर सुशीतल भरि झारी ।
उर हरषि धराकैं लेत उठाकैं तुम गुण गाकैं दी धारी ।।
दिव सनत्कुमारं महेन्द्र विचारं नख गिण लाखम् जिन धामम् ।
तिनकी पूजन करि कर्म रिपु हरि चालो भवि फिर शिव ठामं ।।

ॐ ह्रीं सनत्वकुमार नामा दोय स्वर्ग मध्य बीस लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

श्री खंड अपारं केशर डारं सौरभ भारं घसि लायो ।
भव ताप सतायो अति दुःख पायो तातैं आयो सिर नायो ।। दिव सन०···चन्दनम्

लखि बहुत अनोखे घन जल पोखे तन्दुल चोखे ले आयो ।
गुण पुन्ज धरूं जी गान करूं जी पांव परूं जी हरषायो ।। दिव सन०···अक्षतम्

ले फूल पुनीतं बहु विधि रीतं उर धरि प्रीतं निर्दोषं ।
सौरभि तें आवै अलि भरमावै ताहि लहावै संतोषं ।। दिव सन०···पुष्पम्

विधि सूं जु बनाये नेवज लाये क्षुधा नशावे बहु ताजा ।
मुझ भूख सतायो तातैं धायो तुम ढिग आयो जिनराजा ।। दिव सन०···नैवेद्यम्

मणि तेज प्रकाशं तम निर्नाशं दीप उजासं करि ताको ।
अज्ञान अंधेरो मेटो मेरो भव भव चेरो मैं थांको ।। दिव सन०···दीपम्

श्री खंड कुटा करि धूप बना करि तुम ढिग आकर जालत हैं ।
यह धूप न जानो जग भरमानो करम ठिकानो टालत हैं ।। दिव सन०···धूपम्

फल बहुत भलेरं प्रासुक हेरं लेकर ढेरं तुम आगें ।
निज सुख अविनाशी ज्ञान प्रकाशी शिव फल खासी हम आगें ।। दिव सन०···फलम्

जल आदिक सारे आठ प्रकारे निर्मल धारे अर्घ कियो ।
द्वय हाथ उठावूं जय जय गावूं शीष नमाऊं खोलि हियो ।। दिव सन०···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक जिन थान की ।।टेक।।

दोहा--तिसरे चौथे स्वर्ग का द्वतीय युगल कहलाय ।
पटल तासु के सात हैं ऊपर-ऊपर जाय जी ।।
इन सब में इक-इक इन्द्रक नाम विमान । हो मैं करूं.....

ॐ ह्रीं उर्ध्वलोक में सनत्व कुमार माहिन्द्र दो स्वर्गों के द्वितीय युगल सम्बन्धी सात पटल क्रम से अंजन वनमाल नाग गरुड़ लांगल वल भद्र चक्र सम्बन्धी इन्द्रक विमानों में श्री जिनालय सम्बन्धी सकल श्री विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक-इक इन्द्रक चउ दिशा श्रेणिबद्ध कहलाय ।
आठ सतक बारह भवन, में जिन गृह सुखदाय जी ।।
इन सब में सुरगण नित्य करें गुणगान । हो मैं करूं.....

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में द्वितीय युगल के सातों इन्द्रकों की चारों दिशाओं में ८१२ श्रेणी वद्ध विमानों सम्बन्धी समस्त जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चउ विदिसा इन्द्रक तनी, हैं प्रकीर्ण भवनाय ।
सब में जिनवर धाम की, पूज करूं मनलाय जी ।।
तासूं वनि जाऊं शिवपुर का मेहमान । हो मैं करूं.....

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के द्वितीय युगल के सातों इन्द्रकों की चारों विदिशाओं में १९९९१८१ प्रकीर्णक विमानों के जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

युगल दूसरे में लखो बीस लाख सुविमान ।
बिम्ब सतक अरु आठ हैं सब में श्री भगवान जी ।।
कवि वया छवि वरणें, हारि गये बलवान । हो मैं करूं.....

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के द्वितीय युगल में बीस लाख विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । १०८ (बार)

जयमाला

दोहा—सनत्कुमार महेन्द्र में, बीस लाख जिन थान ।
जयमाला तिनकी कहूं, सुणो भविक दे कान ।।

छन्द बेसरी—प्रथम जुगल ते ऊंच बखाना, राजू डेढ़ कह्यौ भगवाना ।
सनत्कुमार महेन्द्र जु नामा, स्वर्ग दोय लागत अभिरामा ।।१।।

जुगल दूसरो यह सुखदाई, सात पटल तामें गिण भाई ।
प्रथम पटल के मध्य बखाना, इन्द्रक अंजन नाम विमाना ।।२।।

ताकी चहुं दिशि जाहि बसावै, श्रेणीबद्ध विमान कहावै ।
एक दिशा बत्तीस गिणावों, इह विधि तीनों दिशा फिरावों ।।३।।

चारों दिशि को जोड़ धरीजै, एक शतक अठबीस गिणीजै ।
तिन सबमें श्री जिनवर गेहा, तिनको वन्दूं उर धरि नेहा ।।४।।

तातैं ऊंच असंख्य बखानौं, योजन पटल दूसरौ मानौं ।
ताके मध्य भाग लखवाना, इन्द्रक बनमाला जु विमाना ।।५।।

ताकी चहुं दिशि में चित देवो, श्रेणीबद्ध विमान लखेवो ।
एक शतक चौबीस धरीजे, चहुं दिश की गिण तासु लखीजे ।।६।।

तिन सब मांहि जिनालय पावै, पूजन को इन्द्रादिक आवै ।
शक्ति बिना हम इस थल मांही, नित प्रति बंदे उर धर चाही ।।७।।

ताके ऊपर फिर लजि लेवो, योजन ऊंच असंख्य गिणेवो ।
तीजो पटल मध्य पुनि ताकै, इन्द्रक नाम विमान धराकै ।।८।।

तिनतैं चहुं दिश श्रेणी विमाना, एक शतक अरु बीस बखाना ।
तिन जिन मन्दिर लखिकर भाई, वंदूं इस थल मन वचकाई ।।९।।

योजन फेर असंख्य बितावो, पटल चतुर्थ ऊंच मन लावो ।
इन्द्र गरुड़ वीमान विराजै, ताकी चहुं दिश में लखि बाजै ।।१०।।

श्रेणीबद्ध एक सौ सोला, जिन मन्दिर तिनमें सुखकोला ।
तिनको भी हम इस थल वंदैं, भव संचित सब पाप निकंदैं ।।११।।

फेर असंख्य ऊंच जब जावै, योजन पटल पंचमो आवै ।
लांगुल इन्द्रक ता मधि जानौ, श्रेणीवद्ध चहूं दिश मानो ।।१२।।

एक शतक पैं ऊपर बारा, तिनमें श्री जिन गेह निहारा ।
वंदू तिनको शीष नमा कै, मन वच तन त्रय योग मिलाकै ।।१३।।

योजन ऊंच असंख्य चलीजे, छठो पटल विषैं चित दीजे ।
ताके मध्य जु भाग लगावै, इन्द्रक यह बलभद्र कहावै ।।१४।।

चहुं दिशि ताकी मन को मोहै, श्रेणीबद्ध विमान जु सौहै ।
एक शतक पैं आठ गिणाई, तिस थल जिन गृह प्रणमूं भाई ।।१५।।

योजन ऊंच असंख्य जु फेरूं, पटल सातवां तिस थल हेरूं ।
मध्य भाग में इन्द्रक पावै, चक्र विमान नाम धरवावे ।।१६।।

आकी चहुं दिशि में पुनि छाये, श्रेणीबद्ध विमान बताये ।
एक शतक पैं चार गहीजे, तिनमें भवन जिनेश लखीजे ।।१७।।

वंदू सिर नमाय शुध भावा, यातैं होय करम निरदावा ।
आगे कथन सुनौ भवि नीकौ, बसत प्रकीर्ण विमान सु नीकौ ।।१८।।

सातों पटलन मांहि पिछानौं, इन्द्रक श्रेणीबद्ध पिछानो ।
बीस लाख में वादि कराई, आठ शतक उगनीश बताई ।।१९।

बिखरे फूल समान लसावै, तिन सब पै जिन मन्दिर पावै ।
देखत शोभा दृग प्रियकारी, तिनको ढोक त्रिकाल हमारी ।।२०।।

इन्द्रक योजन संख्य प्रमाना, तिनकी महिमा कहत न जाना ।
तिनमें जिनवर भवन बताये, गिण सातनको हम सिर नाये ।।२१।।

श्रेणीबद्ध विमान जु व्यासा, जानि असंख्य जु योजन खासा ।
संख्य असंख्य जु योजन पावै, व्यास प्रकीर्ण विमान धरावै ।।२२।।

पवन तनय आधार धरावै, और कथन हम कबलौं गावैं ।
द्वादश लाख प्रमाण बताये, स्वर्ग तीसरे में कहलाये ।।२३।।

ये ही बारह लाख विमाना, सनत्वकुमार स्वर्ग पहिचाना ।
सनत्वकुमार इन्द्र बहु नामी, येही स्वर्ग तणों लखि स्वामी ।।२४।।

उत्तर वायु कोण ईशाना, श्रेणीबद्ध प्रकीर्ण विमाना ।
आठ लाख को जोड़ धरावैं, ये ही स्वर्ग महेन्द्र कहावै ।।२५।।

इनको इन्द्र महेन्द्र कहावै, और भेद कछु नाहिं लखावैं ।
द्वय मिलि बीसं लाख विमाना, ये ही जुगल दूसरों गाना ।।२६।।

श्री जिन मन्दिर थोक लखावैं, बीस लाख एकट्ठे पावैं ।
पुजत तिस थल अष्ट प्रकारा, हरि आदिक धरि हर्ष अपारा ।।२७।।

जिन गुण गान गात में फूलें, नाचत ताल ग्राम नहिं भूलें ।
बजत बीन मिरदंग सरंगी, मधुर लगत ध्वनि मनको चंगी ।।२८।।

झनक झनक नूपुर झंकारा, ठमक ठमक पग धरत निहारा ।
स्वर्ग मध्य साधें मिलि गावैं, ता ता थेई तान लहावैं ।।२९।।

तुम जिनवर त्रिभुवन सुखकारी, जग दुख नाशि वरी शिवनारी ।
मोह सुभट प्रभु तुमही जीत्यौ, तुम प्रभु कार्य कियो मनचीत्यौ ।।३०।।

तुमही मोह सुता को नाशौ, निज गुण संपति आप प्रकाशौ ।
तुम गुण महिमा को कवि गावै, गणधर आदिक अंत न पावै ।।३१।।

सुयश तुम्हारों तिहूं जग छायो, सुनिकै मेरो मन ललचायो ।
कर्म रिपु मेरे संग लागै, तुमहीं सौ ये डरिकर भागै ।।३२।।

"नेम" चरण की शरण रखावो, कर्म रिपुन को संग छुड़ावो ।
और कछु नहीं तुम पै मांगें, मेरे संग ये फिर नहीं लागें ॥३३॥

दोहा—इहि विधि दूजा जुगल में, बीसहि लाख विमान ।
अर्घ चढ़ावों भव्य जन, लखि जिनवर के थान ॥

ॐ ह्रीं सनत्वकुमार माहेन्द्र नामा दोय स्वर्ग सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

कवित्व—सनत्वकुमार महेन्द्र विषैं जिन मन्दिर बीस ही लाख लखावैं ।
तिनको पाठ पढ़ै निश्चय कोई मन वच तन त्रय लोग लगावैं ॥
सोई नर सुर संपति के सुख भुगति फेरि थिरता पद पावै ।
काल अनन्त सरा अविनाशिक निरूपम सुख में लीन रहावै ॥

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर दो स्वर्गों के तीसरी युगल में चार लाख श्री जिन भवन पूजा नं. ९७

स्थापना अडिल्ल—ब्रह्म ब्रह्मोत्तर कल्प विषैं लखि लेय जी ।
चार लाख सु विमान भवन जिन गेह जी ॥
तिनको पूजन काज सु विधि आह्वान की ।
इस थल करि उर चाहि धरैं गुणगान की ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर नामा दोय स्वर्ग विषैं चार लाख विमानन सम्बन्धी चार लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रवतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

सोरठा—हेम झारिका राखि, उत्तम गंगा नीर कूं ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर नामा दोय स्वर्गन विषैं चार लाख विमान सम्बन्धी चार लाख श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् ।

चन्दन केशरि नाख, घसि ले कनक कटोरिका ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। चन्दनम्

जिन गुण मुख तें भाख, पुंज धरूं तन्दुल तणो ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। अक्षतम्

पुष्प सुगंधी खास, श्री जिन आगम तें लये ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। पुष्पम्

नेवज देखत आँख, निर्मल विधि तें लेय कें ।
जिन गृह चतु जिन लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। नैवेद्यम्

स्वपर भेद प्रत्यक्ष, तातें उत्तम दीप ले ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। दीपम्

जलत कर्म को लक्ष, यातें जालूं धूप ले ।
जिन गृह चतु गिण लक्ष, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। धूपम्

श्रीफल आदिक दाख, विमल हेतु शिव फल लिये ।
जिन गृह चतु गिण लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। फलम्

जल फल आगम साख थाल बड़े विस्तार का ।
जिन गृह गिण चतु लाख, ब्रह्म ब्रह्मोत्तर के जजूं ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक सुर थान की ।।टेक।।

दोहा—पंचम षष्ठम स्वर्ग का, तीजा युगल कहाय ।
चार पटल हैं तासु के ऊपर-ऊपर जाँय जी ।।
इन सबमें इक-इक इन्द्रक नाम विमान । हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में ब्रह्म ब्रह्मोत्तर दो स्वर्गों के तृतीय युगल सम्बन्धी चार पटल क्रम से अरिष्ट, देव सिमिति, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर सम्बन्धी इन्द्रक विमानों में श्री जिनालय सम्बन्धी सक श्री जिन विम्भेम्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक इक इन्द्रक चहुं दिशा, श्रेणिबद्ध कहलाय ।
भवन तीन सौ छिअत्तारा, में जिन गृह सुखदाय जी ।।
इन सब में सुर गण नित्य करें गुणगान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में तृतीय युगल में चार इन्द्रकों की चारों दिशा में तीन सौ छियत्तर श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी जिनालयों में सकल श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चउ विदिशा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण भवनाय ।
सब में जिनवर धाम की पूज करूं मन लाय जी ।।
फिर शिवपुर जाकें भोगूं सुख महान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोक के तृतीय युगल में चार इन्द्रकों की चारों दिशाओं में ३९९६२० प्रकीर्णक विमानों के जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

युगल तीसरे में लखो चार लाख सुविमान ।
बिम्ब शतक अरु आठ है सब में श्री भगवान जी ।।
कवि क्या छवि वरणे है थोड़ा सा ज्ञान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोक तृतीय युगल में चार लाख विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में, लसत जिनालय थोक ।
जयमाला तिनकी कहूं, तिनही को दे ढोक ।।

चौपई—दूजा जुगल ते ऊंच गिणाय, राजू अर्द्ध कह्यो जिनराय ।
ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर नाम कहाय, तीजो जुगल लखो मन लाय ।।१।।

ताकी रचना बहु विस्तार, कछुयक भाखूं करि निर्धार ।
पटल चार में अन्तर ठान, योजन ऊंच असंख्य प्रमान ॥२॥

प्रथम पटल ते दूजो जान, दूजे ते तीजों पहिचान ।
तीजा तै चौथो अवलोय, पटल पटल प्रति अन्तर जोय ॥३॥

प्रथम पटल मधि भाग धराय, इन्द्र विमान अरिष्ट लखाय ।
ताकी चहुं दिशि मांहि बखान, सो है श्रेणिबद्ध विमान ॥४॥

दूज पटल कमध्य विचारि, इन्द्रक देव सिमिति उर धारि ।
इसकी चारों दिशि में होय, श्रेणिबद्ध छयानवै सोय ॥५॥

तीज पटल के मध्य गिणेय, इन्द्रक ब्रह्म विमान धरेय ।
चहुं दिशि ब्रह्म विमान सु ठाय, श्रेणीबद्ध बानवै पाय ॥६॥

तुरिय जुगल कैलखि मधि ठाम, ब्रह्मोत्तर इन्द्रक को नाम ।
ब्रह्मोत्तर की चहुं दिशि धारि, श्रेणीबद्ध अठासी सार ॥७॥

बाकी रहै प्रकीर्ण विमान, इन कमती लख चारि प्रमान ।
इन्द्रक संख्य व्यास विस्तार, श्रेणीबद्ध असंख्य निहार ॥८॥

व्यास प्रकीर्ण उभय गिण लेय, योजत संख्य असंख्य धरेय ।
राजत बिखरे फूल समान, जानि लेहू प्रकीर्ण विमान ॥९॥

लखि मोटाई सकल विमान, नोसे तेबिस योजन मान ।
कृष्ण नील बिन वर्ण जु तीन, तोय पवन आधार लखीन ॥१०॥

दक्षिण उत्तर भेद न कोय, इनमें एकहि इन्द्र जु जोय ।
और कथन सब लेहु विचार, देखि ग्रंथ त्रैलोक्य जु सार ॥११॥

इत्यादिक सुर सबही थान, पूजें कर जिनवर गुणगान ।
"नेम" भावना इस थल भाय, मांगे शिव पद धौ जिनराय ॥१२॥

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में, चार लाख गिणवाय।
जिन मन्दिर को भव्य जन, पूजों अर्घ चढ़ाय ।।१४।।

ॐ ह्रीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्गन में चार लाख विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घम्।

अडिल्ल—ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग मांहि जिनराय के।
मन्दिर चारहि लाख लसत सुभ जाय के ।।
तिनको भव्य जु पाठ करें चित लाय के।
सो जग दुःख नशाय वसें शिव जाय के ।। इत्यार्शीवाद

श्री लांतव कापिष्ठ चतुर्थ युगल स्थित पचास हजार श्री जिन भवन पूजा नं. ९८

स्थापना दोहा—लांतव अरु कापिष्ठ में, लसत पचास हजार।
आह्वानन जिन भवन की, इस थल करूं विचार ।।

ॐ ह्रीं लांतव कपिष्ठ नामा दोय स्वर्गन विषें पचास हुजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपई—उज्ज्वल शीतल मधुर पुनीत, लायो जल उर में धरि प्रीति।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।।

ॐ ह्रीं लांतव कपिष्ठनामा दोय स्वर्गन विषें पचास हजार विमानन विषें पचास हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जलम्।

अती सुगंधित चन्दन लेय, कनक पियाले चित हुलसेय।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। चंदनं

तन्दुल सरस अखंडित लाय, हरषि हरषि गुण पुंज धराय।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। अक्षतं

प्रासुक फूल सुगंध अपार, लीने मदन बाण क्षयकार ।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। पुष्पं

उप्तम विधि सूं तुरत बनाय, बहु विधि नेवज ले हरषाय ।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। नैवेद्यं

मोह तिमिर नाशन के हेत, नाचत आयो दीपक लेत ।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। दीपं

धूप सुगंधी निर्मल लेय, धरि धूपायन कर्म जलेय ।
लांतव और कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। धूपं

फल उत्तम ले बहुत प्रकार, आयो शिव फल बांछा धार ।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। फलं

जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, हरषित आयो अर्घ बनाय ।
लांतव अरु कापिष्ठ बखान, सहस पचास जजूं जिन थान ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक सुर थान की ।।टेक।।

दोहा—सप्तम अष्टम स्वर्ग का, चौथा युगल कहाय ।
दोय पटल हैं तासु के ऊपर ऊपर जाय जी ।।

दोनों के मधि में इन्द्रक नाम विमान । हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में लांतव कपिस्ट दो स्वर्गा के चौथे युगल सम्बन्धी दो पटल क्रम से ब्रह्म हृदय, लांतव सम्बन्धी सकल श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक इक इन्द्रक चऊ दिशा श्रेणीबद्ध मनलाय ।
एक सो चोसठ जिन भवन पूजूं द्रव्य चढ़ाद जी ।।

उपयोग लगाकर खूब कर्म गुण गान । हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं में लांतव कपिष्ट दो स्वर्गों के चौथे युगल सम्बन्धी दो इन्द्रकों की चारों दिशाओं में एक सौ चोसठ श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी जिनालयों में सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम ।। २ ।।

चउ विदिसा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण जिन धाम ।
तिनिमें सब जिनराज को, नमू सुबह और शाम जी ।।
तब मैं क्रम क्रम से बनि जाऊं भगवान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्वलोक के चौथे युगल में दो इन्द्रक की चारों विदिशाओं में ४६८३४ प्रकीर्णक विमानों के जिनालय सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

चौथे युगल तने कहे, भवन पचास हजार ।
पूजत नर भव हो सफल, भोगे सुक्ख अपार जी ।।
यह दाव मिला है फिरि न मिलेगा आन । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्वलोक के चोथे युगल में पचास हजार भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

चौपई—लांतव अरु कापिष्ठ विचार, जिन मन्दिर पच्चास हजार ।
तिनकी भवि भाखूं जयमाल, बांचत लागे परम रिसाल ।।

छंद गीता—तीजा जुगल ते ऊंच राजू अर्द्ध पैलख लीजियो ।
लांतव सुरग कापिष्ठ नामा लगत दोय गिणीजियो ।।
यह जुगल चौथो जान भविजिय पटल दोय धरात है ।
योजन असंख्याते इन्हों में अंतरो दरशात है ।।१।।
लखि ब्रह्म हृदय विमान इन्द्रक पटल पहला में बसें ।
ताकी चहुं दिशि मांहि श्रेणी बद्ध चौरासी लसें ।।
पुनि पटल दूजा के जु मांही इन्द्र लांतव जानियो ।
तामे जु अस्सी भवन श्रेणी बद्ध चउ दिसि मानियो ।।२।।

इन्द्रक जु श्रेणी बद्ध मिलि इक सतक छयासठ जानना ।
धरि ठीक बन्दू भवन जिनवर भाय इस थल भावना ।।
गुणचास सहस अरु आठ सै धरि तीस चारि जु लीजियौ ।
एते प्रकीर्ण विमान गिण कर पटल दोय कहीजियौ ।।३।।

तिन सब विमानन यांहि जिनवर भवन अति प्रियकार ही ।
तिनको हमारा थान इसतें ढोक बारम्बार जी ।।
संख्यात योजन व्यास इन्द्रक धरत निश्चय जानियो ।
व्यास श्रेणीबद्ध को भवि गिण असंख्य बखानियो ।।४।।

दोनों तरह के हैं प्रकीर्णक कौन महिमा कह सही ।
बिखरे जु फूल समान सुन्दर देय शोभा बहुत ही ।।
इन दोय में इक इन्द्र तातें और भेद न जानियौ ।
अब और कथन त्रैलोक्यसार सूं देख भवि उर आनियौ ।।५।।

योजन मुटाइ विमान सबकी आठ सै चौबीस जी ।
जल पवन के आधार तिष्ठत सकल सुन्दर दीस जी ।।
लखि कृष्ण नील न होय तिनमें तीन वर्ण धरात हैं ।
सब ही विमाणन में जिनेश्वर भवन शुभ जु लसात हैं ।।६।।

तिस थान में हरि आदि सुर सब आप उत्सव बहु करें ।
गुण गाय जिनवर करत पूजन हरषि अति उर में धरें ।।
तुम ही जिनेश्वर सकल जग के दुःख नाशन हार हो ।
मार-मारन नाथ तुमही दया वारापार हो ।।७।।

अपवर्ग पंथ प्रकाशनें तें जगत में नामी लसो ।
हम करत तातें अरज एती "नेम" उर भव-भव वसो ।।
जबलों जु मोकूं मिलत नाहीं मुक्ति रमणी आय कें ।
तबलों जिनेश्वर महर कीजे कहत हूं सिरनाय के ।।८।।

दोहा—लांतव अरु कापिष्ठ में, जिन गृह सहस पचास ।
अर्घ चढ़ावो भव्यजन, वसुविधि लेवहि खास ।।

ॐ ह्रीं लांतव अरु कपिष्ठ नामा दोय स्वर्ग के पचास हजार विमान विषैं पचास हजार श्री जिन नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल—लांतव अरु कापिष्ठ दोय स्वर्गन महीं ।
श्रीजिन भवन पचास हजार जु है सही ।।
तिनको जे भविपाठ शुद्ध मनसौं करैं ।
ते शंकादिक दोष टारि शिव तिय वरैं ।।इ त्याशीर्वाद

शुक्र महाशुक्र पांचवां युगल स्थित चालीस हजार श्री जिन भवन पूजा नं. ९९

चौपई—शुक्र नाम महाशुक्र विचार, जिन मन्दिर चालीस हजार ।
तिनको हम आह्वान कराय, पूजन कूं इस थल गुण गाय ।।

ॐ ह्रीं शुक्र महाशुक्र नामा पांचवां युगल विषैं चालीस हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

ढाल गीता छंद—दिव सरित को जल परम शीतल मधुर उज्ज्वल पावनो ।
भरि हेम झारी हरष उर धरि लाय जिन गुण गावनौ ।।
लखि शुक्र अरु महाशुक्र माहीं सहस गिण चालीस जी ।
पूजूं जिनेश्वर भवन यातैं होत अघ सब खीस जी ।।

ॐ ह्रीं शुक्र महाशुक्र नामा दोय स्वर्गन मध्य चालीस हजार विमानन विषैं चालीस हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जलम् ।

अति ही पुनीत सुगंध संयुत लाय चन्दन बावनो ।
धरि कनक प्याले लसत अद्भुत भ्रमर शब्द करावनो ।। लखि शुक्र अरु···चदनं

दधि क्षीर इन्दू समान उज्ज्वल सरल तंदुल लायकैं ।
हुल्लास उर धरि पुंज गुण के धरत हूं सिर नायकैं ।। लखि शुक्र अरु···अक्षतं

प्रासुक पुनीत सुगंध युत चहुं फूल अलि रलियावने ।
लायो हृदय यह हेतु धरिके मीन केतु नसावने ।। लखि शुक्र अरु···पुष्पं
या भूख मोकूं लोक तिहुं में दुःख नानाविधि दियो ।
तातें बनाकर शुद्ध विधि तें थाल धरि नेवज लियो ।। लखि शुक्रअरु···नैवेद्यं
मिथ्यात तम करि पंथ शिव को लखत मोकूं नाहिं जी ।
मणि दीप ले या करत अरजी नाशि द्यों तुम ताहि जी ।। लखि शुक्र अरु···दीपं
श्रीखंड आदि सुगंध चूरण धूप ज्वाला घट धरूं ।
वसु कर्म शत्रु जलाय जिनजी जोड़कर पायन परूं ।। लखि शुक्र अरु···धूपं
कैवल्य फल तुम देउ तातें मांहि मो मन ऊप जी ।
यातें तुम्हारी भेट कूं फल लेत बहुत अनूप जी ।। लखि शुक्र अरु···फलं
कीलाल आदिक आठ निर्मल लेय कंचन थाल जी ।
ध्वनि गीत नृत्य बजाय बाजे नमत तुम पद भाल जी ।। लखि शुक्र अरु···अर्घन्

प्रत्येक अर्घ

हो में करूं वंदना उर्ध्व लोक जिन थान की ।
दोहा–नवम दसम दो स्वर्ग का, पंचम युगल कहाय ।
एक पटल है तासु का, ठीक मध्य तिष्ठाय जी ।।
इस जिन मन्दिर का, इन्द्रक नाम विमान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में शुक्र महाशुक्र दो स्वर्गों का पंचम युगल सम्बन्धी इन्द्रक विमान में एक जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

इस इक इन्द्रक चउ दिशा, श्रेणीबद्ध मन लाय ।
जैन भवन चों कम असी, पूजूं द्रव्य चढ़ाय जी ।।
उपयोग लगाकर खूब करूं गुणगान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में शुक्र महाशुक्र दो स्वर्गों के पंचम युगल में छयत्तरि श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चउ विदिशा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण जिन धाम ।
तिनिमें सब जिनराज को, नमूं सुबह और शाम जी ।।
तव में क्रम क्रम से बनि जाऊं भगवान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के पंचम युगल में इन्द्रक की चारो विदिशा में ३९९२३ प्रकीर्णक विमानों सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

पंचम युगल तने कहे, भवन सहस चालीस ।
पूजत नर भव हो सफल, प्रतिमा श्री जगदीश जी ।।
यह दाव मिला है फिरि न मिलेगा आन । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के पंचम युगल में चालीस हजार जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

सोरठा—जुगल पांचवां मांहि, भवन सहस चालीस है ।
सुणि भवि उर धरि चाहि, जयमाला तिनकी कहूं ।।

छंद पद्धड़ी—जय जुगल चतुरथ तैं निहार, राजू जु ऊंच अर्द्धहि विचार ।
जय शुक्र स्वर्ग नवमों कहाय, जय महाशुक्र दशमो मिलाय ।।१।।

सुण जुगल पांचवो चित्त देय, जय पटल एक यामें लखेय ।
मधि भाग तासु हैं इक विमान, धरि शुक्र नाम इन्द्रक पिछान ।।२।।

इस इन्द्रक की चारों दिशान, श्रेणी जु बद्ध छयत्तर विमान ।
फिरि बसत चहूं विदिशान मांहि, लखि लेय प्रकीर्णक नाम ताहि ।।३।।

बिखरे जु फूलबत शोभनीक, सुन गिणत कहूं इनको जू ठीक ।
उनतालिस सहस रु मांड़ि और, नव शतक रु तेविस देहु जोर ।।४।।

थल इन्द्रकादि सबही विमान, चालीस सहस भाख्यो प्रमान ।
धरि इन्द्रकादि गिण भेद तीन, ले व्यास अनुक्रम तें जु चीन ।।५।।

संख्यात असंख्य जु उभय होय, त्रय भेद विमाण जु लेहु जोय ।
अब और कथन त्रैलोक्य सार, भवि देखि लेहु नीके निहार ।।६।।

घन पवन तणे आधार जोय, लख श्वेत पीत यह वर्ण दोय ।
लखि लेय विमानन की मुटाय, शत सात पचिस योजन धराय ।।७।।

त्रय विधि विमान चालिस हजार, जिनराज भवन सबमें विचार ।
हरिआदि सकल सुर आय आय, तिन थान मांहि पूजन कराय ।।८।।

जिनराज चरण सिर नाय नाय, उर हरष धारि गुण गाय गाय ।
जथ जय जिनेस तुम धन्य धन्य, जय तुम समान नहि रूप अन्य ।।९।।

जयवंत होहु तिहूं लोक मांहि, तुम गुण अपार को कहत तांहि ।
नमि 'नेम' अरज इक करै नाथ, छुड़वाय देहु वसु कर्म साथ ।।१०।।

दोहा--जुगल पांचवां के विषैं, चालिस सहस गिणाय ।
श्री जिनवर के भवन कूं, दीजै अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं शुक्र महाशुक्र नामा पांचवा युगल के चालीस हजार विमानन विषे चालीस हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वहा ।।

छंद बेसरी--शुक्र स्वर्ग महा शुक्र विचारा, जिन मंदिर चालीस हजारा ।
पाठ करै तिनको भवि प्राणी, तासूं नेह करै शिवराणी ।। इत्यार्शीवाद

श्री सतार सहश्रार नामा छठा युगल स्थित छहः हजार श्री जिन भवन पूजा नं. १००

स्थापना गीता छंद--लखि ले सतार जु स्वर्ग भवि जिय फेरि लखि सहश्रार जी ।
यह युगल छट्ठा मांहि जिनवर भवन षटहि हजार जी ।।

आह्वान तिनको पूजने कूं करत हम इस थान जी।
कर दोय जोड़ नमाय मस्तक तीन बार बखान जी।।

ॐ ह्रीं सत्तार सहश्रार नामा दोय स्वर्ग का का छट्ठा युगल विषैं छह हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणम्।

ढाल जोगीरासा—प्रासुक जल कंचन की झारी धार करत सिर नावैं।
जन्मादिक दुःख दूर करीजै यातैं तुम गुण गावैं।।
स्वर्ग सतार रु सहश्रार के षट हज्जार गिणाकैं।
श्री जिन मन्दिर पूजूं इस थल, हम उर हरष धराकैं।।

ॐ ह्रीं सतार सहश्रार नामा दोय स्वर्ग का छठा युगल विषैं छह हजार विमान में छह हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जलम्।

चन्दन शीतलता विस्तारे, भव तप जात नशाते।
भव तप नाशन हारे तुम ही, चन्दन लायो तातैं।। स्वर्ग सतार रु···चन्दनं

चहुं गति भीतर भ्रमता भ्रमता थिर पद कबहु न पायो।
थिरता पद दाता तुम नामी तातैं तन्दुल लायो।। स्वर्ग सतार रु···अक्षतं

फूल सुगन्धी प्रासुक लायो मदन हरण के काजै।
काम विनाशक सुयश तुम्हारो तीन भुवन में छाजै।। स्वर्ग सतार रु···पुष्पं

बहु विधि नेवज उत्तम लेके उर यह चाहि धरावूं।
क्षुधा वेदनी नशत हमारी तातैं तुम गुण गावूं।। स्वर्ग सतार रु···नैवेद्यं

मोह तिमिर नशि शिव मग जग में तुम ही प्रगट करायो।
यातैं किल्विष रहित मनोहर दीपक लेकर आयो।। स्वर्ग सतार रु···दीपं

धूप दशंगी अति ही चंगी बहुत सुगन्धी लेवूं।
कर्मनि पुंज जलावन काजै तुम ढिंग आके खेवूं।। स्वर्ग सतार रु···धूपं

शिव फल दायक जानि आपकूं हमरो मन ललचायो ।
तातैं उत्तम बहु विधि फल ले भेंट धरन को लायो ।। स्वर्ग सतार रु···फलं
लेय जलादिक फल लों निर्मल अर्घ धरूं तुम आगैं ।
पद अनर्घ्य दिलवावो हमकूं अरजी करि यह मागैं ।। स्वर्ग सतार रु···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक सुर थान की ।।टेक।।

गीता छन्द—ग्यारम बारम स्वर्ग का छट्ठा युगल कहाय ।
एक पटक है तासुका ठीक मध्य तिष्ठाय जी ।।
इस जिन मन्दिर का, इंद्रक नाम विमान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं सतार सहश्रार दो स्वर्गों का छट्ठा युगल के मध्य में एक इन्द्रक विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इस इक इन्द्रक चउ दिशा श्रेणीबद्ध मन लाय ।
जैन भवन बसु कम असी पूजूं द्रव्य चढ़ाय जी ।।
उपयोग लगा कर, खूब करूं गुणगान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में सतार सहश्रार दो स्वर्गों में छट्ठे युगल सम्बन्धी इन्द्रक की दिशाओं में बहत्तर श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

चउ विदिशा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण जिन धाम ।
तिनि में सब जिन राज को, बन्दौं आठों याम जी ।।
तव में क्रम क्रम से बनि जाऊं भगवान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में छट्ठे युगल के इन्द्रक की चारों विदिशाओं में ५६, २७ प्रकीर्णक विमान सम्बन्धो सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

छट्ठे युगल तने कहे छः हजार जिन धाम।
तिनको मन वच काय से झुकि झुकि करूं प्रणाम जी ।।

यह दाव मिला है फिर न मिलेगा आन। हो मैं करूं.....

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के छट्ठे युगल में छह हजार जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—छठा जुगल में जिन भवन, षट् हजार गिण लेय।
जयमाला तिनकी कहूं, सुणि भवि उर हरषेय ।।

चौपई—लखि पंचम जुगल ते भाई, गिण राजू अर्द्ध ऊंचाई।
तिहां जुगल छठौ मन लावौ, रचना तामें दरशावौ ।।१।।

लखि लेय जु सुरग सतारा, भवि और गिणौ सहश्रारा।
मिलि दोई सुरग विमाना, यह छटे जुगल का थाना ।।२।।

गिण पटल एक ता मांहि, कछु और भेद भवि नाहीं।
ता मध्य लखो बुधिवाना, इक इन्द्र सतार विमाना ।।३।।

व्यासा संख्यात धरावै, योजन गिण आगम गावै।
तामें जिन मंदिर पावै, ताकूं हम शीष नमावै ।।४।।

ता इन्द्रक की दिशि चारों, पुनि श्रेणी बद्ध निहारो।
गिण बहत्तर सकल विमाना, ये व्यास असंख्य धराना ।।५।।

तामें श्री जिनवर गेहा, ते बन्दे उर धरि नेहा।
चतु विदिशा मांहि बसाना, लखि नाम प्रकीर्ण विमाना ।।६।।

गिण पांच हजार मिलाओ, नवसै सतवीस कहावो।
ये धारें व्यास निहारो, गिण संख्य असंख्य विचारो ।।७।।

लखि बिखरे फूल समाना, ये तिष्ठे समझि सयाना।
इनमें जिन मंदिर जेतें, मैं उर धरि बंदू तेते ॥८॥

मोटाई सबकी दीसा, योजन छयसे छब्बीसा।
लखि पीले श्वेत जु वरणा, सब मोहत भवि मन हरणा ॥९॥

जल पवन तणो आधारा, तिष्ठते विमान जु सारा।
इनमें श्री जिनवर थाना, लखि तिनमें रचना नाना ॥१०॥

हम कबलौं मुख से गावैं, बुद्धि बहुत ही अल्प धरावैं।
तिस थान पुरन्दर आवैं, सुर साथि शची सब लावैं ॥११॥

जय शब्द हि प्रथम उचारैं, अति आनन्द उर में धारैं।
जिन दर्शन करती बिरियां, दृग दृष्टि एकाग्र जु धरियां ॥१२॥

जिन रूप लखत न अघावैं, करि पूजन फिर गुण गावैं।
तुम मोह महातम हरता, तुम ही हो जग सुख करता ॥१३॥
तुम मोक्ष वधु हिय हारा, तुम करत भवार्णव पारा।
तुम सातों तत्व प्रकाशी, तुम दायक पद अविनाशी ॥१४॥
तुम अद्यम उधारण हारा, गुण गायक नाम तुम्हारा।
तुम क्षायक सम्यक धारी, तुम परपरणति सब टारी ॥१५॥
तुम दीन दयाल ही नामी, तुम ही सब अन्तर्यामी।
तुम हो हो पर उपकारी, तातें उर "नेम" विचारी ॥१६॥
आयो तुम पास जिनेशा, सुणि लीजे एक संदेशा।
हनि कर्मरू सकल कलेशा, मुझि कीजे मुक्ति प्रवेशा ॥१७॥

दोहा--छटा जुगल में सहस षट्, श्री जिनवर के गेह।
अर्घ चढ़ाबो भव्यजन, उर में धरि बहु नेह ॥

ॐ ह्रीं सतार सहस्रार नामा दोय स्वर्ग का छठा पटल मध्य छै हजार विमान विषै छै हजार श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद त्रिभंगी–लखि स्वर्ग सतार रु सहश्रार षट् ही हजार जिन गेहा ।
तिनको भवि कोई शुचि मन होई पाठ करें धर नेहा ।।
सो जग सुख जेते उत्तम तेते भोगि सकल अनुकरमा ।
शिवपुर को जावें अचल रहावें सुख विलसावें परमा ।। इत्यार्शीवाद

आनत प्राणत सप्तम युगल सम्बन्धी चार सौ चालीस श्री जिन भवन पूजा नं. १०१

स्थापना अडिल्ल छंद–आनत प्राणत नाम स्वर्ग दो ये लखो ।
चारि सतक चालीस गेह जिनवर लखो ।।
आह्वानन हम करत तिन्हों की गायकैं ।
पूजन को उमगाय भाव सुध ठायकैं ।।

ॐ ह्रीं आनत प्राणत दो स्वर्ग सम्बन्धी चारि सौ चालीस श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक छंद मत्तगयंद–गङ्ग नदी जल शीतल सुन्दर कंचन की ले भरि के झारी ।
धार करें इस कारण को तुम जन्म जरादिक मेटि हमारी ।।
आनत प्राणत नाम तने ये हैं दो स्वर्ग मिलाय समाना ।
श्री जिन मंदिर चारि मौ चालिस पूज करो शिवथान सयाना ।।

ॐ ह्रीं आनत प्राणत इन दो स्वर्गन में ४४० श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् ।

पावन चन्दन केसरि लेकर पूर सुगन्धित माहि मिलावैं ।
ताप हरो भव संतति की हम चन्दन ले गुणगान करावैं ।। आनत प्राणत···चंदनं

औषधिनाथ छब्बीस में उज्ज्वल खंड विवर्जित तंदुल लेवैं ।
पुंज धरें गुणगान करें, उर चाहि अखै पद की हम ठेवैं ।। आनत प्राणत···अक्षतं

प्रासुक फूल सुगन्ध अनेक लिये धरि थाल खड़ो तुम आगें।
मार पुकार करें तुमसे हम तौ बिन यौं डर नेक न लागें ।। आनत प्राणत···पुष्पं

नेवज सद्य बनाय अनेक भली विधि सों धरि भाजन लायो।
कारण एक सुनो जिन देव कुटेव हरो मुझि भूख सतायो ।। आनत प्राणत···नैवेद्यं

निर्मल दीपक लेय थाल धरि तुम गुण गान करें हम ऐसे।
मोह महातम नाश कियो तम, दूरि करो हमरो अब जैसे ।। आनत प्राणत···दीपं

धूप सुगन्धि पुनीत जु लै घट, पावक खेवत हर्ष धरावै।
कर्म समूह महा दुःखदाय जलावन को तुमरे ढिग लावै ।। आनत प्राणत···धूपं

श्रीफल खारिक लोंग बिदाम विवर्जित किल्विष और घनेरे।
मुक्ति महाफल जाचत हूं फल भेंट धरूं सुणि ले प्रभु मेरे ।। आनत प्राणत···फलं

निर्मल नीर सुगन्ध सु चन्दन अक्षत नेवज फूल धरारे।
दीपक धूप लिये फल प्रासुक अर्घ बनाय अनर्घ लहाये ।। आनत प्राणत···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक सुर थान की ।।टेक।।

तेरम चौदम स्वर्ग का सप्तम युगल कहाय।
तीन पटल हैं तासु के ऊपर ऊपर जाय जी ।।
इन सब में इक-इक इन्द्रक नाम विमान। हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में आनत प्राणत नाम के दो स्वर्गों के सप्तम युगल के मध्य मध्य में तीन पटल सम्बन्धी तीन इन्द्रक जिनालयों के सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक इक इन्द्रक चहुं दिशा, श्रेणिबद्ध कहलाय।
वसु कम दो सौ भवन को पूजूं द्रव्य चढ़ाय जी ।।
उपयोग लगाकर खूब करूं गुणगान। हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में आनत प्राणत दो स्वर्गों के सप्तम युगल की तीनों इन्द्रक की चारों दिशाओं में १९२ श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम ।। २ ।।

चउ विदिशा इन्द्रक तनी, है प्रकीर्ण भवनाय ।
तिनि में सब जिनराज को, बन्दो मन को थाम जी ।।
यह दाव मिला है, फिर नहीं है आसान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक में सप्तम युगल की तीनों इन्द्रकों की चारों विदिशाओं में २४५ प्रकीर्णक विमानों सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

दोहा—युगल सातमें में भवन चार सतक चालीस ।
तिनको मन वचकाय से, पूज करूं निश दीष ।।

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के सप्तम युगल में ४४० (चार सौ चालीस) जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

चाल छंद—आनत प्राणत दो शिव जानो, युगल सातवां इसे पिछानो ।
चारि से चालिस मन्दिर पावै, पूजन को हम अर्घ चढ़ावै ।।

गीता छंद—आनत रु प्राणत सुरग दोनों बनि रहै मनहार ही ।
ये सुरग इकठे जानि भवि जिय लसत हैं सुखकार ही ।।१।।
छट्ठा युगल तैं ऊंच राजू अर्द्ध इनको जानियो ।
आकाश के आधार तिष्ठत सब विमान पिछानियो ।।२।।
इन सब विमानन की मुटाई भव्य चित में राखियो ।
पांच सै पै धरि सताविस जोड़ि योजन भाखियौ ।।३।।
सब ही विमान निहार सुन्दर धरत वर्ण सफेद जी ।
दृग देखता तत्काल ही तिस थल मिटत सब खेद जी ।।४।।

संख्यात योजठ व्यास गिण ले सकल इन्द्रक नाम जी ।
योजन असंख्य विमान श्रेणीबद्ध व्यास कहाय जी ।।५।।

याके प्रकीर्ण विमान को लखि सकल भवि सुखदाय जी ।
योजन असंख्य जु संख्य गिणयो दोय भेद धराय जी ।।६।।

सबके जु मध्य महान सुन्दर देखि जिन मन्दिर लसैं ।
मन वचन तन त्रय शुद्ध सेती नमत ही सब अघ नसैं ।।७।।

हैं पटल इसके तीन तिनके श्रेणी बद्ध विमान जी ।
गिण लेहु इकसो बानवे जिनवर भवन अमलान जी ।।८।।

चारों विदिश में है प्रकीर्णक दोय से पैंताल जी ।
इस थल नमूं जिन धाम सप्तम युगल के उर लाय जी ।।९।।

तिन भवन में हरि आदि सबही पूजने को आत है ।
जल आदि आठों द्रव्य सुन्दर लाय जिन गुण गात हैं ।।१०।।

तुम मुक्ति मारग के प्रकाशक रवि अपूरक हो सही ।
सुख दाय तुम तें और दूजो लोक तिहुं में है नहीं ।।११।।

तिहुँ लोक में उत्कृष्ट तुम ही कौन उपमा दीजिए ।
ऐसी न वस्तु दिखात हमको ता समान कहीजिये ।।१२।।

षट् द्रव्य तत्व स्वरूप आदिक सकल ज्ञायक हो गुणी ।
तिहुं लोक दीन दयाल तुमको कहत हम कानन सुणी ।।१३।।

जब चाहि उर में भई ऐसी दीनपति के ढिग चलो ।
द्रढ़ "नेम" प्रभु की शरण गहिके आपनो करल्यो भलौ ।।१४।।

दोहा—आनतादि दो दिव विषैं राजत है जिन गेह ।
तिन्हें चढ़ावो अर्घ भवि उर धरि परम सनेह ।।

ॐ ह्रीं आनत प्राणत इन दो स्वर्गन के ४४० (चार सौ चालीस) विमान विषैं ४४० श्री जिन भवनेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घम् ।

अडिल्ल--आनत प्राणत दोय स्वर्ग में जानियो ।
श्री जिनवर के गेह सास्वते मानियो ।।
तिनको करें जु पाठ शुद्धता को धरें ।
जग सुख उत्तम भोग अनुक्रम शिव वरे ।। इत्यार्शीवाद

आरण व अच्युत अष्टम युगल सम्बन्धी दो सौ साठ जिन भवन पूजा नं. १०२

गीता छन्द–आरण व अच्युत स्वर्ग दो का युगल अष्टम है सही ।
दो सतक ऊपर साठि जिनवर भवन है इसकी मही ।।
पूजन करें सुर कल्प वासी नित्य अधिक उछाह सूं ।
गुण गान करते हैं सभी मिलि अती निर्मल भाव सूं ।।

ॐ ह्रीं आरण व अच्युत दो स्वर्ग सम्बन्धी दो सौ आठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

ले नीर निर्मल गंग सरिता, कनक कलश भराइके ।
दोउ हाथ गहि शिवनाथ आगे धार तीन ढराइके ।।
दो स्वर्ग पन्द्रम सोलमा के दो सतक अरु साठि के ।
जिनवर भवन की पूज करिके शिव बसूं अरि काटि के ।।

ॐ ह्रीं आरण व अच्युत दो स्वर्ग सम्बन्धा दा सौ साठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मलियागिरी निज कर घिसूं, केसरि कपूर मिलाइ के ।
जिनवर चरण चर्चित करूं, मन में अधिक उमगाइ के ।। दो स्वर्ग···चन्दनम्

हीरा जवाहर लाल मूंगा, रतन थाल भराइके ।
करि पुंज जिनवर चरण छेपूं, सीस भू पै लाइके ।। दो स्वर्ग···अक्षतम्

बहु फूल सोने के रजत के, कल्प तरु के लाइके ।
जिनकी महक से भृमे मधुकर, सुधि बुधि बिसराइ के ।। दो स्वर्ग···पुष्पम्

रबड़ी मलाई और मावा विधी से बनवाइ के।
नागिन छुदा के मेटने मेटूं, प्रभू ढिग लाइ के ।। दो स्वर्ग···नैवेद्यम्

दीपक सु अर्जुन का बनाकर, सुद्ध घृत भरवाइ के।
करि आरती जिन चरण की, आशिका माथ चढ़ाइ के ।। दो स्वर्ग···दीपम्

कुटवाइ अगर व तगर ताजे, धूप सुध बनवाइ के।
फिरि धूप घट में डारते ही, अरि भगें अकुलाइ के ।। दो स्वर्ग···धूपम्

बादाम किसमिस दाख लायो, नारियल बजवाइ के।
फल मोक्ष पावन हेतु चरणनि में चढ़ाये आइ के ।। दो स्वर्ग···फलम्

जल से लगाकर फल तलक आठोंहि द्रव्य मिलाइ के।
जिनवर चरण आगे चढ़ाऊं, नाचि गाइ बजाइ के ।। दो स्वर्ग···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

हो मैं करूं वन्दना उर्ध्व लोक जिन थान की ।।टेक।।

दोहा--पन्द्रम सोलम स्वर्ग का अष्टम युगल कहाय।
तीन पटल हैं तासु के ऊपर-ऊपर जाय जी ।।
तीनों के मधि में इन्द्रक नाम विमान। हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के आरण व अच्युत स्वर्गों के अष्टम युगल के मध्य मध्य में तीन पटल सम्बन्धी तीन जिनालयों के सकल श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इक-इक इन्द्रक चउ दिशा श्रेणिबद्ध कहलाय।
एक सतक छप्पन भवन, में जिन गृह सुखदाय जी ।।
सब देव रु देवी नाचत ले ले तान। हो मैं करूं·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के आरण व अच्युत स्वर्ग की अष्टम युगल की तीनों इन्द्रकों की चारों दिशाओं में १५६ (एक सौ छप्पन) श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः। अर्घम् ।। २ ।।

चउ विदिसा इन्द्रक तनी, हैं प्रकीर्ण भवनाय ।
सब में श्री जिन देव की छटा रही है छाय जी ।।
तिसके देखत ही होता सब सरधान । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के आरण व अच्युत स्वर्ग सम्बन्धी अष्टम युगल की तीनों इन्द्रकों की चारों विदिशा में १०१ (एक सौ एक) प्रकीर्णक विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। ३ ।।

युगल आठ में के विषै दो सौ साठि सु गेह ।
अचल थान पावे वही जो पूजे धरि नेह जी ।।
सब मिलकर बोलो जय जिनवर भगवान की । हो मैं करू·····

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के अष्टम युगल के आरण व अच्युत स्वर्ग सम्बन्धी दो सौ साठ (२६०) जिन भवन सम्बन्धी सकल श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

जाप :—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । १०८ (बार)

जयमाला

है दीन बन्धु श्री पति करुणा निधान जी ।
अब मेरी व्यथा क्यों न हरो बार क्या लगी ।।१।।

अनन्त काल नाथ में निगोद में रहा ।
सुर गुरु नहीं बता सके वो दुक्ख में सहा ।।२।।

एक श्वांस में जन्मा मरा में बार अठारा ।
धारे जु छुद्र भव तिन्हों का दुक्ख करारा ।।३।।

एक इन्द्री जीव के जु एकादस ठिकान है ।
तिनमें किये बहु जनम मरण दुःख महान है ।।४।।

दो तीन चार इन्द्रीयों में दुःख जो पाया ।
उसकी कथा बड़ी है कहत अन्त न आया ।।५।।

पंचेन्द्रीयों में भी मैं पशू योनि में गया।
तब नाक कान काटि नपुँसक किया गया ।।६।।
नरको में सहा दुक्ख बो तो बहुत बड़ा है।
गति देव में भी पराधीन रहना पड़ा है ।।७।।
मानुष गती में भी रहा में होई दुखारी।
संसार में भ्रमण की सही पीर करारी ।।८।।
पावक प्रचण्ड कुण्ड में जब जान की पड़ी।
तुमने ही किया नीर लगाई नहीं घड़ी ।।९।।
जब दुःसासन ने द्रोपदी का खींचा चीर है।
तब तुमने ही आकर के बंधाई जु धीर है ।।१०।।
जब सेठ सुदर्शन को सूली पे खड़ा किया।
तब आपने ही आयकर उसको बचा लिया ।।११।।
जब अंजना सती को दिया घर से निकारी।
तब आपने ही सारी पीर उसकी निवारी ।।१२।।
जब चन्दना सती की पड़ी पांव में बेरी।
तब आपने ही आके सारी पीर निवेरी ।।१३।।
कमल श्री को मारने पति नाग जो लाया।
तब आपने ही आके उसको हार बनाया ।।१४।।
जब पांडवों को लाख के घर मांहि घिराया।
तब आपने ही आय के संकट से बचाया ।।१५।।
जब वज्र करण पर पड़ी विपत्ति आयकर।
तब आपकी कृपा से गई सारी भागकर ।।१६।।
मुनि मानंतुग को दई जब भूप ने पीरा।
ताले में किया बंद भरी लोह जंजीरा ।।१७।।

तब आपने ही आयकर आश्चर्य दिखाया ।
ताले जु दीये तोड़ मुनि धर्म बचाया ।।१८।।

अब आपकी मैं शरण मांहि आन पड़ा हूं ।
तारोगे नहीं जब तलक में यहाँ ही अड़ा हूं ।।
तुमने अनेक तार दिये नाम क्या कहूं ।
"सागर श्रुत" को तारिये इतनी महर चहूं ।।

ॐ ह्रीं उर्ध्व लोक के अष्टम युगल के आरण व अच्युत स्वर्ग सम्बन्धी दो सौ साठ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

दोहा—आरण अच्युत स्वर्ग के, सब जिनवर के धाम ।
जो पूजें मन लायकर, सो पावे आराम ।। इत्याशीर्वाद

नव ग्रेवेयक सम्बन्धी ३०९ श्री जिन भवन पूजा नं. १०३

स्थापना दोहा चोबोला—उर्ध्वलोक में सास्वते, नव ग्रीवक सुखदाय ।
ऊपर-ऊपर नव पटल, तिकड़ी तीन कहाय ।।

तिकड़ी तीन कहाय तिन्हों में जिन मन्दिर मनहारी ।
तीनि सतक अरु नो बतलाये, रचना अति ही प्यारी ।।
अहमिंदर नित पूजा करते, लेकर द्रव्य करारी ।
हम यहां पूजन हेत थापना करें मन्त्र उच्चारी ।।

दौड़—करें पूजा तन मन से जी । छूटि जावें बंधन से जी ।
कर्म मल दूर भगावें,
फिरि शिवपुर के मुखिया बन कर हरदम मौज उड़ावें ।।

ॐ ह्रीं नवग्रेवेयक सम्बन्धी ३०९ श्री जिन भवन सम्बन्धी जिन बिम्बेभ्यो नमः । अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक—उत्तम नर जन्म पाकर श्रीं जिनवर की वन्दन करना ।।टेक।।

शुभ द्रह से नीर लेकर, सोने की झारी में भरना ।
जिनवर के चरणों आगे, मन से धारा तीन ढरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नौ हैं, अनुपम चित में धरना ।
मन्दिर हैं तीन से नौ, हर्षित मन से पूजा करना ।।

ॐ ह्रीं नवग्रेवेयक सम्बन्धी ३०६ श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जन्म मृत्यु विनाशनाय । जलम् ।

केसरि करपूर मिलाकर घिसि कंचन के भाजन भरना ।
जिनवर के चरण चरचिके जग की सारी ताप हरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित में धरना ।
मन्दिर हैं तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···चन्दनम्

बढ़िया से बढ़िया तंदुल, प्रासुक जल से अचित्त करना ।
जिनवर की भेंट करिके, अक्षय पद में जाय विचरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर हैं तीन से नो हर्षित, मन से पूजा करना ।। उत्तम···अक्षतम्

एसे वर पुष्प होवे, जिन पर हो भ्रमरों का लरना ।
जिनवर के आगे क्षेपत, मदन बान का होवे टरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर है तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···पुष्पम्

षटरषमय व्यंजन ताजे, भली भांति तैयार करना ।
जिनवर के चरण चढ़ाशर, छुदा नागिनी जड़ से हरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर हैं तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···नैवेद्यम्

रतनों का दीप सजाकर, युगल हाथ से आरति करना ।
अंधेरा मोह करि के नाश, सच्चा थान पकरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर है तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···दीपम्

दस विधि की धूप कुटाकर, शुद्ध हुताशन मांहि धरना ।
आठों दुश्मन जलि जावे, यही प्रभु से अरजी करना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर है तीन ये नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···धूपम्

सब रितु के फल रस, मीने लेकर थाल लबालब भरना ।
जिनवर के चरण चढ़ाकर, शिव सुन्दरि को जाके वरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर है तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···फलम्

आठों विधि की सामग्री, लेकर एकमएक करना ।
जिनवर के अग्र चढ़ाकर, भवसागर से पार उतरना ।।
स्वर्गों के ऊपर ग्रीवक नो हैं, अनुपम चित्त में धरना ।
मन्दिर हैं तीन से नो, हर्षित मन से पूजा करना ।। उत्तम···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

मैं पूजूं नव ग्रीवक भवनाय, वचन मन काया तीन लगाय ।।टेक।।

दोहा---पहली ग्रीवक मध्य में, द्रन्द्रक नाम विमान ।
नाम सुदर्शन तासु का, रचना है अधिकान ।।
एक सो आठ विम्ब जिनराय···वचन मन···

ॐ ह्रीं नव ग्रेवेयकों में से पहले ग्रेवेयक सुदर्शन नामा द्रन्द्रक विमान में एक सौ आठ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, ग्यारह ग्यारह थान ।
भवन चवालिस है बने, श्रेणीबद्ध महान ।।
पूजते अर्हमिंदर हर्षाय, वचन मनकाया तीन लगाय ।

ॐ ह्रीं प्रथम ग्रेवेयक सम्बन्धी सुदर्शन नामा द्रन्द्रक की चारों दिशाओं में चवालीस श्रेणी वर्द्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

दूजो ग्रीवक के विषें, इन्द्रक है सुखदाय ।
ठीक मध्य में तासु का, नाम अमोघ कहाय ।।
पूजते पाप सभी नशि जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं दूजी ग्रेवेक में अमोघ नाम इन्द्रक विमान सम्बन्धी एक सौ आठ श्री जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, दस-दस जिनवर धाम ।
चैत्यालय चालीस की, रचना है अभिराम ।।
पूजते अचल सुक्ख मिलि जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं दूजे ग्रेवेयक सम्बन्धी अमोघ नाम इन्द्रक की चारों दिशाओं में चालीस श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

तीजी ग्रीवक में कहा, इन्द्रक अति मन हार ।
तासु नाम सुप्रबुद्ध है, सब जीवन हितकार ।।
पूजते भव भ्रमन मिटि जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं तीजे ग्रेवेयक में सुप्रबुद्ध इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ जिन विम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, नव-नव परम पवित्र ।
छत्तिस जिन मन्दिर तनी, रचना अहि विचित्र ।।
पूजते शिव सुन्दरी परनाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं तीजे ग्रेवेयक के सुप्रबुद्ध इन्द्रक की चारों दिशाओं छत्तीस श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

चौथी ग्रीवक बीच में, नाम यशोधर पाय ।
इन्द्रक नाम विमान के मध्य जिनालय थाय ।।
पूज करते संसार नसाय, वचन मन काया तीन लगाय ।

ॐ ह्रीं चौथे ग्रीवक में यशोधर इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, आठ-आठ जिन गेह ।
अर्हमिंदर बत्तीस में, पूज करें धरि नेह ।।
धारि नर भव शिवपुर को जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं चौथे ग्रीवक की यशोधर इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं के ३२ श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

पंचम ग्रीवक में लसे, नाम सुभद्र विमान ।
इन्द्रक बीचों बीच में, दर्शत हो श्रद्धान ।।
पूजते निज सम्पत्ति प्रगटाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं पंचम ग्रीवक में सुभद्र विमान सम्बन्धी १०८ श्री बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ९ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, सात-सात सुखकार ।
आठ बीस जिन भवन की, महिमा अपरम्पार ।।
पूजते त्रिभुवन पति बन जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं पंचम ग्रीवक की सुभद्र विमान की चारों दिशाओं के २८ श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १० ।।

छठे ग्रीवक में लखो, इन्द्रक है सुविशाल ।
ठीक मध्य में इन्द्र सब, नित प्रति नावें भाल ।।
करे पूजन मृदु बीन बजाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं छठे ग्रेवेयक सुविशाल इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम ।। ११ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, छह-छह जिन आगार ।
पूज करें मिलि के सभी, लेकर द्रव्य अपार ।।
खुशी से फूले नहीं समाय, वचन मन काया तीन लगाय ।

ॐ ह्रीं छठे ग्रेवेयक की सुविशाल विमान की चारों दिशाओं के २४ श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १२ ।।

सप्तम ग्रीवक में बना, सुमनस नाम विमान ।
इन्द्रक अति रमणीक है, करन हेतु कल्यान ।।
पुजारी पूज्य रूप हो जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं सप्तम ग्रेवेयक में सुमनस इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन विम्बेभ्यो नमः। अर्घम् ।। १३ ।।

इन्द्रक की चारों दिसा, पांच-पांच जिन भोन ।
बीस जिनालय पूजतें, कलिमल रहे न कौन ।।
जगत का ठेकेदार कहाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं सप्तम ग्रेवेयक सुमनस इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं सम्बन्धी २० श्रेणीवद्ध विमन सम्बन्धी सकल जिन भवनेभ्यो नमः अघम् ।। १४ ।।

अष्टम ग्रीवक मध्य में, सौमनस्य है नाम ।
इन्द्रक है मन भावना, रचना कही तमाय ।।
वर्नते आवे नहीं मुकाम, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं अष्टम ग्रेवेयक में सोमनस्य नामा इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन विम्बेभ्यो नमः। अर्घम् ।। १५ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, चार-चार मन हार ।
सोलह श्री जिन भवन को, वन्दें बारम्बार ।।
वही दुल्हा सच्चा बनि जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं अष्टम ग्रेवेयक को सोमनस्य ईन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में सोलह श्रेणीवद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १६ ।।

नोवे ग्रीवक मध्य में, प्रीतङ्कर कहलाय ।
इन्द्रक नाम प्रसिद्ध है, बीच भवन जिनराय ।।
पुजारी परमातम बनि जाय, वचन मन काया तीन लगाय ।

ॐ ह्रीं नवम ग्रेवेयक के प्रीतङ्कर नामा इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १७ ।।

इन्द्रक की चारों दिशा, तीन तीन जिन थान ।
बारह मन्दिर बिम्ब सब, मैं वन्दूं धरि ध्यान ।।
मनोरथ सभी सफल हो जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं नवम ग्रेवेयक के प्रीतङ्कर नामा विमान की चारों दिशाओं में बारह श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १८ ।।

चउ विदिशा इन्द्रकनि की, मन्दिर अड़तालीस ।
कहै प्रकीर्णक सभी में, बिम्ब नमूं जगदीश ।।
तासु फल पंचम गति मिलि जाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं नव ग्रीवकों की चारों विदिशाओं में अड़तालीस प्रकीर्णक विमानों सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। १९ ।।

नव ग्रीवक के क्षेत्र में, जिन गृह परम पुनीत ।
वन्दूं नव अरु तीन सौ, धरि मन में अति प्रीत ।।
रुची से पुनि पुनि शीश नवाय, वचन मन·····।

ॐ ह्रीं नव ग्रेवेयक सम्बन्धी ३०९ विमानों में सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। २० ।।

जाप्यः—ॐ ह्रीं सास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—नव ग्रेवेयक में जिन भवन, तीन सतक नव जान ।
जयमाला तिनि की सुनो, सभी खोलकर कान ।।

पद्धड़ी छंद—जय जय जय जय अरहंत देव, मैं मन वच तन से करूं सेव ।
यह तीन लोक रचना महान, सब दर्शाई दर्पण समान ।।१।।
हे मेरु सुदर्शन मध्य थान, इक लख चालिस योजन प्रमान ।
इस चित्रा पृथवी के मंझार, इसकी जड़ इक योजन हजार ।।२।।
चोटी चालिस योजन प्रमान, ऊपर है सो लीजे पिछान ।
जड़ के नीचे से अधोलोक, चोटी के ऊपर उर्ध्व लोक ।।३।।
अध लोक जु राजू सात जान, हे मध्य लोक मेरु प्रमान ।
फिर उर्ध लोक ऊंवाई जान, मेरु कम राजू सात मान ।।४।।
सोलह स्वर्गनि तक जानि लेहु, छे राजु ऊंचाई मानि लेहु ।
फिरि असंख्यात योजन प्रमान, है गगन बीच में रखो ध्यान❍।।५।।
फिरि नव ग्रीवक नव पटल जान, ऊपर ऊपर जानो ठिकान ।
हर एक एक का अंतराल, है असंख्यात योजन विशाल ।।६।।
इन नव में श्री जिनराज धाम, है तीनि सतक नो अति ललाम ।
इन नव में नव इन्द्रक विमान, है ठीक मध्य में लेहु जान ।।७।।
इन नव की चारों दिसि मंझार, है श्रेणीबद्ध विमान सार ।
हे चवालीस पहिले मंझार, अन्तिम बारह लीजे विचार ।।८।।
दो सौ बावन यह है विमान, सब में इक इक जिनगृह महान ।
नव इन्द्रक की चहु विदिसि मांहि जानो प्रकीर्ण सु विमान तांहि ।।९।।
यह हैं अड़तालीस सब विमान, इनमें इक इक जिनग्रह महान ।
इस भांति तीन से नव बताय, जिन मंदिर बन्दू सीस नाय ।।१०।।
इन्द्रक सम्बन्धी नव विमान, हे संख्याते योजन प्रमान ।
सब श्रेणीबद्ध विमान जान, हे असंख्यात योजन प्रमान ।।११।।
सारे प्रकीर्ण नामा विमान, है उभय भेद लीजे सुजान ।
सब धवल वर्ण हैं निर्विकार, आकास माहि सब निराधार ।।१२।।

इन नव माही है जिते देव, सब अहमिन्दर जानो स्वमेव ।
नहीं ऊंच नीच का भेद कोय, इनकी सु देवियां नहीं होय ।।१३।।
यहाँ मुनी दिगम्बर जन्म लेइ, सो द्रव्य भाव दोनों कहेइ ।
नव ग्रीवक की रचना अपार, हम कहि कर पावें नहीं पार ।।१४।।
सेवक की पूरी करो आस, हो जावे शिवपुर माहि वास ।

दोहा—नव ग्रीवक में भवन जिन, तिन सो नव गिणवाय ।
तिनको ले नीरादि वसु, पूजूं अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं नव ग्रेवेयक के नव पटल सम्बन्धी सकल श्री जिन भदनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

सोरठा—नव ग्रीवक में जोय, जितने मंदिर जिनवरा ।
पाठ करै नर कोय, सो ही लेवे शिवधरा ।। इत्यार्शीवाद

सूचना

उर्ध्व लोक में ६३ पटल सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानों में काल दोष के कारण प्राचीन आचार्यों के कथन में मतभेद हैं। पहिले आचार्यों के मत से पटलों के क्रम में ऊपर ऊपर चार चार विमान कम होते गये। नीचे के पटल में ६२-६२ फिर ६१-६१ फिर ६०-६० इस तरह चले। दूसरे आचार्यों के मत से नीचे के पहिले पटल में ६३-६३ फिर ६२-६२ फिर ६१-६१ इत्यादि। पहिले की अपेक्षा दूसरे आचार्यों का कथन ठीक जान पड़ता है क्योंकि ऊपर के सर्वार्थ सिद्धी विमान में चार श्रेणीबद्ध विमान रह जाते हैं।

६२ के क्रम से चलते हैं तो दो बातें असम्भव मालूम पड़ती हैं एक तो नव अनुदिशों में चार दिशाओं में तथा चार विदिशाओं में श्रेणीबद्ध विमान मानने पड़े हैं जबकि और कहीं भी श्रेणीबद्ध विमान विदिशाओं में नहीं हैं। दूसरी बात यह है कि हर पटल में चार चार कम होने चाहिये सो ऊपर के नव अनुदिशों में ही चार रह जाते हैं। इससे ६३ का क्रम ठीक जान पड़ता है सो लोक विभाग ग्रन्थ के आधार से, जो कि जीवराज ग्रन्थ माला सोलापुर का सिद्धान्त ग्रन्थ माना गया है। इसी लोक विभाग ग्रन्थ के आधार से श्रेणींबद्ध विमानों की संख्या इस तीन लोक मण्डल विधान में लिखी गई हैं।

श्रुतिसागर मुनिराज (मुरैना वाले)
भवानी मण्डी दिगम्बर जैन मन्दिर

दिनांक १४-३-१९८६ ई०

श्री नव अनुदिश सम्बन्धी नव श्री जिन भवन पूजा नं. १०४

स्थापना चौपाई—नव अनुदिश में श्री जिन धाम, नव गुण बन्दूं पूजन काम ।
आह्वानन करतो गुण गाय, ते सब तिष्ठो इस थल आय ।।

ॐ ह्रीं श्री नव अनुदिशि सम्बन्धी नव श्री जिन भवनेभ्यो नमः अत्रवतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

जोगीरासा--निर्मल नीर लियो भरि झारी, जन्मादिक क्षयकारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मंदिर, पूजि वरूं शिव नारी ।।

ॐ ह्रीं नव अनुदिश सम्बन्धी नव जिन भवनेभ्यो नमः । जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय । जलम् ।

बावन चन्दन घसि ले आयो, भव आताप निवारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। चन्दनं

अक्षत ले गुण पुंज धरत हूं, अक्षय पद दातारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मंदिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। अक्षतं

प्रासुक फूल लेत ही नाशी, मन्मथ बाधा भारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। पुष्पं

विमल मनोहर नेवज लायो, भूख आपने टारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। नैवेद्यं

निर्मल दीप लसै तुम आगे, मोह महातम हारीं ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। दीपं

धूप अनूप जलावूं यातैं, करम प्रकृति तुम जारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूज वरूं शिव नारी ।। धूपं

बावन फल ले तुम पद भेंटूं, शिव फल द्यो उर धारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। फलं

जल फलादि ले अर्घ बनायो, आठों अशुभ बिडारी ।
नव अनुदिश में नव जिन मन्दिर, पूजि वरूं शिव नारी ।। अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

चौपाई–नवानुदिश है सुन्दर थान, इन्द्रक लखि आदित्य विमान ।
तामें लसें जिनेश्वर गेह, पूजूं अर्घ धरूं उर नेह ।।

ॐ ह्रीं नवानुदिश में आदित्य नामा इन्द्रक विमान में श्री जिन भवनाय नमः अर्घम् ।। १ ।।

लखि आदित्य तणी दिशि चार, आठहि श्रेणी बद्ध निहार ।
तिनमें आठ जिनेश्वर गेह, पूजूं अर्घ धरूं उर नेह ।

ॐ ह्रीं नव अनुदिशों में आदित्य नामा इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में आठ श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः अघम् ।। २ ।।

जल विमल चन्दन शुद्ध तंदुल आदि, पावन लीजिये ।
मणि जड़ित कंचन थाल कर ले, अर्घ चरणन दीजिये ।।

ॐ ह्रीं नव अनुदिशों सम्बन्धी नव जिन भवनेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शास्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः । (१०८ बार)

जयमाला

दोहा––नवानुदिश में भवन जिन, नव गिण ले सुखकार ।
जयमाला तिनकी कहूं, सुणि भविथिर उर धार ।।

जय वीतराग विगान पूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर ।
तुम पंच कल्यानक कहूं सार, पन्द्रह महिना तक लगातार ।।१।।
बरसे जु रतन घर मात तात, दोपहर साम निशि अर्घ प्रातः ।
इक बार सु साढ़े तीन कोड़, नित प्रति बरसे चौदह करोड़ ।।२।।
नगरी की रचना करी आन, नव बारह योजन इक समान ।
जब रही शेष एक पहर रात, तब सोलह सपने लखे मात ।।३।।

पहिले देखा हाथी महान, दूजे में बैल सफेद जान।
तीजे में शेर लखा प्रधान, चौथे कमला होता स्नान ।।४।।
पंचम देखी दो फूल माल, छट्टे में शशि देखा विशाल।
सूरज देखा सप्तम मंझार, अष्टम में दो मछली निहार ।।५।।
नव में रतनों के कलश दोय, दसवें में सरबर लखा सोय।
गर्जत समुद्र ग्यारम सु दीठ, बारम में देखा सिंह पीठ ।।६।।
तेरम में देखा सुर विमान, चौदम देखा फण पति मकान।
पन्द्रम में देखी रतन रास, निर्धूम अगन सोलम प्रकाश ।।७।।
उठ प्रात मात दरबार जाय, नृप ने स्वपनों का फल बताय।
अब आगे की कुछ बात चीत, अगली पूजा में सुनो मीत ।।८।।

दोहा—नवानुदिश में भवन जिन, नवगिरण लेके वीर।
पूजौं अर्घ चढ़ाय कै, मेटो जग की पीर ।।

ॐ ह्रीं श्री नव अनुदिश सम्बन्धी नव श्री जिन भवनेभ्यो नमः। जयमाला पूर्णार्घम्।

इत्यासीर्वाद

पंचानुत्तर सम्बन्धी पांच श्री जिन भवन पूजा नं. १०५

स्थापना छंद अडिल्ल—पंचानुत्तर थान महा सुखदाय हैं।
तामें श्री जिन गेह पांच श्रुत गाय हैं ।।
तिनकी पूजन हेत करत आह्वानना।
मम ढिग तिष्ठौ आय करें जु प्रभावना ।।

ॐ ह्रीं पंचानुत्तर सम्बन्धी पंच जिन भवन समूह अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जोगीरासा—गंगाजल भरि कनक कुम्भ में, प्रासुक गंध मिलाई।
जनम जरा मृत्यु नाशन हित, धार देत हर्षाई ।।

उर्ध्वलोक पंचानुत्तर में, पांच भवन जिनराई ।
तसु पूजन उत्तम फल से, मैं भव भव पाप नसाई ।।

ॐ ह्रीं पंचानुत्तर सम्बन्धी पांच श्री जिन भवनेभ्यो नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय । जलम् ।

कृष्णागरु मलियागिरि चंदन, केसर संग घिसाई ।
भव आताप विनाशन कारण, पूजों पद चितलाई ।। उर्ध्व···चन्दनम्

देव जीर सुख दास शुद्ध बर, सुवरण थाल भराई ।
पुंज धरत जिन चरणन आगे, तुरत अक्षय पद पाई ।। उर्ध्व···अक्षतम्

पारिजात संतान कल्प तरु, जनित सुमन बहु लाई ।
मोन केतु मद भंजन कारण, तुम पद अग्र चढ़ाई ।। उर्ध्व···पुष्पम्

दूध दही आदिक रस पूरित, नेवज तुरत बनाई ।
छुदा रोग निरवारण कारण, तुम्हें जजों सिर नाई ।। उर्ध्व···नैवेद्यम्

दीपक ज्योति उद्योत होत वर, दस दिशि में छवि छाई ।
तिमिर मोह नाशक तुमको लखि, करी आरती आई ।। उर्ध्व···दीपम्

दस विधि गंध मनोहर लेकर, धूप घड़ा में ठाई ।
अष्ट कर्म के नाश करण को, अग्नी संग जराई ।। उर्ध्व···धूपम्

सुरस सुपक्व सुपावन फल ले, कंचन थाल भराई ।
मोक्ष महाफल दायक लखि के, भेंट धरे गुन गाई ।। उर्ध्व···फलम्

जल फल दरब मिलाय नाचिकर, आठों अंग नवाई ।
शिवपूर राज करन हित, श्रीपति निकट धरो अर्घाई ।। उर्ध्व···अर्घम्

प्रत्येक अर्घ

सु अंतिम पटल लोक ऊरध बखाना, सु सर्वार्थ सिद्धि है इन्द्रक विमाना ।
सु तामें जिनालय अति मनोहारी, सु पूजन करूं बनिके उत्तम पुजारी ।।

ॐ ह्रीं पंचानुत्तर में सर्वार्थ सिद्धि इन्द्रक विमान सम्बन्धी १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः । अर्घम् ।। १ ।।

सु इन्द्रक की पूरब दिशा में बखाना, सु अनुपम विजय नाम जानो विमाना ।
सु तामें जिनालय परम सुक्खकारी, सु पूजन करूं द्रव्य लेकर अपारी ।।

ॐ ह्रीं सर्वार्थ सिद्धि इन्द्रक की पूरब दिशा में विजय श्रेणीबद्ध विमान सम्बन्धी जिन भवन में १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

सु इन्द्रक की दक्षिण दिसा में बखाना, सु विजयन्त नाम; अनोखा विमाना ।
सु तामें जिनालय धवल कांतिधारी, सु पूजन करूं सहित उपयोग भारी ।।

ॐ ह्रीं सर्वार्थ सिद्धि इन्द्रक की दक्षिण दिशा में विजयंत श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी जिन भवन में १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

सु इन्द्रक की पश्चिम दिशा में बखाना, सु तसु नाम जानो जयन्ता विमाना ।
सु तामें जिनालय सकल दुक्ख हारी, सु पूजन करूं मन वचन तन लगारी ।।

ॐ ह्रीं सर्वार्थ सिद्धि इन्द्रक की पश्चिम दिशा में जयंता श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी जिन भवन में १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

सु इन्द्रक की उत्तर दिशा में बखाना, सु अपराजिता नाम सार्थक विमाना ।
सु तामें जिनालय की रचना अपारी, सु पूजन करूं रूप नट का बना री ।।

ॐ ह्रीं सर्वार्थ सिद्धि इन्द्रक की उत्तर दिशा में अपराजिता श्रेणी बद्ध विमान सम्बन्धी जिन भवन में १०८ श्री जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

पंचानुत्तर थान मनोहर, पंच विमान गिणो इकसार ।
इन्द्रक एक मध्य गिण लेवो, चहूंदिशि श्रेणीबद्ध जु चार ।।
इन पांचों में भवन जिनेश्वर, पांच लसे उर मांहि निहार ।
इस थल मन वच काय शुद्ध तैं, पूजूं हूं मैं अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं पंचतानुत्तरों में पांच जिन भवन सम्बन्धी सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

जाप्य—ॐ ह्रीं शाश्वत जिनालयस्थ सर्व जिन बिम्बेभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

दोहा—पंचानुत्तर थान में, पांच भवन जिनराय ।
तिनकी सुण जयमालिका, भविजन भाव लगाय ।।

पद्धड़ी छंद--जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर।
तजि पहले भव का स्वर्ग थान, माता की पहुंचे कूखि आन ॥१॥
तब करन मात के सकल काम, देवियां आन पहुंची तमाम।
दर्पण दिखलावे सुक्ख देन, कोइ मंगल गावें मधुर बैन ॥२॥
कोइ आंगन साफ करे सिहाय, तांबूल खबावे कोइ आय।
स्नान करावें मात अंग, पहिरावें भूषण वसन चंग ॥३॥
कोइ करे मात से प्रश्न आय, तब माता उत्तर दे बताय।
है मात जगत में धन्य कोय, जो छोड़ि परिगृह मुनी होय ॥४॥
हे मूढ़ कोन माता बताय, जो विषयों में जोबन विताय।
हे मात बताओ कौन अंध, जिसको न हो दीखे मोक्ष पंथ ॥५॥
हे मात कौन बहरा कहाय, जो प्रवचन सुनने नहीं आय।
हे मात कौन है हाथ हीन, मुनि को आहार जिनने न दीन ॥६॥
इस विधि बहु तक देवीनि साथ, माता नहीं जाने दिवस जात।
जब जनम लिया देवाधि देव, सुर चौ प्रकार आये स्वमेव ॥७॥
सो धर्म इन्द्र मन हर्ष धार, एरावत गज कीना तैयार।
सो एक लाख योजन प्रमान, सत वदन एक तन में लसान ॥८॥
एकेक वदन में आठ दंत, हर एक दंत सरबर वहंत।
सरबर प्रति में कमलिनी जान, इकसो पचीस लीजे पिछान ॥९॥
हर एक कमलिनी में पचीस, खिलि रहे कमल मणि मई दीस।
हर कमल एकसो आठ पात, सब पर नचती देवी विखात ॥१०॥
सब जानो सत्ताइस करोड़, इक सी नाचें तन को मरोड़।
एरावत ऊपर प्रथम इन्द्र, ताके कंधे पर है जिनन्द्र ॥११॥
ईशान इन्द्र रहो छत्र तान, बाकी सुर बोले जय महान।
सेना जु इन्द्र की सात भंग, सब चले जात हैं एक संग ॥१२॥

हाथी घोड़ा अरु सिंह बैल, प्यावे रु नृत्य की रथ वहैल ।
सातों के भेद जु सात सात, सो रंग रूप अरु भेस जात ।।१३।।
सब प्रथम भेद चौरासि लाख, फिर दुगुण दुगुण मन मांहि राख ।
कुल एक सतक अरु छे करोड़, अरसटी लाख सबका जु जोड़ ।।१४।।
ये सुर हैं सब त्रयंच नाहिं, विक्रिय जे तन रचना बनाहि ।
पांडुक वन पहुंचे सभी जाय, सिल पे पधराये श्री जिनाय ।।१५।।
दक्षिण उत्तर दो तरफ जान, मेरु से दूरी का प्रमान ।
योजन पन सो ग्यारा सु लाख, देवों की बनी कतार साख ।।१६।।
सब ने लीने हैं कलश हाथ, जल से भर लीने एक साथ ।
फिरि हाथों हाथ रहे गहाय, दोनों इन्द्रो पे रहे जाय ।।१७।।
एक सहस आठ एक सहस आठ, लीने बनाय निज कर विराट ।
सब सुर जय बोलि नवाइ माथ, सब कलशा ढारे एक साथ ।।१८।।
फिरि गंधोदक मस्तक चढ़ाय, वापिस चल दीने हर्ष लाय ।
है पंचानुत्तर के जिनाय, 'श्रुतसागर' की करियो सहाय ।।१९।।

ॐ ह्रीं सर्वार्थ सिद्धादि पांच विमान विषै सकल श्री जिन भवनेभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

छंद चौपया—पंचानुत्तर थान मनोहर, पंच विमान गिणौ इकसार ।
इन्द्रक एक मध्य गिण लेवो, चहु दिशि श्रेणी बद्ध जु चार ।।
इन पाँचों पै भवन जिनेश्वर, पांच लसै उर मांहि निहार ।
इस थल मन वच काय शुद्ध तैं, पूजत हूं मैं अष्ट प्रकार ।।

दोहा—पंचानुत्तर थान में, पांच भवन जिनराय ।
जो पूजें मन लायकर, शिवपुर राज कराय ।। इत्याशीर्वाद

श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजा नं. १०६

लखि क्षेत्र ईषत्प्राग्भार जु मध्य मुक्ति शिला लसैं ।
नर क्षेत्र सम मणि स्फटिक तिस थल अनन्ते सिध बसैं ।।

सिध क्षेत्र तिनके यजन को हम करत हैं आह्वानना ।
भव मरज की धरि गरज अरजी करत उर धर सोहना ।।

ॐ ह्रीं ईषत्प्राग्भार नामा क्षेत्र ऊपर पैंतालीस लाख योजन प्रमाण सिद्ध क्षेत्र में अनन्त गुण युक्त विराजमान सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवोषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द विजयाणी चाल–शुभ द्रह सेजी, जल घट भर ले आनके ।
युग करते जी, कलशा अधिक उठान के ।।
पद पूजों जी, सिद्ध प्रभु सिध थान के ।
बन जावो जी, मुखिया तीन जहान के ।।

ॐ ह्रीं लोक के अग्र भाग सिद्ध क्षेत्र मे विराजमान अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो जनम जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

चाल जोगीरासा—अपने कर मलियागिरि घिसके, केशर संघ मिलाके ।
सिद्ध चरण अर्पित करिये, जो वासी सिद्ध शिला के ।। चंदनं

चाल छन्द—ले रत्न जवाहर हीरा, करि तीन पुंज गम्भीरा ।
प्रभु सिद्ध चरण में धरि के, पहुंचो शिव भव को तरिके ।। अक्षतं

चाल अडिल्ल—मदन सुभट शर कुसुम धनुष सुमनस धरत ।
नित प्रति हम उर दहत कहत जग तुम हरत ।।
तिस हित सुमनस विमल धरत तुम पद परत ।
जजत सकल सिद्ध तुरत भगत मन्मथ डरत ।। पुष्पं

छन्द सुन्दरी–विमल नेवज ले बहु पास जी, करत एक सुनो अरदास जी ।
हरहु भूख महा दुख रास जी, जजत सिद्ध शिवालय वास जी ।। नैवेद्यं

छन्द त्रिभंगी—द्युति दीप्त धरावन दीपक पावन अति मन भावन कर लीनो ।
तम मोह मिटावन शिव दरशावन तुम गुण गावन चित दीनो ।।
पर परणति नाशी ज्ञान प्रकाशी शिव थल वासी सिद्ध जजूं ।
उर धरि हुल्लासी, हम मन भासी शिव सुखरासी चाह करूं ।। दीपं

सोरठा—धूप सुगन्ध अपार, खेऊ ज्वाला कुम्भ में ।
सिद्ध जजूं सुखकार, कर्म दहन के कारने ।। धूपं

चौपई—श्रीफल दाख बिदाम सुपारी, बहु उत्तम लीने शुभकारी ।
सिद्ध जजूं शिव थानक वासी, दो शिवथान हरो दुखरासी ।। फलं

छन्द पद्धड़ी—जल गंध फूल अक्षत धरेय, चरु दीप धूप फल अर्घ ठेय ।
जय सिद्ध जजूं शिव थल बसंत, हनि कर्म रिपु गुणमय लसंत ।। अर्घम्

छन्द छप्पय—जल चन्दन घसि लेय अखंडित तंदुल लीजे ।
फूल विविध पकवान दीप फल धूप धरीजे ।।
कंचन थाल मंझार अर्घ करि हाथ गहाऊं ।
मन वच तन करि शुद्ध सिद्ध पद शीष नमावूं ।।
पूजूं शिवालय थान में, सिद्ध सकल तिष्ठत जिहां ।
गुण अनन्त युत सासते सुख अनन्त विलसत तिहां ।।

ॐ ह्रीं लोक के अग्र भाग में विराजमान अनंतानंत सिद्ध परमेष्ठीभ्यो नमः अर्घम् ।

प्रत्येक अर्घ

दोहा—ज्ञानावरणी नाशि के, ज्ञान अनन्त लहाय ।
इसीलिये हम पूजते, आठों द्रव्य चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरणी कर्म रहिताय सकल सिद्धि परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। १ ।।

दर्शनावरणी नाशि के, दर्श अनन्त लहाय ।
इसी लिये हम पूजते, मन में अति हर्षाय ।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरणी कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। २ ।।

मोहनीय को नाशि के, सुक्ख अनन्त लहाय ।
इसी लिये हम पूजते, जिन मन्दिर में आय ।।

ॐ ह्रीं मोहनीय कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ३ ।।

अन्तराय को नाशि के, शक्ति अनन्त लहाय ।
इसी लिये हम पूजते, आठ अंग भू लाय ।।

ॐ ह्रीं अन्तराय कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ४ ।।

वेदनीय को नाशि के, अव्याबाध लहाय ।
इसी लिये हम पूजते, बाजे संग बजाय ।।

ॐ ह्रीं वेदनीय कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ५ ।।

आयु कर्म को नाशि के, अवगहनत्व लहाय ।
इसी लिये हम पूजते, नाचत हाथ उठाय ।।

ॐ ह्रीं आयु कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ६ ।।

नाम कर्म को नाशि के, सूक्ष्मत्व गुण पाय ।
इसी लिये हम पूजते, उत्तम ठाठ बनाय ।।

ॐ ह्रीं नाम कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ७ ।।

गोत्र कर्म को नाशि के, अगुरु लघुत्व लहाय ।
इसी लिये हम पूजते सकल काम बिसराय ।।

ॐ ह्रीं गोत्र कर्म रहिताय सकल सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अर्घम् ।। ८ ।।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः (१०८ बार)

जयमाला

लक्ष्मीधरा छंद--सु पंचानुतर पटल ते ऊंच जानो।
सु आकाश योजन है बारह प्रमानो ।१।।
सु अष्टम धरा है तहां पर सु स्थित।
सु तीनों तरह की हवाओं से वेष्ठित ।।२।।
सु दखिण उतर सात राजू है आयाम।
सु पूरब अपर एक राजू का व्यायाम ।।३।।
सु मोटाई पृथवी की है आठ योजन।
सु मधि भागमहैं सिला स्फटिक मन ।।४।।
कमल पत्र पर नीर बिन्दू पड़ा हो।
या आभरण में कोइ नगीना जड़ा हो ।।५।।
इसी भांति औंधे कटोरा समाना।
सु विच की मुटाई है पृथवी समाना ।।६।।
सु फिरि क्रम से घटती हुई अंत जाकर।
रहो एक अंगुल सभी गिरद देकर ।।७।।
सु सूची पिंतालीस है लाख योजन।
हवा तीन का फिरि करो इसपे चितवन ।।८।।
सु दो कोस इक कोस पहिली व दूजी।
सु पन्द्रह सो पिचहतरा धनुष तीजी ।।९।।
सु तीजी हवा की भी अन्तिम थली है।
तनां राजें आतम अनंते बली है ।।१०।।
सु उत्कृष्ट अवगाहना के जु सिद्धा।
सु पन्द्रह सो वे भाग में हैं समृद्धा ।।११।।

सु अवगाहना अघन की जो है आतम ।
वो नो लाख वें भाग में परम आतम ।।१२।।
सु ऊपर सभी है बराबर गगन में ।
सु नीचे को कम ज्यादा है चिन्तो मन में ।।१३।।
यही सिद्ध क्षेत्र है आगम बताता ।
इसी में विराजे अनन्ते विधाता ।।१४।।

चौपाई---पहला तन सों किंचित ऊन, श्री जिन आगम मांहि कहूं न ।
निर्बाधा सुख भोगैं सदा, वृद्धि ह्रास नहिं होवे कदा ।।

सदा शाश्वते एक सरूप, विलसैं सुःख तिहूं जग भूप ।
हरि अहमिन्द्र असुर सुर जानि, चक्री खगधर आदि पिछानि ।।१।।
इन सबके सुख को समुदाय, तीन काल करि इकठौ थाय ।
तासु अनन्त गुणों सुख गाय, एक समय में सिद्ध धराय ।।२।।
वचन अगोचर बहुत अनूप, गुण अनन्त मय आतम रूप ।
सकल पदार्थ जु जानन हार, रूपी और अरूप विचार ।।३।।
घनोदधी अरु घन गिण लेय, तनू वात मिलि तीन लखेय ।
घनोदधी गौ मूत्र समान, घनो वर्ण मूंगा सम जान ।।४।।
पंच वर्ण तनु वात निहारि, अब वरणूं स्थूल विचार ।
सप्तम नरक तलै प्रत्येक, योजन बीस हजार विवेक ।।५।।
ताके पार्श्व विषैं लखि सार, योजन सात पांच पुनिचार ।
मध्य लोक में इण विधि चीन, पांच चार अरु योजन तीन ।।६।।
ब्रह्म कल्प के निकट गिणाय, योजन सात पांच चतु पाय ।
लोक शिखर कै निकट रहीन, पांच चार योजन गिण तीन ।।७।।
यह लोकाग्र क्षैत्र मन लाय, प्रणमहु सिद्ध सुमन वच काय ।
गुणा अनंत लसैं तिस मांहि, हानि वृद्धि होवै कभु नांहि ।।८।।

नाम लेत कारज सिद्ध थाय, विघन औघ तत्काल नशाय ।
तिहूं जग के तुम हो सिरदार, पर परणति कौ नाहिं लगार ।।९।।
धन्य धन्य तिहुं जग के नाथ, धन्य धन्य भव वारिधि पाथ ।
धन्य धन्य शिव तिय भरतार, धन्य धन्य अविचल अविकार ।।१०।।
जयवंते वरतौ तिहुँ काल, जय जय स्वागी दीन दयाल ।
जय जय मोह तिमिर क्षयकार, जय जय अविचल पद दातार ।।११।।
जय जय सिद्ध चिदानंद भाव, जय जय करम करण निरदाव ।
जय जय भव वन दहन तुषार जय जय जनमादिक दु.ख टार ।।१२।।
जय जय तिहुँ जग में बड़वीर, जय जय नाश करन पर पीर ।
जय जय अटल महा सुख राशि, जय जय मेटन जग की फांस ।।१३।।
जय जय त्रिभुवन के इक चंद, जय जय मोक्ष तरू दृढ़ कंद ।
जय जय क्षायिक समकित धार, जय जय मन वांछित दातार ।
तुम गुण महिमा अगम अपार, कब लौ भाखूं करि विस्तार ।।१४।।
गणधर आदि और कविराय, थकि थकि जाय पार नहिं पाय ।
तातैं नेम भक्ति उर धारि, जांचत लखि तुमको दातार ।।१५।।
देहु दयानिधि वा थल वास, फिर नहिं पावूं तिहुं जग त्रास ।
भव बंधन मेटो मम नाथ, आयो शरणैं पकड़ो हाथ ।।१६।।

दोहा--मन वच तन त्रय शुद्ध करि, सिद्धन के गुण गाय ।
वसु उत्तम नीरादि ले, दीजे अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं मुक्ति शिला पैंतालीस लाख योजन विस्तार धरे ताकी ऊपरी साइट में अनन्तानन्त विराजमान श्री सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः । जयमाला पूर्णार्घम् ।

दोहा--सिद्धन को शुध भावतैं, जे नर पूजै कोय ।
और अधिकता को कहे, ते तिन हो सम होय । इत्याशीर्वाद

तीन लोक मण्डल विधान का भजन १०७

श्री तीन लोक का पाठ करो सब ठाट-बाट से मिलकर।
यह मिला सुहाना अवसर ।।

शुभ कर्म पुराने जन्मों के, भये उदय भवानी मण्डी के।
तव श्रुत सागर मुनिराज विराजे आकर, यह मिला·····।।१।।

है लाख बहत्तरि कोटि सात, व्यंतर देवों के असंख्यात।
पाताल लोक में पूजें चित्त लगाकर, यह मिला·····।।२।।

है मध्य लोक में सतक चार, ऊपर अट्ठावन कहे सार।
सो भिन्न-भिन्न करि पूजें हर्ष बढ़ाकर, यह मिला·····।।३।।

अस्सी हैं पांचों मेरुन के, अरु बीस कहे गजदन्तन के।
हैं कुलाचलों पर तीन जिनालय सुन्दर, यह मिला·····।।४।।

दस जम्बू शालमली तरुवर, दस भवन बने अति ही मनहर।
पूजत सब पातक भजि जाते हैं डरकर, यह मिला·····।।५।।

पन भरत पाँच हैं ऐरावत, तिनमें दस विजयारथ पर्वत।
तिन पर पूजें दस चैत्यालय श्री जिनवर, यह मिला·····।।६।।

अब क्षेत्र विदेहों में जानो, वक्षार सेल अस्सी मानो।
अस्सी जिन मन्दिर पूजें तिनके ऊपर, यह मिला·····।।७।।

सब देस एक सौ साठि जानि, विजयारथ सबके बीच मान।
एक सौ साठि तिन पर पूजें जिन मन्दिर, यह मिला·····।।८।।

चऊ मन्दिर इष्वाकारों पर, अरु चारि कहे मनुषोत्तर पर।
यह आठ जिनालय पूजें द्रव्य चढ़ा कर, यह मिला·····।।९।।

नंदीश्वर में बावन जिन गृह, चारों दिसि में तेरह-तेरह।
चौ विधि सुर पूजें पर्व दिनों में जाकर, यह मिला·····।।१०।।

कुण्डल वर ग्यारम दीप जानि, अरु रुचिक दीप तेरम पिच्छान ।
पूजें दोनों में चारि-चारि जिन मंदिर, यह मिला·····११॥
यह चारिसौ ठावन जग विख्यात, ज्योतिष देवों के असंख्यात ।
हम मध्य लोक में पूजें प्रीति लगाकर, यह मिला·····॥१२॥
सुर लोक मांहि चौरासी लाख, सत्यानव सहस जिनेन्द्र भाख ।
तेईस बताये श्री महावीर जिनेश्वर, यह मिला·····॥१३॥
पहले दिव बत्तिस लाख जान, दूजे अट्ठाइस लख प्रमान ।
तीजे द्वादस, चौथे वसु लाख मनोहर, यह मिला·····॥१४॥
दो लाख छयानवे पंचम में, छयानव कम दो लख षष्टम में ।
सप्तम में पच्चिस सहस बियालिस मन्दिर, यह मिला·····॥१५॥
ब्यालिस कमती पच्चिस हजार, अष्टम में जिन मन्दिर निहार ।
नोवे में बीस हजार बीस ग्रह जिनवर, यह मिला·····॥१६॥
दस मांहि बीस कम सहस बीस, ग्यारम में तीनि सहस उनीस ।
बारम में उन्निस कम हजार त्रय मन्दिर, यह मिला·····॥१७॥
तेरम चौदम में भवन जानि, चो सतक और चालीस मानि ।
पंद्रम सोलम दो सतक साठि हैं ऊपर, यह मिला·····॥१८॥
इक सो तेइस तिकड़ी पिरथम दूजी में एक सौ सात भवन ।
तीजी उन्यासी चैत्यालय श्री जिनवर, यह मिला·····॥१९॥
नव अनुदिश नौ चैत्यालय हैं, पंचोत्तर पाँच जिनालय हैं ।
इमि उर्ध्वलोक में कहे जिनेश्वर गाकर, यह मिला·····॥००॥
दोऊ हाथ जोरि सिर नाय-नाय, हम पूजें नाचें गीत गाय ।
तो मुनि श्रुतसागर मोक्ष विराजो जाकर, यह मिला·····॥

श्री तीन लोक का पाठ करो सब ठाट बाट से मिलकर ।
यह मिला सुहावन अवसर ॥२१॥ ❀

तीन लोक विधान मण्डल की आरती १०८

ॐ जय अरहंत प्रभो, स्वामी जय अरहंत प्रभो ।
सत इन्द्रों से पूजित, त्रिभुवन पूज्य प्रभो ।। ॐ जय·····
तीन लोक जिन भवन सास्वतै, सब में राजि रहे । स्वामी सब···
एक सतक अठ ऊपर, मणिमय छाजि रहे ।। ॐ जय·····
अधो लोक में सात कोटि, अरु लाख बहत्तरि जी । स्वामी लाख···
खर अरु पंक भाग में, पूज करें सुर जी ।। ॐ जय·····
मध्य लोक में चारि सतक, अट्ठावन जिन मन्दिर । स्वामी ठावन···
सुर नर खग सब बन्दे, तन मन करि स्थिर ।। ॐ जय·····
उर्ध लोक में लाख चौरासी, सहस सत्यानव जी । स्वामी सहस···
तेइस ऊपर जानो, देव करें नुत जी ।। ॐ जय·····
यहि विधि आठ करोड़ रु छप्पन लाख भये । स्वामी छप्पन···
सहस सत्यानव चौ सत, इक्यासी बरणे ।। ॐ जय·····
जो कोई तन मन लाकर, पूजे अरु ध्यावे । स्वामी पूजे···
सो निश्चय 'श्रुत सागर' शिव लक्ष्मी पावे ।। ॐ जय·····
ॐ जय अरहंत प्रभो, स्वामी जय अरहंत प्रभो । स्वामी जय···
सत इन्द्रों से पूजित, त्रिभुवन पूज्य प्रभो ।। ॐ जय·····

कवित्त—सात करोड़ बहत्तर लाख, पातल विषें जिन मन्दिर जानों ।
मध्यहि लोक में चार सौ अठावन, व्यंतर ज्योतिष के अधिकानों ।।
लाख चौरासि हजार सत्याणव, तेईस उरध लोक बखानो ।
एक-एक में प्रतिमा शत आठ, नमों तिनकों धरि दृढ़ श्रद्धानों ।।

ॐ ह्रीं सात करोड़ बहत्तर लाख अकृत्रिम जिन चैत्यालय पाताल लोक में तथा चार सौ अट्ठावन चैत्यालय मध्य लोक में और चौरासी लाख सत्ताणवें हजार तेइस अकृत्रिम चैत्यालय उर्ध्व लोक में कुल आठ करोड़ छप्पन लाख सन्तानवे हजार चार सौ इक्यासी श्री जिन अकृत्रिम चैत्यालय सम्बन्धी सकल जिन बिम्बेभ्यो नमः एवं इनके अलावा खर भाग और पंक भाग में व्यन्तर देवों के असंख्यात भवनों में असंख्यात जिन अकृत्रिम चैत्यालय तथा मध्य लोक में व्यन्तर देवों के असंख्यात कृत्रिम अकृत्रिम स्थानों और आवासों में असंख्यात जिन चैत्यालयभ्यो नमः तथा जम्बू द्वीप को आदि लेकर स्वयम्भू रमण समुद्र पर्यन्त असंख्याते द्वीप समुद्र सम्बन्धी ज्योतिषी देवों के आवासों में असंख्याते जिन चैत्यालय सम्बन्धी सकल जिन बिम्बेभ्यो नमः । महा अर्घम् ।

तीन लोक सम्बन्धी कुछ विशेष जानकारी

(१) तीनों लोक की ऊँचाई १४ राज़ हैं। जिसमें सात राजू अधोलोक की ऊँचाई है तथा एक लाख और ४० योजन की ऊँचाई मध्य लोक की है। यह मध्य लोक की ऊँचाई सुदर्शन मेरु के समान है। अर्थात एक हजार योजन तो चित्रा पृथ्वी में जड़ है और ९९ हजार योजन चित्रा पृथ्वी से ऊपर पांडुक वन तक है। इसके ऊपर ४० योजन की चूलिका है। फिर एक बाल के अन्तर से उर्ध्व लोक है। उर्ध्व लोक की ऊँचाई १ लाख ४० योजन कम ७ राजू है।

(२) अब सबसे नीचे तीनों प्रकार की वात वलयों का बाहुल्य हैं जिसकी मोटाई ६० हजार योजन है। इसी के आधार पर नित्य निगोद का क्षेत्र ७ राजू लम्बा, ७ राजू चौड़ा और १ राजू ऊँचा अर्थात ४९ घन राजू हैं। इसमें एक स्कन्ध, दूसरा अन्डर तिसरा पुलवी चौथा आवास और पांचवा शरीर ये पंच गोलक अनन्तानन्त जीव राशि से लबालव अनादि से भरे हुये हैं। इनमें से ही प्रति ६ महीना ८ समय में ६०८ जीव निकलकर व्यवहार राशि में आ जाते हैं। और व्यवहार राशि से ६ महीना ८ समय में ६०८ जीव मुक्त हो जाते हैं। ये क्रम अनादि से होता आ रहा है और अनन्त काल तक होता रहेगा। नित्य निगोद में कोई नया प्राणि पैदा नहीं होता और सिद्ध होने पर कोई जीव वापिस नहीं आता है। फिर भी जहाँ जितनी जीव राशि का प्रमाण बताया है, वह उतना ही रहता है।

(३) नित्य निगोद के ऊपर ६ पृथ्वीवियों में ६ नरक तथा ऊपर की पृथ्वी के तीन भागों में से नीचे के अब्बहुल भाग में प्रथम नरक की रचना है। इन हर एक पृथ्वियों के बीच-बीच में पृथ्वियों की मोटाई प्रमाण कम एक एक राजू का अन्तर है। और हर एक पृथ्वी के आधारभूत ६० हजार योजन में तीनों प्रकार के वात वलय है। नरकों की रचना पृथ्वियों के ऊपर नहीं है, पृथ्वियों के अन्दर ही तीनों प्रकार के बिल अनादि से बने हुये हैं। एक बिल से दूसरे बिल में किसी नरकी का आना जाना नहीं हो सकता क्योंकि चारों तरफ से रास्ता बन्द है। हालांकि नारकियों का शरीर वैक्रियक हैं फिर भी वे अपने शरीर को अपृथक विक्रिया ही कर सकते हैं। अर्थात अपने शरीर को छोटा बड़ा, भयंकर जानवरों का बना सकते हैं परन्तु दो तीन चार पांच आदि शरीर नहीं बना सकते हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक अपने-अपने उन्हीं बिलों में असंख्याते नारकियों के साथ मार काट करते रहते हैं। नारकियों के बिलों की संख्या ८४ लाख है। क्रम से पहिले में ३० लाख, दूसरे नरक में २५ लाख तिसरे में १५ लाख चौथे में १० लाख पांचवें में ३ लाख, छठ्टे में पांच कम १ लाख और सातवें में केवल ५ बिल हैं। नरकों के पटल क्रम से, ऊपर से १३, ११, ९ ७, ५, ३, १ कुल ४९ पटल हैं। ऊपर से नीचे का शरीर बड़ा है आयु बड़ी है और अशुभ लेश्यायें

भी बढ़ती हुई हैं सातवें नारकी का शरीर ५०० धनुष का है ऊपर को आधा आधा है उत्कृष्ट आयु ऊपर से १, ३, ७, १०, १७, २२, और ३३ सागर की है। पहिले नरक में १३ पटलों में से ऊपर के पटल में कम से कम १० हजार वर्ष की आयु है। संसार में जितनी भी दुखमय सामग्री है नरकों में वह सब, सब स्थानों पर विद्यमान है। कहाँ तक नरकों के दुखों का वर्णन किया जावे, यह बहुत लम्बा चौड़ा कथन है।

(४) चित्रा पृथ्वी के ऊपर के दो भागों में अर्थात खर भाग और पंक भागों में भवन वासी और व्यन्तर देवों का निवास है चित्रा पृथ्वी के ऊपर ठीक मध्य में, जम्बू द्वीप के बीचों बीच सुदर्शन नाम का मेरु है। जो मूल में १० हजार योजन चौड़ा है। जम्बू द्वीप को घेरे हुये लवण समुद्र आदि २५ कोड़ा कोड़ी उद्धार पल्य प्रमाण द्वीप और समुद्र हैं जो सब एक राजू विस्तार में हैं। पहिले के दो समुद्र और अढ़ाई द्वीप में तथा अन्त के आधे द्वीप और एक समुद्र में कर्म भूमि है। बीच के सब द्वीप समुद्रों में जघन्य भोग भूमि की स्थिति हैं मनुष्यों के अलावा एकेन्द्री और पंचेन्द्री तिर्यन्च हैं।

(५) जम्बू द्वीप के भरत क्षेत्र का आर्य खण्ड पूरव पश्चिम को ८० लाख मील लम्बाई में है, उत्तर दक्षिण में ९ लाख ५२ हजार मील चौड़ाई में है। वर्तमान में जितने भी विदेश देखने और सुनने में आते हैं वे सभी इस आर्य खण्ड में हैं, पूरब को सीमा में गंगा नदी, पश्चिम में सिन्धु नदी है। दक्षिण में लवण समुद्र और उत्तर में रूपाचल पर्वत हैं। गंगा नदी का विस्तार यानी चौड़ाई २५ हजार मील से लेकर बढ़ती हुई २-१/२ लाख मील तक है। २ हजार मील गहरा पानी भरा रहता है। तथा किनारों की मिट्टी एक रत्ती भर भी कभी टूट फूट नहीं होती है।

(६) लोकाकाश का घनफल ३४३ राजू हैं जिसमें कुछ कम १३ राजू में ही त्रस जीवों का स्थान है। बाकी ३३० से कुछ अधिक घन राजू में स्थावर जीव रहते हैं जो चार निस्कुट क्षेत्रों में है। त्रस नाड़ी एक राजू लम्बी एक राजू चौड़ी सातवीं पृथ्वी से लेकर पंचानुत्तर विमानों तक कुछ कम १३ राजू ऊंचाई में है। इस त्रस नाड़ी में भी बहु भाग प्रमाण एकेन्द्रिय जीव राशि ही हैं।

(७) त्रस नाड़ी के भीतर भी मनुष्यों का क्षेत्र २-१/२ द्वीप तक ही याने सिर्फ ४५ लाख योजन ही में है जो सारे लोकाकाश की अपेक्षा एक बूंद के बराबर ही है। इस मनुष्य क्षेत्र में २९ अंक प्रमाण संख्या में पर्याप्त मनुष्य हैं इन मनुष्यों में भी बहु भाग ऐसे मनुष्य हैं जो किसी भी प्रकार की धार्मिक क्रियाओं को जानते भी नहीं है हम जरा अपनी अवस्था का विचार करें कि हमको कितने समय बाद में, ऐसे सारे साधन प्राप्त हुये हैं जिनके द्वारा हम जो भी करना चाहें

कर सकते हैं। समय निकल जाने के पश्चात कुछ भी नहीं कर पावेंगे। इसलिये जितना जीवन बाकी है उसको सफल बनाने के लिये कम से कम जितना आसानी से कर सकें उतना तो अपना कल्याण अवश्य कर लेना चाहिये।

(०) चित्रा पृथ्वी के समतल भू भाग से ७९० योजन पर ज्योतिषी देवों में तारों के विमान हैं फिर १० योजन पर सूर्यों के विमान, फिर ८० योजन उपर चन्द्रमा विमान फिर २० योजन में गृह नक्षत्रों के विमान हैं अपनी अपनी उँचाई पर सब ध्रुव तारों को छोड़कर २-१/२ द्वीपमें, बाकी के सब विमान सुदर्शन मेरु को निरन्तर परिक्रमा लगाते हैं। २-१/२ द्वीप के बाहर सब अपनी २ जगह स्थित हैं। जम्बू द्वीप में दो चांद और २ सूरज लवण समुद्र में चार चार धातकी खण्ड में १२-१२ और कालोदधि में ४२-४२ तथा पुष्करार्द्ध में ७२-७२ चाँद सूरज हैं। यह ध्यान रखने की बात है कि जहाँ पर जितने भी चाँद सूरज हैं वे दो भागों में बंट कर आमने सामने एक के पीछे एक, जो घूमते हैं वे घूम रहे हैं और जो स्थिर हैं वे स्थिर रहते हैं। चाँद सूरज और नक्षत्र इनकी मार्ग २-१/२ द्वीप में प्रतिदिन बदलते हैं, बाकी के रोजाना उसी मार्ग पर घूमते हैं। आगे आगे की गलियों का मार्ग बड़ा हुआ होने पर भी हर मार्ग में समय बराबर लगता है, कारण उतनी ही गति बढ़ती जाती है। सूरजों के विमानों को पूरी गली का सफर करने में ४८ घण्टे लगते हैं। चन्द्रमा के विमानों को पूरे मार्ग के भ्रमण करने में ४९ घण्टा और ३६ मिनिट लगते हैं और इसी कारण से सर्दी, गर्मी का मौसम तथा दिन रात का छोटा बड़ा होना, होता रहता है ज्योतिषी देवों के परिवार में एक चांद एक सूरज २८ नक्षत्र ८८ गृह तथा ६६९७५ कोड़ा कोड़ी तारे होते हैं। जम्बू द्वीप के भरत क्षेत्र में ७०५ कोड़ा कोड़ी तारे हैं। विशेष जानकारी के लिये आगम ग्रन्थों का सहारा लो।

(९) उर्ध्व मेरु पर्वत के ऊपर से उर्ध्व लोक प्रारम्भ होता है। सबसे पहिले १६ स्वर्गों के ८ युगल हैं। पहिले युगल में सौधर्म ईशान स्वर्ग, दक्षिण उत्तर में स्थित हैं इस पहिले युगल की ऊंचाई १-१/२ राजू में हैं। इसमें ऊपर ऊपर ३१ पटल हैं इन पटलों के बीच बीच में असंख्याते योजन का आकाश है। इसके बाद दूसरा युगल फिर १-१/२ राजू की ऊंचाई में है इसके ऊपर ऊपर फिर बाकी ६ युगल आधे आधे राजू की ऊंचाई में हैं अर्थात १६ स्वर्ग तक ऊंचाई ६ राजू की है। फिर कुछ कम एक राजू में नव ग्रेवेयक, नव अनुदिश, पंचअनुत्तर, आठवीं पृथ्वी, सिद्धों का आवास और बीच २ असंख्याते योजन का आकाश है।

(१०) पांचवें स्वर्ग के चार पटलों में से ऊपर के पटल के बाहरी भाग में चौबीस प्रकार के लौकान्तिक देव रहते हैं ये सब सम्यक दृष्टि, एक भव अवतारी, ब्रह्मचारी और केवल तीर्थङ्करों के दिक्षा कल्यायक में आने वाले, अपने आपकी साधना में लगे रहते हैं।

(११) मध्य लोक के ४५८ चैत्यालयों का विस्तार इस प्रकार है भद्रसाल वन के बीस और नन्दन वन के २० और नन्दीश्वर द्वीप के ५२ ये ९२ चैत्यालय १०० योजन लम्बे ५० योजन चौड़े और ७५ योजन ऊंचे हैं। सोमनस वन के २० इष्वाकारों के ४ मानुषोत्तर के ४ कुण्डल द्वीप के ४ रुचिर द्वीप के ४ वक्षार पर्वतों के ८० कुलाचलों के ३० और गजतन्तों के २० ये १६६ चैत्यालय ५० योजन लम्बे २५ योजन चौड़े और ३७-१/२ योजन ऊंचे हैं। पांडुक वनों के २० चैत्यालय २५ योजन ऊंचे १२-१/२ योजन चौड़े और १८-३/४ योजन ऊंचे हैं १७० विजयार्द्ध और १० जम्बू शाल्वली ये १८० चैत्यालय १ कोस लम्बे आध कोस चौड़े और ३/४ कोस ऊंचे हैं। अधोलोक तथा उर्ध्व लोक के चैत्यालय संख्याते असंख्याते योजन तक के हैं। इन सारे चैत्यालयों की लम्बाई चौड़ाई प्रमाण नाप से हैं।

(१२) उर्ध्व लोक में ८४९७०२३ चैत्यालय हैं जो ६३ पटलों में है तथा इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक तीनों प्रकार हैं। इन्द्रक विमान हर एक पटल के मध्य में एक एक है याने ६३ पटलों में ६३ इन्द्रक विमान हैं। श्रेणीबद्ध विमान, इन्द्रक विमानों की चारों दिशाओं में कतार बद्ध हैं। नीचे से ऊपर को हर एक पटल में एक दिशा में एक एक विमान कम होता गया है। जैसे—पहिले युगल के ३१ पटलों में से सबसे नीचे के युगल में चारों दिशाओं में ६३-६३ कुल २५२ श्रेणी बद्ध विमान हैं फिर दूसरे पटल में २४८ तीसरे में २४४, इस प्रकार कम होते हुये ६३ वें पटल में जो सर्वार्थ सिद्धी कहलाता है, उसमें श्रेणीबद्ध विमान ४ रह जाते हैं।

नोट—हुण्डावसिर्पोणी काल की बलिहारी से प्रथमानुयोग करणानुयोग, चरणानुयोग तथा द्रव्यानुयोग तक की चर्चाओं में+प्राचीन आचार्यों के कथन में भी भेद पड़ा हुआ है। जैसे—नव ग्रेवेयकों की तीन टिकड़ियों में १११, १०७, और ९१ चैत्यालय का कथन मिलता है यह असम्भव है।